



मध्ययुगीन हिन्दी महाकाव्यो  
मे नायक



# मध्ययुगीन हिन्दी महाकाव्यों में नायक

(दिल्ली विश्वविद्यालय की पी० एच० डी० उपाधि के लिए स्वीकृत शोध प्रबंध)

लेखक

डा० कृष्णदत्त पालीवाल

साहित्य-प्रकाशन

नई सड़क, मासीवाड़ा दिल्ली-६



प्रकाशक	साहित्य प्रकाशन
	१४५८ मानीवाडा जिल्हा ६
मूल्य	चालीस रुपये
संस्करण	नवम्बर १९७२
मुद्रक	रामाष्ट्रपणा प्रिंटिंग प्रेस,
	८१६ बटवानीत, जिल्हा ६

समर्पित,

सहधर्मिणी,

रितु

को

जो सदैव कुछ न कुछ लिखने को प्रेरित करती रहती है ।

कृष्णदत्त पालीवाल



## भूमिका

मध्ययुगीन हिंदी साहित्य में महाकाव्यों का महत्वपूर्ण स्थान है। भक्ति काल के उदय से ही महाकाव्य प्रणयन की ओर हिंदी-कवियों का ध्यान गया। सूफी कवि जायसी का सुप्रसिद्ध प्रेमाख्यान-काव्य 'पदमावत' इस परम्परा के प्रारम्भ का श्रेष्ठ निदर्शन है। निगुण धारा के कवियों ने मुक्तक शैली को प्रश्रय दिया, क्योंकि अपने धाराध्य को सगुण कथावस्तु से सम्पत्त करके प्रस्तुत करना न तो कवि का अभीष्ट था और न पाठक की चित्तवृत्ति निगुण-क्षेत्र में सगुणोपासना के लिए तत्पर थी। किंतु जायसी ने ऐकेश्वरवाद में पूर्ण आस्था रखते हुए भी लोककथा के माध्यम से अपने महाकाव्य की सृष्टि की। उनके बाद सगुणोपासक रामभक्त और कृष्णभक्त कवियों ने तो अनन्त उच्चकोटि के महाकाव्य लिखे, जिनमें 'रामचरित मानस' सर्वश्रेष्ठ और सर्वाधिक विख्यात है। इसी रामभक्ति का एक दूसरा पक्ष, जिसे शुद्ध भक्ति न कहकर राम कथा का लौकिक पक्ष कहा है, रामचंद्रिका महाकाव्य में दृष्टिगत होता है। महाकवि केशवदास ने अपने पाण्डित्य प्रदर्शन के निमित्त राम कथा का जिस फलक पर अवस्थित किया है वह दरबारी रूप सज्जा के अधिक निकट है और उसमें राम की भक्ति का लक्ष्य न हाकर रामकथा का वर्णन मात्र कवि का अभीष्ट है।

इसके साथ ही कृष्ण भक्ति की वेगवती धारा प्रवाहित हुई। इस धारा का प्रारम्भ कृष्ण लीला गान से हुआ और शन शन वह कथात्मक हाकर महाकाव्य का दिशा में मुड़ गई। ब्रजविलास कृष्णचंद्रिका और लाहमागर आदि रचनाएँ लीलापरक हाते हुए भी कृष्ण चरित्र के विविध पक्षों का भी उदघाटन करता हैं। सम्भवतः शास्त्र सम्मत महाकाव्य के सम्पूर्ण लक्षण इन ग्रंथों में उपलब्ध न हैं। किंतु कथात्मक होने के कारण तथा कृष्ण-चरित्र का वर्णन होने से यह महाकाव्य ही कहा जायगा, क्योंकि इनमें नायक के चरित्र विकास पर कवि का ध्यान सतत रहा है।

रीतिकाल में भी कुछ कवियों का ध्यान महाकाव्य प्रणयन की ओर गया। वीरसिंहदवचरित राजविलास, छत्रप्रकाश सुजान चरित्र और हम्मीर रासा इस काल की उल्लेख्य कृतियाँ हैं जिनमें महाकाव्यात्मक दृष्टि का पूर्ण उन्मेष है। वस्तुतः रीतिकाल में मुक्तक शैली का ऐसा प्राधाय हो गया था कि सामान्यतः सभी कवि मुक्तकों के माध्यम से आत्माभिव्यक्ति करने लगे होते थे। महाकाव्य के विस्तृत

आयाम को स्वीकार करने पर कथातत्व और चरित्र सृष्टि को अनिवार्यता का दायित्व व अपने ऊपर नहीं लेना चाहत थे। राणा प्रताप छत्रसाल, शिवाजी और छत्रपति जैसे नायकों के होते हुए भी इनके सम्बन्ध में स्पष्ट काव्य ही लिखा गया, महाकाव्य नहीं।

इन महाकाव्यों के अनुशीलन से जो तथ्य स्पष्टतः उभर कर हमारे समक्ष आता है वह है इनमें वर्णित नायक का दीप्त चरित्र। इन सभी महाकाव्यों के नायक इतने धीरोन्मात्त वचस्वा तजस्वी और प्रतापी हैं कि उनकी समता साधारण मानव से नहीं की जा सकती। असाधारण और उदात्त रूप में नायक को प्रस्तुत करने की परिपाटी इन कवियों की भी ग्राह्य थी और इसी कारण इन महाकाव्यों में नायक स्वरूप अधिकज्ञत परम्परा सम्मत हो है। किन्तु आज के युग में नायक और नायक के गुणों के सम्बन्ध में शास्त्रसम्मत रूढ़ धारणा को ज्यों का त्यों स्वीकार नहीं किया जाता। मध्ययुग में भी नायक विषय धारणा में कुछ परिवर्तन अवश्य हुआ था और नायक निरूपण में उस परिवर्तित धारणा को खोजा जा सकता है। यह धारणा युग-जीवन और युग-बोध के उपकरणों से सम्पुष्ट होकर काव्य में स्थान पाती है। नायक का कीर्तिमान करते समय भी ये कवि अपने युग के सम्पूर्ण परिवेश को प्रस्तुत करने का प्रयास करते रहे। अतः नायक की अवधारणा को स्पष्ट करत समय तत्कालीन समाज और परिवेश को उदघाटित करने का प्रयास अनुसंधाता के लिए अनिवार्य हो जाता है। यदि नायक का व्यक्तित्व व उसके अपने घर परिवार तक ही सीमित है अथवा अपने निजी व्यक्तित्व की परिधि में ही समाया हुआ है तो वह व्यापक चेतना वाला नायक नहीं हो सकता। नायक की अवधारणा के विषय में आधुनिक युग में बहुत परिवर्तन हुए हैं किन्तु प्राचीन परम्परागत धारणा प्रायः सभी नायकों में समान रूप से लक्षित होती है। नायक के साथ प्रतिनायक का चरित्रोन्पादन भी अवधारणा में होता है। नायक की तुलना में प्रतिनायक के काय गुण गति आदि के सम्बन्ध में विचार करते समय केवल राननायक की धारणा पर ही प्रकाश नहीं पड़ता बल्कि नायक के साथ संधप करने का अनुन शक्ति रखने वाले प्रतिनायक का स्वरूप उदघाटित होता है। मध्य युगान् काव्यों में प्रतिनायक काल रत्न चरित्र ही नहीं है वह एक गत्यात्मक पात्र है जो अपने गुण अंगुणा व साथ नायक का चुनौती देता हुआ प्रताप होता है।

मध्ययुगान् में प्रवर्धनायों में राम और कृष्ण भी एक ही रूप में प्रकट नहीं किए गए हैं। राम का ईश्वररूप तुलसी की माय था किन्तु वंशव की राम चंद्रिका व राम तुलसी से भवया भिन्न है। इस प्रकार कृष्ण का महाभारत का

रूप, गीता दर्शन के अनुसार योगी का रूप, और भागवत के अनुसार लीलावपुधारी कृष्ण का रूप एक ही नायक को विविध रूपों में हमारे सामने लाता है। वाल्मीकि और व्यास ने राम और कृष्ण को जिस रूप में हमारे सामने रखा था मध्ययुगीन कवियों ने उन्हें यथावत स्वीकार नहीं करके अपनी कल्पना और भक्ति भावना से विविध रूपों में अंकित किया है।

ऐतिहासिक नायकों के विषय में अतिरजना तो सामान्य बात है किन्तु इस अतिरजना के साथ भी ये कवि वास्तविकता या यथार्थ को सबंधा भूले नहीं हैं। इतिहास और घटनाओं के भीतर रमने वाले ये कवि अपने नायकों को पौरुष और पराक्रम का अवतार मानकर चित्रित करते हैं। यही इनकी विशेषता है।

संक्षेप में, हिन्दी के मध्ययुगीन महाकाव्यों में नायक का चित्रण जिस व्यापक परिवेश में हुआ है उसे उदघाटित करने के लिए अनुसंधानपरक वैज्ञानिक दृष्टि की नितांत आवश्यकता थी। महाकाव्यों में चरित्र चित्रण पर समीक्षात्मक दृष्टि से आलोचना लिखने वाले लेखकों ने भी इस तथ्य की दृष्टि में नहीं रखा था। हय का विषय है कि डा० पालीवाल ने इस अभाव को दूर करने के लिए अपने शोध का विषय नायकों बनाया और उन्होंने महाकाव्यों के सभी सुप्रसिद्ध नायकों की परीक्षा इस प्रबंध में की है। पौराणिक और ऐतिहासिक दोनों प्रकार के नायकों इनके शोध प्रबंध में आये हैं और उन्होंने परम्परा, इतिहास, कल्पना और तथ्यात्मक दृष्टि से उनका भली भाँति संधान किया है।

नायक विषयक अवधारणा के विषय में डा० पालीवाल ने प्रथम अध्याय में जो सामग्री एकत्र की है वह नायक के स्वरूप, चरित्र, दायित्व, प्रभाव आदि को समझने में अत्यंत सहायक है। सामान्यतः नायक का जो स्वरूप काव्यशास्त्रीय ग्रंथों में स्वीकृत रहा है वह नायक की अवधारणा का समग्रतः परिचायक नहीं है। धारणाएँ बदलती रहती हैं और उनके अनुसार नायक भी बदलते हैं। डा० पालीवाल ने इस तथ्य की ध्यान में रखकर ही नायक के स्वरूप को स्पष्ट करने का प्रयास प्रथम अध्याय में किया है। इसके अतिरिक्त जिन महाकाव्यों के नायकों पर अनुसंधान किया गया है, उनके कथ्य शिल्प, भाषा, अप्रस्तुत विधान का भी आनुपातिक रूप से इस प्रबंध में उल्लेख हुआ है। कथानक और चरित्र चित्रण तो सीधे नायक से सम्पन्न होते ही हैं। शेष विषयों पर इसी सन्दर्भ में लेखक ने विचार प्रस्तुत किए हैं।

इस शोध प्रबंध में नायक के माध्यम से मध्ययुगीन महाकाव्यों का सूक्ष्म-विस्तृत अनुशीलन है जो प्रामाणिक एवं वैज्ञानिक दृष्टि सम्पन्न है। डा० पालीवाल

ने गहन अध्ययन और अध्यवसाय का परिचय दिया है। मैंने इस शोध-प्रबन्ध को आलोचनात्मक पढ़ा है और यथा स्थान सशोधनाय सुझाव भी दिये हैं। अतः इसकी गुणावस्था से मैं भलीभाँति परिचित हूँ। इस सुन्दर शोध काय के लिए डा० पालीवाल साधुवाद के पात्र हैं।

२ अक्टूबर १९७२

विजेन्द्र स्नातक  
आचार्य तथा अध्यक्ष, हिंदी विभाग  
दिल्ली विश्वविद्यालय,  
दिल्ली।

## प्रस्तावना

हिंदी साहित्य का मध्ययुग अपनी विचार-सम्पदा तथा शिल्प-सौष्ठव के कारण अपना विशिष्ट स्थान रखता है। इस साहित्य में उत्तरभारत की सभ्यता, धर्म और दर्शन का समवेत प्रभाव काव्य के मनोहरी रूप में प्रतिफलित हुआ है। इस युग के महाकाव्य ब्रह्म युग से लेकर मध्ययुग तक प्राप्त परम्परा, इतिहास तथा सांस्कृतिक बोध को सहज रूप में अभिव्यक्त करते हैं। मध्ययुग विष्णु के अवतार राम एवं कृष्णमय होने के कारण आध्यात्मिक स्तर पर भी उल्लेख्य बन गया है। अनेक सम्प्रदायों के दार्शनिक प्रपञ्चों में फैला मध्यकाल इन अवतारों नायकों का आश्रय पाकर ही जन-मन का राज बन सका है। इस युग ने ऐसे नायकों को जन्म दिया है, जो तत्कालीन परिवेश के अनुकूल मध्ययुगीन चेतना को जागृत करने के साथ अधःपतन से हिन्दुत्व का उद्धार करने के लिए नवीन दिशा संकेत प्रदान कर सकते हैं। विद्वानों द्वारा मध्ययुगीन साहित्य पर अनेक दृष्टियों से विचार होने पर भी मध्ययुगीन काव्य के नायकों को केन्द्र बनाकर अभी तक कोई अध्ययन प्रस्तुत नहीं किया गया। फलतः इन नायकों का सम्पूर्ण स्वरूप एवं प्रदेय पाठकों को प्राप्त नहीं हो पाया। ये नायक किन किन श्रोतों, प्रभावा तथा परिवर्तना से होकर यह स्वरूप प्राप्त कर सके हैं, यह अद्यावधि जिज्ञासा का विषय ही बना हुआ था।

नायक के माध्यम से ही कवि शाश्वत जीवन मूल्यों को समाज तक पहुँचाता है, साथ ही महाकाव्य में सांस्कृतिक परम्परा से प्राप्त विरासत ही नायक का प्रायः निर्माण करती है। जीवन का अन्त इतिहास भी नायक के द्वारा ही प्रकट हो पाता है। यही कारण है कि आचार्यों ने अनेक गुणों से युक्त धीरोदात्त नायक को ही महाकाव्य का नायक स्वीकार किया क्योंकि वही युग का माय्य नेता हो सकता है तथा युगो-युगो तक मानव को परम्परागत एवं नवीन आदर्शों से उपयुक्त दिशा दे सकता है। इसी सन्दर्भ विशेष में प्रस्तुत शोध प्रबंध मध्ययुगीन महाकाव्यों के नायकों को समग्रता के साथ समझने का प्रथम विनम्र प्रयास है।

काव्य रूपों में महाकाव्यों का महत्व और उत्कर्ष सर्वोपरि है। मानवता के प्रगति-पथ में महाकाव्य मोल के पत्थरों के समान होते हैं वे व्यजित करते हैं कि मानव किस युग में कहाँ तक विकास कर सका है। वस्तुतः महाकाव्य में ही व्यक्ति-निष्ठ जीवन का प्रतिनिधि रूप, समष्टिगत कार्यों का उच्चावयव संचरण एवं जातीय गौरव की प्रतिष्ठा का रूप अभिव्यक्ति पाता है। किंतु यह खटकने वाली बात है



कि वाक्य शास्त्र में महाकाव्य सम्बन्धी प्रतिमानों के प्रायः अनिश्चित होने एवं मालावका की धारणाओं में अनेक रूपता होने के कारण बहुत से महत्वपूर्ण वाक्यों में तो महाकाव्य के रूप में स्वीकृति प्रदान की गई है, और न ही उनका समुचित मूल्यांकन किया जा सका है। महाकाव्य के अनिश्चित लक्षणों के अभाव में साहित्य के इतिहास रचकों का अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा है। यहाँ नहीं, एक ही वाक्य-कृति को कोई महाकाव्य कहता है कोई अष्टकाव्य, पुराण-काव्य, एकाध्याय प्रमात्यानक काव्य और कोई चरित्र काव्य। अतः यह भावश्यक है कि महाकाव्य की समाचीन परिभाषा प्रस्तुत की जाये तथा अनेक वाक्यों के सम्बन्ध में जो भ्रांतिपूर्ण उत्पन्न हो गई हैं, उनका निराकरण किया जाए। यह कहा जा सकता है कि इतना बड़ा वाक्य केवल मध्ययुगीन महाकाव्यों के आधार पर सम्भव नहीं हो सकता है। लेकिन यह सत्य है कि हिन्दी साहित्य का मध्ययुगीन साहित्य बड़ा महत्त्व है जिसके बिना हिन्दी साहित्य का विशाल बक्ष गौरव-गरिमा के साथ साक्षात् नहीं रह सकता।

मध्ययुगीन महाकाव्यों में पद्मावत, रामचरितमानस तथा रामचंद्रिका का तो विनिष्ट अध्ययन किया गया है लेकिन शेष महाकाव्य-रत्नवितास कृष्णचंद्रिका, पारंगिहृत्चरित राजवितास, छत्रप्रकाश मुजानचरित्र तथा, हम्मीररामो—पर मित्रानाँ प्रायः ध्यान ही नहीं दिया। अधिकांश विद्वानों ने तो पद्मावत तथा मानस का छाँड़कर अन्य किसी कृति का मध्ययुग में महाकाव्य ही नहीं माना है। इन युग के पौराणिक तथा ऐतिहासिक महाकाव्यों के अध्ययन के लिए जिस उन्नत दृष्टि की आवश्यकता थी वह उन्हें प्राप्त नहीं हुई। मरने दृष्टि इन महाकाव्यों के लिए म बाधा उत्पन्न रही है। उत्तर में मरने तात्पर्य यह रही है कि जो रचनाएँ महाकाव्य नहीं हैं उन्हें भी महाकाव्य मान लिया जाय। परन्तु जिन रचनाओं में बल्य तथा शिष्य का दृष्टि से महत्वपूर्ण सम्भावनाएँ निहित हैं उन्हें मैं महाकाव्य मानने में सकार नहीं किया है। इस प्रबंध में प्रथम बार पौराणिक रत्नवितास-रत्नवितास तथा कृष्णचंद्रिका—की चर्चा विस्तार से की गई है।

मध्ययुग के साहित्य का अध्ययन करते हुए मुझे लगा कि मध्ययुग का पूवाद्द तो प्रबन्ध-युग है ही। उत्तराद्द भी (मुक्तको का युग होन पर भी) प्रबन्ध की दृष्टि से नगण्य नहीं है। इस काल में भी कई सुन्दर प्रबन्ध काव्य उपलब्ध होते हैं। इन कृतिमा का देखन हुए यह स्पष्ट है कि राजाभा के आश्रय में उनके मनोरजन के साथ कविया ने अपन सामाजिक दायित्व की उपेक्षा नहीं की है। कुछ कविया न अपन नायक के कीर्तिमान के माध्यम से तत्कालीन सम्पूर्ण परिवर्तनस्थिति का व्यक्त कर दिया है। बेशक, गूढ़न तथा नाद आदि कविया के नाम इस सन्दर्भ में उल्लेखनीय हैं।

हिन्दी के मध्ययुगीन महाकाव्यों में नायक के स्वतन्त्र व्यक्तित्व पर शोधपरक काव्य का अभाव है। साहित्य विमर्श के समय विद्वानों ने इस युग के महाकाव्यों पर प्रकाश डालते हुए नायक पर भी प्रसंगवश विचार किया है। वस्तुतः नायकों पर विस्तार से विचार करने का उन्हें अवसर प्राप्त नहीं हुआ। महाकाव्यों पर शोध प्रबन्ध के रूप में काय करन वाले विद्वान श्री डॉ० शम्भूनाथसिंह का 'हिन्दी महाकाव्य का स्वरूप विकास' अपन ढंग का स्तुत्य काव्य है। उनकी दृष्टि महाकाव्यों का सम्पूर्णता से मूल्यांकन करने की रहा है। डॉ० शकुन्तला दुब ने हिन्दी काव्य रूपों के मूल स्रोत और उनका विकास में महाकाव्यों पर विचार किया, लेकिन किसी सुनिश्चित दृष्टि के अभाव में उनके निष्कर्षों में पूर्णता सक्षित नहीं होती है। डॉ० श्यामन दत्त किशोर ने 'प्रागुनिक हिन्दी महाकाव्य का शिल्प विधान' शीघ्र प्रबन्ध में मात्र परम्परा का पालन किया है। हिन्दी विद्वानों तथा अनुसन्धाताओं ने महाकाव्यों पर पृथक् पृथक् विचार किया है। इन विद्वानों से प्राप्त सामग्री का उपयोग मैं अपनी स्थापनाओं के सन्दर्भ में किया है। प्रबन्ध का नियोजन इस प्रकार से किया है कि प्राप्त सामग्री को नवीनता के साथ प्रस्तुत किया जा सके।

इस प्रबन्ध में चौदहवीं शताब्दी में लेकर अनीसवीं शताब्दी तक के दस महाकाव्यों की परीक्षा करते हुए, उनका नायक का विवेचन किया गया है। नायक में अन्तर्गत अध्ययन के लिए यथासम्भव अपन समय से पूर्ववर्ती तथा परवर्ती महाकाव्यों में भी सहायता ली गयी है। विशेष रूप से भक्ति कवियों के महाकाव्यों पर विचार करने समय वैष्णव परम्परा अवतारवादी भावना, प्राचीन महाकाव्य पौराणिक तथा पाचगान ग्रन्थों की मुख्य आधार बनाया गया है।

प्रस्तुत प्रबन्ध पाँच अध्यायों में विभक्त है। प्रथम अध्याय में मध्ययुग से तात्पर्य हिन्दी साहित्य के मध्ययुग का आरम्भ तथा सीमा निर्धारण करते हुए महाकाव्य तथा नायक के शास्त्रीय स्वरूप पर विचार किया गया है। लक्षण निर्धारण की कठिनाइया का उल्लेख करन हुए भारतीय तथा पाश्चात्य विद्वानों के मतों

की तुलनात्मक समीक्षा के द्वारा महाकाव्य के सामान्य लक्षणों की निर्धारित करने का प्रयास है। नायक शब्द के प्रचलित अनेक अर्थों का संकेत करते हुए देशी विदेशी आचार्यों के मतों का तुलनात्मक अध्ययन किया गया है। महाकाव्य की दृष्टि से नायक निर्धारण के प्रतिमान तथा वर्गीकरण के द्वारा उनका सार्वात्मिक आधार दिया गया है जिससे कि मध्ययुगीन महाकाव्यों के नायकों को निश्चित बसोटी पर बसा जा सके तथा उनका सभ्यक विवेचन किया जा सके।

द्वितीय अध्याय में मध्ययुगीन सूफी काव्यों के नायकों के स्वरूप पर विचार किया गया है। इस अध्याय में सूफी नायकों का उद्भव तथा देशी विदेशी सूफी कवियों में प्राप्त नायकों की सामान्य तथा विशिष्ट प्रवृत्तियाँ तथा काव्य-रूढ़ियों पर प्रकाश डालने हुए सूफियों की नायक दृष्टि को स्पष्ट रूप से स्पष्ट करने का प्रयास है। हिन्दी के मध्ययुगीन सूफी काव्यों की सूची तथा काव्य रूप का सामान्य वर्णन करते हुए पदमावत का ही महाकाव्य स्वीकार किया है। पदमावत के महाकाव्यत्व तथा नायकत्व पर पूर्व निर्धारित बसोटी से विचार है, साथ ही प्रतिनायक के स्वरूप पर विचार करते हुए इस आदर्श प्रती नायक पर लगाये गये आक्षेपों का उत्तर देते हुए उनका बहाना समाधान किया है। सभी सूफी नायकों का स्वरूप लगभग एक जैसा ही है पर तु जायसी ने सूफियों की नायक दृष्टि का पालन करते हुए भी भारतीय साधना तथा भारतीय ऐतिहासिक दृष्टि को ग्रहण किया है। अन्त में सूफी नायकों के तुलना करते हुए निष्कर्ष दे दिया गया है।

तृतीय तथा चतुर्थ अध्याय में राम तथा कृष्ण पर विस्तार से प्रकाश डाला गया है। सम्पूर्ण मध्ययुगीन सांस्कृतिक तथा राजनैतिक चेतना के आधार यह दो दिव्य नायक ही हैं तथा इनका यह स्वरूप अनेक युगों में श्रुतियों, गानियों, सन्तों, महन्तों, गुरुद्वारा यागियों, कवियों तथा आचार्यों के द्वारा इस युग तक इस स्वरूप को प्राप्त हुआ है यह ध्यान में रखते हुए इनके उद्भव और विकास पर प्राचीन साहित्य में प्राप्त विभिन्न रूपों पर दृष्टि रखते हुए विचार किया गया है।

सूतीय अध्याय में राम का उद्गम और ऐतिहासिक रूप दोनों महाकाव्यों पुराणा बौद्ध धर्म और जन साहित्य अनेक रामायणों प्राचीन सतिन साहित्य धर्मग्रन्थों तथा भक्ति आन्दोलन को ध्यान में रख कर तुलनात्मक रूप से प्राप्त उनके स्वरूप को वर्णन है ताकि यह स्पष्टता से समझा जा सके कि तुलना तथा बंशव न कितना उनका प्राचीन तथा नवीन रूप ग्रहण किया गिना तत्त्वानान युगीन प्रभाव तथा अन्तर्गत अन्तिम धारणाओं से निर्मित किया है। इस-वस राम भौतिक तथा धर्मोत्तरिक भाव-रूपों को आत्ममात करन हुए समस्त भारतीयों के आदर्श बन गये। मध्ययुगीन राम राज्य परम्परा का संकेत देने हुए उनमें प्राप्त दो महाकाव्य, मानस

तथा रामचन्द्रिका के महाकाव्यत्व तथा नायकत्व पर पूर्व निर्धारित प्रतिमानों से विचार किया गया है। अन्त में वाल्मीकि रामायण, मानस तथा रामचन्द्रिका के राम की तुलना करते हुए निष्कर्ष दिया गया है।

चतुर्थ अध्याय में कृष्ण के नायकत्व के विचारार्थ कृष्ण का ऐतिहासिक उल्लेख, कृष्ण तथा आर्जुन का विवाद, वंदो, उपनिषद् पुराणा, अवतारवादी तत्त्वा, परम्पराओं का निरूपण किया गया है। कृष्ण के ऐतिहासिक तथा साम्प्रदायिक भ्रम के साथ-साथ मध्ययुगीन कृष्ण भक्ति शास्त्र के प्रमुख कवियों में अभिव्यक्त विविध उपास्य रूपा, अर्चावितारा तथा लीलात्मक रूपा का उद्घाटन है। वेदों के कृष्ण, वासुदेव कृष्ण, गोपाल कृष्ण, महाभारत कृष्ण, राधा-कृष्ण के विभिन्न रूपा के क्रमिक अध्ययन के पश्चात् आचार्यों तथा अन्य कर्ताओं में प्राप्त कृष्ण के स्वरूप पर विचार किया गया है। मध्ययुगीन कृष्ण काव्यों की प्रवचन-परम्परा का चर्चा करते हुए हमने ब्रज विलास तथा कृष्णचन्द्रिका को ही महाकाव्य माना है। पूर्व निर्धारित कमीटी के आधार पर इन कृतियों के महाकाव्यत्व तथा नायकत्व का विवेचन है, अन्त में निष्कर्ष प्रस्तुत किए गए हैं।

इस प्रकार इस प्रवचन में मध्ययुगीन महाकाव्य के नायक का साहित्यिक तथा ऐतिहासिक दृष्टि से आकलन, विश्लेषण, विवेचन तथा निरूपण हुआ है।

यह साथ प्रवचन आदरणीय गुरुवर डा० विजयेन्द्र स्नातक तथा डा० दयाशंकर जी मिश्र के पाण्डित्यपूर्ण एवं स्नेहसिक्त निर्देशन में लिखा गया है। इन गुरुवरों की प्रेरणा, प्रोत्साहन से ही यह कार्य पूरा हो सका है। तदर्थ मैं उनके चरणों में श्रद्धा सन्त है।

मैं पूर्व हिन्दी विभागाध्यक्ष डा० नगेन्द्र जी का भी विशेष कृतज्ञ हूँ, जिन्होंने मुझे इस महत्वपूर्ण विषय पर शोध-कार्य करने की अनुमति प्रदान करते हुए उत्साह बढ़ा न दिया है साथ ही समय-समय पर अपने सुभाषों से मेरा पथ प्रशस्त किया है। इस प्रयत्न में स्वामी योगानन्द जी मेरे सहायक रहे हैं। उनकी महान् कृपा से ही इस पथ पर चल सका हूँ। आदरणीय डा० दशरथ शर्मा, डा० शामप्रकाश डा० हरिवंश मोटड तथा प० कृष्णशंकर जी शुक्ल का मैं विशेष ऋणी हूँ, जिन्होंने अनेक प्रकार से मेरी सहायता की है। अन्त में उन सभी विद्वानों तथा मित्रों का आभारी हूँ, जिनकी कृतियाँ तथा सम्मति से मैं लाभान्वित हुआ हूँ।

दिल्ली विश्वविद्यालय

कृष्णदत्त पालीवाल

३ जून, १९७०



## विषय-सूची

रस्तावना

६-११

महाकाव्य का सद्धान्तिक विवेचन

१६-६६

मध्ययुग या मध्यकाव्य इतिहास का विभाजन, मध्यकाल का प्रारम्भ मध्यकाल का अन्त, हिन्दी साहित्य का मध्यकाल, महाकाव्य का स्वरूप महाकाव्य तथा 'एपिक' शब्द पर विचार, ससृष्ट, ससृष्टन आचार्यों के मतों का परीक्षण—भामह, दण्डी, धनिपुराणकार रुद्रट, भोजराज, हेमचन्द्र, विश्वनाथ—ससृष्टन आचार्यों के मतों का तात्विक विवेचन, कथानक, नायक, रस शैली, छन्द अलंकार उद्देश्य—पाश्चात्य विद्वानों की धारणा, ग्रस्तू, होरेस, लाजाइनस, मिण्टूनो, मिण्टरनिटो, टैसो, लक्स्मु डन्तू पी० कैर, डिक्सन, एबर क्राम्बी, सी० एम० बाबरा, पाश्चात्य विद्वानों के मतों का तात्विक विवेचन—कथानक, नायक, महाकाव्य का उद्देश्य, महाकाव्य का अभिव्यञ्जना शिल्प हिन्दी आचार्यों तथा अथ विद्वानों के मत—आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, आ० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, गुलाबराय, रामदहिन मिश्र डा० भगीरथ मिश्र आ० नन्दुलारे बाजपेयी, आ० नगेन्द्र, हिन्दी शोध प्रबन्धकारों के मत—डा० शम्भूनाथसिंह डा० प्रतिपालसिंह डा० गोविन्दराम शर्मा डा० श्यामनन्दन विश्वो, हिन्दी के विद्वानों के मतों की तुलना तथा निष्कर्ष कथानक, नायक रस उद्देश्य अभिव्यञ्जना शिल्प, भारतीय तथा पाश्चात्य विद्वानों के मतों की तुलना दृष्टिकोण तथा विवेचन कथानक नायक रस जीवन या उद्देश्य अभिव्यञ्जना शिल्प नायक का सद्धान्तिक विवेचन, नायक शब्द के विभिन्न अर्थ ससृष्टन आचार्यों के नायक निरूपण का आधार, ससृष्टन में नायक निरूपण की परम्परा, भारतमुनि नायक भेद शीत के आधार पर, मानव प्रकृति के आधार पर, नायक निरूपण, रति सम्बन्ध के आधार पर नायक निरूपण, नायक में गुह निरूपण भामह दण्डी, रुद्रट नायक भेद नायक में गुण निरूपण, घनजय, नायक भेद गुण निरूपण भोजराज प्रकृति के आधार पर, कथावस्तु के आधार पर नायकों का वर्गीकरण, रामचन्द्र गुणचन्द्र, हेमचन्द्र, सागरनन्दी, नायक भेद, नायक गुण, शोभा विलास, माधुप, स्वयं ललित श्रीराम, तेज वाग्मट्ट द्वितीय, नायक भेद, गुण निरूपण, विश्वनाथ नायक भेद, गुण निरूपण, शोभा, विलास, माधुप, घय गाम्भीर तेज ललित श्रीदाय, संस्कृत आचार्यों की नायक सम्बन्धी धारणाओं का तुलनात्मक विवेचन, नायकों का वर्गीकरण, धीरोदत्त धीरान्त, धीर ललित धीर प्रशान्त नायक में गुण निरूपण, पाश्चात्य विद्वानों का नायक सम्बन्धी दृष्टिकोण ग्रस्तू की नायक सम्बन्धी धारणा, नायक भेद नायक के चरित्रांकन की सीला, नायक में आवश्यक उपबन्ध, होरेस टैसो, एमीक्रूसो, नास्टेयर शेंडुविक कारलायस एमसन, बायरन,

डिक्सन नायक में गुण विवेचन, पाश्चात्य विद्वानों के विचारों का तुलनात्मक विवेचन, नायक भेद हिन्दी के आचार्यों तथा कवियों की नायक विषयक परिकल्पना, विवेचन भारतीय तथा पाश्चात्य विद्वानों के मतों की तुलना क्या का सूत्रधार, महत्वपूर्ण व्यक्ति आत्मशक्ति की दृढ़ता प्रतिनिधि चरित्र शिष्य शक्ति से प्रलङ्घित विचारों की ग्रापकता कार्यों की उदात्तता, क्या के मूलभाव या रस का आधार महाकाव्य के अथवा पात्रों द्वारा उसके महत्व की स्वीकृति प्रतिनायक, नायक भेद, देव कोटि का नायक अनुपम कोटि का नायक अवतारी नायक राक्षस कोटि का नायक एतिहासिक नायक पौराणिक नायक ।

हिन्दी के सूफी कवियों की नायक दृष्टि

१००—१२४

आतिर्भाष और विचारधारा नायक का सूफी रूप, नायक तथा गुरु नायक का प्रयोग सूफी नामक और काम नायक पर नायक पथी प्रभाव, मन्त्र सिद्ध गौतिका तथा तानिक रूप सिद्धा का प्रभाव निष्कर्ष ।

मध्ययुगीन प्रेमाश्रय काव्य

१२५—१७५

पदमावत का महाकाव्यत्व व्यापक परिधिपुञ्ज क्यानक गरिमा सयुक्त नायक रसात्मकता उद्देश्य की अद्विग ज्योति अभिव्यजना में अमीम शक्ति, पदमावत का नामक क्या का सूत्रधार क्यात्मक विकास की सरणिमा, महत्वपूर्ण व्यक्त अलौकिक सौन्दर्य की अनुभूति से नायक में उद्देश्य प्रेम में उदात्त वृत्ति की पराकाष्ठा, प्रेम माग में मृत्युञ्जयी नायक में सौन्दर्य शक्ति दत्त आत्मशक्ति, प्रेम सागर का अमर मरजिया भारतीय दृष्टि प्रतिनिधि चरित्र प्रेम पथ का प्रतिनिधि चरित्र, शिष्यशक्ति से प्रलङ्घित समवित कार्यों की उदात्तता विचारों की ग्रापकता, क्या के मूल भाव या रस का आधार क्या के अथवा पात्रों द्वारा नायक का महत्व की स्वीकृति प्रतिनायक नायक निर्धारण नायक के ऊपर कतिपय आशय, निष्कर्ष ।

राम के नायकत्व का स्वरूप विकास

१७६—२५४

राम के नायकत्व का उदगम, कवि साहित्य में राम, रामायण में राम, महाभारत में राम बौद्ध साहित्य में राम जैन साहित्य में राम, रामकथा सम्प्रदाय गाथाएँ तथा आश्रयानक काव्य, पुराण ज्ञाना में राम, राम और अनारदा का धर्मिक साहित्य में राम का सर्वांग रूप पौराणिक साहित्य में राम, अथवा रामायण में राम अनित साहित्य में राम के नायकत्व की परम्परा तुलनापूर्व हिन्दी के ललित साहित्य में राम का नायकत्व प्राचीन साहित्य के आधार पर राम के एतिहासिक मन्त्र का उद्घाटन मध्ययुगीन राम काव्य रामचरित मानस का महाकाव्य व्यापक परिधिपुञ्ज मुगलिन क्यानक, उदात्त नायक, रसात्मकता उद्देश्य की ज्योति अभिव्यजना में शक्ति तुलना द्वारा नायक निरूपण, सौन्दर्य तत्त्व, शीत तत्त्व शक्ति तत्त्व अनारदा राम राम विक्सन शील चरित्र, क्या का सूत्रधार, महत्व

पूरा व्यक्ति, दृढ़ आत्मशक्ति, प्रतिनिधि चरित्र, दिव्य शक्ति से प्रलभित, विचारों की व्यापकता, कार्यों की उदात्तता, क्या के मूल भाव या रस का आधार, महाकाव्य के ग्रन्थ पात्रों द्वारा उसके महत्व की स्वीकृति, प्रतिनायक द्वारा नायक के महत्व का उदघाटन, राम के नायकत्व का निधारण, निष्पन्न ।

रामचंद्रिका का महाकाव्यत्व व्यापक परिधियुक्त कथानक, उदात्त नायक रसात्मकता उद्देश्य की ज्योति अभिव्यजना में शक्ति रामचंद्रिका के नायक राम, पृष्ठभूमि सामाजिक परिस्थितियाँ साहित्यिक स्थिति और नायक राजनीतिक स्थिरता, प्रायश्चित्त तथा केशव की अभिजात्य रूचि, धार्मिक परिस्थितियों का नायक पर प्रभाव, रामचंद्रिका में राम का नायकत्व क्या का सूत्रधार महत्वपूर्ण व्यक्ति दृढ़ आत्मशक्ति, प्रतिनिधि चरित्र दिव्य शक्ति से प्रलभित विचारों की व्यापकता कार्यों की उदात्तता क्या के मूल भाव या रस का आधार, क्या के ग्रन्थ पात्रों द्वारा राम के महत्व की स्वीकृति, प्रतिनायक, राम के नायकत्व का निधारण सुलसी तथा केशव के नायक की तुलना ।

कृष्ण के नायकत्व का स्वरूप विकास

२५५—२६६

पृष्ठभूमि, नायक श्री कृष्ण का ऐतिहासिक स्वरूप विकास क्या में कृष्ण पुराणों में कृष्ण, महाभारत में कृष्ण कृष्ण तथा विष्णु वासुदेव कृष्ण वासुदेव कृष्ण तथा गोपाल कृष्ण कृष्ण और ब्राह्मण का विवाद व्यास विष्णु की काय क्याओं का कृष्ण पर प्रभाव अवतारवादी भागवत सम्प्रदाय का योग श्री सम्प्रदाय माधव तथा गोडीय सम्प्रदाय रूद्र सम्प्रदाय शुद्धादित्यवाद तथा क्लृप्ताचार्य निम्बार्क सम्प्रदाय अथ सम्प्रदायवादों में कृष्ण का स्वरूप विकास भारतीय जलित क्याओं में कृष्ण, काय क्या में कृष्ण जयदेव का गीतगाविन्द—कृष्ण शृंगारी नायक, विद्यापति का कृष्ण मूर के कृष्ण लोक लीला पुरुष जन-नायक, अष्टछाप में कृष्ण, अग्रज्य कृष्ण अनुवाक भुमलमान कवियों के कृष्ण निर्गुण धारा में कृष्ण, रामभक्ति शास्त्र में कृष्ण लोकगीत तथा कृष्ण, रीतिकालीन काव्य में कृष्ण—लौकिक शृंगारी नायक, आधुनिक चेतना तथा कृष्ण का नायकत्व ।

मध्ययुगीन कृष्ण काव्य

३००—३७४

व्यापक परिधियुक्त सुगठित कथानक रसात्मकता, भाव या रस उद्देश्य की ज्योति अभिव्यजना शिल्प ब्रजवितास के कृष्ण विक्रमन शील चरित्र नायक कृष्ण शील तथा शक्ति तत्व गोकुल में घटित अलौकिक लीला, पूतना वध बाणासुर वध, तृणावत वध, गांगुन में घटित लौकिक लीला बदावन में घटित अलौकिक लीला बालाहक लीला दावानल पान गावधन लीला, बलावन में घटित लौकिक लीला कृष्ण तथा सौम्य तत्व अवतारी कृष्ण नायक निधारण क्या का सूत्रधार महत्वपूर्ण व्यक्ति, दृढ़ आत्मशक्ति, अद्वय नायक प्रतिनिधि चरित्र, अवतार प्रतीक लीला नायक



का प्रतीक, रामलीला का प्रतीक, आध्यात्मिक प्रताप पुराण प्रतीक या सांस्कृतिक प्रताप दिव्य शक्ति से अलङ्कृत, विचारों का व्यापकता कायी की उदात्तता क्या का मूल भाव इसका आधार अथ चरित्रों द्वारा महत्ता की स्वीकृति नायक तथा नायिका कृष्ण का नायक-कोटि का निष्पन्न कृष्णचन्द्रिका नवि परिचय महत्ता-पक्ष कृष्णचन्द्रिका का काय रूप व्यापक परिधिपुनः सुगठित बयानक अतिप्राकृत तत्त उदात्त नायक, रसात्मकता, उद्देश्य की ज्योति अभिव्यजना शिल्प म शक्ति कृष्णचन्द्रिका म कृष्ण का नायकत्व, क्या का सूत्रधार, परब्रह्म हरि, नामाधिक कृष्ण प्रतीक कृष्ण, अवतरण प्रतीक महत्प्रपूर्ण व्यक्ति दुर्लभ आत्मशक्ति प्रतिनिधि चरित्र दिव्य शक्ति से अलङ्कृत, विचारों की व्यापकता तथा कायी की उदात्तता, क्या का मूलभाव या रस का आधार अथ पात्रों द्वारा नायक के महत्त्व की स्वीकृति प्रतिनायक, नायक काटि का निर्धारण सुलभात्मक दृष्टि ।

सहायक प्रथम सूची

३८५—३८४

## महाकाव्य का सैद्धान्तिक विवेचन

### मध्ययुग या मध्यकाल

हिंदी साहित्य के इतिहास में प्रायः सभी विद्वानों ने एवमत् से चौदहवीं पंद्रहवीं शताब्दी से उन्नीसवीं शताब्दी के बीच तक के काल को मध्ययुग या मध्यकाल का नाम दिया है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के मत से 'मध्ययुग' या मध्यकाल' शब्द भारतीय भाषाभाषा में नया ही है। इस देश के प्राचीन साहित्य में इस प्रकार के किसी शब्द का प्रयोग नहीं मिलता है। बहुत प्राचीन काल से भारतवर्ष में वृत्त, त्रैता, द्वापर, और कलि नाम के चार युगों की चर्चा मिलती है। ब्राह्मण तथा उपनिषद् ग्रंथों में भी इन शब्दों का प्रयोग मिल जाता है। धार्मिक मनोवृत्ति की प्रबलता या क्षीणता ही इस प्रकार के युग विभाजन का विश्वास का आधार है।<sup>१</sup> घम की दृष्टि से हम लगभग पनना मुग रह हैं, जो त्रेता में थे, वह द्वापर में नहीं रहें, द्वापर में थे, वह कलियुग में नहीं रहें। यह विश्वास कि कलियुग पाप की पराकाष्ठा तथा अंतिम युग है, इस युग में भगवान् विनाश करेंगे तथा पुनः हम वृत्त या त्रेता की तरफ मुड़ पड़ेंगे। आजकल शिक्षित लोग जब मध्ययुग या मध्यकाल की चर्चा करते हैं, तब उनका तात्पर्य भारतीय युग परम्परा के मध्ययुग (द्वापर त्रेता) से नहीं होता है। उनका अभिप्राय भारतीय इतिहास के मध्ययुग से होता है, जिसका आरम्भ हर्षवर्द्धन के काल से तथा अंत औरंगजेब के निधन तक माना जाता है। साहित्य के मंदिर में मध्यकाल का साहित्य बाव का जानने के लिए अनिवार्य है कि 'मध्यकाल' में तात्पर्य क्या है। "इस शब्द का एक स्पष्ट अर्थ आधुनिक युग का पूर्ववर्ती काल है और दूसरा अर्थ स्पष्ट है प्राचीन काल के बाद का समय।"<sup>२</sup>

व्यापक दृष्टि से दखन पर मध्ययुग शब्द का भी इसप्रकार इतिहास है। वस्तुतः यह शब्द अंग्रेजी के मिडिल एज के अनुकरण पर बना लिया गया है। यूरोपीय इतिहास में रोमन साम्राज्य के पतन के बाद से लेकर आधुनिक वैज्ञानिक अभ्युदय के पूर्व तक के काल को मध्ययुग या मध्यकाल कहा जाता है। उन्नीसवीं शताब्दी के पश्चिमीय विचारकों ने साधारणतः सन् ४७६ ईसवी से लेकर १५५३ ईसवी तक के काल को मध्ययुग कहा है। हाल की जानकारी से यह भालूम हुआ कि इस प्रकार के नामकरण का कोई विशेष उद्देश्य योग्य कारण नहीं था। असल बात यह है कि

१ मध्ययुगीन घम-साधना पृ० ६

२ आ० हजारीप्रसाद द्विवेदी—मध्ययुगीनघोष का स्वरूप, पृ० १२१३

मध्ययुग शब्द का अर्थ बान के अर्थ में इतना नहीं होता जितना एक गांव प्रकार की पतना-युग और जब दो हुई मान्यता का अर्थ में होता है।<sup>१</sup> युग में मध्ययुग का मनुष्य विज्ञानता से सजीवता की धार बल रहता है तथा एक 'अपकार' युग (डाक एज) में प्रवेश करता है। धार्मिक जनता की तथा जीवन मूल्य की प्रति श्रितता का राजनीति, सामाजिक धार्मिक, धार्मिक प्रति दृष्टि ॥ गानना होता हुआ पन्द्रहवीं शताब्दी में (धोमर बान तक) दिया प्राप्त करता है।

भारतीय इतिहास का स्वयं युग युग का इतिहास का मध्ययुग टहरता है। भारतीय इतिहास में गुप्त साम्राज्य का साथ ही स्वयं-युग प्रवेश करता है। इससे पूर्व का काल एक अथा युग है जिसमें एतिहासिक गाम्भी, साहित्य, कला का उल्लेख नहीं मिलता है। गुप्त बान से दिशा-बाध आरम्भ होता है, तथा प्रत्यक्ष धर्म में मानव की उपलब्धियां महान होती जाती हैं। विज्ञान की छोटी शताब्दी तक प्रगति अनवरत मिलती है। समुद्रगुप्त अज्ञात, चन्द्रगुप्त मौर्य तथा हयवर्धन का बाद का काल अराजकता का है। धार्मिक दृष्टि से तब मात्र चतुर्गुण हैं राजनीतिक घरातल पर देश की एकता नष्ट हो जाती है तथा देश-तथाही की धार दोड़ पड़ता है। भारतीय इतिहास का आन्तरिक हयवर्धन पर आधारित जाना है। यही स भारतीय इतिहास में मध्ययुग पूर्व मध्ययुग उत्तर मध्ययुग भुगत साम्राज्य के पतन तक रहता है। ब्रिटिश शासन का प्रवेश-काल से ही आधुनिक बान का इतिहास में आरम्भ हो जाता है।

विश्व इतिहास का मध्ययुग सातवीं शताब्दी से सत्रहवीं शताब्दी के अन्त तक माना जाता है।<sup>१</sup> किन्तु भारतवर्ष में सातवीं शताब्दी से उन्नीसवीं शताब्दी

१ यही, पृ० १७

२ 'विषय के इतिहास का मध्ययुग सातवीं शताब्दी से आरम्भ होता है। भारतीय इतिहास में भी मध्ययुग के सक्षम सातवीं शताब्दी के अन्त से हो। मिसले आरम्भ हो जाते हैं। इसलिए एतिहासिकों ने सुविधा के लिए ६५०-१२०० ई० के काल को पूर्व मध्ययुग और १२००-१७०० ई० के काल को उत्तर मध्ययुग माना है। परन्तु मध्ययुग की कल्पना केवल तिथि क्रम के ऊपर अवलम्बित नहीं है उस युग की प्रमुख राजनीतिक सामाजिक धार्मिक तथा धार्मिक प्रवृत्तियों के कारण उसे मध्ययुग कहते हैं। हिंदी साहित्य का इतिहास में काल विभाजन एक विचित्र प्रकार से किया जाता है। हिंदी जसी लोक भाषाओं का उदय स्वयं मध्ययुग की एक प्रक्रिया है क्योंकि भारत पर बरत आक्रमणों ने देश में अश्वयुगीन अवस्था उत्पन्न कर दी और यज्ञानिक तथा सामाजिक प्रति के अभाव में प्रायः १८५७ तक मध्ययुग का ही प्रभाव रहा। इस प्रकार हिंदी का पञ्चम काल धोरगाथाकाल अन्तिकाल तथा रीतिकाल सभी मध्ययुग के अन्तर्गत आ जाते हैं, और हिंदी के मोटे तौर पर दो ही काल हो सकते हैं—मध्ययुग और आधुनिक युग।'

—डा० राजबली पाण्डेय—हिंदी साहित्य के सद्यः में भारतीय मध्ययुग (आलोचना पत्रिका—१९५४, जनवरी) पृ० ६

के अन्त तक बारह सौ वर्षों का काल मध्यकाल माना जाता है।<sup>१</sup> इतिहास का पूरा मध्ययुग बारहवीं शताब्दी तक तथा उत्तर मध्ययुग तरहवीं शताब्दी से आरम्भ होकर उन्नीसवीं शताब्दी तक चलता है। हिन्दी साहित्य का मध्यकाल इतिहास के उत्तर मध्यकाल से (१२००-१८५७) आरम्भ होता है तथा उसका अन्त भी इसी काल में हो जाता है।

## इतिहास का विभाजन

अपने बहुत व्यापक अर्थ में इतिहास मानव जीवन के विकास की प्रगति कहानी है, जिसमें निरंतरता निहित है। इतिहास विभिन्न मनुष्यों के कर्मों की भिन्न गाथा कहता हुआ अपनी एकता, विभिन्नता में भी स्थापित करता है। विभिन्नता के अन्तस्त्व में एकता निहित होने के कारण ही विकासवाद का सिद्धान्त प्रियाशील रहता है। उसके विकास की एकता कभी भी खण्डित नहीं पाती चाह गति में स्थिरता अवश्य आ जाये। इस एकता के होने पर भी सुविधा के लिए इतिहास का विभाजन करना पड़ना, है जबकि इतिहास अनवरत एकता की बड़ी है।<sup>२</sup> भारतीय इतिहास, प्राचीन भारत, मध्यकालीन भारत तथा आधुनिक भारत तीन कालों में मोटे तौर से विभाजित किया जाता है। कुछ विद्वानों ने भारतीय इतिहास का हिन्दू-काल, मुस्लिम काल तथा ब्रिटिश काल में भी विभक्त किया है।<sup>३</sup> लेकिन यह विभाजन आज असत्य तथा अवैज्ञानिक सिद्ध हो गया है, क्योंकि प्राचीन काल में हिन्दुओं के साथ ब्राह्मण, क्षत्रिय, मल्ल, शक आदि अनेक जनजातियाँ मिल गई हैं, इन भिन्न जातियों ने देश में शासन भी किया, अपने धार्मिक देवी देवता लिए दिए भी, अतः प्राचीन काल का हिन्दू काल कहना समीचीन है।

मध्यकाल को मुस्लिम-काल कहना भी ग्राह्यगत नहीं है। भारतीय इतिहास में ऐसा कोई समय नहीं है जब बस मुस्लिम साम्राज्य रहा हो। आवागमन के साधनों की कमी तथा विशाल देश की भौगोलिक सीमाओं के कारण भी देश मुस्लिम सुल्तानों के एकछत्र भण्डे में नहीं आ सका। अलाउद्दीन ने उत्तरी भारत तथा दक्षिणी भारत का बहुत हद तक अपनी सत्ता में कर लिया था किन्तु यह सुल्तान भी हिन्दू राजाओं का समूल नष्ट नहीं कर सका। बुदलखण्ट तथा रणथम्भौर के राजाओं ने उससे लगातार युद्ध जारी रखा। दक्षिण का शक्तिशाली हिन्दू राज्य मुगलों के सभी बादशाहों से लगातार लोहा खता है। मुगल बादशाह औरंगजेब की जिदगी तक उससे युद्ध करना ही समाप्त हुई। मुगलों के समय में राजपूतों के पतन काल में मराठों ने मुगलों से टक्कर ली तथा अहमद शाह अब्दाली के आक्रमण तक वे जूझते रहे।

१ भगवतशरण उपाध्याय—विश्व इतिहास की रूपरेखा पृ० ५

२ के० एम० पण्डित—भारतीय इतिहास का सर्वेक्षण, पृ० ८

३ वही।

अतः मुसलमानों का पूरा आधिपत्य कभी नहीं रहा।

‘ब्रिटिश काल’ को आधुनिक काल कहना भी गलत है। भारत में ब्रिटिश भी एकछत्र सत्ता स्थापित नहीं कर सके। हिंदुओं तथा मुसलमानों ने अपनी स्वतंत्रता के लिए उनसे युद्ध किया, उसका सबसे बड़ा विस्फोट १८५७ की आतिशय दिलाई देता है।

### मध्यकाल का आरम्भ

इतिहास में परिवर्तन कारण-काय परिणाम से बहुत धीमे होता है। अतएव एक काल के अवसान तथा दूसरे काल के आवागमन की कोई एक निश्चित तिथि निर्धारित कर देना बहुत कठिन है। यद्यपि अचानक या अनजाने ही मानव जाति के इतिहास में ऐसी घटनाएँ घट जाती हैं यद्यपि कभी-कभी ये महत्वपूर्ण घटनाएँ निश्चित तिथि भी प्राप्त कर लेती हैं जिनका राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक, साहित्यिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक जीवन पर अमिट प्रभाव पड़ता है। लेकिन मानव की परम्परा गत चली आती हुई युगा की मनःस्थितियों धारणाओं तथा सत्याओं में यह परिवर्तन बहुत धीमा आता है। अतः प्राचीन काल का अतः मध्यकाल का आरम्भ किसी निश्चित तिथि पर नहीं हुआ, परन्तु कुछ निश्चित तिथियाँ में कुछ ऐसी महत्वपूर्ण घटनाएँ घटी हैं, जिनका हमारे इतिहास पर बहुत प्रभाव पड़ा है।

मध्यकाल के आरम्भ की ऐसी निश्चित तिथि तथा घटना उत्तरी भारत में महान् प्रतापी हिंदू सम्राट् हर्षवर्द्धन की मृत्यु तिथि (६४७-२०) मानी जाती है। हर्ष की मृत्यु से उस महान् व्यवस्था का लोप हो गया जिसने चार शताब्दियों तक भारत की हिंदू राज्य बनाए रखा। हर्ष के बाद प्रतापी सम्राट् का मकाल पड़ गया, राजतंत्रिक अराजकता उत्पन्न हो गई, राजपूत लण्ड-लण्ड हो आपस में लड़ने लगे, प्रतिभाशाली ब्राह्मणों के अश्रित्व का लोप हो गया। राजपूतों ने युद्ध व्यवसाय बना लिया। हर्ष के बाद धार्मिकता भी व्यापकता से शून्य हो गई। भिन्न वर्गों तथा सम्प्रदायों में संघर्ष बढ़ने लगा। जाति प्रथा जटिल तथा स्त्रियों की दशा बिगड़ती गई।

इस्लाम का उत्कर्ष एक बहुत प्रभावशाली घटना है, लेकिन यह घटना भी किसी तिथि को निर्धारित नहीं जा सकती। ७१२ ई० में सिंध पर मुहम्मद बिन कासिम का आक्रमण हुआ पर कोई स्थायी प्रभाव नहीं पड़ा। ग्यारहवीं शताब्दी में मुहम्मद गजनवी के आक्रमण से दंग काय गया। उनमें अरबों को ताना-दण्ड की बबरता से झूटना, रोंगता रहा। बारहवीं शताब्दी में मुहम्मद गौरी ने भारत पर आक्रमण किया। वह स्थायी रूप से भारत का मुसलमान राज्य बनाना चाहता था। १२०६ ई० में गौरी स्वर्गस्थ हो गया तथा एबक नहीं पर बैठा। कुतुबुद्दीन एबक का राज्य मल्ल पर आक्रमण होना बहुत महत्वपूर्ण घटना है। दंग में मुसलमानों के परजम गये तथा सभी धर्मों में उनका प्रभाव बढ़ने लगा।

## मध्यकाल का अन्त

इतिहास का यह जटिल प्रश्न है कि मध्यकाल की अन्तिम सीमा रेखा कहा है। कुछ विद्वान मध्यकाल का अन्त सोलहवीं शताब्दी के अन्त में मानते हैं। लेकिन इसी समय कुछ ऐसी घटनाएँ घटी, जिनमें सम्पूर्ण देश की जन चेतना मिली है। भक्ति आन्दोलन न सामूहिक जन चेतना को अपने में मिलाने हुए दश के भावी इतिहास पर बहुत प्रभाव डाला। इस आन्दोलन में भराठा तथा सिकखा को दिशा दी, उन्होंने मुसलमान तथा अंग्रेजों से हिंदुत्व की रक्षा के लिए युद्ध किया। सामाजिक क्षेत्र में सन्तों ने बड़ा काम किया। स्वामी रामानुज, रामानन्द, वल्लभाचार्य, मध्वाचार्य, चन्दाय, कबीर, नामदेव गुरु नानक, तुकाराम दादू दयाल, तुलसी आदि सत्ता, महन्ता ने सुधार की आवाज उठाई, अछूत जो लगातार इस्लाम अपना रहे थे, उन्हें मुसलमान होने से बचालिया। भक्ति आन्दोलन ने हिंदू मुसलमानों के बीच की खाई का पाट दिया तथा दानों ने धार्मिक सहिष्णुता के माध्यमों को जीना शुरू किया।

सोलहवीं शताब्दी में ही यूरोप निवासियों ने भारत के लिए सामुद्रिक मार्ग का अन्वेषण किया। वास्कोडिगामा इसी समय यहाँ आया। आधुनिक इतिहास-लेखकों का इतिहास अंग्रेजों के फ्रांसीसियों के आने से यही पर आरम्भ हुआ। मुगल साम्राज्य के पतन काल में इन जातियों ने सत्ता के लिए युद्ध लड़ा तथा अन्त में ब्रिटिश राज्य की नींव ही जम गई।

सोलहवीं शताब्दी में ही (१५२६ ई०) बाबर ने पानीपत के मैदान में इब्राहीम लोदी पर ऐतिहासिक विजय प्राप्त की। इस तिथि से ही जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में इस दश का इतिहास बदलने लगा। इसी से सोलहवीं सदी ही नवयुग का प्रतीक लगती है। लेकिन भक्ति आन्दोलन सब कुछ नहीं था, मुगल बादशाहों की वजह से हिंदू शक्ति के समक्ष उन्हें झुकना पड़ा। बिलामता ने भक्ति को शीघ्र पछाड़ दिया। बाबर, हुमायूँ अकबर का काल धार्मिक सहिष्णुता में व्यतीत हुआ, लेकिन जहांगीर से औरंगजेब तक धार्मिक कट्टरता चरम सीमा पर पहुँच गयी। मध्यकालीन व्यवस्था चलती रही जिसका अन्त (१७०७) में औरंगजेब के मृत्यु के साथ हुआ। औरंगजेब की मृत्यु से परिवर्तन के चिह्न प्रकट हुए, लेकिन आधुनिक प्रवृत्तियों का विकास बहुत बाद में हुआ। १६५७ ई० के प्लासी युद्ध से भी बड़ा परिवर्तन आया तथा अंग्रेजों की सत्ता की नींव जम गई। अंग्रेजों के आगमन से जीवन के सभी क्षेत्रों में नवीन वातावरण खुल पड़े। सन् १८५७ में एक बार फिर हिंदू तथा मुसलमानों पराजित हुए तथा अंग्रेज शासन स्थिर तथा अजेय बन गया। अन्त मध्यकाल का आरम्भ स्पष्ट नहीं है मृत्यु तथा अन्त भारत में मुगल साम्राज्य का पूर्ण पतन और अंग्रेजों की पूर्ण राजनीतिक स्थिरता के साथ होना है।

## हिंदी साहित्य का मध्यकाल

भारतीय इतिहास का उत्तर मध्यकाल (१२००-१८५७) अपने भीतर हिंदी साहित्य



था ।<sup>१</sup> उत्तर मध्यकाल या रीतिकाल के कुछ विरक्त भक्तों को अपवाद रूप में छोड़कर सभी कवि किसी न किसी आश्रय दाता के यहां जन्म गये थे । अकबरी दरबार में गग, नरहरि, वदीजन नवरत्न में रत्न रहीम, टोडरमल, बीरबल भी हिन्दी काव्य का सज्जन करते रहे ।<sup>२</sup> केशव, भूषण, मान, सुदन, जोधराज आदि सभी कवि भी राजदरबारी ही रहे अतः आत्मा का उदघोष इस काव्य में नहीं है । जीवन-मूल्य भक्तिकाल के ही इस काल में भी माय रहे यही कारण है कि भक्ति का आवरण ढाल कर शृंगार चर्चा होनी रही । जीवन दृष्टि के सकुचित हो जाने से रामचरित मानस के स्थान पर 'व्रज विनाम की ही रचना हा सकती थी ।'<sup>३</sup>

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल जी द्वारा निर्धारित मध्यकाल की पूर्व तथा उत्तर सीमा आज सभी विद्वानों को माय है । यह आ० शुक्लजी की भांति मध्यकाल से हमारा तात्पर्य भक्तिकाल तथा रीतिकाल से ही है ।

आचार्य शुक्ल की यह मायता है कि इतने बड़े उलट फेर के पीछे हिन्दू जन समुदाय पर बहुत दिनों तक उदासी-सी छाई रही । अपने पौरुष से हताश जाति के लिए भगवान की शक्ति और करुणा की ओर ध्यान ले जाने के अतिरिक्त दूसरा माग ही क्या था ?<sup>४</sup> किन्तु शुक्लजी की यह धारणा उस काल के इतिहास तथा साहित्य के आधार पर समीचीन नहीं कही जा सकती । मध्ययुगीन भक्ति आन्दोलन राजनीतिक पराधीनता से प्रभावित न होकर शुद्ध वपुष्वधम परम्परा में धार्मिक धारा के रूप में प्रारम्भ हुआ । इस नवजागृत वपुष्वधिक चेतना ने उत्तरी भारत की राजनीति तथा धर्मनीति को प्रभावित किया । डा० राजवली पाण्डेय ने ठीक ही कहा है कि 'यद्यपि उत्तर भारत में हिन्दू राजवंश तो तरह-ही शती के प्रारम्भ में ही समाप्त हो गये थे तथापि ऐसे छोटे छोटे जमींदार बने रहे, जिनके पास सैनिक शक्ति भी थी और वे बगबर मुस्लिम सत्ता से विद्रोह करत रहे । जहाँ तक जनता का प्रश्न है (विशेषकर उत्तर प्रदेश और बिहार में) धार्मिक दृष्टि से इस्लाम से उसने कभी हार न मानी । उसके बहुत से मन्दिर तोड़े गये, किन्तु उसने बराबर नये मन्दिरों का निर्माण किया और अपनी धार्मिक चेतना बनाये रखी । राजनीतिक आदम्य और आशा भी कभी लुप्त नहीं हुई । राणा संग्रामसिंह और हेमचन्द्र (हेमू) के बाद भी जब अकबर का प्रबल प्रताप चारा और फल रहा था तब रानी दुर्गावती तथा राणा प्रताप आदि ने स्वतन्त्रता की आग बुझने नहीं दी । अमफतनाए हुई किन्तु निराशा ने भारतीय जनता का कभी आशान्त नहीं किया ।'<sup>५</sup> नवजागृत वपुष्वधम की चेतना में लाकसग्रह का

१ डा० नगेन्द्र—रीतिकाव्य की भूमिका, पृ० १३२

२ डा० सरयूप्रसाद भट्टाचार्य—अकबरी दरबार के हिन्दी कवि, पृ० ६०

३ डा० नगेन्द्र—रीतिकाव्य की भूमिका, पृ० १६

४ आचार्य रामचन्द्र शुक्ल—हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृ० ६३

५ आलोचना—परिष्कार, पृ० ११ १६५४ जनवरी अंक ।



भाव अधिक् था, जिसके उन्नायक तथा सस्थापक रामानन्द तथा तुलसीदास बहे जा सकते हैं। बङ्गव भक्ता ने भगवान् के चरणों में अपने का टेव दिया, लेकिन मनुष्य के सामने (जमींदार हो या मुगल बादशाह) इन्होंने मस्तक 'सिर धुनि गिरा सागि पछिताना' समझकर कभी भी नहीं झुकाया। बीरगाथानाल की राजवश तथा चारण प्रवृत्ति के प्रति उनमें आश्रय का भाव प्रबल था। यही कारण है कि राम तथा कृष्ण भक्ता की लोक सग्रही भावना में निराशा का संकेत मात्र तब नहीं है। तुलसीदास, सूरदास, कबीरदास आदि सभी दास कवियों का 'दास बीच' तो पतित जाति की श्रम्युत्थान देने का महान प्रयास था। विष्णु की राम कथा कृष्ण रूप की कल्पना में निराशा उदासी या चिन्ता का नाम नहीं है। इस प्रकार इस भक्ति आंदोलन में मुगलों से देश की धार्मिक पवित्रता नष्ट नहीं होने दी। इस पूर्व मध्यकाल में (तेरहवां से सत्रहवीं शताब्दी तक) धर्म ही प्रेरक शक्ति के रूप में विद्यमान रहा है।

उत्तर मध्ययुग में (सत्रहवीं शताब्दी से लेकर उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य तक) राजनीतिक विघटन, सामाजिक अवस्था और सांस्कृतिक ह्रास का क्रम चरम-सीमा को पहुँच गया। सामाजिक एकता सामाजिक भावना और जीवन के सौंदर्य के मूल्य ध्वस्त होने लगे। साथ ही निर्माण की शक्तियों में क्षीणता आ गई। मुगलों का ह्रास तथा नवाबी के उदय ने धृति भोग तथा विलासिता को जन्म दिया। उसके प्रभाव में साहित्य भी अलग नहीं रह सका। भोग विलास का आधिक्य, धार्मिक शक्ति तथा राजनीतिक सत्ता का दृष्टि में ही रीतिकाल को जन्म दिया। निम्न स्तर का लोग धर्म तथा सामाजिक कर्तव्यों में लिपट कर जीते रहे लेकिन उच्च स्तर के व्यक्तियों में एक महान परिवर्तन अवतरित हुआ। ब्रह्मदान तथा चर्यादान की साधनात्मक परिणति बहुत बुरी हुई। प्रत्येक अपनी शक्ति (व्यवयोगिता) के सामं प्रदुभूत होने लगा। स्त्री सम्भोग की ही साधना का साधन बनाना पड़ा। सगुण भक्ति से ईश्वर का लाकसग्रही और मयादावादी ऐश्वर्य का प्राप्त हुआ था, वह ठुकराया जान लगा। इस काल के घोर भावुक, कामल तथा विलासी स्वभाव वाले लोगो को धनु धारी राम के बदले भागवत के रसिया बिहारी कृष्ण का रूप अधिक भाया। इसके लिए भी प्रेरणापूव मध्ययुगीन साहित्य से मिली थी। 'भागवत पुराण इसका निभर था और जयन्त आदि कवि इसके उदगाता। यह मधुर भाव और उससे प्रति साहित्य जहाँ सामन्तवानी और विनासी समाज में मिला, वहाँ उसने रीति काव्य तथा नायिका भद का रूप ग्रहण कर लिया। गोपी भाव तमस्रता और घनयता का बल मानकी विलास और वासनाओं का माध्यम बन गया। इसका बहाव आधुनिक युग की सामाजिक तथा राजनीतिक क्रान्ति का सही रूप था।'।

अन्तु मन्तव्य यह है कि निम्ने साहित्य के मध्ययुग का सामाजिक परम्परा के मान में सांस्कृतिक मूल्यांकन के साथ साहित्यिक प्रवृत्तियों के आधार पर तरह-

शताब्दी से उन्नीसवीं शताब्दी के अन्त तक स्वीकार करना चाहिए ।

## महाकाव्य का स्वरूप

महाकाव्य का महामानव के महनीय कार्यों के द्वारा युग-युग के मानवी को अपनी जीवन्त-ज्याति से प्रभावित करता है साथ ही महाकाव्य तथा युग जीवन का पारस्परिक सम्बन्ध इतना प्रगाढ़ है कि दोनों एक दूसरे के पूरक हैं । युग के अखण्ड चित्र के साथ, मानव मूल्यों के प्रति जितनी सजगता महाकाव्य में मिलती है, उतनी काव्य विधा के किसी भी अन्य रूप में नहीं । जीवन का अन्तरंग एवं बहिरंग यथाय एवं आदर्श महाकाव्य में प्रतिबिम्बित होता है । महाकवि की दृष्टि यष्टि तथा समष्टि दोनों का आत्मसात करती है इसीलिए महाकाव्य का आयाम विराट तथा जीवन पत्रक व्यापक होता है ।

महाकाव्य को लक्षणबद्ध करने के लिए विद्वानों ने अनेकानेक प्रयास किए, किन्तु उसकी विराटता के कारण ये प्रयास, प्रयास मात्र ही सिद्ध होते रहे और वे किसी सुनिश्चित लक्षण के अन्तर्गत उसे समेट नहीं पाये हैं । वास्तव में महाकाव्य को किसी सीमित मत में बद्ध करना कोई सन्नयन कार्य भी नहीं । इसका प्रधान कारण स्पष्ट है कि इसका सीधा सम्बन्ध युग-जीवन से है, विश्व, मानव तथा समाज से है । युग-जीवन में नवीन भाव बाध तथा ज्ञान-बाध के आने ही प्राचीन जीवन मूल्य एवं जाते हैं तथा नवान जीवन मूल्य सामने आ खड़े होते हैं । यह अथवा जजरता मानदण्ड परिवर्तनकारी विकास में बाधक बन जाते हैं । अतः उन्हें त्याग्य समझना भी उचित है । इसका एक स्पष्ट प्रमाण यह भी है कि भारतीय तथा पाश्चात्य विद्वानों ने समय समय पर महाकाव्य के जो प्रतिमान निर्धारित किए, वे सुस्थिर नहीं रह सके । कभी वह कथानक पर लक्ष्मण रेखा खींचता रहा है । महाकाव्य में 'ऐसा होना चाहिए'

१ 'ससार में जितने राष्ट्र और जितने कवि हैं, महाकाव्य की सचमुच ही उतनी परिभाषाएँ हैं और महाकाव्य रचना के उतने ही नियम हैं ।'

—गोपीकृष्ण 'गोपेन'—विदेशों के महाकाव्य 'दी बुक ऑफ एपिक' (अनुवाद)

प्रमाण १९४९, भूमिका भाग, पृ० १३

२ And we may remind ourselves and before all things, that the term Epic definite enough in meaning can bear no narrow interpretation

—Dixon English Epic and Heroic poetry, P 18

३ "प्रधान तथा अनिवार्य लक्षण ही स्थाई, शाश्वत और युगों युगों तक चलने वाले होते हैं, तथा गौण लक्षण प्रत्येक कवि तथा प्रत्येक युग में परिवर्तित होते रहते हैं ।" —डा० इन्द्रपाल सिंह 'इन्द्र' रीतिकाल के प्रमुख प्रबन्ध काव्य, पृ० १५

इस दुराग्रह ने कवि की प्रतिभा का गीमिन् बरतपर में बरत करवा दिया। इसका परिणाम मुक्त तथा सहज आत्माभिप्रेक्षित के लिए निराश ही बाधा उपस्थित हुई है। लक्षणा पात्रन का सर्वाधिकार आग्रह मन्दिर आचार्यों का था। इसी कारण इनकी परिभाषाओं में आत्माभिप्रेक्षित तथा कवि उत्पत्ति गहनता के लिए स्थान पड़ा है।

द्वितीय समस्या यह भी सामने आती है कि भारतीय तथा पारंपारिक विद्वानों की अधिकांश परिभाषाएँ मुख्यतः महाकाव्यों का ध्यान में रखकर प्रयुक्त की गईं ही जान पड़ती हैं। उदाहरणार्थ एक वंश का एक राजा धर्मशास्त्र ही वंश के धर्म राजा श्री महाकाव्य का नायक है। सत्य है इन प्रकार की धारणा कालिदास के 'रघुवंश' से ग्रहण की हुई जान पड़ती है। कविराज की यह बात शायद उन समय में उपयुक्त लगती रही होगी जिस समय इस प्रकार के महाकाव्य निर्मित किए गए थे। परन्तु आज के युग में इन मानदण्डों का पालन करना कठिन है। ये एक प्रतिमान 'मानस', 'पदमावत', 'सावन', 'कामायनी' आदि महाकाव्यों पर लागू नहीं किए जा सकते हैं। कथानक यद्यपि बहिरंग तथा नायक विषय प्राचीन मान्यताएँ आज बदल रही हैं। आज महाकाव्य में देवता, राजा या गदवशीय क्षत्रिय ही को नायक नहीं बनाते हैं अपितु आज तो कोई भी व्यक्ति चाहें वे किसी भी जाति, धर्म या समाज का क्या न हो, नायक हो सकता है। अधुनातर कविता केवल सूक्ष्म मना वृत्तियों के ही आधार पर महाकाव्यों की रचना करने लगे हैं, जस मुनिमानदन पन्त जी का 'लोकायतन'।

अस्तु हाग निर्धारित ईसा पूर्व तीसरी शताब्दी के लक्षण चाहें 'इन्दियन' या ओडेसी पर ठीक ऊपरते ही परन्तु 'रिवोल्ट आफ् इस्लाम', पराडाइज लास्ट' आदि महाकाव्यों के लिए वे लक्षण मान्य नहीं हैं। परवर्ती, रोमांचक, ऐतिहासिक शास्त्रीय तथा असकृत महाकाव्यों के विषय में भी यही बात कही जा सकती है। विद्वानों ने आधुनिक काल में आकर लक्षण सम्बन्धी इन रुढ़ियों का अनुभव किया इसीलिए केर, डिकसन, वाकर तथा एवरब्रॉम्बी आदि विद्वानों ने रचना के आधार

१. 'अधिकांश संस्कृत आचार्यों ने भी रामायण तथा महाभारत को पूर्णतः आदर्श न मानकर असकृत महाकाव्यों को ही लक्षण ग्रन्थ माना। इण्डी हेमचन्द्र विद्वनाथ आदि के सामने कालिदास, अश्वघोष, भारवि तथा माघ आदि के महाकाव्य ही प्रमुख थे। हिन्दी महाकाव्यों का अर्थ व्यक्तित्व भी है। अतः संस्कृत आचार्यों द्वारा निर्धारित लक्षण हिन्दी के सभी महाकाव्यों को अपनी सीमा में बद्ध नहीं कर सके। यदि कुछ परिभाषाओं को सर्वान्त मान लिया जाए, तो पम्बीराज रासो पदमावत कामायनी, कुक्षेत्र, एकलव्य आदि को ही नहीं रामचरित मानस जैसे स्वयत्तिष्ठ महाकाव्य को भी विशद महाकाव्य के रूप में स्वीकार नहीं किया जा सकता।' — डा० न्यामनदन किशोर —
२. आधुनिक हिन्दी महाकाव्यों का गिर्य विधान, पृ० ३२

पर बल न दकर उसके सावभौमिक उद्देश्य पर बल दिया है। बड़े आश्वय मे डालने वाली बात लगती है, कि हम रामायण तथा महाभारत को तो सम्वृत-माहित्य मे 'एपिक' शब्द से अलवृत्त पाने हैं, किन्तु अथ कृतिया का आचार्यों ने 'एपिक' से अभिहित नहीं किया। दूसरी ओर भामह दण्डी, रुद्रट आदि ने रामायण तथा महाभारत का धर्म अथ समझ कर छाड़ दिया तथा उनके महाकाव्यत्व की चर्चा तक नहीं की। कानिदास, अश्वघोष भारवी आदि के महाकाव्या को ध्यान म रखकर ही तत्सम्बन्धी लक्षण प्रस्तुत की हैं तथा इही के आधार पर महाकाव्य की कसोटिया का निर्माण किया। परन्तु इन आचार्यों के धिसे पिटे प्रतिभान माव कानिका तथा सावभौमिक नहीं हा सके। लक्षणा की पूर्ति मात्र से ही रचना महाकाव्य हो, यह कहना अनुचित है और प्रतिभा के मुक्त विकास मे बाधक भी। कठघर म महाकाव्य का सीमित करना अन्याय है। अत आकार को ही महाकाव्य का मानदण्ड नहीं मानना चाहिए। सक्षिप्त आकार मे भी मानवता को शाश्वत मूल्यों से युक्त रचना महाकाव्याचिन औदात्य धारण कर सकती है, अत आठ या आठ मे अधिक सर्गों की चर्चा ही व्यय है।

इसीलिए इस बात की आवश्यकता प्रतीत होती है कि इन रुढ लक्षणों को उसी रूप म स्वीकार न करके आज के बर्णानिक युग म उन पर विचारोपरान्त तत्सम्बन्धी धारणा बनानी चाहिए। उदाहरणाय ऐतिहासिक महाकाव्य 'शाहनामा' फारसी ढग का अकेला महाकाव्य है। दश विदेश मे उसकी कीर्ति अक्षप है, परन्तु सम्वृत आचार्यों के लक्षणा पर कसने पर उसे महाकाव्य नहीं कहा जा सकता। इसमे कृति अथवा कृतिकार का दाप नहीं अपितु लक्षण का ही अव्याप्ति दोष है। दूसरे सीमित शब्दावली के मात्र बन्धन से व्यापकता पर कसे घेरा डाला जा सकता है। तीसर महान से महान कवि की प्रतिभा भी निर्दोषता से मुक्त नहीं होती, अनेक प्रयाम करने पर भी रचना म कुछ न कुछ दोष रह ही जाता है। अत महाकाव्य की एक सवमाय कमीटी का निर्धारण करना उचित हागा।

### महाकाव्य तथा 'एपिक' शब्द पर विचार

प्रबन्धक-काव्य के सवश्रेष्ठ रूप को हमारे यहां महाकाव्य कहा गया है तथा खण्ड चित्र वाले काव्य को आचार्यों ने खण्ड-काव्य की सगा दी है। सामान्यतया महाकाव्य मे जीवन का सर्वांग चित्रण, युग-व्यापी सन्देश पूण रसात्मकता होती है। महाकाव्य का लगभग पर्यायवाची शब्द पाश्चात्यकाव्य शास्त्र का 'एपिक' माना गया है। किन्तु 'एपिक' तथा महाकाव्य दोनों एक दूसरे के पर्यायवाची हैं इस विषय म विद्वाना का मतभेद है। उहान दाना म साम्य अधिक तथा वषम्य कम स्वीकार किया है। आचार्य हजारोप्रमाद द्विवेदी का कथन इस दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण है—महाकाव्य शब्द का प्रयोग आजकल दो अर्थों मे हाते लगा है, अंग्रेजी के 'एपिक' शब्द के अर्थ म और प्राचीन अलकारिक आचार्यों द्वारा प्रयुक्त सगबद्ध

काव्य के रूप में। साधारणतया यूरोपीय परिभाषा १ भारतीय 'एपिक' कहकर बताने की प्रथा की चर्चा की है। महाकाव्य की ओर समाधान की।<sup>१</sup> 'एपिक' शब्द से पाश्चात्य विद्वानों की दृष्टि का स्पष्ट किया है तथा इस समय से यह भी चलन है कि 'एपिक' शब्द उदात्त-काव्य की उच्च शक्ति का पर्यायवाची बनकर प्रयुक्त किया गया। भारतीय तथा पाश्चात्य विद्वानों महान् कृति को महाकाव्य कहा या एपिक कहने में ही महानकाव्य या उदात्त काव्य की छानि मिली है। दाना में प्रायः समान तरंगों के साथ साथ उद्भयगत विचारों में भी मीमांसा मिलती नहीं है।

### लक्षण

लक्षण का सबसे अनिवार्य गुण यह होना चाहिए कि यह सत्यता भावित्व से रहित हो। डा० नमोदत्त ने ठीक ही कहा है कि 'लक्षण अनिवार्य तथा अस्पष्ट दोषों से मुक्त होना चाहिए—उसमें कोई भी अनावश्यक नहीं होना चाहिए।' उनके मत से कल्पित तथा अवांछनीय बातों लक्षण में चर्चा ही व्यर्थ है। लक्षण में तो मूल पाठ्यकारी विशेषता रहनी है रहनी चाहिए।<sup>२</sup> महाकाव्य तथा महाकाव्य सहायक गुणों की सूची नहीं। साथ ही उसमें रागात्मक वृत्तियों की महत्ता को भी स्वीकार करना ही पड़ता है। काव्य की मूलम भावनाया अनुभूति, वृत्तियों तथा विकासयुक्त मोड़ों की शक्ति की स्थूलता में बाधना कठिन है। फिर भी अनिवार्य उपलब्धियों को ध्यान में रखकर एक दृष्टिकोण बनाना ही पड़ता है। अतः सन्तुलित आधार ही लक्षण की प्राप्ति शक्ति है।

महाकाव्य में लक्षण का बंधन अनिवार्य होना ही नहीं चाहिए। रचना की भव्यता महानता उदात्तता तथा सुगन्धशील स्थिरता ही उसका लक्षण मानना चाहिए। महाकाव्य के सभी तत्व जिसमें समाहित हो जाएं ऐसी परिभाषा को प्रस्तुत करना भी एक समस्या है।<sup>३</sup> इसीलिए परिभाषा देने के काव्य का विद्वानों ने गुरुगम्भीर कहने के साथ ही अत्यधिक कठिन तथा कष्ट साध्य काय कहा है।<sup>४</sup> अधिकांश लक्षण

१ आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी—संस्कृत के महाकाव्यों की परम्परा आलोचना (पत्रिका) अंक प्रथम, पृ० ६ १९५२, दिल्ली।

२ डा० नमोदत्त—भारतीय काव्य शास्त्र की भूमिका पृ० ७ (द्वि० सं०)

३ वही पृ० ७

४ I have no great opinion of a definition the celebrated remedy for the cure of disorder—(uncertainty and confusion) Edmund Burke—Introduction of Sublime and Beautiful p 4

५ Definitions are for the most part alike unsatisfactory and treacherous but definitions of the poetry are preëminently so

लक्ष्य ग्रन्थों को देखकर ही निर्मित कर लिए जाते हैं और ग्रन्थ ग्रन्थ न कोई प्राचीनता की बड़ी म भी नवीनता से ही आता है। कभी कभी तो कृतिवार नीलवता के प्रयोग में इतने आगे बढ़ जाता है कि समस्त ऋतु लक्षण पीछे छूट जाते हैं। यह कथन 'एक' और तो महाकाव्य लिखे गए और दूसरी ओर उनकी नवीन परिभाषाएँ दी जाती रही। साहित्याचार्यों ने महाकाव्य के लक्षण निर्धारित करते समय अपने सामन किसी न किसी आदर्श महाकाव्य को रखा। य लक्षण उस काल के महाकाव्यों के लिए जा माय रहे, पर बाद में परम्परामुक्त महाकाव्यों के लिए वे अयोग्य सिद्ध हुए।<sup>१</sup> स्थिर मानदण्ड अप्रयाप्त सिद्ध होत गए। अत आवश्यकता इस बात की है कि भारतीय तथा पाश्चात्य विचारकों के मतों पर विचार करके सन्तुलित एवं वैज्ञानिक परिभाषा प्रस्तुत करने का प्रयास किया जाए जिसमें महाकाव्य के ठोस तथ्य उपस्थित हो जो देश काल के बधन से मुक्त आश्रयत तत्त्वा से युक्त हो। आगामी पृष्ठा में महाकाव्य से सम्बंधित दश विद्वानों के मतों का उपस्थित किया गया है। इन आचार्यों की परिभाषाओं का तुलनात्मक विवेचन द्वारा उनमें से उपलब्ध निष्कर्षों को प्रस्तुत करने की चेष्टा की गई है। तथ्य की सिद्धि के लिए इन दिशाओं से विवेचन प्रस्तुत करेंगे—

- (१) संस्कृत आचार्यों के मतों का परीक्षण
- (२) पाश्चात्य विचारकों के मतों का परीक्षण
- (३) हिन्दी आचार्यों के मतों का परीक्षण
- (४) तुलना एवं निष्कर्ष।

### संस्कृत आचार्यों के मतों का परीक्षण

संस्कृत साहित्य में महाकाव्य की गुणमयिनी परम्परा को दृष्टिपथ में रखते हुए आचार्यों ने समय समय पर तत्सम्बन्धी अनुबन्ध निर्धारित कर महाकाव्य के स्वरूप को सुव्यवस्थित रूप प्रदान किया है। संस्कृत में उपलब्ध वाक्यशास्त्रीय ग्रन्थों में भाग्य का काव्यालंकार प्राचीनतम ग्रन्थ है, जिसमें सर्वप्रथम महाकाव्य के लक्षणों पर प्रकाश डाला गया है। कुछ विद्वान अग्निपुराणकार के मत में भाग्य से भी प्राचीन मानते हैं किन्तु आज तक इस कृति का समय का हो निश्चय ही नहीं हो पाया है। यह निश्चय ही भाग्य तथा दण्डी के बाद की कृति है, ऐसा अधिकांश विद्वानों का विश्वास है। भाग्य तथा दण्डी के पश्चात् अग्निपुराणकार, रुद्रट भोजराज, हम्बद तथा विश्वनाथ प्रभृति आचार्यों ने महाकाव्य सम्बन्धी लक्षणों को प्रस्तुत किया है। आगे इसी आचार्यों के मतों को प्रस्तुत करने के उपरान्त महाकाव्य के स्वरूप का निश्चित करने की चेष्टा की है।

१ डा० श्यामानन्द किशोर—डॉ० लिट—आधुनिक महाकाव्य का शिल्प विधान, पृष्ठ ३२

## भातह (पाँचवीं या छठी शताब्दी)

इस आचार्य के मत से महाकाव्य सगबद्ध, महान् चरित्रों से युक्त, महान् आकार का, ग्रन्थि शब्दों से युक्त, अथ गौरव तथा अहंकार से युक्त होना चाहिए। उसका कथानक सदाश्रित हो जिसमें मन्त्रणा तथा युद्धादि के वर्णन के अनतिरिक्त नायक के अम्युदय का वर्णन किया गया हो। महाकाव्य के कथानक को पचसंधिया द्वारा सुगठित तथा ऋद्धिपूर्ण बनाया गया हो। उसमें समस्त रसों के साथ पुरुषार्थ चतुष्टय का स्थान देना चाहिए।<sup>१</sup> इस परिभाषा में निम्नलिखित तथ्य स्पष्ट हैं—

(१) महाकाव्य का कथानक सगबद्ध हो।

(२) सुगठित तथा सदाश्रित कथा हो।

(३) उसमें महान् चरित्रों से युक्त विजिगीषु नायक के अम्युदय को सर्वाधिक महत्त्व दिया गया हो।

(४) कथा में जीवन का बहिर्मुख प्रस्तुत किया गया हो।

(५) उसमें धर्म, अथ काम मोक्ष जीवन के चारों पुरुषार्थों का स्थान मिला हो।

(६) अलंकारवादी हाते हुए भी रस की अनिवार्यता को स्वीकार किया गया हो।

(७) महाकाव्य का आकार विनाश होना चाहिए।

## दण्डी (सातवीं शताब्दी)

दण्डी ने भातह के काव्य सम्बन्धी सभी तथ्यों को समेट कर अपना लक्षण प्रस्तुत किया। 'महाकाव्य में सगबद्धता आरम्भ में आशीर्वादात्मकता अथवा वस्तु निर्देशात्मकता हो। सदाश्रित वस्तु पर आधारित कथानक ऐतिहासिक अथवा लोक प्रख्यात वस्तु का हो। पुरुषार्थ चतुष्टय का स्थान मिला हो नायक चतुर तथा उत्तम हो। उसमें नगर, सागर पर्वत चन्द्रादय उद्यान, जल-विहार, मधुपान रतात्मक विप्रलम्भ विवाह, कुमारदय, मन्त्रणा प्रयाण नायक अम्युदय, अलंकार, सङ्घटिता रमभाव की निरन्तरता सन्तुलित मग विधान सन्धिया से गठित कथा नायक रत्नकला तथा स्थायी महत्त्व के अनतिरिक्त कलात्मक बहिर्मुख का समावेश किया गया है।'<sup>२</sup> इस परिभाषा पर दृष्टि गलन से यह तथ्य प्रकाश में आते हैं—

(१) महाकाव्य सगबद्ध हो।

(२) उसका आरम्भ आशीर्वादात्मक अथवा वस्तुनिर्देशात्मक ढङ्ग से किया गया हो।

(३) उसका कथानक ऐतिहासिक पौराणिक अथवा लोक प्रख्यात वस्तु पर

१ भातह—काम्यालकार १।१६, २१

२ दण्डी—काम्यालकार, १।१४ १६

धारित है।

(४) उसका उद्देश्य पुरुषार्थ चतुष्टय की सिद्धि है।

(५) नायक चतुर तथा उदात्त हो जिसके अम्युदय का वर्णन किया गया हो।

(६) महाकाव्य में नगर पर्वत, चन्द्र एवं सूर्योदय उद्यान, जल विहार आदि पुर एवं राजसिन्धु वर्णन होने चाहिए।

(७) यह सक्षिप्त होने के साथ साथ अलंकृत भी है।

(८) रस की अलङ्कार धारा उसमें प्रवाहित है।

(९) संग विशालकाल न हो तथा क्या पंच मण्डपा से गठित हो।

## अग्निपुराणकार

दण्डी के पश्चात् अग्निपुराणकार को लिया जा सकता है। इनका रचनाकाल विवादोद्भूत है।<sup>१</sup> इनके मत में महाकाव्य का सर्गों से विभाजन होता है। इतिवृत्त इतिहासोद्भूत होने के साथ-साथ लोक विद्युत है। मन्त्रण, दूत प्रेषण आदि का विस्तार नहीं होना चाहिए। सक्षिप्त सर्गों के साथ संगीत में छन्द परिवर्तन हो। सर्गों में अतिजगती, शकवरी, अतिशकवरी निष्ठुप, पुष्पिताग्रा वक्त्रादि सुन्दर छन्दों का मेल है। मार्ग ही सज्जना की अनादरवाली पद्धति त्याज्य है। नगर, पर्वत, ऋतु सूर्य, चन्द्र, आयुध, पादप, उद्यान, जल कीड़ा, मधुपान आदि के वर्णन हैं। उत्सव, दूती-वचन, प्रचण्ड, पवन के साथ कुलटाग्रा के आश्रय युक्त चरित्रों का भी वर्णन किया जा सकता है। उसके कथानक में समस्त भावों तथा वृत्तियों की पूर्णता हो। साथ ही रीति एवं रस की भी। ऐसा काव्य महाकाव्य कहने का अधिकारी है। महाकाव्य का रचयिता महाकवि होता है और उसमें वाणी की विदग्धता के साथ-साथ रस ही हमका जीवन है। उसमें नायक का उत्तम जीवन के पुरुषार्थ चतुष्टय को लेकर वर्णित किया गया है।<sup>२</sup> सक्षिप्त कहाने में तथ्य प्रस्तुत किए हैं—

(१) प्रस्ताव कथानक के साथ प्रस्ताव नायक है।

(२) सक्षिप्त संग तथा सर्गान्ति में उद्भूत परिवर्तन हो।

(३) इसमें नगर, चन्द्र, उद्यान आदि वर्णन-विविध की प्रधानता मिली हो।

(४) कथानक में गठन तथा भाव एवं वृत्तियों की पूर्णता हो।

(५) जीवन की समग्रता के साथ ग्रहण किया गया हो।

(६) वाणी की विदग्धता होने पर भी रस को प्राण-तत्त्व मानना चाहिए।

(७) उसका उद्देश्य महान हो।

## सदृष्ट (नवम् शताब्दी का आरम्भ)

इन्होंने 'मायालकार' में काव्य भेदों का निरूपण करते हुए महाकाव्य के

१ श्री रामलाल वर्मा अग्निपुराण का शास्त्रीय भाग।

२ अग्नि पुराण, अध्याय, ३३७, श्लोक २४ ३४१



व्यापक फलक पर सम्भीरता से विचार किया।<sup>१</sup> भामह तथा दण्डी की बात का विस्तार एवं विकास किया। रद्रट ने महाकाव्य से सम्बंधित इतनी बातें मूल से कही हैं—

- (१) उसने प्रबन्ध काय का कथा और आख्यायिका नामक दो भेदों में विभक्त किया तथा प्रबन्ध के अंतर्गत महाकाव्य की प्रतिष्ठा स्थापित की।
- (२) कथा के अनुत्पाद्य उत्पाद्य तथा महत् और लघु का भेद किए। अनुत्पाद्य कथा का आधार इतिहास पुराणादि का प्रत्यानवत होना है तथा उत्पाद्य कथा कवि कल्पित होती है।
- (३) नायक की अवतारणा सुविन-भुक्ति कल्पना पर आधारित है। नायक के जश की प्रशंसा है। नायक त्रिवर्ग में आभवन, तीन शक्तियों से युक्त सर्वगुणसम्पन्न समस्त प्रजा का अनुरागी विजय की प्रबल लालसा से युक्त अपने साथ अपने मित्रों के लिए सिद्धि में लगनवाला चर अथवा दून के द्वारा शत्रु के पुत्र अथवा राज्य का वशुन सुनकर प्रबल शब्दों में क्रोध तथा उत्तेजना प्रकट करने वाला होना चाहिए।
- (४) नायक इतना दूरदर्शी है कि व्यूह रचना द्वारा घोर युद्धों की योजना करके अत्यंत विषट् परिस्थितियों में भी विजय श्री का लाभ करे। नायक के प्रयाग में नागरिका के मन की हलचल व्यक्त हो। प्रतिनायक भी नायक के समान ही गुणी हो तथा वह नायक के मानमण का प्रबलता से विरोध करे।
- (५) महाकाव्य में चतुर्वर्ग का वर्णन होना चाहिए। परंतु लघु प्रबन्ध में चतुर्वर्ग में से किसी एक को ही स्थान दिया गया हो।
- (६) महाकाव्य में सभी रसों की स्थान मिलना चाहिए।
- (७) सेना के शिबिरो का वर्णन युवक की वीरश्री का यथातथ्य वर्णन रवि अस्त, संध्या अधकार चन्द्रोदय रजनी, युवक, समाज, सगीत एवं प्रसंगानुसार शृंगार का वर्णन हो।
- (८) कथानक में अनुकूल प्रवर्णन, काव्य सस्यानों की योजना तथा संधियों की सफल योजना हो।

### भोजराज (ग्यारहवीं शताब्दी)

इन्होंने भामह तथा दण्डी की बात का प्रबल समर्थन किया है। भोजराज के मत से महाकाव्य न बहुत विस्तृत हो और न अति संक्षिप्त वह सन्तुलित आकार वाला हो। नायक अभ्युत्थक पूण बिभ प्रस्तुत किया गया हो। उसमें काल तथा

स्थान का भी सफल रूप दिसताई दे। शृंगार की चेष्टाआ की सफन अभिव्यक्ति के साथ जीवन पात्र-योजना पर बल दिया गया हो।<sup>१</sup> भाजगज ने पूवाचार्यों के मता का पिछपेपण मा किया है। अन परम्परा म इनका महत्व अधिक नहीं कहा जा सकता है।

## हेमचन्द्र (बारहवीं शताब्दी)

प्राकृत के आचार्य हेमचन्द्र न 'वाय्यानुशासन' म महाकाव्य की परिभाषा की है।<sup>१</sup> इनक मन से सस्वत के अनिरिक्त प्रकृत, अपभ्रंश तथा अय देखी भाषाआ म भी महाकाव्य की रचना हो सकती है। उन्होंने प्राकृत तथा अपभ्रंश के रावणाहा, हरिविजय, सेतुबन्ध आदि को दृष्टिपय म रखकर अपना मत व्यक्त किया है। महाकाव्य म सग के अन्त म छन्द-परिवर्तन का उन्होंने स्वीकार नहा किया, छन्द की धारा का महत्त्व दिया। कथा गठन म पच सधिया के साथ तीन बात और कही हैं

(१) शब्द-वचिन्ध, (२) अर्थ-वचिन्ध, (३) उभय वचिन्ध।

शब्द वचिन्ध के अनगत सगबद्ध, बध की व्यापकता, कवि का दृष्ट, प्रारम्भ प्राप्ति की चर्चा की है। अर्थ वचिन्ध म रसात्मक धारा की प्रतण्डना, नायक का उदात्त भाव, चतुर्वग फल प्राप्ति के साथ नगरादिके वर्णन वविध्य को स्थान दिया। उभय वचिन्ध म नाक रजकता तथा अमानर क्याआ की गठित योजना पर प्रकाश डाला है। महाकाव्य म रसानुरूप मदभ, अर्थानुकूल छन्द, प्रलकृत वाक्यावली, दश काल के अनुकूप पात्र चेष्टा वर्णन तथा परलाक का परवर्ती हो।

## चिदम्बनाथ (१४ शताब्दी पूर्वार्ध)

पूर्ववर्ती समस्त लक्षणकारा के मता का ध्यान म रखकर चिदम्बनाथ न अपना निरूपण प्रस्तुत किया है। लक्षण ग्रन्था की परम्परा परभी इनका ध्यान रहा होगा। महाकाव्य न लक्षण का विस्तार करत हुए इहान कहा है कि

(१) महाकाव्य सगबद्ध होना चाहिए।

(२) महाकाव्य का नायक देवता अथवा सदवश का क्षत्रिय या एक वश म उत्पन्न। अनेक राजा उनके नायक हो सकते हैं। नायक धीरोदात्तादि गुणों से विभूषित हो।

(३) जम शृंगार वीर शांत म स बाद एक रस अगी रस हो और सभी अग रस महायक बनकर आयें।

१ भोजराज सरस्वती कथाभरणम ५ १२६ १३७।

२ हेमच ३ कायानुशासन, अध्याय ८, प० ४०१ ४०३

- (४) कथा सदाश्रित, एतिहासिक तथा पद्मगमित्रा से कायावस्थामा स गठित हो ।
- (५) उसमें चतुर्वर्ग म स किसी एक वर्ग की सिद्धि का विधान हा ।
- (६) महाकाव्य का आरम्भ नमस्कारात्मक, आशीर्वादात्मक भयवा वस्तु निर्देशात्मक ढंग से किया जा सकता है ।
- (७) उगम दुष्टा की निंदा तथा सज्जता की प्रशंसा हा ।
- (८) सम्पूर्ण एक ही छन्दम रचित हा परन्तु संगाद्य म छन्द परिवर्तन हा ।
- (९) सग आठ या आठ से अधिक हा परन्तु ये न ता बहुत छोट ही हा और न बहुत विशालकाय हो ।
- (१०) सगान्त म कथा की भाषी घटनामा का संवन देना चाहिए ।
- (११) सध्या सूर्योदय, रजनी, प्रदाय दिवसांत, प्रात, दापहर, मगया, पवन बन सागर, सम्भाग विप्रयाग, मुनि, स्वयं, रणप्रयाण मत्रण, पुनात्पत्ति आदि सभी बहनीय घटनामा की यथास्थान याजना हानी चाहिए ।
- (१२) महाकाव्य का नामकरण यावक अथवा कथा व आधार पर होना चाहिए ।<sup>१</sup>

## संस्कृत आचार्यों के मतों का सांख्यिक विवेचन

### कथानक

- (१) भामह दण्डी, अग्निपुराणकार तथा विश्वनाथ ने सगबद्धता की स्वीकार किया है । दण्ड इस विषय पर मीन ह हेमचन्द्र शब्द-राचय क मत गत सगबद्धता की चर्चा करत ह । इस प्रकार ये सभी आचार्य महाकाव्य म सगबद्धता की स्वीकार करत है ।
- (२) महाकाव्य के कथानक म पंचसधिया की चर्चा सभी न की । इसका अभिप्राय है कि कथा म सगठा होना चाहिए ।
- (३) भामह न महाकाव्य के विशाल आकार पर बल दिया है, परन्तु दण्डी ने विशाल आकार का निराध करके सतुलित आकार को ठीक समझा तत्पश्चात विश्वनाथ तन महाकाव्य क नाति सधु, नातिदीध आकार पर सभी सहमत रह । मत उमका आधार सन्तुलित होना चाहिए ।
- (४) भामह ने महाकाव्य म सजाति वन की चर्चा की है । दण्डी ये सात श्रिन वन पर आधारित एतिहासिक अथवा सात प्रत्यान कथा की

उचित ठहराया। यही ज्ञान अग्निपुराणकार ने कही है। रूद्र ने इस परम्परा में अनुत्पाद्य कथानक के साथ उत्पाद्य कथानक की भी चर्चा की तथा कथा के महत् और लघु का भेद विष्ट। उसने 'महत् कथा का महाकाव्य में स्थान देना उचित समझा है। हेमचन्द्र तथा विश्वनाथ ने भी कल्पित या ऐतिहासिक वस्तु की बात स्वीकार की है। इस प्रकार इनके मन से महाकाव्य का कथानक भोक् विद्युत होना चाहिए।

- (५) सभी के मत से कथानक में जीवन की समग्रता तथा बहिष्कृत के लिए कथानक में वृणन-विविध होना चाहिए। इसीलिए सबने सञ्ज्ञा, सूर्योत्थान आदि के वृणन की आर सकेत दिया है।
- (६) छन्द के बधन का सभी ने स्वीकार किया। हेमचन्द्र ने महाकाव्य में छन्द विशेष की ही महत्त्व दिया किन्तु विश्वनाथ ने एक मग में एक छन्द तथा सगान्त में छन्द परिवर्तन पर बल दिया है।
- (७) उसका आरम्भ आशीर्वादात्मक, नमस्कारात्मक अथवा वस्तु निर्देशात्मक किसी ढंग से किया जा सकता है।
- (८) अवान्तर कथाभा तथा लाकरजता की सभी ने चर्चा की है।

इस प्रकार महाकाव्य में कथानक के लिए कथा की प्राणवत्ता या महत्ता में प्रभाव प्रमत्ता, भावभूमिमाना वृणन-विविध का सभी ने स्थान दिया है। उनका यह गठित, सातुलित है। कथा का चयन सोके प्राणयान उदात्त-वस्तु हो कथा में न शक्ति का महत्त्व दिया।

२४

सम्भूत के आचार्यों ने नायक की महत्ता पर भी बल दिया। भामह ने 'महत्' में 'चतुरादात्त', रूद्र ने 'विजिगीषु तथा विश्वनाथ ने 'धीरादात्त गुणान्वित' उपाधायिका की। इन आचार्यों ने नायक में ही अय पात्रा का समाहित कर लिया। न दण्डी तथा रूद्र ने ही नायक के महत्त्व के लिए प्रबल प्रतिनायक की शर्त की। भामह ने लेकर विश्वनाथ तक किसी भी आचार्य ने नायिका का सकेत नहीं दिया। यह वे मानते थे कि धीरादात्त नायक की पत्नी निश्चय ही महान गुणा वाली होगी। यह नायिका के व्यक्तित्व का अन्वित भी उद्दान नायक के व्यक्तित्व में ही समाहित कर लिया। सम्भूत आचार्यों ने महाकाव्य में नायक का प्रायः वग विभाजन नहीं पाया है। सभी ने उदात्त नायक की ही महाकाव्य के लिए उचित ठहराया है। सभी इस पर भी सहमत हैं कि महाकाव्य महामात्र की कीर्ति का परमोद्भावित निदर्शन है। 'गिरिणा स्या दीर्घ' निमेषण के साथ चतुर, विजिगीषु तथा उदात्त नायक की चर्चा की रही है।

## रस

महाकाव्य में रस की अनिवार्य स्थिति पर सभी आचार्य सहमत हैं। अलङ्कारवादी हात हुए भी भामह ने यह स्वीकार किया कि महाकाव्य में 'रस' का स्थान मिलना चाहिए। उनका 'रसश्च द्रष्टुं' इसी बात का प्रमाण है। दण्डी ने 'रस भाव निरन्तरम्' कह कर रस की अनिवार्यता प्रबल शब्दों में स्वीकार की है। विश्वनाथ ने अग्रे तथा अग्र रस की अलग से चर्चा की है। उनके मत से श्रु गार, वीर या शान्त रस अग्रे तथा शय अग्र रसों का उच्च विधान होना चाहिए। इस तथ्य में रस बहिष्कृत का ही संकेत मिलता है। निष्कर्ष यह है कि रसणीयता तथा रसामयता का महाकाव्य में सभी ने स्वीकार किया है।

## शली

महाकाव्य की शली पर आचार्यों ने अलग से विवचन नहीं किया है, उन्होंने स्थान स्थान पर संकेत अवश्य दे लिए हैं। भामह का कहना है कि महाकाव्य में ग्राम्य गीता तथा अर्थों का प्रयोग सर्वथा वर्जित है। अर्थात् शली की भव्यता तथा अलङ्कृति भी महाकाव्य का अपेक्षित गुण है। शालद के मानते हैं कि गम्भीर विषय का प्रतिपादन गम्भीर शली में ही किया जा सकता है। एक जा मृदुरवि होगा उसकी वाणी में प्रभविष्णुता की शक्ति होगी ही। यह मानकर ही इन आचार्यों ने भामह के पश्चात् महाकाव्य की शली पर विचार नहीं किया। निष्कर्ष यह कह सकते हैं कि संस्कृत आचार्यों ने महाकाव्य में भव्य शली का अपनाया है।

## छन्द

छन्द के विषय में भामह तथा रद्रट मौन हैं। दण्डी ने महाकाव्य में श्रम तथा गायन को स्थान दिया है। दण्डी की इस बात का भास्कराज तथा हेमचन्द्र ने भी समर्थन किया कि राग की धारा छन्द का सुष्ठु आकार देती है। उन्होंने इसी लिए सगति में छन्द परिवर्तन की बात का न मानकर भी एक छन्द की बात कही है। विश्वनाथ ने छन्द के महत्व पर सर्वाधिक बल दिया तथा एक सग में एक छन्द तथा सर्गान्त में छन्द परिवर्तन का स्थान दिया। इस प्रकार इन आचार्यों ने छन्दामयी योजना को रागात्मक अन्विति के लिए स्वीकार किया है।

## अलङ्कार

अलङ्कारवादी भामह तथा दण्डी दोनों ने काव्य में अलङ्कारों का सोपान पर बल दिया। इसी लिए महाकाव्य का लक्षण देने समय भामह ने अलङ्कार तथा दण्डी ने अलङ्कृत पर जोर दिया है। भामह का अलङ्कार शब्द केवल अलङ्कारों का ही वाच्य नहीं शक्ति, गम्भीर वलात्मक सौन्दर्य का वाच्य है। रद्रट भीष्मराज आदि

न प्रत्यक्ष रूप से अन्तःकारा के विषय में कुछ नहीं कहा। विश्वनाथ अलंकार की चर्चा भी नहीं करत। उनकी दृष्टि रमवादी है। अन्त रमात्मक सौन्दर्य ही वाक्य का वास्तविक अलंकार है। आनन्द तथा दम्पती के कलात्मक सौन्दर्य को विश्वनाथ ने 'रमात्मक सौन्दर्य' में समाहित कर लिया। अन्त इन आचार्यों के मत में कायात्मक सौन्दर्य की अभिवृद्धि में अलंकारों का भी अपना स्थान है।

**उद्देश्य**

प्रायः भगवन् आचार्यों ने महाकाव्य में उद्देश्य जीवनी शक्ति तथा उद्देश्य की महत्ता का अनुमोदित किया है। भामह ने 'चतुर्वर्गाभिधाने पि मे धर्म, धर्म काम तथा मात्स्य, जीवन के पुष्पाय का स्थान दिया। परवर्ती सभी आचार्यों ने भामह के मत का समर्थन किया किन्तु कविराज विश्वनाथ ने इसमें थोड़ा सा परिवर्तन किया है। उन्होंने दृष्ट के प्रिवर्ग में युक्त नायक का महत्व तो दिया लेकिन कहा है कि जीवन के चार पुष्पायों में से किसी एक की प्राप्ति नायक को होनी चाहिए। पूर्ण विक्रम का अर्थ है जीवन की पूर्ण मिष्टि। महाकाव्य में उद्देश्य जितना ही शाश्वत, अखण्ड तथा महत्वपूर्ण होगा, उतनी ही स्थिरता तथा महत्ता भी उतनी ही अधिक मानी जायेगी। अन्त इन आचार्यों ने महाकाव्य का उद्देश्य जीवन की नायक मिष्टि स्वीकार किया है।

इन आचार्यों के मतों से इतने तथ्य महाकाव्य के विषय में स्पष्ट हो जाते हैं।

- (१) महाकाव्य की कथा लोक प्रसिद्ध, गठित, जीवन वसिष्ठ से युक्त तथा महान हो।
- (२) उमका नायक मनुष्यगुणा से युक्त, जातीय जीवन का प्रेरणा देने वाला मद वश का उदात्त व्यक्ति ही होना चाहिए।
- (३) रस की अनिवार्यता महाकाव्य में उद्घाटित की है।
- (४) उमकी जलती गरिमामय एवं प्राणवान् हानी चाहिए।
- (५) छन्द का स्थान देकर गणात्मकता को स्वीकार किया।
- (६) अलंकारों को काव्यात्मक सौन्दर्य में समाहित किया तथा अलग से उन्हें लाने का प्रयास न हो।
- (७) महाकाव्य का उद्देश्य स्मरण, भ्रान्त तथा शाश्वत प्रेरणादायक होना चाहिए।

### पाश्चात्य विद्वानों की धारणा

पाश्चात्य विचारकों ने एपिक के स्वल्प पर गम्भीर विचार प्रस्तुत किए हैं। यूनानी विचारक अरस्तू ने ई० पू० चौथी शताब्दी में सर्वप्रथम महाकाव्य का प्रकाश डाला है। अरस्तू के पञ्चान्वय पञ्चांगरण काव्य में (स० १४००-१६००) के

rno) वीदा (Vida) त्रिगिना (Trissino), कास्तेलोवेट्रो (Castelovetro), वेब (Vebb), टिसो (Tisso) पुत्तर्हेम (Putterhem) आदि के नाम उन्नम्य हैं। इन्होंने धरस्तू का ही अनुकरण किया लेकिन महाकाव्य के प्रति इनका दृष्टिकोण सुधारवादी था। सत्रहवीं तथा सठारहवीं शताब्दी में द्राइडन (Dryden), हाब्स (Hobbes), टेबेनल्ल ह्यूम गिब्स एडमंड आदि विचारवादी महाकाव्य के स्वल्प आचार और प्रकृति पर विचार किया। उन्नीसवीं तथा बीसवीं शताब्दी में चिन्तक रिवरस के साथ-साथ अनेक अन्य चिन्तक उत्पन्न हुए। इन आधुनिक विद्वानों में श्री० एम० बाइर, ऐबरवार्थी, वास्टयन चिन्मन तथा बेर आदि के नाम प्रमुख हैं। इन पाश्चात्य विद्वानों के एविव महाकाव्य सम्बन्धी दृष्टिकोण को स्पष्ट कहने के लिए प्राचीन अथवाची तथा आधुनिक मतों को प्रस्तुत करना उचित प्रतीत होता है।

### धरस्तू (ई० पू० चौथी शताब्दी)

धरस्तू ने काव्य तथा कला को 'प्रकृति का अनुकरण' स्वीकार किया है। अपने अनुकरण सिद्धान्त के अन्तर्गत ही उसने नासदी कालदी तथा महाकाव्य की भी प्रसंग रूप से चर्चा की है। 'काव्यशास्त्र' नामक ग्रन्थ के 'बाइसर्वे', 'सेइमर्वे' तथा 'चौबीसर्वे' भाग में महाकाव्य की उसने चर्चा की है। धरस्तू के मत से महाकाव्य उन कलाकृतियों को कहना चाहिए, जिसमें निम्नलिखित विशेषण हैं—

(१) महाकाव्य में एक अनुकरणात्मक कथा होती है, घटना योजना टक्की के समान होती चाहिए। उसमें एक काव्य पूर्णता के साथ व्यक्त किया गया हो जिसका रूप समान्यात्मक हो और जिसमें एक छान का प्रयोग किया गया हो।

(२) नासदी के कथानक के समान उसमें अविविधता तथा जीवन की एक महान घटना का स्थान दिया गया हो।<sup>१</sup>

(३) कथानक में गठन लाने के लिए उसके आदि मध्य और अन्त का विनाश क्रमबद्ध हो अर्थात् अनुचित आकार के साथ प्रभाव ऐक्य उसमें होना चाहिए।

(४) सम्पूर्ण कथा एक इकाई में सुनियोजित हो, जिसमें काव्य व्यापार श्रुतता का एक निश्चित क्रम रहता है।

(५) कथा प्रख्यात होना चाहिए। महाकाव्यकार कबल इतिहास की कथा ही नहीं कहता अर्थात् महाकाव्य इतिहास मान नहीं। महाकवि इतिहास में रमणीय कल्पना के माग से प्रभावित कथानक को जन्म देता है।

१ डा० नो डू—धरस्तू का काव्यशास्त्र भूमिका भाग पृ० ५

२ श्री० भगीरथ दीक्षित—समीक्षालोक—धरस्तू पृ० २२६

(६) महाकाव्य में उच्चकोटि या उदात्त पात्रों का ही स्थान मिलता है।<sup>१</sup> नायक उदात्त हान पर भी निदर्शित हो।<sup>२</sup>

(७) एक व्यक्ति की सम्पूर्ण जीवन गाथा पर ही महाकाव्य लिखा जा सकता है। दूसरी ओर एक युग के घटनाचक्रों का एकत्रित करके भी महाकाव्य लिखा जा सकता है।<sup>३</sup>

(८) महाकाव्य में जीवन का समग्र चित्र हाना चाहिए। जीवन के व्यापकत्व के कारण ही उसमें गरिमा का समावेश होगा।

(९) उसकी शली भी समाख्यानक होनी चाहिए अर्थात् उदात्त कथात्मक के अनुकूल ही उदात्त शली की भी महाकाव्य में अनिवार्य अपेक्षा रहती है।<sup>४</sup>

(१०) छंद की दृष्टि में उसमें हैबमामीटर छंद का प्रयोग लयात्मक अन्विति के लिए किया गया है।

होरेस (ई०पू० ८१ ई०पू०—८ ई०पू०)

हारम में अरस्तू के काव्य विषयक सिद्धान्तों पर विचार किया। उसने महा

- १ 'महाकाव्य तथा नाटकी में यह समानता है कि उसमें उच्चकोटि के पात्रों की पद्यबद्ध अनुवृत्ति रहती है।—प० ८, डा० मनेट्र—अरस्तू का काव्य शास्त्र।
- २ 'First Perfectly blameless character is deemed unfit to be a tragic hero  
—S H Butcher—Aristotles Theory of Poetry and Fine arts, P, 30९
- ३ महाकाव्य में एक त्रिगुण क्षमता होनी है अपनी सीमाओं के विस्तार करने की।  
—डा० मनेट्र—अरस्तू का काव्य शास्त्र, प० ६३
- ४ 'With respect to that species of Poetry which imitates by Narration and its hexameter verse it is obvious that the fable ought to be dramatically constructed like that of Tragedy that it should have for its subject one entire and Perfect action having a beginning a middle and an end, so that forming like an animal complete whole in a way afford its proper Pleasure Widely differing in its construction from history which necessarily treats not of one action but of one person or to many during that time events the relation of which to each other is merely casual'  
—Edited by T A Maxon—Aristotles Theory of Poetry and Fine Arts, P 46-47



काव्य पर भरतृ की तरह अलग से विचार नहीं किया।<sup>१</sup> द्रष्टा ने 'भाग पांडिता' नामक अपनी कृति में काव्य तथा नाटक के लिए महत्वपूर्ण तथ्या का प्रस्तुत किया है। यह तथ्य महाकाव्य के लिए अनिवार्य सिद्ध हुए हैं।

(१) भरतृ के अनुकरण की उसने भ्रमानुकरण न मानकर सज्जनात्मक शक्ति कहा है। कवि अनुकरण के द्वारा प्राचीनता के गम में से नवीन वस्तु का प्रस्तुत करे। अर्थात् काव्य (महाकाव्य) में प्राचीन विषय को नवीनता के साथ प्रस्तुत होना चाहिए।

(२) काव्य का उद्देश्य भी उसने आदर्श वस्तु (Ideal Plot) के द्वारा अप्रत्यक्ष रूप से मधुर शिक्षा देकर चरित्र का उदात्त बनाना (To teach to improve) स्वीकार किया है। मानव जाति के लिए काव्य की सेवाएँ सामाजिक धार्मिक प्रवृत्ति की हैं।<sup>२</sup>

(३) उसने भरतृ की तरह काव्य में एंड्रिय ऐक्य (Organic Unity) का स्वीकार किया। इसीलिए काव्य में रचना संगति (Harmony of the Structure) का प्रयत्न समायोजित किया।<sup>३</sup>

(४) उसके मत से विषय-वस्तु तथा छंद का अविवेक सम्बन्ध है। उनमें युद्धात्मक कथाओं में हेक्सामीटर छंद की ही स्वीकार किया।<sup>४</sup>

(५) रचना ऐक्य से सम्पूर्ण कृति की उपयुक्तता, उसके विभिन्न अवयवों का पारस्परिक सम्बन्ध तथा कृति में औचित्य का होना आवश्यक है। इसे ही हारेम ने साहित्योचित्य (Literary propriety) का नाम दिया है। हारेम का यह औचित्य सिद्धान्त चरित्र तथा कथावस्तु पर विशेष लागू होता है।<sup>५</sup>

(६) महाकवि को अपनी अनुभूति के प्रति ईमानदार होना चाहिए तभी महान काव्य की सम्मन शक्ति का विकास होगा।

(७) महाकाव्य सागर की तरह महानता रखता हो।

(८) जीवन्त घटनाओं के साथ प्राणवान नायक ही उस महत्वपूर्ण बनाता है। उनमें नायक का सम्पूर्ण जीवन चित्र प्रस्तुत किया हो।<sup>६</sup>

(९) महाकाव्य में घटनाओं का विस्तृत चित्र नहीं होना चाहिए।

१ प्रो० भगोरय मिथ समीक्षास्तोत्र पृ० २६३

२ वही

३ वही।

४ वही पृ० २६४

५ वही, पृ० २६४

६ प्रो० भगोरय दीक्षित—समीक्षास्तोत्र, पृ० २६६

लाजाइनस (ई०पू०२२० ७३ ई०पू०)

अरस्तू के पश्चात् लाजाइनस ने आ दी गबलाइम नामक अपनी पुस्तक में काव्य के उदात्त तत्त्व का महत्त्व उद्घाषित किया। काव्य की उदात्तता मानव जीवन के व्यापक फलन में है और यही उत्कृष्टता (Sublimity) काव्य (महानायक) का प्राण है। इसके निष्पन्न दस प्रकार हैं—

(१) काव्य के फलक विस्तृत (Spacious) घटनाओं की गत्यात्मक याजनाओं में युक्त है। जैसे प्रशांत बहने वाली मरिचा का प्रवाह बना उत्कृष्ट होता है।<sup>१</sup>

(२) उमम नायक के भयंकर काव्य-व्यापारों का सुबल चित्रण होना चाहिए।<sup>२</sup>

(३) विचार की भयंकर उमक प्राण तत्त्व है। वस्तु विद्या में भयंकर लान के लिए ऐंद्रिक एक्य (Organic Unity) होनी चाहिए। भावा की सघनता (Intensity of Emotions) तथा युग की आशानाओं, सपनों की हल चन उमम व्यक्त हो।

(४) विषय का भयंकर के रक्षाणाय शली की भयंकर का होना आवश्यक है।

(५) युग की समस्त गरिमा अपने पूर्ण बल के साथ महाकाव्य में प्रकट होनी चाहिए। चमत्कार उत्पन्न करने वाली भयंकर तथा अनिप्राकृत घटनाओं का भी स्थान दिया जा सकता है।

## मिथून

मिथूनों ने अरस्तू के महाकाव्य सम्बन्धी नक्षत्रों की ही पुनरावृत्ति की है। अरस्तू का अष्टमधर बनकर उन्होंने काव्य की एकता तथा अनुकरण की भयंकरता पर बल दिया। उन्होंने महाकाव्य के विशाल या भारी भरकम आधार का विरोध किया है तथा महाकाव्य में एक वर्ष की ही घटनाओं को ही स्थान देना उचित समझा। महाकाव्य का उदात्त काव्यों का उदात्त शैली में कथात्मक स्वीकार किया है तथा नायक महान गुणों से अलंकृत तथा निर्दोष व्यक्ति स्वीकार किया है।<sup>३</sup>

१ स० डा० भगेन्द्र—काव्य में उदात्त-तत्त्व, प० २

२ प्रो० भगोरय दीक्षित—समीक्षित—समीक्षात्मक प० २४३

३ लाजाइनस-आन द सबलाइम, प० २३

४ 'Like the noiseless lapse of a Mighty river is never the less sublime'  
—Longinus—on the Sublime, p 82

५ Minturno, however would restrict the canvas of the epic poet, permitting him only the events of a single year  
—Dixon—English Epic and Heroic poetry, p 3

## मिण्टरनिटो

मिण्टरनिटो ने महाकाव्य के कथानक में 'निरन्तरता' का अत्यधिक महत्व दिया। उमन कहा, प्राचीन कथानक चरित्र, प्रकार तथा भाव महाकाव्य के लिए उपयुक्त हैं।<sup>1</sup>

## दूसी

दूसी ने 'न्यायमानता तथा स्वभाव की एकता' का भी महाकाव्य में महत्व प्रतिपादित किया। उमन मध्यम मार्ग का अनुसरण करने हुए कहा है कि महाकाव्य का विषय न तो अत्यन्त जजग्नि तथा प्राचीन ही हो और न उस अत्यन्त नवीन ही होना चाहिए। उमन मन्त्रा ३ के विज्ञान आकाश का विचार दिया तथा कहा कि विज्ञान आकाश से ही रचना महाकाव्य नहीं हो जाती उसमें महाकाव्य में कविता भी जानी चाहिए। महान् काव्य का नायक भी गुणा की शक्ति हो तथा वह जीवन पर्यन्त निर्भीक रहना चाहिए।

## तृतीय

तृतीया के साथ ही तृतीयम महाकाव्य के स्वरूप में एक नवीन बद्धि की। उमन मार्ग महाकाव्य का प्राचीन कथानक महान् घटना पर आधारित हो जिसमें जीवन के व्यापक सत्य (Universal truth) का प्रकटीकरण हो। महाकाव्य की कथा में अतिसर ही महान् नामों का समाहित रहना चाहिए। महान् चरित्र महाकाव्य में प्रधान उद्देश्य (weight thesis) का पूर्ण रूप से प्रकट कर सकता है। सद्भावना तथा सत्यता के साथ प्रतिपादित जिन्हा भी यह महाकाव्य में प्रतिपादित मानता है।

तद्वत्ता तथा मान्यता जगत् की सत्ता के समान जिन्हा योना, पुत्रेनम प्राप्ति

- 1 The hero must be a pious and moral if not necessarily faultless character  
—George Samisburry—the History of Criticism part II p 90
- 2 Samisburry—the History of Criticism part II, p 90
- 3 The main style of narrative poetry, he returns to epic or heroic poetry and discussed it on the old lines of flat characters, manners, passions of affection etc.  
—Ib. p 54
- 4 'Nature of Harmony quality of rhyme'  
—Ib. p 54

ने भी महाकाव्य के स्वरूप पर विचार किया है। बीडा तथा त्रिमिनी ग्रन्थों का आधार ग्रहण करके भी याडे ऊंचे उठे। उन्होंने कहा कि महाकाव्य निश्चय ही त्रानदी में उत्तम रचना है। महाकाव्य की भयाना के भागे त्रानदी के गुण फीके पट जान हैं। इसी परम्परा में साड केम्स ने महाकाव्य में 'सदृजता' (familiarity) का विशेष महत्व दिया।<sup>1</sup> लु कन ने केम्स की बात का समर्थन किया तथा चिर नवीन उद्देश्य का महाकाव्य का प्राण माना। लु कन के मत से महाकाव्य के चरित्र काल्पनिक न होकर ऐतिहासिक हो तथा उनके महत्वपूर्ण कार्य जनमाधारण के मस्तिष्क में मन्व ताज रहें। जिराल्डी ने ता नायक का सम्पूर्ण जीवनवत्ता ही महाकाव्य में म्पीनार किया। केस्टन वेट्रो (१७०) ने जिराल्डी की बात का विराज करत हुए कहा है कि महाकाव्य में एक ही व्यक्ति का जीवन वत्तान्त न हो, अपितु ममम्प राष्ट्र के भाय-म्यापाग को उसमें स्थान देना चाहिए। उसमें यह भी कहा कि दिव्य-दवतामा की अवतारणा ही महाकाव्य में आवश्यक नहीं, मानव के काय भी पृथ्वी से लेकर स्वर्ग तक पन सकत हैं। बिडा ने (१५२०) में महाकाव्य में विषय की उदात्तता (Nobility of subject) की चचा की। महाकाव्य में अत्यधिक सवप हो और उस मषप में विजयी नायक ही सफल आदमी की स्थापना करे। बीडा की इस सूक्त का व्यापल्ल तथा गिवन आदि ने समर्थन दिया।

सनह्वी तथा अठारहवीं शताब्दी में ड्राइडन, हांस, टवेनण्ट, ह्यूम, गिवन, एडीसन आदि विद्वानों ने महाकाव्य के स्वरूप आकार तथा प्रवृत्ति का सवर विचार किया। ड्राइडन तथा मिडनी दोनों ही लाजाइन में अत्यधिक प्रभावित थे। इस प्रभाव के कारण ही 'उदात्त' को काव्य का मवम्ब मानत हुए उन्होंने कहा है, 'महाकाव्य में जीवन के सौंदर्य का व्यापक उदघाटन होना चाहिए। काव्य (महाकाव्य) मानव प्रकृति का मानस चित्र बनकर प्रस्तुत हो।'

1 James is in agreement, "Familiarity" he tells us "ought morespacially to be avoided in an epic poem, the peculiar character of which is dignity and elevation modern manners make no figure in such person

—Dixon—English Epic and Heroic poetry, p 2

2 Ibid, p 4 5, 6 7 8

3 poetry is just and lively image of human nature, representing its passions and humours and the changes of fortune to which it is subject for delight and instruction of mankind

—Dryden—Essay on dramatic poesy—p 30

## इन्त्यु० पी० केर

‘‘तत्र विचार म महाकाव्य म कल्याणमक तथा बौद्धिक तत्र एव विचरित  
प्रिया या मकर धातु है। इति महाकाव्य की विषय रम्भु म प्रेम, द्विहाम, गुप्त  
रुग धाति विषय—विषय का धारणिया है।’ महाकाव्य धारण उत्तम मन्त्री  
तथा स्थिर काव्य रूप है।’ माय ही महाकाव्य म चरित की कल्याण बहुत ही स्थिर  
तथा स्थावर व व माय की जानी है धर धनेर मर भिवितिया तथा ममस्यामा व  
कारण वलाय-विषय स्वयम धा जाना है। उगम जीरा व ममम काय व्यापार  
प्राणरान कथानक का व्यापार वा जा है। महाकाव्य म अभिनि कृत् स्वनामा म  
नाटकीय गुण का धारण जात है त्रीन पन्नामा तथा दुष्पा के हान पर भी नायक  
विषय प्रभावशाली न हाकर महारणीन गीत है। त्रि भी कथानक की गरिमा के  
कारण उह महाकाव्य बन जाना है।’

## द्विमत

कह व ही मत का समर्थन निम्न न किया। द्विमत न अपनी कृति ‘इतिम  
एविक एव हीरोहक पोयट्री के प्रथम प्रकरण म महाकाव्य व स्वरूप पर विचार करत  
हए उसे युग विशेष की देन स्वीकार किया है। महाकाव्य की विगपता भी युग  
सापक्ष्य है। उह युग के गौरव का रभाव तथा चित्रक काव्य रूप है। हग प्रकार की  
कविता म ‘यत्किमल कम तथा समष्टिगत अधिक होता है।’ महाकाव्य का नायक  
एक राष्ट्र का प्रतिनिधित्व करता है नायक की पराजय से देश के गौरव को  
धनि पहुँचती है।’ उमने महाकाव्य म काय तथा चरित्र दोनों को ही महत्वपूर्ण

- 1 Epic poetry is one of the complex and comprehensive kinds of literature, in which most of other kinds may be included—romance history comedy tragical comical historical, past ora and are terms not sufficiently various to denote the variety of the Iliad and the Odessy  
—Ibid P 16
- 2 Epic is the most solemn, stately and frigid of all kinds of composition  
—Ibid 39
- 3 W p Ker—Epic Romance p 17
- 4 Dixon—English epics and heroic poetry p 13
- 5 ‘For in such a poen the enterest is rather national than individual The hero represents a cause which triumph with his truth where honour would suffer from his defeat  
—Ibid P 21

बतलाया।<sup>१</sup> चाहे वह घटना सरल हो अथवा जटिल, चाहे वह इतिवृत्त की तरह एक स्थान पर घटित हो अथवा आडसी की तरह उसका नायक ससार भर में भटकता फिर, चाहे उमर एक नायक हो या अनन्त नायक, चाहे वे सौभाग्यशाली हो अथवा अभोग्यशाली, एचिलीस की तरह भयंकर वीर हो या एनियस की तरह पवित्र आत्मा वाले, चाहे वे राजा हो या सेनापति या उनमें कुछ न हो,<sup>२</sup> चाहे वे स्वर्ग के हो अथवा नरक के, हममें कुछ नहीं होता है। आदर्श महाकाव्य में गठन युक्त ढांचा, महान नायक, महान चरित्र तथा शरीरगत गरिमा का गुण होना चाहिए। महाकाव्य में उमर निम्नलिखित तथ्यों की आवश्यक रूप से पूर्वा की है—

- (१) विषय की महानता (Nobility of subject)
- (२) महाकाव्योचित औदार्य (Epic grandeur)
- (३) विजयी तथा गुणी नायक (Victorious hero)
- (४) उद्देश्य की एकनिष्ठता (Unity of theme)
- (५) उदात्तता (Dignity)
- (६) कार्य की एकात्मक शक्ति (Unity of action)
- (७) कथानक की गरिमा के अनुकूल शैली (Grand style)

## एबरक्रॉम्बी

इनकी दृष्टि धारणा है कि महाकाव्य प्रचलित परम्परा का समस्त विकास है। महाकवि युगानुगुण परम्परा की विश्रुत कल्पना का आड देता है नवीन शक्ति उत्पन्न कर देता है। उमर यह भी कहा कि आकार की विशालता के कारण ही रचना को महाकाव्य कहना अनुचित है।<sup>१</sup> रचना चाहे उच्च हो अथवा विशाल, उमर प्राणवत्ता व साध-साध महाकाव्य याचिन गरिमा अवश्य होनी चाहिए। शरीर के ही

- 1 'Epic like drama' is dependent upon action and character upon the story and persons these two upon either of which it might be important to lay the major stress, are the pillars of epic'

—Ibid, p 21

- 2 'Let the action be simple or complex let it lie in one single place as in the odyssey, let there be one single hero or a great many, happy or unfortunate, furious as Achilles or pious as Aeneas, let them be kings or generals'

—Ibid, p 9

- 3 Lascelles Abercrombie—The Epic, page 41-42

अन्तर्गत कवि की कल्पना विचारधारा तथा अभिव्यक्ति का स्थान है।<sup>1</sup> महाकाव्य महत्वपूर्ण कानों का लोक है, उसका उद्देश्य बहुत ही पुष्ट तथा प्रतिकात्मक होता है। मनुष्य उद्देश्य की एकता के लिए ही विखरी हुई सामग्री का भव्य रूप देता है।<sup>2</sup> सामग्री के जयन मात्र से ही कृति महत्वपूर्ण नहीं बन जाती, वास्तव में कृति की महानता तो समय जीवन के चित्रण में ही है।<sup>3</sup>

### सी० एम० यादरा

इन्होंने महाकाव्य की एक नवान परिभाषा प्रस्तुत की है। महामानव की महानता ही महाकाव्य का वास्तविक गारव से अन्तर्गत करती है। 'जनसामान्य के विचार में महाकाव्य में कथात्मक काव्य रूप होता है। इसका अर्थ यह होता है, जिसमें चरित्रों की कथात्मक जावनाया होती है। इस जीवनगाथा में विशेषकर भयावह प्रसंग युद्धादि का अग्रनाया जाता है। इसमें इस प्रकार का विशेष आनंद उपलब्ध होता है कि इसकी पठनाद्वारा व्यक्ति हमारे मन में मानव की गरिमा, मानव की उपलब्धिया तथा सध्या की आर विरवान स्तुति करता है। इस प्रकार इन्होंने महाकाव्य में विषय यन्त्रु नायक तथा गली लीला की ही उत्पत्ति का होना अतिवाच्य माना है।

1 Ibid page 19

2 Ibid page 21

3 'When Epic poetry is called great it is not only on account of the range of its matter though that is important, for we could not call poetry great which did not face the whole fact of man's life in this world

—Abercrombie The Idea of Great poetry, p 147

4 'An Epic poem is by common consent a narrative of some length and deals with events which have a certain grandeur and importance and come from life of action especially of violent action such as war. It gives a especial pleasure because its events and person enhance our belief in the worth of human achievement and in the dignity and nobility of man

—C M Bowra From Vergil to Milton p 9

5 'Epic poetry is essentially narrative and is nearly always remarkable for its objective character. It creates its own world of men and events which can be easily understood from the outside. The epic hero is great doing because of their great deeds

—C M Bowra—Herculean poetry P 4

## पाश्चात्य विद्वानों के मतों का तात्त्विक विवेचन

कथानक

(१) भररतू से लेकर सी० एम० वावरा तक सभी इस मत को मानते हैं कि महाकाव्य में प्रख्यात कथा को स्थान मिलना चाहिए। मध्ययुगीन आचार्यों ने, जिनमें लवस्तु, जिराल्डो, विटा आदि का नाम प्रमुख है, इस मत में थोड़ा और परिवर्तन किया है कि महाकाव्य में ऐतिहासिक, पौराणिक ही नहीं काल्पनिक तथा प्रतीकात्मक कथानक का भी अपनाया जा सकता है। लाजाइगस ने उदात्त-वन का उचित समझा था, उसने ऐतिहासिक तथा काल्पनिक कथा के विवाद से दूर होकर इस प्रकार मत व्यवस्थित किया था, होरेम ने भररतू की बात को ठीक समझा तथा गुथार भी लिया कि प्राचीन कथानक को भी नवीनता के साथ प्रस्तुत करना चाहिए। लुक्न ने ठीक ही कहा है कि कथानक चाहे प्राचीन हो या नवीन जीवन की जिज्ञासा जागृत करे। इन आचार्यों के मत से महाकाव्य में महाकाव्य का ही स्थान देना चाहिए।

(२) भररतू ने कथानक में औचित्य का अत्यधिक महत्व दिया और पीछे के प्रायः सभी विद्वानों ने इस तथ्य का समर्थन किया।

(३) इन आचार्यों के मत से एपिक में कार्याविति के साथ मेल-समन्वय घटनाओं का चयन हो। इसकी घटनाएँ न अत्यधिक संकुचित ही हों और न अधिक विस्तृत ही। घटनाओं में सहजता तथा निरंतरता का गुण होना चाहिए।

(४) भररतू ने कथानक में विषय-एक्य का अनिवार्य माना है किंतु परवर्ती आचार्यों के स्टैनबेडों ने भररतू का विरोध किया। उनमें कहा कि विषय-एक्य का पालन का कोई नियम महाकाव्य में होना ही नहीं चाहिए। आधुनिक काल के विद्वानों ने पुनः विषय-एक्य तथा घटनात्मक अनिवार्यता का महत्व दिया। इन महाकाव्य में विषय-एक्य एवं घटनाओं की स्पष्ट झलक होनी चाहिए।

(५) इन सभी आचार्यों के मत से महाकाव्य का वस्तु चाह नय हो या विराट् उत्तम जीवन का अंतरंग तथा बाहिरंग उभर आया हो।

(६) घटनाओं के विस्तार के लिए अनिवार्यता तत्वा को भी अपनाया जा सकता है।

इन पाश्चात्य विद्वानों के कथानक में लौकिक प्रख्यात अथ, उदात्तता, मेल-समन्वय निरंतरता, सुगठन औचित्य तथा कथा की विंगल पृष्ठभूमि का स्वीकार करते हैं। कथानक में नयी माट-मिट्टी के लिए अनिवार्यता तत्वा का भी अपनाया जा सकता है।

नायक

पाश्चात्य विद्वानों के मतों से नायक महान, उदात्त, पराक्रमी तथा गुणा का



राशि हाना चाहिए। अरस्तू के मत से महाकाव्य का नायक अत्यंत वभवशाली बुद्धिमान तथा यशस्वी होना चाहिए। साथ ही महाकाव्य में उच्च काटि के उदात्त पात्रों को ही स्थान मिलना चाहिए। लाजाइनस तथा हारेम न भी अरस्तू की ही बात का अप्रत्यक्ष रूप में समर्थन किया है। टमो न अरस्तू के इस कथन का विरोध किया कि महामानव भी सबका निर्दोष नहीं होना चाहिए क्योंकि यथायथ जीवन में निर्दोष की कल्पना ही सहज नहीं है। ऐसा न कहा कि नायक के माध्यम से एक पूरे मानव की कल्पना करनी चाहिए। नायक के वाय महत्प्रेरणा के रूप में प्रस्तुत हो तथा समस्त संसार में इसका लाजादश प्रतिष्ठित हो जाए। जीवन के शाश्वत मूल्यों का वह रक्षक हो। टमो की इस बात का समर्थन त्रिमना बिडा, मिष्टूनो, जिगलडी, डाइन्ग, एबरकाम्बी आदि सभी विद्वानों ने किया। सभी इस तथ्य से सहमत हैं कि महाकाव्य में नायक की गरिमा ही कृति के महत्त्व को दर्शाती है। नायक केवल राजपरिवार से ही न होकर जनसामान्य से भी हो सकता है लेकिन तादात्म्य (एम्पैथी) की सहज शक्ति उसमें अवश्य होनी चाहिए। निष्कप रूप से उदात्त नायक का ही महाकाव्य के उपयुक्त माना गया है। वह इस शक्ति से भी युक्त हो कि युग युगांतर का मानव उसके महत्कार्यों से प्रेरणा प्राप्त करे।

### महाकाव्य का उद्देश्य

अरस्तू के मतानुसार महाकाव्य का प्रयोजन और प्रभाव त्रामदी के प्रयोजन तथा प्रभाव के समान होना चाहिए। कथना तथा त्राम के भावों द्वारा विवेचन कर के मन की शुद्धि तथा आनंद ही इसका प्रयोजन है। लाजाइनस के मत से उदात्त काव्य का उद्देश्य चरित्र का भयानक बनाना है। हारेम न भी पूर्ववर्ती इन्हीं तथ्यों का समर्थन किया कि महाकाव्य में गरिमा का चरित्र मधुर शिक्षा देकर जीवन का उदात्त बनाने का काम करता है। हारेम पूर्ववर्ती सभी विद्वानों महाकाव्य का उद्देश्य युग की सांख्यिक धार्मिकता का बर्णन तथा प्रवृत्तियों का प्रकाश में लाना ही मानते रहे। डाइन्ग महाकाव्य का 'जन मानस चित्र' युग का पथ प्रदर्शक कहकर भी उस जनसामान्य से तत्त्व विनिर्गुणता के आनंद की वस्तु समझता है। एबरकाम्बी ने महाकाव्य का उद्देश्य युगानुरूप पुष्ट तथा प्रामाणिक स्थापना किया है। मा० एम० यावरा का कहना है कि महामानव की महान उपलब्धियों का प्रस्तुत करने के लिए महाकाव्य को रचना होनी है। इस प्रकार इन विद्वानों के मतों में महाकाव्य का उद्देश्य युग-युग के मानव का मार्ग निर्दिष्ट करना है तथा जीवन के तारतम्य मूल्यों की रक्षा से स्थापना करना है। महाकाव्य में युग-युग की समग्रता का भाव और तथ्यों के माध्यम से जीवन की पूर्णता का समावेश होना चाहिए।

### महाकाव्य का अभिव्यक्ति-विषय

अरस्तू ने महाकाव्य के लिए समग्रमानव जलो का स्थापना किया है त्रिम

## महाकाव्य का सैद्धान्तिक विवेचन

क्षुद्रता का अभाव तथा औचित्य की सिद्धि है। अर्थात् महाकाव्य की शली सामान्य शली से भिन्न, अमामान्य या उदात्त शली है। भावानुकूल गरिमा तथा प्रसन्न पदावली का प्रयोग है। अरस्तू की ही भांति लॉजाइवस ने उदात्त शली को महाकाव्य में उचित ठहराया है। हारम ने भी उदात्त शब्द भाव, भाषा, शली पर बल देकर उदात्त शली का ही पक्ष लिया है। इसी सम्बन्ध में जिराल्डो ने एक महत्वपूर्ण बात कही है कि महाकाव्य के कवि के पास शब्दों का अथाह सागर होना चाहिए, शब्दों का प्रवाह अप्रतिहन वेग से आगे बढ़ता हुआ दिखनाई दे। इस तथ्य का समर्थन तिसनो, विडा तथा मिष्टूर्नी ने किया। केर डिकमन, एबर्क्राम्बी तथा बावरा ने शली में 'विषयोचित गरिमा' को स्वीकार किया है। शली में महाकाव्योचित औदात्य का अनिवार्य गुण होना चाहिए क्योंकि वह प्रबल तथा वरिष्ठ अभिव्यक्ति की ही प्राणवान अनुभूतियों की रक्षक होकर महाकाव्य में आती है। अतः महाकाव्य की शली में विषय की गरिमा का रक्षित रखने की शक्ति होनी चाहिए।

अरस्तू का मत है कि महाकाव्य के लिए सबसे उपयुक्त छंद वीर छंद (हेक्जामीटर) है। यह छंद कृति में एक प्रकार की भव्यता का संचार करता है एवं स्यात्मक अस्मिता का काय में जन्म देता है। परंतु अरस्तू के इस विश्वास का पुनर्जागरण काल में प्रबलता से खण्डन किया गया। इसी ने कहा कि महाकाव्य को छंद की सीमा में बाधना निरर्थक प्रयास है। आधुनिक विद्वानों ने छंद का भाव का बाधन या कठघरा कहकर छोड़ दिया तथा छंद बाध से मुक्त काव्य की कल्पना करके भावात्मक प्रवाह को आदर दिया। अतः आचार्यों के मत से छंद का भावात्मक एवं स्यात्मक प्रवाह ही महाकाव्य के लिए उपयुक्त माना गया है।

संक्षिप्त रूप से पाश्चात्य विद्वानों की धारणा का इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है—

- (१) विषय की व्यापकता तथा भव्यता।
- (२) सुगठित कथानक।
- (३) उदात्त नायक।
- (४) महाकाव्याचित व्यक्तित्व से युक्त पात्र।
- (५) सत्य से युक्त विराट उद्देश्य।
- (६) भाव की प्रवृष्ट गरिमा तथा काय की अस्मिता।
- (७) कथा के अनुकूल भव्य शली तथा उपयुक्त छंद विधान।

हिंदी आचार्यों तथा अन्य विद्वानों के मत

हिंदी के अनेक विद्वानों एवं शायद प्रबंधकारों ने भी अपनी रचनाओं में यत्र वत्र अपनी महाकाव्य सम्बन्धी मायताएँ प्रस्तुत की हैं। प्रभाव को आधार मान कर इन्हें दो वर्गों में विभाजित करना उचित प्रतीत होता है—

- (१) सख्ति आचार्यों के वर्ग से प्रभावित आचार्य

इन आचार्यों ने सस्मृत की दाय परम्परा का निर्वाह किया है। इनकी मूल दृष्टि सस्मृत के महाकाव्या तथा माय आचार्यों के लक्षण पर रही है। इन आचार्यों में आचार्य प्रवर रामचन्द्र शुक्ल, विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, बाबू गुलाबराय, आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी तथा रामचन्द्रिन मिश्र आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। पाश्चात्य लक्षणकारों से इन आचार्यों ने बहुत कम प्रभाव ग्रहण किया है।

(२) पाश्चात्य लक्षणकारों से प्रभावित आचार्य

इन आचार्यों ने दश विदेश के विद्वानों के दृष्टिकोणों का समग्र उपयोग उपस्थित किया है। इनका मूल दृष्टि शाश्वत तथ्यों की ओर रही है। इस दृष्टि के प्रतिनिधियों में डा० भगीरथ मिश्र, आचार्य नन्दलाल बाजपेयी और आचार्य नगेंद्र जी के नाम प्रमुख हैं।

### प्रथम वर्ग

#### आचार्य रामचन्द्र शुक्ल

आचार्य शुक्ल जी सम्भवतः श्रेष्ठ प्रबन्धकारों की ही महाकाव्य मानते हैं। इसका प्रमाण इस बात से भी मिलता है कि 'जायसी प्रयावली' की भूमिका में उन्होंने पद्मावत को सदैव प्रबन्धकाव्य के नाम से ही सम्बोधित किया है। प्रबन्ध की महाकाव्य का पर्याय मानते हुए उन्होंने लिखा है कि 'प्रबन्ध काय मानव जीवन का पूर्ण दृश्य होता है। उसमें घटनाओं की सम्बद्ध शृङ्खला के और स्वाभाविक क्रम के ठीक ठीक निर्वाह के साथ हृदय को स्पष्ट करने वाले उस नाना भावों का रसात्मक अनुभव कराने वाले—प्रसंगों का समावेश होना चाहिए। इतिवृत्त मात्र के निर्वाह से रसानुभव नहीं कराया जा सकता है। उसके लिए घटनाक्रम के अन्तर्गत ऐसी वस्तुओं और व्यापारों का प्रतिबिम्बित चित्रण होना चाहिए, जो श्रोता के हृदय में रसात्मक तरंगें उत्पन्न में समर्थ हों।' प्रबन्धकाव्य के अन्तर्गत ही महाकाव्य तथा खण्डकाव्य का स्थान है, क्योंकि रसवृत्ति तथा सम्बन्ध का निर्वाह तो दोनों में आवश्यक है, किन्तु दोनों की भेदना रेखा भी स्पष्ट है कि महाकाव्य में जीवन का अखण्ड चित्र होता है तथा खण्डकाव्य में खण्ड जीवन की भूलक। जीवन के अखण्ड चित्र को ही 'शुक्लजी ने 'मानव जीवन के पूर्ण दृश्य' की संज्ञा का नाम दिया है। उनके मत से कथानक सहज गति से आगे विस्तार पाने के साथ साथ अपनी रमणीयता के कारण हृदय को स्पष्ट करने की अनिवार्य शक्ति रखता है। इसलिए रसात्मकता<sup>१</sup> को शुक्लजी ने विशेष स्थान दिया तथा उस

१ आचार्य रामचन्द्र शुक्ल—जायसी प्रयावली की भूमिका, पृ० ६८ ६९

२ वही पृ० ७०

३ आचार्य रामचन्द्र शुक्ल—जायसी प्रयावली की भूमिका, पृ० ७२

प्रबंध की आत्मा स्वीकार किया है। जीवन का वविध्य, भाव वविध्य से सम्बन्धित है और भाव वविध्य में रस वविध्य का स्वयं ही समावेश वे मानते हैं। सुकलजी के मत में महाकाव्य के तीन अनिवार्य तथ्य इस प्रकार हैं—

- (१) मानव जीवन का अखण्ड चित्र
- (२) कथाविवृति के साथ कक्षा में सहज गत्यात्मक गुण
- (३) हृदय को स्पष्ट करने में समय रस व्यंजना

### आचार्य विद्वनाथ प्रसाद मिश्र

उन्होंने भारतीय आचार्यों के लक्षणा की व्यापक समीक्षा करने के उपरान्त अपने मत का स्थापना की है। उनका निश्चित मत है कि 'महाकाव्य की कथा प्रख्यात ही होनी चाहिए, कल्पित नहीं। प्रख्यात वस्तु की योजना का कारण यही है कि रस संचार या साधारणीकरण किया में सहायता प्राप्त हो। जिस चरित्र नायक की कथा ली जाए, उसके साथ तादात्म्य स्थापित होने में कोई बाधा उपस्थित न हो।' महाकाव्य में प्रख्यात कथा तादात्म्य के सहज गुण से युक्त नायक तथा प्रभावविवृति को इन्होंने विशेष महत्त्व दिया। अपना निष्कर्ष, उन्होंने, इस प्रकार प्रस्तुत किया है—(१) सानुबन्ध कथा (२) वस्तु वर्णन, (३) भाव-व्यंजना, (४) संवाद।<sup>१</sup>

### गुलाबराय

इन्होंने भारतीय तथा पाश्चात्य महानाट्या तथा आचार्यों के लक्षणा पर प्रकाश डालने के उपरान्त भारतीय दृष्टि को प्रधानता देते हुए उसे विषयपरक माना है। 'संक्षेप में हम कह सकते हैं कि महाकाव्य वह विषय प्रधान काव्य है, जिसमें कि बड़े आकार में जाति में प्रतिष्ठित लोक प्रिय नायक के उन्मात्तवाच्यों द्वारा जातीय भावनाओं आदर्शों और आकांक्षाओं का उद्घाटन किया जाता है।'<sup>२</sup> इस प्रकार भारतीय नायक की आदर्श कल्पना का ही वायू जी ने समर्थन दिया है। उन्होंने महाकाव्य के नायक की दो बातें स्वीकार की हैं—

(१) ऐतिहासिक नायक ।

(२) काल्पनिक नायक ।

महाकाव्य में इतिहास प्रसिद्ध नायक होने से तादात्म्य सहज ही स्थापित हो जाता है साथ ही लोकप्रिय नायक होने से लोक रजनता का भाव समावेश होता

१ आचार्य विद्वनाथप्रसाद मिश्र—वाङ्मय विमर्श, पृ० २२

२ वही, पृ० ३०

३ वायू गुलाबराय—काव्य के रूप, पृ० ५९

है। काव्य के भावन व्यापार या साधारणांतरण की सम्भावना अधिन हा जाता है।<sup>१</sup> भारतीय वाङ्मय म भी उदात्त की कल्पना का अभाव नहीं है। भारतीय शब्द विराट उदात्त की समग्र धारणा का व्यक्त करने म अधिन समय है।<sup>२</sup> गाता म प्रदर्शित भगवान के विराट रूप (११।६।५४) से अधिन प्रबल उदात्त का उद्गमण दुलभ हा होगा।

### रामदहिन मिश्र

बाबू गुलाबराय की भाति इन्हाने सस्कृत पद्यणकारो का हा समपन किया है। इनके मत से किसी दवता सद्बशोदभव नपति या किसी प्रसिद्ध ब्यक्ति का वत्तात लेकर अनेक सगो मे जा काय लिता जाता है वह महाकाव्य है। इन वतातो का आधार इतिहास आदि होत हैं। इनम स कोद एक रस प्रधान होता है और अय रस गोण।<sup>३</sup> इनम विविध प्रकार का प्राकृतिक बणन रहता है, अनेक छन्दो का प्रयोग किया जाता है। इस प्रकार विश्वनाथ के लक्षण की पुनरावति इहोन की है।

### द्वितीय वम

#### डा० भगीरथ मिश्र

मिश्र जी न भारतीय तथा पाश्चात्य विद्वाना के लक्षणो का आत्मपरक अध्ययन प्रस्तुत किया है। महाकाव्य की परिभाषा के पाश म बद्ध करने का तो प्रयास नहीं किया, लेकिन महाकाव्य के चार अनिवार्य तत्वा का संकेत किया। (१) कथानक (२) महान चरित्र (३) सन्देश, (४) शली।<sup>४</sup>

व्याख्यापरक दष्टि स महाकाव्य के चार भदो का स्वीकार किया (१) कथा प्रधान, (२) चरित्र प्रधान (३) भाव प्रधान (४) अलङ्कृति प्रधान।<sup>५</sup>

#### आचार्य नन्दबुलारे वाजपेयी

वाजपेयी जी ने महाकाव्य को महान सस्कृति की उपलधि स्थाकार किया है। महाकाव्य की रचना जातीय सस्कृति के किमी महाप्रवाह सम्यता के उदभव सगम, प्रलय किंसा महच्चरित्र के विराट् उत्कर्ष अथवा आत्म-तत्त्व के किसी चिर

१ बाबू गुलाबराय—सिद्धांत और अध्ययन, पृ० २०४

२ बाबू गुलाबराय—काव्य के रूप पृ० ८६

३ रामदहिन मिश्र—काव्य रूपण, पृ० २४५

४ डा० भगीरथ मिश्र—काव्यशास्त्र, पृ० ६५

५ वही, पृ० ६६

अनुभूत रहस्य को प्रदर्शित करने के लिए की जाती है।<sup>१</sup> महाकाव्य में महामानव व महत्ताय ही विराट् रूप लवर प्रगट होत हैं।<sup>२</sup> महाकाव्य में तीन तथय वे अनिवार्य मानते हैं—

(१) रचना का प्रबन्धनात्मक या मगवद्ध होना।

(२) शली का गाम्भीर्य।

(३) वर्णित विषय की व्यापकता और महत्ता।

जीवन का मधुर तथा विराट् रूप जिन कृति में उभरा हो, उसे ही वे महाकाव्य कहते हैं।

## आचार्य नगेंद्र

उन्होंने 'वर्णित विषय की व्यापकता' पर सर्वाधिक महत्त्व दिया। उनकी दृष्टि महाकाव्य के अंतरंग और बहिरंग दोनों ही अंग पर रही है। अथ विद्वानों की तरह उन्होंने अनावश्यक तत्त्वों को लक्षणों में स्थान नहीं दिया। इसीलिए महाकाव्य के उही तत्त्वों को लेकर चलूंगा जो देश काल सापेक्ष नहीं हैं, जिनके अभाव में किसी भी देश अथवा युग की रचना महाकाव्य बन सकती है और जिनके अभाव में परम्परागत शास्त्रीय लक्षणों की बाधा होने पर भी किसी कृति को महाकाव्य के गौरव से वंचित नहीं किया जा सकता। ये भूत तत्त्व हैं—

(१) उदात्त कथानक

(२) उदात्त काव्य का उद्देश्य

(३) उदात्त चरित्र

(४) उदात्त भाव

(५) उदात्त शली

इस मत में यह स्पष्ट है कि यहाँ पर 'उदात्त' की अत्यधिक व्यापक अर्थ में ग्रहण किया है। भारतीय काव्य शास्त्र में 'धीर' नामक के साथ 'उदात्त' शब्द भी

१ आचार्य नन्दबुलारे बाजपेयी—हिन्दी साहित्य-वीसवीं शताब्दी, पृ० ४४

२ आचार्य नन्दबुलारे बाजपेयी—आधुनिक साहित्य, पृ० ५३

३ आचार्य नगेंद्र—कामायनी के अध्ययन की समस्याएँ, पृ० १५

४ "किन्तु इस इस विषय में कोई भ्रान्ति नहीं होनी चाहिए कि औदात्य और मायुष्य में किसी प्रकार का प्रकट या प्रच्छन्न विरोध है। इसी भ्रान्ति का निवारण करने के लिए मैं आधुनिक आलोचक ब्रह्म के औदात्य सम्बन्धी प्रसिद्ध लेख की ओर इंगित करूँगा, जिसमें उन्होंने उदात्त की सौन्दर्य शास्त्र का गम्भीर मानते हुए उसे व्यापक अर्थ में सौन्दर्य का ही एक रूप माना है। उनके अनुसार स्थूलतः सुन्दर के पाँच भेद किए जा सकते हैं—उदात्त, भव्य, मधुर, मनोरम

गरिमा, शाभा, भव्यता वा प्रतीक या पर्याय वा गया है। जावा के शास्त्रत मूल्य ही उसके आधार स्तम्भ हैं, युग जीवन की गरिमा ही उस शाभा प्रदान करता है, अतः उदात्त नायक ही महाकाव्य बन होता चाहिए।

आचार्य नगेन्द्र जी के इस उदात्त सिद्धांत का समर्थन विश्व कवि रविन्द्रनाथ के ये विचार भी करते हैं कि 'इसी प्रकार मन में जब एक महान् व्यक्ति का उत्पन्न होता है, सहसा जब एक महापुरुष कवि के कल्पना राज्य पर अधिपति भाजभाता है, मनुष्य चरित्र का उदार महत्त्व मनश्चक्षुषा के सामने अविच्छिन्न होता है तब उसके जनित भावा से उदात्त हावर कवि भाषा का मंदिर निर्माण करते हैं। उस मंदिर की भित्ति पृथ्वी के गम्भीर अतर्द्धा में रहती है और उसका शिखर मर्मा की भेद कर आकाश में उठता है। इस मंदिर में जो प्रतिमा प्रतिष्ठित होती है उसके देव भाष से मुग्ध होकर, नाना दिग्देशों से आ, आ कर लोग उस प्रणाम करते हैं। इसी को कहते हैं महाकाव्य।' इस प्रकार महामानव के महत्वाय और महदुष्ठात की महत्त्व देकर उदात्त को अपनाया है।

## हिन्दी शोध प्रबन्धकारों के मत

'महाकाव्य' पर अनुसंधान करने वाले विद्वानों के निष्कर्ष भी दृष्टव्य हैं।

### डा० शम्भूनाथ सिंह

भारतीय तथा पाश्चात्य विद्वानों का धारणा पर व्यापक विचार करने के पश्चात् उन्होंने अपनी स्थापना की है। इनके ध्यात्वा विश्लेषण से यह भलवता है कि अधुनातन समस्त परिभाषाओं का निचोड़ लेखक प्रस्तुत करना चाहता है, किन्तु उसकी परिभाषा तथ्यों के चक्कर में भारी भरकम हो गयी है। उनके मत से महाकाव्य के सामान्य लक्षणों से अधिक आवश्यक यह है कि उसमें ऐसी अनवरत जीवनी शक्ति हो, जो युग युग में गया की धारा की तरह सामाजिक परिवर्तनों, राजनीतिक उलट फेर और सांस्कृतिक विकास का विषम भूमि में बीच से समाज के हृदय प्रदेश में महाकाव्य की धारा का अजस्र रूप में प्रवाहमान रहे।<sup>१</sup> उन्होंने अपनी परिभाषा में निम्नलिखित तथ्यों को अनिवार्य धारित किया—

(१) महदुद्देश्य महत्प्रेरणा और महती नाव्य प्रतिभा

और सलित। अतः सौंदर्य नास्त्र की दृष्टि से सलित तथा उदात्त में कोई विरोध नहीं, मधुर की स्थिति तो उदात्त के और भी निकट है।

—यही, पृ० १६

१ —विश्वकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर—मेघनाद पथ, भूमिका, पृ० १३७

२ —डा० शम्भूनाथ सिंह—हिन्दी महाकाव्यों का स्वरूप विकास, पृ० १२०

- (२) गुरुत्व, गाम्भीर्य और महत्व
- (३) महत्वाय और युग जीवन का समग्र चित्र
- (४) सुसंगठित तथा जीवन्त कथानक
- (५) महत्वपूर्ण नायक
- (६) गरिमामयी उदात्त शैली
- (७) तीव्र प्रभावशक्ति और गम्भीर रस-व्यञ्जना

### डा० प्रतिपालसिंह

इनके अनुसार महाकाव्य में निम्नलिखित तथ्यों की आवश्यकता होती है—

- (१) इतिहास, विज्ञान और दर्शन द्वारा पूर्ण मानवता की सृष्टि
- (२) मानव जीवन की विभिन्न परिस्थितियों का सम्यक् विवेचन
- (३) प्रकृति और मानवता का पूर्ण चित्रण और मानव जीवन से उसका पूर्ण सामञ्जस्य ।

इस परिभाषा में अतिव्याप्ति का दोष माना जाता है, यह मत महान् काव्य से भी बाहर उपवास नाटक तथा मग कुछ समेटने का प्रयास सा है ।

### डा० गोविन्दराम शर्मा

इन्होंने अपने शोध प्रबंध 'हिन्दी के आधुनिक महाकाव्य' में भारतीय तथा पाश्चात्य दृष्टि से महाकाव्य का स्वरूप विश्लेषण करते हुए निम्नलिखित तथ्यों को मान्यता दी है—

- (१) प्रकथनात्मक तथा कथा सूत्रता
- (२) विषय की व्यापकता तथा वर्णन की विशदता
- (३) नायक की महत्ता
- (४) छन्दबद्धता तथा उदात्त भाषा शैली
- (५) रसात्मकता
- (६) जीवन का यथासाध्य सर्वांगीण चित्रण
- (७) जातीय भावनाओं और सभ्यता की सुन्दर अभिव्यक्ति ।<sup>१</sup>

इस परिभाषा में महाकाव्य के तत्त्वों की एक विस्तृत सूची प्रस्तुत की गयी है । इस परिभाषा में व्याख्या विश्लेषण पद्धति से महाकाव्य के धातरिक तत्वों पर मातृपञ्जनक प्रभाव पड़ा है । डा० शर्मा की महाकाव्य सम्बन्धी धारणाएँ मान्य नहीं हुई । इस परिभाषा में गुरुबद्धता का अभाव तथा सूची परियणन की प्रवृत्ति का दोष है । इतिहास, विज्ञान और दर्शन के समन्वय से अनुप्य पूर्ण मानव जनना है अतः



कलाकार का प्रथम वस्तु यह हो जाना है कि वह पूर्ण भावना की सृष्टि करे। जो कलाकार मानव जीवन की विभिन्न परिस्थितियाँ, भ्रमता, प्रेम, उल्लास एवं घम आदि का सम्यक् विवेचन करता है वही श्रेष्ठ कलाकार होगा और उसका कृति महाकाव्य कहलान की अधिकारिणी होगी।

### डा० श्यामनन्दनकिशोर

उन्होंने डा० शम्भूनाथासह की परिभाषा पर विचारापगत कहा है कि महाकाव्य ममस्पर्शी घटनाया पर आधारित एक महान कवि की ऐसा छन्दोबद्ध कृति है जिसमें मानव जीवन की किसी ज्वलन्त समस्या का व्यापक प्रतिपादन विसा महान उद्देश्य की पूर्ति या जातीय सस्वति के महाप्रवाह की उद्भावना, उन्नत वर्णन शली व्यञ्जक भाषा पूर्ण रसात्मकता और उच्च कोटि के शिल्प विधान द्वारा किया जाता है एवं जिसका नायक किसी भी जाति या वर्ण का होकर भा भूनेक गुणों से कवि के आदर्शों को मूर्तिमान करने वाला होता है।<sup>१</sup> इस परिभाषा में इतने तथ्य स्पष्ट हैं—

- (१) जीवन की ममस्पर्शी घटनाया पर आधारित ज्वलन्त समस्या पर प्रकाश डाला गया हो।
- (२) उदात्त उद्देश्य
- (३) उदात्त शली
- (४) रसात्मकता
- (५) आदर्श नायक
- (६) भारतीय जीवन की प्राणवान धारा

### हिन्दी के विद्वानों के मतों की तुलना तथा निष्कर्ष

#### कथानक

आचार्य मुकुन्द जी के मत से कथानक चाह प्रख्यात हो या काल्पनिक उसका प्राणम विराट हो जीवन के बहिष्प को प्रस्तुत करने की उत्तम शक्ति हो, कथानक में हृदय को स्पष्ट करने की शक्ति हो। कथा में गत्यात्मक गुण तथा कथाचित होना चाहिए। बाबू गुलाबराय तथा विश्वनाथ प्रसाद मिश्र ने भी मुकुन्द जी का भाति सानुबध कथा को स्थान देना उचित समझा है। डा० भगीरथ मिश्र ने 'महान कथानक' का अतिवाध माना है। आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी रचना का प्रवधात्मक

१ डा० श्यामनन्दनकिशोर—डी० लिट—प्राधुनिक हिन्दी महाकाव्य का शिल्प विधान, पृ० ६०

या सगवद्ध हाना तथा विषय की व्यापकता को महाकाव्य में अनिवार्य मानते हैं। डा० नगेंद्र इन सभी के निरूपण को उत्तम कथानक का नाम देते हैं। डा० गोविन्द राम शर्मा प्रकथनात्मकता तथा कथामूर्तता एवं विषय की व्यापकता के साथ वरुण की विशदता को आवश्यक मानते हैं। इसी को डा० शम्भूनाथ सिंह 'सुसंगठित तथा प्राणवान कथानक' कह देते हैं। डा० श्यामनन्दन विश्वेश्वर महाकाव्य की कथा को जीवन की ममस्पर्शी घटनाओं पर आधारित मानते हैं। अतः इन आचार्यों के मत से कथानक जीवन के व्यापक रूप का समेटता हुआ तथा गठित होने के साथ साथ गरिमायुक्त भी होना चाहिए।

## नायक

आचार्य गुकलजी न प्रबन्धकाव्य में धीरोदात्त नायक को उचित ठहराया है। गुकलजी की इस भावना का पीछे के सभी विद्वानों ने समर्थन किया। डा० गोविन्द राम शर्मा के विचार से उसका नायक महत्वपूर्ण व्यक्ति होना चाहिए। डा० शम्भूनाथ सिंह भारतीय तथा पाश्चात्य विद्वानों के मतों का सम्यक् परीक्षण करने के पश्चात् 'महत्वपूर्ण या जीव त नायक' को उचित समझते हैं। बाबू गुलामराय भगौरथ मिश्र तथा डा० नगेंद्र महाकाव्य के नायक का उदात्त नामक मानते हैं। अतः इन विद्वानों की धारणा सस्फुट आचार्यों की धारणा से ही मेल खाती है कि महाकाव्य का नायक महत्वपूर्ण व्यक्ति होना चाहिए। इन विद्वानों के नायक सम्बन्धी मत में कोई विरोध नहीं है।

## रस

आचार्य गुकलजी न प्रबन्धकाव्य में अखण्ड 'रसात्मक शक्ति' को स्वीकार किया है। महाकाव्य के अंतर्गत 'हृदय में रसात्मक तरंगों उठान की शक्ति' होनी चाहिए। बाबू गुलामराय तथा आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र इसी 'रसात्मकता' को प्रभावार्थित का नाम देते हैं। रामदहिन मिश्र महाकाव्य में एक रस अंगी तथा अन्य अंग रसों की चर्चा करते हुए गुकलजी की भाँति रस वविध्य को ही स्वीकार करते हैं। आचार्य नन्ददुनारे वाजपेयी इस विषय में मौन हैं। आचार्य नगेंद्र महाकाव्य में 'उत्तम भाव या रस का प्राणवता के ही आधार पर उचित ठहराते हैं। डा० गोविन्द राम शर्मा 'रसात्मकता' डा० शम्भूनाथ तथा डा० श्यामनन्दन विश्वेश्वर तीव्र प्रभावार्थित तथा शम्भूरी रस व्यञ्जना' का महाकाव्य में अनिवार्य मानते हैं। उपर्युक्त विद्वानों के मतों का निरीक्षण करने पर एक तथ्य मिन जाता है कि महाकाव्य में रसात्मक शक्ति का होना अनिवार्य है।

## उद्देश्य

आचार्य शुक्ल जी ने प्रवचन या महाकाव्य में 'जीवा के अग्रणी चित्र' को प्रस्तुत करना उचित समझा है। बाबू गुलाबराय, आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, भगवन्त मिश्र जो ने शुक्लजी ही की भाँति महाकाव्य में जातीय जीवन की अभिव्यक्ति को स्थान दिया है। नन्ददुलार वाजपेयी महाकाव्य का उद्देश्य जातीय सङ्घर्ष के महाप्रवाह तथा सम्प्रदाय के उदगम की प्राप्ति हैं। इसे ही डा० नगेंद्र 'उदात्त उद्देश्य' का नाम देते हैं। डा० गोविंद राम शर्मा इन 'उदात्त उद्देश्य' को जीवन का यथा साम्य सर्वांगीण चित्रण और जातीय भावनाओं और सङ्घर्ष की सुंदर अभिव्यक्ति के अंतर्गत तथा डा० शम्भूनाथसिंह महर्षि महत्प्रेरणा, महत्काय तथा युगजीवन के समग्र चित्र का नाम देते हैं। अतः हिंदा के समस्त विद्वानों का इस विषय में धारणा है कि महाकाव्य का उद्देश्य महान् होना चाहिए।

## अभिव्यजना शिल्प

आचार्य शुक्ल विश्वनाथप्रसाद मिश्र बाबू गुलाबराय आदि विद्वानों ने महाकाव्य के अभिव्यजना शिल्प पर अलग से प्रकाश नहीं डाला है। शायद वे महाकाव्य को महान् अभिव्यक्ति से युक्त मानकर चले हैं, इसलिए वे महाकाव्य की अभिव्यक्ति का संकेत नहीं करते हैं। आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी, आचार्य नगेंद्र महाकाव्य में 'उदात्त शली' को अपमाना अभिवाय मानते हैं। इस 'उदात्त शली' को ही डा० गोविंद राम शर्मा सुंदर अभिव्यक्ति डा० शम्भूनाथसिंह तथा डा० प्रतिपादसिंह 'गरिमायुगी उदात्त शली' तथा डा० श्यामनन्दनकिशोर 'उदात्त शली' कहते हैं। इन विद्वानों के मतों में कहा भी विरोध नहीं है। अतः महाकाव्य के उदात्त अभिव्यजना शिल्प को इन विद्वानों ने स्वीकार किया है।

हिंदा विद्वानों के महाकाव्य सम्बंधी निष्कर्षों को सूत्र रूप में इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है—

- (१) व्यापक तथा गठित कथानक
- (२) महत्त्वपूर्ण नायक
- (३) रसात्मक शक्ति की अभिव्यजना
- (४) महान् या उदात्त उद्देश्य
- (५) समग्र अभिव्यजना शिल्प

## भारतीय तथा पाश्चात्य विद्वानों के मतों की तुलना

## दृष्टिकोण का विवेचन

भारतीय तथा पाश्चात्य विद्वानों के महाकाव्य सम्बंधी लक्षण लक्षणों का ये ही आधार पर बनने तथा परिष्कृत होते रहे हैं तथा युगानुक्रम आचार्य लक्षण

म परिवर्तन तथा परिवर्द्धन करते रहे हैं। भामह, दण्डी, रुद्रट, हमचन्द्र, तथा विश्वनाथ प्रभृति आचार्यों का दृष्टि में कालिदास, माघ, भारवि आदि के महाकाव्य अवश्य रहें होंगे। भामह से लेकर हमचन्द्र तक महाकाव्य में व्यक्ति के 'नायकत्व' की चर्चा है, किन्तु विश्वनाथ ने 'रघुवश' के अनेक राजाओं को नायक देखकर महाकाव्य के लक्षणों में एक वश का एक या एक वश के अनेक राजा भी उसके नायक हो सकते हैं इस मत का प्रतिष्ठा दी। इस प्रकार आचार्यों ने महाकवियों का अनुकरण भी किया तथा माघ निष्कर्षों को प्रतिष्ठा देने का भी प्रयत्न किया।

पाश्चात्य देशों में भी ठीक यही हुआ है। इन विद्वानों ने भी हमर, इलियड मोइसा आदि को ही अपनी दृष्टि पथ में रखा है। उदाहरणार्थ अरस्तू ने महाकाव्य का सद्धातिव विवेचन या प्रतिपादन करते हुए 'हामर' तथा मोइसी से एक नहीं, अनेक उदाहरण प्रस्तुत किए हैं। मध्ययुग में विचार धारा तथा लक्ष्य प्रायः में परिवर्तन के कारण वहाँ भी महाकाव्य के लक्षणों में परिवर्तन करना पड़ा है। आधुनिक काल में आकर केर दिक्सन, बाबरा ने नवीन काव्यों को देखकर प्राचीन लक्षणों में आवश्यकतावश श्रान्तिकारी परिवर्तन किए। वहाँ कथानक, नायक, उद्देश्य, शैली पर बहुत कुछ नया साँचा गया किन्तु यह परम्परा का बिखराव नहीं, उमका ही समृद्ध विकास है।

दोना दशा में विचारक शरीरतत्त्व तथा आत्म-तत्त्व अथवा यो कहिए महाकाव्य के अन्तरंग तथा बहिरंग की छानबीन करते रहे हैं। यही कारण है कि कुछ आत्मवादी आचार्य हैं कुछ शरीरवादी। हिंदी के आचार्यों ने संस्कृत तथा पाश्चात्य दोनों की दृष्टि से आदर देकर अपनी सम-वयवादी दृष्टि का परिचय दिया है। इनमें आचार्य विश्वनाथप्रसाद, बानू गुलाबराय, डा० भगीरथ मिश्र, आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी तथा डा० नगेंद्र का नाम अग्रगण्य है। हिंदी में साधकाय करने वाले विद्वान भी महाकाव्य के आत्म-तत्त्व तथा शरीरतत्त्व के मध्य सामंजस्य स्थापित करते हुए सावभौमिक तथा ठास तथ्यों को निकालने में भगीरथ प्रयास करते रहे। चिंतन की मुक्त गति तथा युग का विकास-मुखी प्रवृत्तियाँ न हों इन विद्वानों को किसी एक निष्कर्ष पर पहुँचने दिया है। मानव के महत्त्वाय, महान उपनयनियों में इनका विश्वास है। अतः यहाँ भारतीय तथा पाश्चात्य विद्वानों की तुलनात्मक समीक्षा करने महाकाव्य के तत्त्वों पर विचार करना आवश्यक प्रतीत होता है। यथा—

### कथानक

भारतीय तथा पाश्चात्य विद्वान इस विषय में प्रायः सहमत हैं कि महाकाव्य में जनप्रिय, प्रख्यात अथवा लोक विश्रुत कथाओं को स्थान देना चाहिए। कथानक का फलक विराट् हाँ तथा कथा में प्रवाहात्मकता, प्रभविष्णुता तथा कर्मविधि हो।

भारतीय आचार्यों ने जो बात पंच सधियों पञ्चवर्षावस्थाया के द्वारा कही है, ठीक वही बात वे एड्विन ऐन्थ (आग्निमय यूनिटि) के द्वारा कहते हैं। महाकाव्य में कथानक के अतन्त्र जीवन के 'यापक' सत्यो को समेटने का बात दोना करते हैं। घटनाया की सन्तुलित योजना को दाना ही आदर देते हैं। महाकाव्य में महाकाव्य पर दोनो ही दशो के विचारक बल देते रहते हैं। विषय की व्यापकता तथा घटनाया के उन्मुख तथा सन्तुलित विकास पर दोनो के मत में कोई विरोध नहीं। हा समय की अर्थविधि का अन्तर अवश्य पड़ा है पाश्चात्य महाकाव्य में समय की एकता (यूनिटी आफ टाइम) बड़ी सामित है जबकि हमारे यहाँ उसका प्रतिबन्ध नहीं है। उदाहरण में रामायण, महाभारत आदि का लिया जा सकता है।

पाश्चात्य विचारकों ने महाकाव्य में अलौकिक तथा अति प्राकृत तत्त्वों का भी समावेश किया है। इस समावेश का कारण भी उन्होंने कथानक का समुचित विकास बताया है। लेकिन हमारे यहाँ भी इस प्रकार के प्रयोग अनावश्यक नहीं समझे गये हैं आवश्यकतानुसार कवि इनका प्रयोग कर भी सकते हैं एवं नहीं भी। अति प्राकृत तत्वों का बहिष्कार हमारे महाकाव्यकार ने अभी नहीं किया, लेकिन औचित्य तथा आदर पर उनकी दृष्टि अवश्य रही है। कथानक ऊँड़िया में हमारे महाकवि अति प्राकृत तत्वों को आवश्यक दृष्टि से प्रस्तुत करते हैं, जिससे रचना नपुण्य तथा भाव की रमणीयता प्राप्ती है। सुतनात्मक दृष्टि से देशी तथा विदेशी आचार्य महाकाव्य के कथानक के विषय की व्यापकता, भव्यता प्रभावात्मकता प्रणवता तथा लोक प्रख्यात कथा को आदर देते हैं।

## नायक

भारतीय तथा पाश्चात्य मतों पर दृष्टिपात करने पर सामान्यतः नायक विषयक दृष्टिकोण में भी विशेष अन्तर दृष्टिगोचर नहीं होता है। संस्कृत, हिन्दी तथा पाश्चात्य सभी विद्वान् एकमत हैं कि नायक ही कथा का निष्ठा होता है। वह युग अथवा समय विशेष का प्रतिनिधि होना चाहिए। दण्डी, रदट्ट ने 'विजिगीषु' तथा 'चतुरोदात्त नायक' तथा विश्वनाथ ने 'धीरोदात्त गुणवित' की बात की बात की है। पाश्चात्य विचारक टमो जिराल्डी ने भी महाकाव्य के नायक को पूर्ण गुणी (पर्फेक्ट क्विज़म) नायक की चर्चा की है। हाँ अरस्तू ने 'पूर्ण मानव' का अवश्य विरोध किया था उसका मत से नायक सबका निर्णय नहीं होना चाहिए। सबका निर्णय तो महामानव भी नहीं होता है। कहा न कही उसमें तो अवश्य रह जाना है। अतः अनेक उदात्त गुणी के होने हुए भी वह निर्दोष नहीं होना चाहिए। किन्तु अरस्तू की बात का विरोध हुआ तथा दोष हीन व्यक्ति का नायक बनाने का परम्परा बड़ा प्रायः भाग्य रही। आधुनिक काल में कहा पर 'नायक मृत्यु' का अर्थ है कथा में उद्देश्य की सिद्धि। हिन्दी के अधुनातन महाकाव्य 'सामान्यतः' में भी नायक

लाप है। इस प्रकार दाना के अन्तर्गत रस म वषम्य कम तथा साम्य अधिक है। भारतीय धारादार नायक कल्पना वहाँ के सांस्कृतिक जीवन से टकराती है किन्तु रस तथ्य पर दाना एकमत हैं कि उस लोक-कल्याण म प्रवृत्त उत्पन्न गुणा मे युक्त रस की भावनाभा, परम्परायो तथा आदर्शों का रक्षक होना चाहिए। इसीलिए नायक को भारतीय तथा पाश्चात्य दृष्टि के समन्वय से डा० नगेन्द्र ने 'उदात्त नायक' की संज्ञा दी है। साथ ही नायक के साथ ही कथा के अर्थ पाना को गोण स्वीकार किया है।

स

महाकाव्य म रस की कल्पना का लेकर दाना दशा क बीच विवाद उठाया जा सकता है। यह सत्य ही है कि भारतीय आनन्दवादी कल्पना ने ही रस सिद्धांत का जन्म दिया है। अन्तर्भाववादी आचार्य भामह ने अन्तर्भाव का काव्य की आत्मा मानकर भी रस की महत्ता को उद्घाटित किया। दण्डी ने 'रसभाव निरन्तर' को वक्ष्य स्थान दिया। परवर्ती आचार्य जगन्नी तथा अग्र रस की चर्चा भी करते रहें हैं। विश्वनाथ ने शृंगार, वीर, शान्त म स किसी एक को अग्रा रस तथा शेष रसा को अग्रा रस म समाहित किया। जीवन की समग्रता मे रस की अखण्ड शक्ति का मान लिया गया। अतः सभी भारतीय आचार्य महाकाव्य म रस की सत्ता को आदर देते हैं।

पाश्चात्य साहित्यशास्त्र म रस का प्रत्यक्ष वर्णन तो नहीं, हा भावा का विवेचन प्रचलित है। उदात्त हृदय आदि भावों की सत्ता म व विश्वास रखते हैं। अन्तर्भाव-विविध का उद्घाटन आदर दिया है। एक मूल भाव तथा अन्तर्भाव भवना का वेग उद्घाटन है। यह भाव विविध भारतीय आचार्य के शाब्द म भावात्मक अनुभूति का ही प्रभेद है। शास्त्रीय शब्दावली म रस हा है क्योंकि अनुभूति का रागात्मक रूप ही रस है। अग्रन्तु-नाल के काव्या म युद्धादि के वर्णन के कारण वीर भाव का प्राधान्य है। फिर भी भारतीय आचार्य का पक्ष का दखत हुए वे बहुत पीछे हैं। भाव का सत्ता को मानना हा रस का मायता का स्वीकृति देना है। अतः दाना दृष्टियों म भेद हा म हुआ भा मार भेद नहीं है। रस का दाना ही अनिवार्य मानते हैं।

जीवन या उद्देश्य

महाकाव्य म जीवन का ममानता का ग्रहण करना दाना दशा के विद्वानों को माय है। भारतीय आचार्य पुरुषार्थ अनुष्ठान को महाकाव्य का उद्देश्य मानता रहा है जिसम जीवन की समग्र सिद्धि या अखण्डता का भाव ही निहित है। पाश्चात्य विज्ञान भी समग्र जातीय दृष्टि का समन्वय अग्रन्तु से लेकर

भारतीय आचार्यों ने जो बात पंच सधियों पंचवार्यावस्थाआ के द्वारा कही है ठीक वही बात वे एन्द्रिक ऐक्य (आरगनिक यूनिटी) के द्वारा कहते हैं। महाकाव्य में कथानक के अतन्त जीवन के व्यापक सत्यो को समेटने की बात दोनों करते हैं। घटनाआ की सतुलित योजना का दोनों ही आदर देते हैं। महाकाव्य में महाकाव्य पर दोनों ही देशों के विचारक बल देते रहे हैं। विषय की व्यापकता तथा घटनाओं के उमुक्त तथा सतुलित विनास पर दोनों के मत में कोई विरोध नहीं। हा समय का अग्रिम का अन्तर अवश्य पड़ा है पाश्चात्य महाकाव्यों में समय की एकता (यूनिटी आफ टाइम) बड़ी सीमित है जबकि हमारे यहाँ उसका प्रतिबोध नहीं है। उल्हास में रामायण महाभारत आदि को लिया जा सकता है।

पाश्चात्य विचारकों ने महाकाव्य में अलौकिक तथा अति प्राकृत तत्वों का भी समावेश किया है। इस समावेश का कारण भी उन्होंने कथानक का समुचित विनास बताया है। लेकिन हमारे यहाँ भी इस प्रकार के प्रयोग अनिवार्य नहीं समझे गये हैं आवश्यकतानुसार कवि इनका प्रयोग कर भी सकता है एक नहीं भी। अति प्राकृत तत्वों का बहिष्कार हमारे महाकाव्यकार ने कभी नहीं किया लेकिन 'मौचित्य तथा आदर्श पर उनकी दृष्टि अवश्य रही है। कथानक दृष्टि में हमारे महाकवि अति प्राकृत तत्वों को आवश्यक ढंग से प्रस्तुत करते हैं, तिससे रचना मनुष्य तथा भाव का समशीलता वाली है। सुनारमक दृष्टि से देशी तथा विदेशी आचार्य महाकाव्य में कथानक के विषय की व्यापकता भव्यता प्रभावामरता प्रणवना तथा नौक प्रख्यात कथा को आदर देते हैं।

## नायक

भारतीय तथा पाश्चात्य मतों पर दृष्टिपात करने पर सामान्यतः नायक विषयक दृष्टिपात में भी विषय अन्तर दृष्टिगोचर नहीं होता है। मसूत, हिन्दू तथा पाश्चात्य सभी विद्वान् एकमत हैं कि नायक ही कथा का नियता हाना है। वह पुण प्रमदा समय शिष्य का प्रतिनिधि हाना चाहिए। दण्डे स्टेट में 'विजिगीषु तथा 'पुनरोत्थान नायक तथा विजयनाथ ने धीरान्त गुणवित का मान की बात की है। पाश्चात्य विचारक तथा विद्वान् ने भी माना कि नायक को पूर्ण गुणा (पर्वत कर्मण) नायक का चर्चा की है। हाँ अरम्भ में पूरा मानव का अवश्य विराध किया था उसका मत में नायक मनुष्य निर्णय नहीं हाना चाहिए। मनुष्य निर्णय ता महामानव भी नहीं हाना है। कथा में कही उमम नायक अवश्य रह जाना है। अतः अन्त में गुणा का हान हान भी वह निर्णय नहीं हाना चाहिए। हिन्दू धर्म का मान्यता विराध हया तथा नायक हान व्यक्ति का नायक बनान का लक्षण वही प्राप्त मान्यता है। आधुनिक काल में कहा पर नायक मनुष्य का अग्र है कथा में उमम का निधि। हिन्दू का धनुनात महाकाव्य चाराधन में भी नायक

का लोप है। इस प्रकार दाना के भक्ता में वपम्भ वम तथा साम्य अधिव है। भारतीय घोरोदाश नायक कल्पना वहा के सांस्कृतिक जीवन से टकराती है, किंतु इस तथ्य पर दाना एकमत है कि उसे नोक कल्याण में प्रवत, उदात्त गुणा से युक्त नाव का भावनाया, परम्पराया तथा आदर्शों का रक्षक होना चाहिए। इसीलिए नायक को भारतीय तथा पाश्चात्य दृष्टि के समन्वय से छा० नगद्र ने उदात्त नायक स्थापित किया है। साथ ही नायक के साथ ही कथा के अन्य पात्रों को भी स्वीकार किया है।

## रस

महाकाव्य में रस की कल्पना का लेकर दोना दशा के बीच विवाद उठाया जा सकता है। यह सत्य ही है कि भारतीय आनन्दवादी कल्पना ने ही रस सिद्धांत का जन्म दिया है। अलङ्कारादी आचार्य भामह ने अलङ्कार का कार्य की आत्मा मानकर भी रस का महत्ता को उदघोषित किया। दण्डी ने 'रसभाव निरंतर' को विशेष स्थान दिया। परवर्ती आचार्य जगदी तथा अग रस की चर्चा भी करते रहे हैं। विश्वनाथ ने शृंगार, वीर शांत में से किसी एक को अंगी रस तथा शेष रसों का अंग रसा में समाहित किया। जीवन की समग्रता में रस की अखण्ड शक्ति का मेल किया गया। अतः सभी भारतीय आचार्य महाकाव्य में रस की सत्ता का आदर देते हैं।

पाश्चात्य साहित्यशास्त्र में रस का प्रत्यक्ष वर्णन तो नहीं, हा भावा का विवेचन अवश्य है। उदात्त, हास्य आदि भावों की सत्ता में व विश्वास रखते हैं। अतः भाव-वर्णन को उद्धान आदर दिया है। एक मूल भाव तथा अनेक भक्ता का वग उद्घोष है। यह भाव बहिष्कृत भारतीय आचार्य के ज्ञान में भावात्मक अनुभूति का ही प्रभेद है। शास्त्राय शब्दावली में रस हा है क्योंकि अनुभूति का गमात्मक रूप ही रस है। अस्तु-काल के काया में युद्धादि के वर्णन के कारण वीर भाव का प्राधान्य है। फिर भी भारतीय आचार्य का पकड़ को दृष्टत हुए व बहुत पीछे है। भाव का भक्ता को मानना ही रस का भाव्यता का स्वीकृति देना है। अतः दोना दृष्टिया में भेद होते हुए भी सार भेद नहीं है। रस का दानो ही अनिवार्य मानते हैं।

## जीवन या उद्देश्य

महाकाव्य में जीवन की समानता को ग्रहण करना दोना दशा के विद्वानों को भाव्य है। भारतीय आचार्य पुष्पाय चतुष्टय को महाकाव्य का उद्देश्य मानता रहा है जिनमें जीवन की समग्र सिद्धि या अमरता का भाव पाश्चात्य विद्वान भी समग्र जातीय दृष्टि का समर्थन करते हैं।



भारतीय आचार्यों ने जो बात पच सधिया पचकार्याग्रस्याधा के द्वारा कहा है, ठीक वही बात ये एन्ड्रिव ऐक्य (धारमिक यूनिटि) के द्वारा कहते हैं। महाकाव्य में कथानक के अतिसत आसन के व्यापक मनो को समेटने का बात दोनों करते हैं। घटनाओं की सतुलित योजना का दाना ही आनर देने है। महाकाव्य में महाकाव्य पर दोनों ही देशों के विचारक बल देते रहते हैं। विषय की व्यापकता तथा घटनाओं के उन्मुक्त तथा सतुलित विकास पर दोनों के मत में कोई विरोध नहीं। हा समय का अवधि का अंतर अवश्य पड़ा है पाश्चात्य महाकाव्य में समय की एकता (यूनिटी आफ टाइम) बड़ी सीमित है जबकि हमारे यहाँ उसका प्रतिबंध नहीं है। उदाहरण में रामायण महाभारत आदि को लिया जा सकता है।

पाश्चात्य विचारकों ने महाकाव्य में अलौकिक तथा अति प्राकृत तत्त्वों का भी समावेश किया है। इस समावेश का कारण भी उन्होंने कथानक का समुचित विकास बताया है। लेकिन हमारे यहाँ भी इस प्रकार के प्रयोग अनावश्यक नहीं समझे गये हैं आवश्यकतानुसार यदि इनका प्रयोग कर भी सकता है एवं नहीं भी। अति प्राकृत तत्त्वों का यहि प्रकार हमारे महाकाव्यकार ने कभी नहीं किया लेकिन 'ओचित्य तथा आदश पर उनकी दृष्टि अवश्य रही है। कथानक रुढ़िवा में हमारे महाकवि अति प्राकृत तत्त्वों को आकर्षक ढंग में प्रस्तुत करते हैं जिससे रचना मधुर तथा भाव की रमणीयता आती है। सुलनात्मक दृष्टि से देशी तथा विदेशी आचार्य महाकाव्य के कथानक के विषय की व्यापकता भयंता प्रभावात्मकता, प्रणवता तथा नोक प्रख्यात कथा का आदर दते हैं।

## नायक

भारतीय तथा पाश्चात्य मतों पर दृष्टिपात करने पर सामान्यतः नायक विषयक दृष्टिकोण में भी विशेष अंतर दृष्टिगोचर नहीं होता है। संस्कृत, हिन्दी तथा पाश्चात्य सभी विद्वान् एकमत हैं कि नायक ही कथा का नियन्ता होता है। वह युग अथवा समय विशेष का प्रतिनिधि होना चाहिए। दण्डी, स्ट्रट ने 'विजिगीषु, तथा चतुरोत्तम नायक तथा विश्वनाथ ने धीरोदात्त गुणवित की बात की बात की है। पाश्चात्य विचारक टैसो जिराल्डी ने भी महाकाव्य के नायक को पूर्ण गुणी (पर्फेक्ट वचुअस) नायक की चर्चा की है। हर्न अरस्तू ने पूर्ण मानव का अवश्य विरोध किया था उसने मत में नायक सवथा निर्दोष नहीं होना चाहिए। सवथा निर्दोष तो महामानव भी नहीं होता है। कही न कही उसमें दोष अवश्य रह जाते हैं। अतः अनेक उदात्त गुणों के हात हुए भी वह निर्दोष नहीं होना चाहिए। किन्तु अरस्तू की बात का विरोध हमारा तथा दाप हान व्यक्ति का नायक बनाने की परम्परा वहाँ प्रायः भाग्य रहा। आधुनिक काल में वहाँ पर 'नायक मृत्यु' का अर्थ है कथा में उद्देश्य की सिद्धि। हिन्दी के अष्टनातन महाकाव्य 'सावामतन' में भी नायक

का लोप है। इस प्रकार दाना के मत्ता में वषट्म्य वम तथा साम्य अधिव है। भारतीय धीरादाता नायक कल्पना बहा के सांस्कृतिक जीवन से टकराती है किन्तु इस तथ्य पर दोनों एकमत हैं कि उसे 'नोक-कल्याण' में प्रवृत्त, उदात्त गुणा से युक्त नायक की भावनाया, परम्पराया तथा आदर्शों का रक्षण होना चाहिए। इसीलिए नायक को भारतीय तथा पाश्चात्य दृष्टि के समन्वय से डा० नगद्व ने उदात्त नायक स्वीकार किया है। साथ ही नायक के साथ ही कथा के अन्य पात्रों को भी स्वीकार किया है।

## रस

महाकाव्य में रस का कल्पना का लेकर दोनों दशा के बीच विवाद उठाया जा सकता है। यह सत्य ही है कि भारतीय आनन्दवादी कल्पना ने ही रस सिद्धांत को जन्म दिया है। अलंकारवादी आचार्य भामह ने धनंजय का काव्य की आत्मा मानकर भी रस की महत्ता को उदघाटित किया। दण्डी ने 'रसभाव निरंतर' को विषय स्थान दिया। परवर्ती आचार्य अगी तथा अग रस की खोज भी करते रहे हैं। विश्वनाथ ने शृंगार, वीर, शांत में से किस एक का अगी रस तथा शेष रसों को अग रसों में समाहित किया। जीवन की समग्रता में रस की अखण्ड शक्ति का मल किया गया। अतः सभी भारतीय आचार्य महाकाव्य में रस का सत्ता का आदर देते हैं।

पाश्चात्य साहित्यशास्त्र में रस का प्रत्यक्ष वर्णन तो नहीं है भावा का विवेचन अवश्य है। उदात्त, हास्य आदि भावा की सत्ता में वे विश्वास रखते हैं। अतः भाव-विविध को उहाँ आदर दिया है। एक मूल भाव तथा अनन्य भक्ता का वेग उहाँ माय है। यह भाव विविध भारतीय आचार्य के शाब्दात् भावात्मक अनुभूति का ही प्रभेद है। शास्त्रीय शब्दावली में रस ही है क्योंकि अनुभूति का रागात्मक रूप ही रस है। भरतृ-काल के काव्यात् में युद्धादि के वर्णन के कारण धीरे धीरे भाव का प्राधान्य है। फिर भी भारतीय आचार्य का पकड़ को देखते हुए वे बहुत पीछे हैं। भाव का मत्ता को मानना ही रस की मायता को स्वीकृति देना है। अतः दाना दृष्टियों में भेद हाते हुए भी सार भेद नहीं है। रस का दाना ही अनिवार्य मानते हैं।

## जीवन या उद्देश्य

महाकाव्य में जीवन का समानता को ग्रहण करना दाना दशा के विद्वानों को माय है। भारतीय आचार्य पुष्पाय चतुष्टय को महाकाव्य का उद्देश्य मानता रहा है जिसमें जीवन का समग्र सिद्धि या अखण्डता का भाव ही निहित है। पाश्चात्य विद्वान भी समग्र जातीय दृष्टि का समर्थन भरतृ से लेकर एम्बरनाम्बा

भारतीय आचार्यों ने जो बात पंच सधिया पात्रार्थसंस्थाया के द्वारा कही है ठीक वही बात के एंड्रयू लेक्स (आरगनिस थ्यैटि) के द्वारा कहते हैं। महानाट्य में कथानक के अतन्त्र जीवन के 'पापक' मूल्यों को समेटने की बात दोना करते हैं। घटनाओं की सन्तुलित योजना का दाना ही आदर देते हैं। महाकाव्य में महानाट्य पर दोना ही देशों के विचारक बल देते रहते हैं। विषय की व्यापकता तथा घटनाओं के उन्मुख तथा सन्तुलित विकास पर दोना के मत में कोई विरोध नहीं। हा समय की अवधि का अन्तर अवश्य पड़ा है पाश्चात्य महाकाव्य में समय का एकता (यूनिटी आफ टाइम) बड़ी सीमित है जबकि हमारे यहाँ उन्का प्रतिबंध नहीं है। उदाहरण में रामायण महाभारत आदि को लिया जा सकता है।

पाश्चात्य विचारकों ने महाकाव्य में अलौकिक तथा अति प्राकृत तत्वों का भी समावेश किया है। इस समावेश का कारण भी उन्होंने कथानक का समुचित विकास बताया है। लेकिन हमारे यहाँ भी इस प्रकार के प्रयोग अनावश्यक नहीं समझे गये हैं आवश्यकतानुसार बस इन्का प्रयोग कर भी सकते हैं एवं नहीं भी। अति प्राकृत तत्वों का बहुधा हमारे महाकाव्यकार ने कभी नहीं किया, लेकिन औचित्य तथा आस्था पर उन्का दृष्टि अवश्य रही है। कथानक रूढ़ियों में हमारे महाकवि अति प्राकृत तत्वों को आकषण ढंग से प्रस्तुत करते हैं, लिखते रचना नपुण्य तथा भाव का रमणीयता जाती है। तुलनात्मक दृष्टि से देश तथा विदेश आचार्य महाकाव्य के कथानक के विषय की व्यापकता, भंग्यता प्रभावशालकता प्रभावता तथा लोक प्रख्यात कथा को आदर देते हैं।

## नायक

भारतीय तथा पाश्चात्य मतों पर दृष्टिपात करने पर सामान्यतः नायक विषयक दृष्टिकोण में भी विशेष अन्तर दृष्टिगोचर नहीं होता है। संस्कृत, हिंदी तथा पाश्चात्य सभी विद्वान एकमत हैं कि नायक ही कथा का नियन्ता होता है। वह सुप्रसिद्धा समय विशेष का प्रतिनिधि होना चाहिए। दण्डी रट्ट ने 'विजयीयु, तथा क्षत्रोदात्त नायक' तथा विश्वनाथ ने 'क्षीरोदात्त गुणवित की बात की बात का है। पाश्चात्य विचारक टमा जिराल्डी ने भी महाकाव्य के नायक को पूर्ण गुणी (पर्फेक्ट वचुअस) नायक की चर्चा की है। हाँ अरस्तू ने 'पूर्ण मानव का अवश्य विराध किया था उसके मत से नायक सर्वथा निर्दोष नहीं होना चाहिए। सर्वथा निर्दोष तो महामानव या नहीं होता है। वही न वही उसमें दोष अवश्य रह जाते हैं। अतः अनेक उदात्त गुणों के होते हुए भी वह निर्दोष नहीं होना चाहिए। अरस्तू की बात का विरोध हुआ तथा दास हान व्यक्ति को नायक बनाने का परम्परा वहाँ प्रायः मान्य रहा। आधुनिक काल में वहाँ पर 'नायक मृत्यु का अर्थ है कथा में उद्देश्य की सिद्धि। हिंदी के अधुनातन महाकाव्य लाकायतन में भी नायक

का लोप है। इस प्रकार दाना के मत्ता में वर्षमय कम तथा साम्य अधिक है। भारतीय धाराणात् नायक कल्पना वहा के सांस्कृतिक जीवन से टकराती है, किंतु इस तथ्य पर दाना एकमत हैं कि उसे 'नोक-कल्याण' में प्रवृत्त, उदात्त गुणा से युक्त नायक का भावनाघ्रा, परम्परायां तथा आदर्शों का रमक होना चाहिए। इसीलिए नायक का भारतीय तथा पाश्चात्य दृष्टि के समन्वय से डा० नगद्र ने उदात्त नायक स्वीकार किया है। साथ ही नायक के साथ ही कथा के अन्य पात्रों को भी स्वीकार किया है।

## रस

महाकाव्य में रस की कल्पना का लेकर दाना दशा के बीच विवाद उठाया जा सकता है। यह तथ्य ही है कि भारतीय आनन्दवादी कल्पना न ही रस मिद्धात का जन्म दिया है। अलकाश्यानी आचार्य भामह ने अन्तकार का काव्य की आत्मा मानकर भा रस का महत्ता का उद्घापित किया। दण्डी ने 'रसभाव निरन्तर' को विषय स्थान दिया। परवर्ती आचार्य अंगी तथा अग्र रस की चर्चा भी करते रहे हैं। विश्वनाथ ने शृंगार, वीर, शान्त में से बिना एक को अंगी रस तथा शेष रसा का अंग रसा में समाहित किया। जीवन की समग्रता में रस की अखण्ड शक्ति का मन किया गया। अतः सभी भारतीय आचार्य महाकाव्य में रस की सत्ता का आदर करते हैं।

पाश्चात्य साहित्यशास्त्र में रस का प्रत्यक्ष वर्णन तो नहीं, हाँ भावा का विवेचन अवश्य है। उदात्त, हास्य आदि भावा की सत्ता में वे त्रिश्रवाम रखते हैं। अतः भाव-विवेचन का उन्होंने आदर दिया है। एक मूल भाव तथा अनन्त भक्ता का का उन्हें मान्य है। यह भाव विविध भारतीय आचार्य के शब्दों में भावात्मक अनुभूति का ही प्रकट है। शास्त्राय शब्दावली में रस ही है क्योंकि अनुभूति का रागात्मक रूप ही रस है। भरतमुनि के काव्या में युद्धादि के वर्णन के कारण वीर भाव का प्राधान्य है। फिर भी भारतीय आचार्य का पक्ष को दायित्व हुए वे बहुत पीछे हैं। भाव का मत्ता का मानना ही रस की मान्यता का स्वीकृति देना है। अतः दाना दृष्टियों में न हाथ हुए ना मान्य नहीं है। रस का दाना ही अनिवार्य मानते हैं।

## जीवन या उद्देश्य

महाकाव्य में जीवन का समानता को ग्रहण करना दाना दाना के विद्वानों का मान्य है। भारतीय आचार्य पुरुषाय चतुष्टय का महाकाव्य का उद्देश्य मानता रहा है। प्रथम जीवन की समग्र मिद्धा या अखण्डता का भाव ही निहित है। अन्तर्गत विज्ञान की समग्र जातीय दृष्टि का समग्र धारणा है। लेकर अन्तर्गत

तक करते रहे हैं। मानव का विनोदिकरण तथा उदात्तीकरण उह भी माय है। चाह वह विवेचन के द्वारा, हो चाह मुक्त अभिव्यक्ति के द्वारा। भारतीय आचार्यों ने संध्या, रात प्रभात दिन, दोपहर, नदी, पर्वत के वनो में जावन विविध के चित्रण को ही महत्वपूर्ण बतलाया है। अतः दोनों के मत से महाकाव्य मानस चित्त तथा युग की भावनाओं का उदपाटक है। दोनों ही देशों के विचारका न सस्कृतियों में विराट धाराओं के सगम की महाकाव्य कहा है। वह विराट राष्ट्र की सांस्कृतिक चेतना को अपने में आत्मसात किए रहता है अतः महाकाव्य के उद्देश्य में ऐसा असंख्य एवं असीम शक्ति होनी चाहिए जिससे युग के चिरंतन सत्य, भाव, अनुभूतियाँ युग-युग के मानव को प्रेरणा देती रहें तथा जीवन की महत् उपलब्धियों को रक्षित रखने की अपूर्व क्षमता भी उसके उद्देश्य में हो। आचार्य विश्वनाथप्रसाद तथा डा० नगेन्द्र उसे ही 'उदात्त उद्देश्य' के अंतर्गत समाहित कर लेते हैं।

### अभिव्यजना शिल्प

महाकाव्य के अभिव्यजना शिल्प की दृष्टि से भी विचारकों में कोई मतभेद नहीं है। दोनों ही प्रायः यह मानकर चलते रहे हैं कि जो महाकवि हागा उसका भाषा पर अधिकार हागा ही। वनन शक्ति की विलक्षण सामर्थ्य तथा नागर शक्तों को चुनाव उस आना ही चाहिए। भाग्य ने महाकाव्य में साम्यत्व शक्ति का एकांत बहिष्कार उचित समझा है। इस मत से भी यही ध्वनित होता है भाषा तथा शक्ति की प्रीति का ध्यान सहजता के साथ रहना आवश्यक है। अधर अस्तू न भाषा की परिपक्वता तथा उदात्तता पर अत्यधिक बल दिया तथा शली में नद के प्रवाह की शक्ति को अपनाव की चर्चा की है। इस प्रकार शली की महाकाव्यमय गरिमा के विषय में भारतीय एवं पाश्चात्य दोनों का दृष्टिकोण में साम्य है। प्राधुनिक आलोचकों ने भी महाकाव्य की शली में उदात्तता का आदर दिया है। हिन्दी आचार्यों ने भी शली की शक्ति तथा गरिमा का महाकाव्य में प्रतिपादित माना है। अतः सभी निर्विवाद रूप से इस विषय पर एक मत है कि महाकाव्य में अभिव्यजना शिल्प का गरिमा होनी ही चाहिए।

भारतीय तथा पाश्चात्य विद्वानों का धारणाओं का संक्षेप करने के उपरान्त महाकाव्य के सामान्य स्वरूप विधायकतत्त्व इस प्रकार निर्धारित किए जा सकते हैं—

- (१) व्यापक परिधि-युक्त सुगठित कथानक
- (२) उदात्त-नायक
- (३) आत्मना
- (४) उद्देश्य का ज्ञान
- (५) अभिव्यजना में शक्ति।

अतः हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि महाकाव्य उस रचना को कहेंगे, जिसमें मानव के महनीय कार्यों एवं आदर्शों को व्यापक परिधि में मुक्त सुगठित ब्यापक म, कलात्मक उत्कृष्ट के साथ प्रतिष्ठित किया जाता है। कवि उसम युग धम तदा युग-नेता को ऐसा व्यक्तित्व प्रदान करता है कि जातीय गौरव की रक्षा के साथ वे मानवता का पथ प्रशस्त कर सकें। मानवता के प्रगति-मय में महाकाव्य मोल के पत्थरा के समान हात हैं। वे व्यजित करते हैं कि मानव किस युग में कहाँ तक विकास कर सका है।

## नायक का सैद्धान्तिक विवेचन

व्युत्पत्ति की दृष्टि से नायक शब्द (एगो—णुल—अक) एगो धातु म व्युल प्रत्यय के योग से बना है जिसका अर्थ 'आगे ले जाने वाला' या चयन करने वाला होता है। स्थूल रूप म अनेक व्यक्तियों म जो अग्रणी होता है, उसे नायक कहते हैं। उनमें भी जा विपत्ति और अभ्युदय में श्रेष्ठता बनाय रखता हा, वही नायक कहलाता है। लाक में यह नायक या नेता शब्द अनेक अर्थों में प्रचलित है, जिसका संकेत यहा दना आवश्यक प्रतीत होता है।

### 'नायक' शब्द के विभिन्न अर्थ

सामान्य रूप में किसी जाति, धर्म अथवा सम्प्रदाय के अग्रणीय या अग्रगण्य को नायक कह दिया जाता है। काव्य के सद्भक्त मकथा के प्रधान चरित्र या सूत्रधार क लिए 'नायक' या नेता शब्द प्रयुक्त किया जाता है। कभी कभी नायक शब्द श्रेष्ठ पुरुष आदर्श पुरुष के लिए भी प्रयुक्त होता है। यह कहन पर कि 'राम हमारी संस्कृति के नायक हैं। यहा पर नायक शब्द संस्कृति के अग्रणीय या पथ प्रदर्शक आदर्श व्यक्ति के लिए है। अधिकारश आचार्यों न भी अग्रसर व्यक्ति को ही 'नायक' कहा है। नायक शब्द क प्रचलित अर्थ इस प्रकार मान जाते हैं—

- (१) ले जानेवाला या पहुँचाने वाला।
- (२) राह दिखाने वाला।
- (३) किसी समुदाय या जनता को विशिष्ट उद्देश्य का पूर्ति का मार्ग निर्देश करने वाला प्रभावशाली व्यक्ति या अधिकारी नायक कहा जाता है।
- (४) वह मेनापति जिसके आर्चन म अस आर मेनापति हो। बीम हाथियों और घोडों के दल का अध्यक्ष।
- (५) प्रभु या अधीश्वर।

- (६) हार की प्रधान भणिका ।<sup>१</sup>
- (७) श्रेष्ठ पुरुष ।
- (८) शृंगार का आलम्बन रूप—यौवन आदि से सम्पन्न व्यक्ति । (चार प्रभेद—धीरोदात्त धीरललित धीरोद्धत धीरप्रशात) । प्रत्येक के चार भेद—दक्षिणनायक अनुकूल नायक घट्ट नायक, शठनायक । उत्तम मध्यम तथा अधम प्रकृति के नायक ।
- (९) एक चरणावित्त या एक प्रकार का राग ।
- (१०) शाक्य मुनि का एक भात विशेषण ।
- (११) संगीत विद्या में निपुण मनुष्य या कलावंत ।
- (१२) एक रोग का नाम
- (१३) सरदार स्वामी, सेनापति यह पुरुष जिसके चरित्र का लेकर नाटक या काव्य की रचना का जाए ।<sup>२</sup>

तावत् नायक शब्द उपलब्धित विभिन्न अर्थों में प्रचलित है, किन्तु साहित्य शास्त्र के अन्तर्गत यह शब्द नाटक मयवा काव्य के अधिकारी पात्र के लिए प्रयुक्त किया जाता है । कथा में काव्य के आरम्भ में जो प्रतिज्ञा करता है तथा फलागम की स्थिति में जो काव्य के प्रधान फल का मोक्षता वनता है उस नायक कहते हैं । स्थूल रूप में प्रधान घटनाओं का सूत्रधार या नियन्ता नायक कहलाता है । अतः यहाँ हम भारतीय तथा पाश्चात्य विचारका क मता का प्रस्तुत करते हुए नायक पर विचार करेंगे ।

## संस्कृत आचार्यों के नायक-निरूपण का आधार

इन आचार्यों का जीवन के प्रति आदर्शवादी दृष्टिकोण रहा है एवं इस आदर्श की अभिव्यक्ति का माध्यम उन्होंने नायक की ही बनाया है । यही कारण है कि मानव का कल्याण-मुक्त शक्तियों का उन्होंने आन्तर लिया तथा दृश्य एवं श्रव्य काव्य में उदात्त मानव का सदवृत्ति को ही प्रतिष्ठित किया । उन्होंने काव्य के नेता या नायक का सांस्कृतिक धार्मिक राजनयन नैतिक या सामाजिक जीवन का आधार स्वीकार किया है । नायक के काव्य व्यापार इतनी गरिमा रखता है कि उन काव्यों से समाज नवान् प्रेरणा प्राप्त करे । समाज के विभिन्न व्यक्ति नायक के आदर्श का उत्तर जीवन का नमान पथ ग्रहण करें । अतः सामाजिक मर्यादा का ही इन्होंने नायक पर विचार करते हुए सर्वाधिक महत्त्व दिया है ।

१ स० कालिकाप्रसाद—ग्रन्थ हिन्दी कोण, प० ६९०

२ स० पण्डित रामचन्द्र—भागवत आदर्श हिन्दी गद्य कोण, प० २८०

## संस्कृत में नायक निरूपण की परम्परा

नेता या नायक पर सर्वप्रथम शास्त्रीय विचार करने वाले आचार्यों में 'नाट्य-शास्त्र' के प्रणेता भरतमुनि अग्रणीय हैं। उन्हें ही इस परम्परा का नायक मानना चाहिए। इस आद्याचार्य के पश्चात् भामह, दण्डी, रुद्रट, धनञ्जय, भोजराज, रामचन्द्र-गुणचन्द्र, हम्बचन्द्र, सागरनदी, चाम्भट्ट द्वितीय तथा विश्वनाथ आदि आचार्यों ने विचार किया। अतः भरतमुनि से लेकर विश्वनाथ तक 'नायक निरूपण' का विकास करने के लिए सम्पूर्ण परम्परा का अध्ययन करना अनिवार्य है। यह भी स्मरणीय है कि भरत के समय में प्रयुक्त 'नाट्य' शब्द आज के 'नाटक' शब्द की तरह संकुचित अर्थ में प्रयुक्त नहीं होता था। वह समस्त काव्य का वाचक था, जिसके अंतर्गत काव्य का समस्त विधाया का विलय था। हमारे अनेक आचार्यों ने भी महाकाव्य के लिए नायक-भेद तथा अलग उसके गुण निरूपण में कोई साधकता नहीं मानी। उन्होंने 'नाटक' पर विचार करते हुए नायक पर गम्भीरता से प्रकाश डाला। अतः महाकाव्य के नायक का स्वरूप निर्धारण करने के लिए हम नाट्यान्तर्गत नायक निरूपण की परम्परा का संक्षेप में समीक्षात्मक अध्ययन को प्रस्तुत करेंगे।

### भरतमुनि (३००-२०० ई० पू०)

इन्होंने सर्वप्रथम नाट्यशास्त्र के चौबीसवें 'सामान्याभिनय' पञ्चीसवें बाह्योपचार' तथा 'प्रकृति भेद' नामक अध्यायों में विस्तृत अध्ययन प्रस्तुत किया। यहाँ पर उनकी मूल दृष्टि में अभिनेता के सिद्धांत ही थे। परंतु नर-नारी की सनातन भावना (रति भावना) को ध्यान में रखकर भी नायक भेद पर विचार किया। भरतमुनि ने नेता या नायक का व्यापक अर्थ में इस प्रकार ग्रहण किया—

- (१) नायक को मूल पात्र या कथाफल के अधिकारी पात्र के अर्थ में ग्रहण किया।
  - (२) नेता का सामान्य ग्रहण करने के साथ साथ उसे अनन्य पात्रों के अर्थ में ग्रहण किया। अर्थात् नेता के व्यक्तित्व में ही अन्य सहायक पात्रों के व्यक्तित्व का विलय माना है।
  - (३) शृंगार रस के प्रधान आलम्बन के रूप में भी ग्रहण किया।
- नायक भेद—भरत ने प्रायः तीन आधारों से नायक भेद प्रस्तुत किया—
- (१) शील के आधार पर नायक भेद।
  - (२) मानव 'प्रकृति' के आधार पर नायक भेद।
  - (३) रति-सम्बन्ध के आधार पर नायक भेद।

(१) शील के आधार पर विभाजन—इस आधार का केन्द्र समाज है। नायक में 'शील' को ध्यान में रख कर गुण शक्ति तथा वाय, परिवेश से उसका विभाजन किया—



- (क) धीरोदत्त
- (ख) धीराद्धन
- (ग) धीरललित
- (घ) धीरप्रशांत ।<sup>१</sup>

अपने विभाजन व स्पष्टीकरण में इन्होंने कहा कि कीर्तिमान, दिव्य गुणों से युक्त द्विजयी नायक धीरोदत्त नायक कहलाता है। प्रचण्ड, हठी दृढ़ प्रतिन धीरोदत्त होता है। शृंगारिक प्रवृत्तियाँ वाला कला प्रमी धीरललित कहलाता है। शांत वृत्तियों वाला ब्राह्मण धीरप्रशांत नायक कहलाता है। भरत ने 'प्रधान नायक बुधा' अर्थात् नायक का वाय व्यापारों की प्रधानता तथा भावपूर्ण केन्द्र के तथ्य पर बल दिया।

(२) मानव प्रकृति व आधार पर नायक निरूपण — इन आधार पर उद्घाटित तीन भेद किए हैं—

- (क) उत्तम प्रकृति का नायक।
- (ख) मध्यम प्रकृति का नायक।
- (ग) अधम प्रकृति का नायक ।<sup>२</sup>

उत्तम प्रकृति का नायक सत्त्वगुण प्रधान होना चाहिए। मध्यम प्रकृति का नायक म मिश्रविष्य गुणों का प्रदर्शन होता है। इसमें तमोगुण प्रधान होता है। अधम कालि का नायक सामान्य कालि का होता है।

(३) रति सम्बन्ध के आधार पर नायक निरूपण — भरत ने ससार में गा भी उज्ज्वल या पवित्र है उस शृंगार स्वीकार किया है। 'रति सम्बन्ध को ध्यान में रखकर भरत ने पुरुष के पाँच भेद स्वीकार किए—(१) उत्तम, (२) मध्यम, (३) अधम (४) चतुर (५) सम्प्रबद्ध।

नायक व आवेश में नायिका विभिन्न सम्बोधना से सम्बोधित करती है—यथा प्रेमावेश में (१) स्वामी (२) वान (३) नन्दन (४) नाथ, (५) प्रिय भाणि। काषावेश में (१) दुराचारी (२) गठ (३) दुरंगील, (४) काम, (५) विरूपक (६) निलज्ज (७) निष्ठुर नायक।

१ भरतमुनि—नाट्यशास्त्र, २४।१७

२ यही २४।१८ १६

३ यही ३६।२ ३६।५८

४ भरतमुनि—नाट्यशास्त्र २६। २६२ २६३

## नायक से गुण निरूपण

भरत व मन से नायक बनवान मत्यावादी जितन्द्रिय महात्माह स युक्त वृत्त, प्रियवाङ्, मधु लोकपाल, व्रतधारी कममाम विशारद उत्थानयुत, वृद्धसेवी, शास्त्रविद, दूसर के भाव जानने म प्रवीण, शूर आत्मन गम्भीर, विचारक, नाना शिल्पविन, नीतिशास्त्र-कुशल, अनुरागवान कुलीन, स्निग्ध, अप्रमाणी नाभरहित, विनीत धार्मिक मनःशा के गुणा स युक्त शाहीन उदात्त, त्यागी, अथशास्त्र कुशल प्रजापालन म अनुरक्त, कुनादभव, कृत्यरत, व्यवहारकुशल समदर्शी तथा जितनाथा हाना चाहिए ।<sup>१</sup>

## भामह (पाचवीं या छठी शताब्दी)

भामह न भारत की भाति नायक पर अनग स विचार नहा किया है । उनम महाकाव्य के लक्षणा को प्रस्तुत करत समय नायक की चर्चा की ह । इन्हने भारत की भाति नायक के वर्गीकरण का भी प्रस्तुत नही किया । भामह के मन से महा काव्य का नायक चतुर्वग धम, अथ, काम, मोग—का स्वामी हाना चाहिए ।<sup>२</sup> जीवन क चाग पुरपायों की मिद्धि का ही उनम नायकाचिन गरिमा माना है ।

## दण्डी (सातवीं शताब्दी)

दण्डी न भामह का ही अनुकरण किया । इन्हने भी नायक के भेदा की चर्चा तक नहा की । नायक म गुण निरूपण की पद्धति का भी उनम अभाव है । महाकाव्य' क नायक की चर्चा करत हुए उन चतुर तथा उदात्त का विशेषण स अलङ्कन किया तथा 'चतुरोदात्त नायक' का महान् कृति म स्थान दना उचित समझा ।

## रुद्रट (नवम शताब्दी का आरम्भ)

इम आचार्य न अपने ग्रन्थ 'काव्यालकार क अन्तर्गत 'महाकाव्य तथा अन्य प्रमणा की चर्चा करत हुए नायक' पर प्रकाश डाला है —

नायक भेद — रुद्रट ने तीन प्रकार के नायक स्वीकार किए —

(१) उत्तम नायक (२) मध्यम नायक (३) अधम नायक । इन्हने भरत-मम्मन धीरादात्त आदि चार प्रभेदा की चर्चा तर नही की । इन्हने 'रति' को आधार मानकर नायका की चार काटिया निर्धारित की है —

१ वही २४।७६-८६

२ भामह—काव्यालकार १।२१

३ दण्डी—काव्यालकार १।१४

(१) धनुर्गुण नायक (२) रत्निल नायक (३) धन नायक (४) धनु नायक ।

नायक में गुण विवरण — दृष्ट म उन्मुख रीत रत्निल नामक राजा क गुणा न धनुर्गुण याज्ञा तथा विविधीयु धार्मि गुणा का नायक म धार्मिक स्थान दिया । रत्न ने विवरण—धन धन काम की धार्मि का नायक के लिए धारायक माना है । उक्त धनुर्गुण का नायक म तीन प्रकार का रत्निली हारी धार्मि —

(१) प्रभु रत्निल

(२) रत्न रत्निल

(३) धनुर्गुण उन्मुख रत्निल ।

धनजय (दशवी गतायक)

—हो। दशवीक नामक धारा धन म धनमुक्ति क परधान गम्भारता म विचार दिया । धनर की नायक रत्निल की परम्परा म प्राण वृद्ध लिए । धन धन के परधान धार्मिक का दृष्ट परम्परा का दूसरा स्तम्भ कहा धार्मिक । उहने रत्न की धार्मि प्रथम प्रतियोग्य की भी धर्मा की है । उक्त धन म प्रथम प्रतियोग्य पर नायक की विवरण उक्त महत्व का उन्मुख है ।

नायक भव —दृष्ट। धीम के आधार पर नायक क धार भव स्वीकार लिए —

(१) धीरागता (२) धीरायन (३) धीरसक्ति (४) धीरप्रज्ञान । 'रत्न' की आधार मानकर दृष्ट। परम्परा स धन धारा धार भव को स्वीकार दिया—धनुर्गुण दक्षिण गठ तथा धुष्ट नायक । धनजय न गुणा के आधार पर भी तीन तरह क नायक स्वीकार लिए —

(१) रत्निल (२) दिव्यान्विल (३) धार्मिल ।

गुण निरूपण —दृष्ट। स्पष्ट कहा है कि धीर रत्निल गुणा से धनरुत व्यक्त का ही नायक बताना चाहिए । उक्त विनीत, मधुर, त्यागी, दक्ष, प्रियवर्ण, रक्तलोच, शुचि, योग्यी, रत्नवर्ण, स्थिर, युवा, बुद्धिमान, उत्साहवान, स्मृतिवान, प्राज्ञवान, बलासमन्वित, धूर, दृढ़ प्रतिज्ञ, तेजस्वी, शास्त्र चक्षु और धार्मिक होना चाहिए ।

नायक म उपलब्धित गुणा का स्थान दवर उसन नायक के धाठ सारिव

गुणा पर भी विचार किया है —

- (१) शाभा
- (२) विनास
- (३) माधुर्य
- (४) गाम्भीर्य
- (५) स्थय
- (६) तज
- (७) ललित
- (८) औदार्य ।<sup>१</sup>

उमने नायक मे पीरप के प्रताप का भरपूर महत्व दिया । उसने प्राठ सात्विक गुणा का विषय विवेचन भी प्रस्तुत किया । नीच के साथ घणा, अपने स अधिक गुणवाले क साथ स्पर्धा तथा गौरव-श्रमता को शाभा कहा है । उसने विलास नामक सात्विक गुण का तात्पर्य धनयुक्त मुस्कान से लिया है । 'माधुर्य' से उनका तात्पर्य मधुर विकार से है जिसमें व्यक्तित्व का मधुर-मस छिपा है । जिस प्रभाव से विकार स्पष्ट लक्षित न हो उमे गाम्भीर्य कहते हैं । गाम्भीर्य तथा स्थय व्यक्तित्व के कान्तिशील गुण हैं । नायक एक सहृदय व्यक्ति भी हो वह रुखा हृदयहीन वीर ही न हो । प्रेम की चंचल लोल लहरिया भी उसमें मंचल रही हो । इसी से उसने 'ललित' नामक सात्विक गुण को स्थान दिया है । नायक विनयशील उदार, रक्षक, स्वाभि मानी तथा चतुर हो, इसी का औदार्य गुण कहा है । धनजय के मत से यह प्राठ सात्विक गुण धीरोदात्त नायक के व्यक्तित्व के अनिवार्य गुण हैं, उनमें से किसी एक के भी न होने से व्यक्तित्व की हानि होता है ।

भोजराज (११ वीं शताब्दी पूर्वार्द्ध)

इहने अपने 'सरस्वती कण्ठाभरण' तथा 'शृंगार प्रकाश' में 'नायक' निरूपण पर विचार किया है । इहने परम्परा का एक नवीन मोड़ दिया तथा धन एवं स्वभाव के आधार पर नायक का वर्गीकरण किया । इनके वर्गीकरण का मूल आधार है—

- (१) धन शृंगार का नायक
- (२) धन शृंगार का नायक

१ गोभा विलासो, माधुर्य गाम्भीर्य धन तेजस्वी ।

ललितौदार्य मित्यप्यौ सत्त्वान्ना पीर्यागुणा ॥—यही १० । १५७

२ दण्डपत्र—द्वितीय प्रकरण

(३) काम शृंगार का नायक ।

(४) मोक्ष शृंगार का नायक ।<sup>१</sup>

गुणों के आधार पर — (१) उत्तम काटि का नायक, (२) मध्यम कोटि का नायक, (३) अधम काटि का नायक ।

प्रकृति के आधार पर — (१) सार्वत्रिक प्रकृति का नायक (२) राजसी प्रकृति का नायक (३) तामसी प्रकृति का नायक ।

व्यासस्तु के आधार पर नायकों का वर्गीकरण — (१) उपनायक (२) नायक भाग (३) उभयाभास (४) त्रियगाभास ।<sup>२</sup>

इस प्रकार के आधारों भेद भी लिए हैं । भोग न यह भी कहा है कि 'एवमपि विज्ञेया भेदाः सभेदनामिह ॥'<sup>३</sup> अर्थात् विद्वान् तावन्मिथ मिथश्च स भेदः अनेक भेदा का भी ज्ञान प्राप्त कर सकने हैं । भोग न एक कामिनी तथा अनेक कामनिया के आधार पर साधारण तथा असाधारण नायक नामक दो प्रभेद भी स्वीकार किए हैं । परन्तु भोग का यह विभाजन परवर्ती संस्कृत आचार्यों का मान्य नहीं हुआ ।

**रामचन्द्र गुणध्वज (१०वीं शताब्दी का मध्यमान)**

भोजराज व पश्चात् बहान् नाट्यदर्शन मन्त्र पर विद्यन्ता से किया गया । इनकी मूल दक्षिण भारतीय तत्त्वा पर ही केन्द्रित थी । तत्तिन परम्परा की गिरता अवश्य प्रमाण का तथा नरत एवं धनत्रय की बात का प्रयत्न शब्दों में समझना सा किया है । यथा—

उद्वेगान्तु मन्त्रिण ताता धीर विपत्त्या ।

वध्यास्वभावसत्त्वा ननुपमा नाम मध्यमात्तमा ॥

गीत व आधार पर चार भू-व्याख्या किए गए हैं—(१) धीरात्ता (२) धीरादत्त (३) धीरमन्त्रिण, (४) धीर प्रशान्त ।

प्रकृति व आधार पर (१) उत्तम (२) मध्यम (३) अधम ।

नरत विपत्त्या इस प्रकार दी है—

<sup>१</sup> भोजराज—तत्त्वज्ञानी बङ्गभट्ट ४। १०१ १००-

<sup>२</sup> भोजराज—अनन्तना बङ्गभट्ट ४। १०३ १०६

भोजराज—शृंगार प्रकाश पृ० ३३

<sup>४</sup> रामचन्द्र-गुणध्वज—अनन्त बहान्, पञ्चम अध्याय श्लोक ६

- (१) धाराढन नायक, अम्बि चित्त, प्रचण्ड, शौर्यान्ति के मद मे युग्म ग्रहकारी तथा घात प्रशया कर्ते वाला हाना है ।
- (२) घीरीगत नायक अत्यन्त गम्भीर, यावप्रिय, मत्वाति गुण स युक्त क्षमादान देने वाला तथा स्थिर स्वभाव का हाना है ।
- (३) घीरललित नायक कला प्रेमी शृंगारिक वनि का मुखी तथा मधुर स्वभाव का हाना है । अथवा शृंगारमूर्त भोग-गम म उसका मन गमता है ।
- (४) घीरप्रगल्भ नायक अहंकारविहीन, कृपाशु, अनियन्त होता है ।

रामचन्द्र-गुणचन्द्र न प्रधान नायक, पतारा नायक प्रकरी नायक का अलग अलग स्थान दिया । शृंगार के आधार पर नायक भेद पर उनकी दृष्टि नहीं गई । अथ आचार्यों की भाति सत्त्विक गुणा को छोड़कर अथ गुणा का गिनाने का उन्ने प्रयत्न रहा किया । धनत्रय की भाति नायक के सत्त्विक गुणा म तेज विलास माधुर्य शान्ता, मय, गम्भीर, घनीय तथा सतिन—आठ गुणा की स्वीकृति दी है । नायक के महत्व का स्पष्ट करने के लिए इन्होंने प्रतिनायक की भी धर्चा की है । उन्होंने 'लोभी घीरोद्धत पापी व्यगनी प्रतिनायक' कहा है । इन्होंने प्रतिनायक म राशि राशि अक्षगुणा तथा नायक म राशि राशि गुणा की परिकल्पना की है ।

### हेमचन्द्र (१२वीं शताब्दी)

इनका मन मे समस्त कथा का प्रधान नायक है । वह समस्त कथा चक्र का चलाने वाला तथा अन्त गुणा म युक्त हाना चाहिए । माय ही जो इतिवत्त का कन तक ले जाना है, इनने मन म—

(१) नायक समस्त गुणा युक्त व्यक्ति है ।

(२) इतिवत्त का मूलान्त नायक है ।

- १ (i) शरणधोवनिगस्त्यानी लोकनाम्न विवक्षण ।  
गम्भीर धय-गौण्डीय-ज्यावाशानुजम गुमान ॥ ना० २० चतुर्थ पं० १५६
- (ii) देवा घीरोद्धता घीरोद्धता स-दण मजिण ।  
धीरशान्ता वलिग-त्रिप्रा राजानस्तुचतुर्विधा ॥ ७  
घीरोद्धत-चण्डो दण्डो दम्भी, विवक्ष्यत ।  
घीरोद्धतो पि गम्भीरो-यापी सत्त्वो क्षमोत्थिर ॥ ८  
शृंगारो घीर सतिन कलासयत सुखोमृद ।  
घीरगान्तो हृदकार कृपावर्धनयो नवी ॥ ९ बहो प्रथम विवेक  
तेजो विलासो माधुर्य, शोभा मय गम्भीरता ।  
घोषाय, सतिन याथो गुण नेतिरि सत्यता ॥ बही, चतुर्थ पं० १६१

नायक भेद<sup>१</sup> ॥ दृष्टांते परम्परा का निष्पत्त्य ही किया, यदि मवान तस्य प्रस्तुत नहीं किया। साथ ही सांख्यिक गुणों की भी चर्चा भक्त तथा धनत्रय की तरह ही की है।<sup>२</sup> क्या प्रबन्ध व प्रधान का नायक कहा है।

### सागरनदी (११वीं शताब्दी का मध्यकाव्य)

इस आचार्य ने 'नाटक सक्षण रत्नराज' में नायक पर नूतन विचार व्यक्त किए हैं। दोनो मूल शब्द 'प्रम्यातोत्त नायक' पर केन्द्रित रही है। 'राजपिबग' की सतत इनमें गहरी है। यौवन का उद्गम वगैरा तथा मन्त्रालय की वादना ही नायक का प्रतिपाद धर्म है।

इनके मत से नायक उस व्यक्ति का कहना चाहिए जो बीज, बिन्दु प्राप्ति लेकर अतः तब क्या को गति देता है, साथ ही धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष मत्त वह किसी एक पुरुषार्थ की निधि बने। नायक की मूल शक्ति का प्रतिपन्न कलागम में होता है। अतः क्या के बात केनेवर मत्तर्भावित व्याप्ति का गुण नायक ही जाना है।

नायक भेद — पूर्व परम्परा की भांति इन्होंने भीत का आधार मानकर ही धीरोदात्त जन्म उद्भव तथा प्रजात नायक की चार कोटियाँ स्वीकार की हैं।

नायक गुण — इन्होंने महान नायक में अथ गुणों के सात आठ सांख्यिक गुणों की भी चर्चा की है—

शोभा विलासो माधुर्य स्थय गाम्भीर्यमेव च ।

१ (i) शूडगर्पास्त्रिरोधीर समवान विकल्पनो महासत्त्वो ब्रह्मवतो धीरोदात्त ॥

(ii) कलासक्त-सुखी शूडगारी मनुनिश्चतो धीरसत्तित ॥

(iii) विनयोपशमवान धीरसात्त ॥

(iv) शूरोमत्तरोमाधो विकल्पन छम्बवान रोद्धो वलिप्तो धीरोदात्त ॥

—हेमचन्द्र—काव्यानुशासन, ४१०, ४११, ४१२

२ शोभाविलास सत्तितमाधुर्य स्थयगाम्भीर्यो दायतेजास्पद्यो सत्यजास्तद्वृण ॥

—यही।

३ समप्रगुणा कथाध्यायी नायक ॥ क्या प्रबन्धस्तव्यापी। नयति यान्त्रो इतिवत्त फल चेति नायक ॥

—हेमचन्द्र काव्यानुशासन ४०६

४ सागरनदी—नाटक सक्षण रत्नराज, पृ० २

ललितादाय तेजाम सत्व मेदास्तु पौरुषा ।<sup>१</sup>

शोभा — नायक म युद्ध शक्ति, शूरता, काय दक्षता, गुणानुराग, लोक के प्रति कल्याण भावना, सत्यवादिता आदि गुण प्रदीप्त होकर शोभा को प्रदीप्त करते हैं।

विलास — धीर दृष्टि से युक्त, वधम की तरह गति, करनी मे रमणीयता बान करते समय सहज प्रसन्न मुद्रा मनाहर आकृति, सम्पत्ति इन सभी का सामञ्जस्य विलास कहलाता है।

माधुर्य — इन गुणों के अन्तर्गत प्रियता, अनुदेग को स्थान दिया गया है।

स्थय — नायक धर्म, अथ, काम के विषय म स्थिर शक्ति वाला है। वह अपने मन पर अश्रु तथा पुरुषार्थयुक्त व्यक्ति हो।

गाम्भीर्य — हृष क्रोधादि म अविचल भाव की समवित शक्ति का नाम गाम्भीर्य है।

ललित — मधुर वेश वाला, शृ गार म रुचियुक्त, महान गुणों से सरसग म रचि रखनेवाला व्यक्ति ललित भाव से युक्त कहलाता है।

श्रीदाय — अपने तथा पराये का भेद भाव भूल कर व्यष्टि तथा समष्टि के साथ प्रेम स्थापित करने की शक्ति का नाम श्रीदाय कहलाता है।

तेज — दूसरे द्वारा किये गए अपमान को सहने म असमर्थ, पौरुष पर विश्वास रखने वाला, अप्रतिहत शोभा से युक्त तेजगुणा होता है।

इन सात्त्विक गुणा को अवष्ट आत्म शक्ति के अन्तर्गत मनेटा जा सकता है।  
भागमट्ट द्वितीय (१४ वी शताब्दी)

इनके नायक निरूपण का दखकर लगता है कि सामाजिक तथा सांस्कृतिक पृष्ठभूमि को ध्यान म रख कर ही उन्होंने नायक के गुणा की एक विस्तृत सूची दी है। सांस्कृतिक दृष्टि की ही पूर्णता का परिणाम है कि एक मानव म जितने भी मान्य गुणा की परिवर्तना की जा सकती है उन गुणों की समाहित किया है।

नायक भेद — इनकी मूल दृष्टि उस पर केन्द्रित रही है। सामाजिक व भाव प्रवर्त्यात्मक रूप का आधार इन्हें अधिक पुष्ट लगा। यही कारण है कि इनका नायक

१ 'नायक इति बीज बिम्ब । दिसवलितस्य नाट्यस्य नाट्यमत नयतीति नायक ।  
स एव धर्म कामाथ यस्य भागभवति ॥

—वही प० ११

२ सागरनदी—नाट्य सहाय रत्नकोश, प० ४६



भेद स्थायी भाव या नायक की संस्कार वृत्ति पर टिका है। धीरोदात्त म धीर धीरो  
दत्त म रौद्र, धीर तन्त्रित म शृंगार तथा धीरप्रगात्त म शृंगार रम मा प्रधानता दी।  
शृंगारमूलक दृष्टिकोण को अपनाकर भी उनमें नायक भेद किए—(१) अनुकूल  
नायक (२) दम्भिए नायक (३) शठ नायक (४) घण्ट नायक।<sup>१</sup>

एक स्त्री से स्थिर प्रेम रखने वाला नायक अनुकूल नायक कहलाता है। इसके  
प्रेम में एकनिष्ठता हानी है। इसके विपरीत अपनी प्रियमा के कहन पर भी जो  
अप्रिय बोल करता है वह शठ नायक कहलाता है। पाप करने पर भी जो कभी  
बिता नहीं करता वह नायक घण्ट का कोटि में आता है। अपनी पूज पत्नी के प्रति  
भी जो अनुराग का नहीं छोड़ता तथा मय स्त्रिया से भी प्रेम सम्बन्ध रखता है तथा  
वक्षिण नायक कहलाता है।<sup>२</sup>

गुण निरूपण—इनके मत से नायक बुद्धिमान, उत्साही, स्मृतिवान, प्रभावान,  
शोभाय, गाम्भीर्य, धर्म, स्थिर, माधुर्य, बना निपुण, विनीत, कुलीन, रोग रहित,  
अभिमानरहित, स्वतन्त्र, व्यक्तित्ववान, प्रियभाषी, ताक बलवान म प्रवृत्त  
वागी, उच्चकुलीन, तजस्वी, दृढ निश्चयी, शास्त्रा, तत्त्वचानी, शृंगार म प्रवृत्त  
तथा मोक्ष के प्रति आसक्तिपूर्ण दृष्टि युक्त होना चाहिए।<sup>३</sup> महानाट्य का नायक  
पुरुषार्थ चतुष्टय से युक्त प्रसिद्ध चतुर तथा उन्नत होना चाहिए।

### विश्वनाथ (१४वीं शताब्दी पूर्वार्ध)

नाट्य तथा महाकाव्य के नायक का चरित्र म रणरत्न विश्वनाथ ने शास्त्रीय

१. तथा धीरोदात्त धीरोदत्त धीरतन्त्रित धीरप्रगात्त धीर रौद्र शृंगाररम  
प्रधानेच्छारोनायक। तथा धीरोदात्ता रामादयः। धीरोदात्त भीमसेनादयः।  
धीरतन्त्रित नवादयः। धीरप्रगात्ता जोमूतब्राह्मणादयः॥

—वामनदेव द्वितीय—वाय्यानुशासन पृ० ६१

- (१) तत्रस्थिरप्रमा एवस्थारतो नुबून।  
(२) प्रिय माच तागे नि विप्रिय म कुटने स गठ।  
(३) कृत्वा बाया वि निगन्ता घृष्ट।  
(४) अयवितो रिय मूवस्थां तोरयमय प्रमादिन स्वाति न दणिण।

—यही प० ६१ प्र० ४०

२. यही प० ६२

३. अनुव्रग कनोपनम धनुरोदात्तनायकम प्रसिद्ध नायक चरेनम बलनोपेन  
महानाट्यमः। —वामनदेव द्वितीय—वाय्यानुशासन पृ० ११ प्रथम भा०

चर्चा की। उहाते परम्परा का स्थापित व प्रदान किया। इनकी धारणा इनकी सतु  
दिन, पुष्ट तथा सुविचारित सिद्ध हुई कि परवर्ती सभी विद्वानों न इनके मत का  
समर्थन किया। हिन्दी काव्य शास्त्र में विश्वनाथ के नायक निरूपण को अधिकाधिक  
समर्थन प्राप्त हुआ।

नायक भेद—नायक पर विचार करने समय इनकी भूत दृष्टि शीत पर स्थिर  
रही है। शीत के आधार पर ही इन्हें न परम्परागत विभाजन का धीरादाता उद्धृत  
किये, प्रताप के इन चारों भेदों का स्वीकार किया। इन चारों के गुणों में पूर्वाचार्यों  
की कथित पद्धति को ही अपनाया गया है।

“गुण” का आधार मानकर इन्होंने धीरादातादि नायकों के चार भेद किए —  
(१) अनुकूल नायक, (२) दक्षिण नायक (३) मठ नायक, (४) धृष्ट नायक।

परम्परा में चले आते हुए यह उदात्त गुणपरक काव्य तथा नाटक में अप  
नाये जाने लगे। मूढ से लेकर भानुदास की “नय तरंगिणी तक तथा अथ प्रथो में  
अपरिवर्तनीय रूप से यह भेद स्वीकार कर लिए गए। भानुदास ने पति, उपपति,  
वैशिक के भेदों के साथ क्रिया चतुर, वचन अनुर तथा मानी नायक आदि भेदों को  
भी स्वीकार किया।

## गुण निरूपण

विश्वनाथ ने नायक का आत्मा का रक्षक मानकर स्पष्ट कहा है कि नायक  
में त्याग भावना हो।<sup>१</sup> वह महान शाय में सीन, उच्चकुलीन, बुद्धि के महज प्रकाश  
से दीप्त, सौंदर्ययुक्त यौवनवाना अत्यन्त उत्साह आदि गुणों से भण्डित हो। शाय  
में सलज्ज, साक्षिप्रिय, तज्जरी चतुर तथा शीतवान हो।<sup>२</sup> विश्वनाथ ने नायक में आठ  
मातृक गुणों की भी चर्चा की है—

(१) शोभा (२) विनाय (३) माधुर्य, (४) गाम्भीर्य, (५) धर्म (६) तेज  
(७) तपस् (८) शोभाय।

शोभा—इस मातृक गुण में विश्वनाथ का अभिप्राय पराक्रम, काय-  
शिष्टता मत्वाचरण उद्दाम तपस् उन्माद, ममत्त शक्ति के प्रति अनुराग, नीच

१ विश्वनाथ—साहित्यदर्पण तु० परिच्छेद ५० १४१

२ विश्वनाथ—साहित्यदर्पण तु० परिच्छेद, ५० १८१

३ वही, ५० १५३

४ वही ५० १५३

वितावृत्ति से विग्नित, शत्रु से व्यर्थ का भाव विग्नित विद्यमान होता है, उस सोमा कहते हैं।

वितात—दम गुण के कारण नायक की दृष्टि में प्रभार गति, चान में विभिन्न मगती गया बरना में मृदु गति पायी जाती है।

माधुर्य—नायक में मन क्षाम कर रहा पर भी मन का धम चरित का माधुर्य का नाम दिया है।

गाम्भीर्य—धम प्राप मोर, हय घाति की स्थिति में भी धम या स्थिर धति से रहता है तब उक्त नायक का गाम्भीर्य या पौरुष गुण कहा है।

धम—विष्णु का धाम पर भी धम का बरान्य-धम ॥ धमिचर धम का नाम धम है।

तेज—धम के द्वारा विष्णु का धममान का प्राण दन पर भी सहन न करने का नाम तेज कहा गया है।

सलिल—बोलचाल चमकूपा प्रम सीसा घाति में मुक्त नायक के गुण का सलिल कहा गया है।

औरधम—इस गुण के कारण वाली की विष्णु का नायक तब तथा धम का प्रति सगर्भिता की भावना का धममान होता है।

इस प्रकार इनके मन से नायक के गाम्भीर्य गुण नायक के धामिचर विकास को प्रस्तुत करते हैं। विश्वनाथ ने बाह्य तथा धामिचर गुणों का ध्यान में रखकर ही धीरोशक्त नायक की धारणा को निर्धारित किया है।

## संस्कृत आचार्यों की नायक सम्बन्धी धारणाओं का तुलनात्मक विवेचन

### नायको का वर्गीकरण

संस्कृत आचार्यों की नायक निरूपण की परम्परा पर दृष्टिपात से यह तथ्य स्पष्ट हो जाता है कि भारतीय आचार्यों की नायक कल्पना के निर्माण में सामाजिक एवं सांस्कृतिक आधारों का अधिक योग है। संस्कृत के सभी आचार्यों ने नायक में दोषों का सत्रथा अभाव माना है एवं उत्तम चरित्र का व्यक्ति ही वाक्य या नाटक का नायक हो सकता है। संस्कृत आचार्यों ने नायक के लिए जो कौटुम्ह निर्धारित

की, वे ही प्रायः महाकाव्य के नायक पर भी ठीक उतरती हैं। भरतमुनि ने सामाजिक नीति का आधार बनाकर सर्वप्रथम नायक की चार कोटियाँ निर्धारित की हैं—धीरोदात्त, धीरोन्मत्त, धीरोन्मत्त तथा धीरललित। इस नाटकीय विभाजन का परम्परा के रूप में स्थान प्राप्त हुआ। अग्निपुराणकार ऋद्ध, दण्डककार तथा भाज ने भरत का यह वर्गीकरण स्वीकार किया। भाजराज ने 'शृंगार प्रकाश' में भरत के धीरोदात्त का अर्थ शृंगार का नायक, धीरोन्मत्त को अर्थ शृंगार का नायक, धीरललित का अर्थ शृंगार का नायक तथा धीरोन्मत्त को मोक्ष शृंगार का नायक माना है। हम्बट्ट, रामचन्द्र-गुणचन्द्र, बागमट्ट द्वितीय तथा विश्वनाथ ने भरत के इस विभाजन को ही अपनाया है। वे आरम्भ से लेकर अन्त तक समान विशेषताओं की ही चर्चा करते रहते हैं। इन आचार्यों के मत से इस वर्गीकरण के नायक का स्वरूप इस प्रकार है—

### धीरोदात्त

इसमें गम्भीरता, दृढ़ता तथा जो सभी ने स्वीकार किया। विश्वनाथ ने 'धीरोदात्त गुणवन्त' का निरूपण इस प्रकार किया—

अत्रिकृत्य क्षमावानऽनि गम्भीरा महामता ।

स्थयान्निगूढमाना धीरान्मत्ता इन्द्रजयिनः ॥

सभी आचार्य इस मत से सहमत हैं कि अर्थ नायक की अपेक्षा इस नाटिक के नायक में गरिमा अवधिनी होती है।

### धीरोन्मत्त

इन आचार्यों के मत से इस नायक में दय तथा प्रचण्डता की प्रधानता होती है यह धृष्ट, मायावी, क्रोधी तथा आत्म प्रशंसक होता है।

### धीरललित

भरत, धनञ्जय तथा विश्वनाथ सभी के मत से यह कामन स्वभाव का कर्ता है जो प्रेम रखने वाला शृंगार प्रिय होता है।

### धीरोन्मत्त

सभी के विचार में यह प्रशान्त मन स्थिति का कर्ता है, शास्त्रों का पालन करता है, नायक ही इस नाटिक में माना है।

इस प्रकार इन आचार्यों की सम्पूर्ण परम्परा ने नाटिक के आधार पर निर्धारित इस विभाजन को स्वीकार किया है।

भाज १ नायक वर्गीकरण का म परम्परा में बयानन का दृष्टि से नायक प्रतिपादक अनायक तथा अनुनायक का विभाजन प्रस्तुत किया। भाज प्रकृति के आधार पर नायक भक्त राजग सामग तथा गान्धर्व नायक में भी प्रस्तुत किया। उद्दान एवं स्त्री तथा धोका के आधार पर भी गायारण तथा अगाधारण नायक में प्रस्तुत किए। परंतु भाज के दस विभाजनों का ध्यान के आधार पर स्वीकार किया। मानव की प्रकृति के ध्यान में रगकर भरत १ उत्तम मध्यम तथा अधम पायकों की तीन कटियों निधारित की थी जिसका सम्यक् धनजय के अतिरिक्त सिद्धांत नहीं किया। अतः इस विभाजन का विगण महत्त्व मिता है नहीं।

शृंगार या रति के आधार मानकर भी प्रायः सभी आचार्यों १ नायक का विभाजन किया है। उद्दान इनकी भी चार कटियाँ निधारित की हैं— (१) अनुकूल नायक (२) दक्षिण नायक (३) शठ नायक (४) धष्ट नायक। अतः न प्रमा १ तथा प्राधावश की स्थिति के ध्यान में रगकर नायिका के सम्बन्धना के आधार पर भी नायक भेद किया है जिसकी परम्परा सिद्धांत आचार्य १ मन्वाक्य के मन्म में बचा तक है। भाज धात्रय, वाग्भट्ट द्वितीय तथा विश्वनाथ आदि आचार्यों ने रतिक आधार पर नायक में इन चार कटि के नायक की ही धर्चा की है।

### नायक मे गुण निरूपण

इन आचार्यों ने शीन तथा रति के आधारों का धारणा कर अपना वर्गीकरण प्रस्तुत किया तथा दोनों के गुणा का प्रथक प्रथक निरूपण किया—शीन प्रधान नायक में गुण निरूपण करने हुए भरत से विश्वनाथ तक न बड़ी राबक सूची दी है। भरत मुनि ने नायक में शक्ति सम्पत्ता बुद्धिमत्ता मत्प्रियता जितद्वयता वाय दक्षता प्रगल्भता, धन उत्साह दूरगति प्रियभाषी शास्त्रज्ञता प्रवीणता कुम्भी मना, धार्मिकता उत्साहता गम्भीरता त्यागवृत्ति बहुश्रुत समदर्शिता आदि गुणा का स्थान दिया। भरत के पश्चात् रट्ट ने प्रभु शक्ति अत्र शक्ति आदि के ध्यान में रग कर विजिगीषु नायक में भरत सम्मत गुणा का समष्टि लिया। धनजय ने नायक में गुण निरूपण दृष्टि में भी म पूर्वकी आचार्यों का अपाया। परिणामतः उद्दान भी भरत सम्मत विशेषताओं का उद्हराया है। साम्बत दो रामचन्द्र गुणचंद्र वाग्भट्ट द्वितीय ने इसी परम्परा का स्वीकार किया। उन्होंने परम्परा में नायक के लिए अक्षय कति तथा अक्षय शक्ति नामक दो विशेषण और जात दिए। नायक निरूपण में गुण की परम्परा का आचार्य विश्वनाथ ने स्थिरता एवं महत्ता प्रदान की। इन्होंने परम्परा के प्रचलित सभी गुणा का स्वीकार कर लिया।

इन आचार्यों ने नायक में आठ मास्विक गुणा की चर्चा की है—शाभा विलास माधुर्य गाम्भीर्य, धृष्ट तज ललित तथा श्रोदाय । सभी के मत में यह नायक के आंतरिक व्यक्तित्व का प्रवाणन करत है । अतः 'धीर' विशेषण से युक्त नायक में इन गुणा को स्थान मिलना ही चाहिए ।

रति प्रधान नायक में प्रवृत्ति के आधार पर गुणा की चर्चा की गई है । अनुकूल नायक त्रियतमा में अनुरक्ति तथा अन्य स्त्रियां से विरक्ति का गुण सभी ने स्वीकार किया है । दक्षिण नायक का गुण है कि वह सभी नायिकाओं में समान व्यवहार करता है । शठ नायक का गुण है कि वह नायिकाओं के साथ कपट चरन में प्रवीण होता है । धष्ट नायक में निस्सज्जता को सभी ने स्वीकार किया है । इस प्रकार इन नायकों के गुण निरूपण में परम्परा के सभी आचार्य एकमत हैं ।

समस्त सस्कृत आचार्यों के मतों का सर्वेक्षण करने पर एक तत्त्व अनिवार्यतः मिलता है—नायक की नाटक या काव्य में अग्नि गरिमा । जीवन में कम पक्ष में उनकी आस्था थी । साथ ही सब के प्रति आत्मा में सहज भुक्ताव तथा सादारण्य का भाव भी उनके मूल में है । यही कारण है कि आचार्यों की दृष्टि में मानिक भेद नहीं । अतः इन आचार्यों के मत से नायक में निम्नलिखित विशेषताएँ होनी चाहिए—  
(१) चारित्रिक भव्यता (२) असीम एवं अजय उत्साह शक्ति (३) युग का मायना (४) कुलीनता तथा प्रभाव शक्ति (५) अमण्ड आत्मशक्ति (६) अमण्ड धृष्ट (७) जीवन का उद्दाम धर्म (८) अनेक कलाओं में पारंगत (९) सात धर्म का रक्षण (१०) सात श्रद्धा की पात्रता ।

निष्कर्ष में हम कह सकते हैं कि इन आचार्यों ने निर्दिष्टता का नायक में महत्त्व दिया है । इन्होंने नायकों की भव्यता तथा स्थायी गरिमा पर भी विशेष ध्यान दिलाया है ।

## पाश्चात्य विद्वानों का नायक सम्बन्धी दृष्टिकोण

पाश्चात्य विद्वानों ने महाकाव्य तथा नाटक पर विचार करते हुए नायक पर प्रकाश डाला है । उनका नायक आदर्शवाद के कठघरे में बन्द नहीं वह जीवन के रूप विप्राय जय पराजय की भागना के आधुनिक चरित्र पर स्थित है । इस का प्रमुख कारण भारतीय तथा पाश्चात्य सस्कृति का अन्तर है । भारतीय विचारधारा आदर्शवादी है और पाश्चात्य विचारधारा यथार्थवादी । हमारा नायक अनेक गुणों में युक्त तथा मर्यादाशून्य का उपासक होता है । पाश्चात्य विद्वानों का यह दृष्टिकोण है कि जीवन में उत्थान-न्यस्तन का तम पाखा है, इसीलिए नायक की कल्पना करते

हुए भी उन्होंने इस बन्ध पर बल दिया है। वे महामानव की महानता में विश्वास रखते हैं और इस महानता में पूरा युग बोध छिपा रहता है किन्तु वे महान से महान व्यक्ति में भी कुछ कमियाँ दिखाते हैं जिससे कि यथाथ का रक्षण हो सके और नायक बल्पना की ही वस्तु न बन जाय तथा प्रत्येक व्यक्ति यह अनुभव करे कि वह हमारे जीवन का ही हमसे कुछ ऊपर उठा हुआ व्यक्ति है। उसमें महानता भी है और लघुता भी।

सबप्रथम ग्रीक के आचार्य अरस्तू ने त्रासदी तथा कामदी की चर्चा करत हुए नायक पर विचार किया है। पाश्चात्य जगत में अरस्तू से लेकर वर्नाडशा तक उनके यहाँ नायक सम्बन्धी दृष्टिकोण में परिवर्तन दृष्टिगोचर होता है। जिस में पुनर्जागरण काल कहत हैं उसमें भी टसो, वुल्टसबेनो जिस्टाडी, पुटेनहेम आदि अरस्तू की ही परम्परा में सुधार करत रह। आधुनिक काल में धीरेधीरे प्रचार और प्रसार हुआ फलतः कला में नवीन से नवीन तकनीकी प्रयोग हुए। डिवसन केर, बावरा आदि न नायक में युग की गरिमा का रक्षित करने की चर्चा की। अतः पाश्चात्य जगत की लम्बी परम्परा पर सक्षिप्त रूप से प्रकाश डाल लना आवश्यक है जिससे हम कुछ माय तथ्य उपलब्ध कर सकें।

**अरस्तू की नायक सम्बन्धी धारणा (३८४ ३२० ई० पू०)**

अरस्तू ने नाटक का महाकाव्य से अधिकतर रचना मानकर नाटक का त्रासदी तथा कामदी दो प्रभेद किए। उसने कामदी का ही जीवन की गम्भीर घाटनि स्वीकार किया तथा त्रासदी के नायक को ही गम्भीर व्यक्ति। उसने त्रासदी नाटक (ट्रजडी) तथा महाकाव्य (एपिक) दोनों में ही नायक की महानता उच्चकुलीनता तथा उदात्तता पर विशेष जोर दिया। उसने महाकाव्य के पात्रों में भी त्रासदी के पात्रों की अधिक गम्भीर अनुकृति कहा है। लेकिन जीवन के यथाथ रूप को लेकर ही उसने स्वीकार किया है कि त्रासदी नायक चाहें कितना ही उदात्त क्यों न हों उसमें कोई न कोई दुर्बलता (हैमशिपा) अवश्य रहती है।<sup>१</sup> बूचर ने अरस्तू की बात का पट्ट करत हुए ठीक ही कहा है कि दाप रहित मानता नाटकीय रजकता लाभ में बहुत कम समय ही पाती है।<sup>२</sup>

**नायक भेद**

अरस्तू ने नायकों को तीन वर्ग किए हैं—(१) यथाथ नायक (२) आदर्श

१ ए० ए० बूचर—अरिस्टोटलस थियोरी ऑफ पोयट्री एण्ड फाइन आर्ट्स,

नायक (३) परम्परागत तथा रुढ़ चरित्र के नायक ।

यथाय नायक स अरस्तू का तात्पर्य यथाय जीवन के नायक या पात्र। स है । जीवन का वास्तविक जटिलताओं से जूझते हुए जा सामान्य मानव की तरह उत्थान पतन के चक्र में पड़े रहते हैं वे ही यथाय काटि के पात्र हैं । ऐतिहासिक या पौराणिक इतिवृत्त के आधार पर चित्रण के बिना या नाट्यकार प्रस्तुत करता है, उन्हें पौराणिक पात्र या आदर्श चरित्र कहते हैं । तीसरे प्रकार के पात्रों में वे कल्पित व्यक्ति आते हैं जिनको कलाकार युगानुरूप ढाल कर जन्म देता है । काल या परिस्थिति का ध्यान रख कर उद्देश्य की सिद्धि के लिए प्रायः इस प्रकार के नायक अपनाये जाते हैं । इनमें निजधरी तथा अलौकिक घटनाओं का समावेश रहता है ।

### नायक के चरित्रांकन की सीमा

ग्रामणी तथा महाकाव्य में गम्भीर चरित्र का नायक होना है, लेकिन यह गम्भीर व्यक्ति सदा निरदोष नहीं होना चाहिए । यदि आदर्श व्यक्ति का पतन दिखाया जायगा तो उसका दुर्भाग्य (एन्वर्सिटी) हमारे नैतिक संस्कारों को भ्रष्ट करेगा तथा पापबुद्धि की आशंका का ठेक लगनी । निरदोष व्यक्ति के पतन से कल्याण तथा भद्र की भावना में उत्पन्न होने वाले नैतिक आधार का सहानुभूतिमूलक आत्म तत्त्व विनाश कर चीख उठेगा । अरस्तू का कहना है कि साथ ही उनमें किसी दुष्ट पात्र के विपक्ष में उत्कर्ष का चित्रण भी नहीं होना चाहिए ।<sup>१</sup>

### नायक के आवश्यक उपबंध

नायक अमाधारण मधासम्पन्न राजपरिवार अथवा कुलीन परिवार के व्यक्ति का बनाना चाहिए । महाराज के नायक का लेकर अरस्तू ने विम्वत चचा नहीं की । सिर्फ इतना ही कहा है कि महाकाव्य तथा ग्रामदा में यह समानता है कि उनमें उच्चतर काटि के नायकों की पद्धत अनुकूलि रहती है ।<sup>२</sup>

अरस्तू ने नायक के चार आवश्यक उपबंध माने हैं—

(१) भद्र (Goodness)—वृत्त के मत से अरस्तू ने सदाधिक महत्त्व चरित्र का एकता तथा भद्रता का दिया । यदि चरित्र भद्र होगा तो उद्देश्य स्वयं भद्र हो जायगा ।<sup>३</sup>

(२) औचित्य (Propriety)—उचित अनुचित का विवेक नायक में जागना

१ स० डा० नमोद—अरस्तू का काव्यशास्त्र, प० ३१

२ यही प० १८

३ एस० एच० ब्रूकर—अरिस्टोटलस दि थियोरी ऑफ पोएट्री एण्ड फाइन आर्ट्स, प० ५५



हो। समाज के करणाय नायक का औचित्य उस ज्ञान का है।

(३) जायन के अनुबन्ध चरित्र (True to Life)—जायन के सत्य चरित्र में उपस्थित है। अस्तित्व न दृष्टी के अंतर्गत भद्र तथा औचित्य का भी माना है।

(४) एकरूपता (Consistency)—चरित्र में अनन्यरूपता होत हुए भी एकरूपता का गुण है।

होरेस—(६५ ई० पू०—८ ई० पू०)

होरेस का कहना है कि 'नायक का जो चित्र जनसाधारण के मस्तिष्क में है, उससे भिन्न चरित्र नहीं बनना चाहिए। होरेस ने नायक भेद की तो चर्चा नहीं की, लेकिन चरित्र में सावभौमिकता पर बल दिया।<sup>१</sup> उसने महाकाव्य का राजाघोष, नेताघोष का अनुकृत रूप कहा तथा महान् नायक के कार्यों के कारण ही कृति का भव्यता (dignity) को स्वीकार किया।<sup>२</sup> उसके मत से महान नायक का व्यक्तित्व समाज पर छा जाता है तथा युग ऐसे व्यक्ति का अनुकरण करता है। इस प्रकार उसने आदर्श नायक (Ideal hero) को उचित ठहराया।

सोलहवीं शताब्दी के मध्य में इटलियन सरल जिराल्डो (Giraldino) ने महाकाव्य के नायक पर विस्तृत विचार किया। उसने महाकाव्य के नायक में उदात्त गुणा की आवश्यकता का प्रतिपादन किया। चरित्र के आधार पर उसने महाकाव्य के तीन भेद किए—

- (१) एक व्यक्ति के एक चरित्र का अनुकृति।
- (२) एक व्यक्ति के अनेक चरित्रों का अनुकृति।
- (३) अनेक व्यक्तियों के अनेक चरित्रों का अनुकृति।

टसो—(१५६४-१७७८) ने अस्तित्व के नायक सम्बन्ध में मत पर प्रहार किया। उसने त्रासदी में करण तथा भय के भावों का अनावश्यक स्वीकार किया। उसने त्रासदी के नायक में अंतर किया। ऐसा के मत से त्रासदी के नायक के लिए यह आवश्यक नहीं है कि वह युग का महान नेता या महान व्यक्ति हो, जबकि महाकाव्य के नायक के लिए यह आवश्यक है। महाकाव्य का नायक काफी हद तक निर्दोष, उदात्त गुणा से युक्त तथा संतुष्टभावनाओं से युक्त होना चाहिए।<sup>३</sup>

१ स० बाबू गुलाबराय—डा० अनेन्द्र—सेठ गोविन्ददास अभिनन्दन ग्रन्थ, पृ० १४२

२ "Hero would be the spirit of man the human who is drawn up and exalted from the clouded levels of conscious existence into the clearer region of the universal history

—Hegel—Philosophy of Fine arts—Vol IV p 157

३ I T Myers—A study of Epic development, p 19

एमीक्रुसो—(Amycruso) ने नायक के महामानवत्व की महत्ता प्रतिपादित की है। उसने नायक में महामानव के तत्त्वा (Superhuman elements) को अनिवार्य माना। उसके मन से नायक गुणा की दिव्यता से निर्दोष भी हा तो काई बड़ी बाधा नहीं है। नायक में उत्साह, प्रेम, धैर्य तथा साहस रक्षण की प्रवृत्ति हानी चाहिए।<sup>1</sup>

बाल्टेयर (१६६४-१७७८) ने नायक का दो भेद किए—(१) कठोर प्रवृत्ति का नायक, (२) कामल प्रवृत्ति के नायक।

इसके मत से दोनों प्रकार के नायकों में मानवता का प्रभावित करने की शक्ति होनी चाहिए।<sup>2</sup>

शब्दविक्रम नायक में युग दृष्टि को विशेष महत्त्व दिया।<sup>3</sup> उसका व्यक्तित्व युग की हलचल का दर्पण होना चाहिए। नायक के साहस का भाव शब्दविक्रम युग दृष्टि में अपनाता है। उसने अखण्ड तथा अजेय युद्धात्मक शक्ति का नायक में आवश्यक माना है।

कारलायल—(१७६५-१८८१) ने नायक पर गम्भीरता से विचार किया। उसने परम्परा रक्षक तथा परम्परा प्रेमी दो विशेषण नायक में अनिवार्य माने हैं। इन गुणों की विस्तृत चर्चा उसने 'हीरो एण्ड हीरो वर्शिप' नामक अपनी कृति में की है। उसने कहा, 'मरा नायक से तात्पर्य एक बफादार व्यक्ति से है, बहादुरा तथा पवित्र महानता से ही नायक का जन्म होता है।'<sup>4</sup>

एमरसन ने इस परम्परा में एक नवीन तथ्य नायक मूल्य (Hero's Rate) नाम से जाह्न दिया।<sup>5</sup> उसने नायक में स्वायत्त शक्ति (Trained in self control) तथा मध्य आत्मा की चर्चा की है तथा वीरोचित जीवन का ही नायक का औदात्य मानते हुए भी उस परम्परा से पिटा पात्र कहा है।<sup>6</sup>

1 Amycruso—The Golden Road in English Literature—England's Epic—Chpt XXI

2 I T Myers—The Study of Epic Development p 30

3 N K Sinthanta—The Heroic Age of India p 64

4 Carlyle—Hero and Hero worship the Hero as priest

5 The hero is not fed on sweets

Daily his own heart he eats

Chambers of the great are jails

And Head winds right for Royal sails

R W Emerson—Heroism

6 'Every hero becomes a bone at last'

—Emerson—Representative men—uses of great man p

हो। समाज के करणाय नायक का औचित्य उस भाग है।

(३) जायन के अनुसूल चरित्र (True to Life)—जायन के सत्य चरित्र में उपस्थित है। अस्तु न इसा के अतगत भद्र तथा औचित्य को भी माना है।

(४) एकरूपता (Consistency)—चरित्र में अनवरूपता होत हुए भी एकरूपता का गुण है।

होरेस—(६५ ई० पू०—८ ई० पू०)

होरेस का कहना है कि नायक का जो चित्र जनसाधारण के मस्तिष्क में है, उससे भिन्न चरित्र नहीं बनना चाहिए। होरेस ने नायक भेद की तो खर्चा नहीं की, लेकिन चरित्र में सावभौमिकता पर बल दिया।<sup>१</sup> उसने महाकाव्य को राजाघा, नेताघा का अनुकृत रूप कहा तथा महान् नायक के कार्यों के कारण है इति की भव्यता (dignity) को स्वीकार किया।<sup>२</sup> उसके मत से महान् नायक का व्यक्तित्व समाज पर छा जाता है तथा युग ऐसे व्यक्ति का अनुकरण करता है। इस प्रकार उसने आदर्श नायक (Ideal hero) को उचित ठहराया।

सालहवीं शताब्दी के मध्य में इटलियन लेखक जिरोल्डो गिराल्दिन्तो (Giraldicinto) ने महाकाव्य के नायक पर विस्तृत विचार किया। उसने महाकाव्य के नायक में उदात्त गुणों की आवश्यकता का प्रतिपादन किया। चरित्र के आधार पर उसने महाकाव्य के तीन भेद किए—

(१) एक व्यक्ति के एक चरित्र का अनुकृति।

(२) एक व्यक्ति के अनेक चरित्रों का अनुकृति।

(३) अनेक व्यक्तियों के अनेक चरित्रों का अनुकृति।

टसो—(१५६४-१७७८) ने अस्तु के नायक सम्बन्धी मत पर प्रहार किया। उसने आसदी में करण तथा भय के भावों का अनावश्यक स्वाकार किया। उसने आसदी के नायक में अंतर किया। टसो के मत से आसदी के नायक के लिए यह आवश्यक नहीं है कि वह युग का महान् नेता या महान् व्यक्ति ही हो। जबकि महाकाव्य के नायक के लिए यह आवश्यक है। महाकाव्य का नायक काफी हद तक निर्दोष, उदात्त गुणों से युक्त तथा सदभावनाओं से युक्त होना चाहिए।<sup>३</sup>

१ स० बाबू गुलाबराय—डा० नगेन्द्र—सेठ गोविन्ददास अभिनन्दन ग्रन्थ, पृ० १४२

२ 'Hero would be the spirit of man the human who is drawn up and exalted from the clouded levels of conscious existence into the clearer region of the universal history

—Hegel—Philosophy of Fine arts—Vol IV p 157

३ I T Myers—A study of Epic development, p 19

एमोक्रूसो—(Amjcruso) न नायक के महामानवत्व की महत्ता प्रतिपादित का है। उसने नायक में महामानव के तत्त्वों (Superhuman elements) को अनिवार्य माना। उसके मन से नायक गुणों की दिव्यता से निर्दोष भी हाँ ता काई बड़ी बाधा नहीं है। नायक में उत्साह, प्रेम, धर्म तथा लाव-रक्षण की प्रवृत्ति हानी चाहिए।<sup>1</sup>

बान्टर (१६६४-१७७८) ने नायकों के दो भेद किए—(१) बटार प्रकृति के नायक, (२) कामन प्रकृति के नायक।

इसके मन से दोनों प्रकार के नायकों में मानवता को प्रभावित करने की शक्ति हानी चाहिए।<sup>2</sup>

शास्त्रिक ने नायक में युग दृष्टि को विशेष महत्त्व दिया।<sup>3</sup> उसका व्यक्तित्व युग का हलचल का दर्पण होना चाहिए। नायक के साहस को भी शास्त्रिक युग दृष्टि में अपनाता है। उसने अखण्ड तथा अजय युद्धात्मक शक्ति का नायक में आवश्यक माना है।

कारलायल—(१७६५-१८८१) ने नायक पर गम्भीरता से विचार किया। उसने परम्परा रक्षक तथा परम्परा प्रेमी दो विशेषण नायक में अनिवार्य माने हैं। इन गुणों की विस्तृत चर्चा उसने 'हीरो एण्ड हीरो वर्शिप' नामक अपनी कृति में की है। उसने कहा, 'मरा नायक से तात्पर्य एक बफादार व्यक्ति से है, बहादुर तथा पवित्र महानता से ही नायकों का जन्म होता है।'<sup>4</sup>

एमरसन ने इस परम्परा में एक नवीन तथ्य नायक मूल्य (Hero's Rate) नाम में जोड़ दिया।<sup>5</sup> उसने नायक में स्वायत्त शक्ति (Trained in self control) तथा भय आत्मा की चर्चा की है तथा वीरोचित जीवन को ही नायक का भीतार्य मानते हुए भा उस परम्परा से पिटा पात्र कहा है।<sup>6</sup>

1 Amjcruse—The Golden Road in English Literature—England's Epic—Chpt XXI

2 I T Myers—The Study of Epic Development p 30

3 N K Sinthant—The Heroic Age of India ■ 64

4 Carlyle—Hero and Hero worship the Hero as priest

5 The hero ■ not fed on sweets

Daily his own heart he eats,

Chambers of the great are jails

And Head winds right for Royal sails

R W Emerson—Heroism

6 'Every hero becomes a bone atlast'

—Emerson—Representative men—

हो। समाज के बरणाय नायक का औचित्य उस ज्ञान का है।

(३) जीवन का अनुकूल चरित्र (True to Life)—जीवन का सत्य चरित्र में उपस्थित है। अस्तु न इसका अन्तर्गत भद्र तथा औचित्य का भी माना है।

(४) एकरूपता (Consistency)—चरित्र में अनवरूपता हात दृष्ट भा एकरूपता का गुण हो।

होरेस—(६५ ई० पू०—८ ई० पू०)

होरेस का कहना है कि 'नायक का जो चित्र जनसाधारण के मस्तिष्क में है, उससे भिन्न चरित्र नहीं बनना चाहिए। होरेस ने नायक भेद की तो चर्चा नहीं की लेकिन चरित्र में सावभौमिकता पर बल दिया।<sup>१</sup> उसने महाकाव्य को राजाभा, नेताभा का अनुकूल रूप कहा तथा महान् नायक के कार्यों का कारण हा कृति का भव्यता (dignity) को स्वीकार किया।<sup>२</sup> उसने मत से महान नायक का व्यक्तित्व समाज पर छा जाता है तथा युग ऐसा व्यक्ति का अनुकरण करता है। इस प्रकार उसने आदर्श नायक (Ideal hero) को उचित ठहराया।

सालहूबी शताब्दी के मध्य में इटलियन सरसक जिराल्डो सिंटी (Giraldicino) ने महाकाव्य का नायक पर विस्तृत विचार किया। उसने महाकाव्य के नायक में उदात्त गुणों की आवश्यकता का प्रतिपादन किया। चरित्र के आधार पर उसने महाकाव्य के तीन भेद किए—

- (१) एक व्यक्ति के एक चरित्र का अनुकूल।
- (२) एक व्यक्ति के अनेक चरित्रों की अनुकूल।
- (३) अनेक व्यक्तियों के अनेक चरित्रों का अनुकूल।

टसो—(१५६४-१७७८) ने अस्तु के नायक सम्बन्ध में मत पर प्रहार किया। उसने नासदी में बरणा तथा भय के भावों को अनावश्यक स्वीकार किया। उसने नासदी के नायक में अन्तर किया। टसो के मत से नासदी के नायक के लिए यह आवश्यक नहीं है कि वह युग का महान नेता या महान व्यक्ति ही हो। जबकि महाकाव्य के नायक के लिए यह आवश्यक है। महाकाव्य का नायक काफी हद तक निर्दोष, उदात्त गुणों से युक्त तथा सदभावनाओं से युक्त होना चाहिए।<sup>३</sup>

१ स० बाबू गुलाबराय—डा० नगेन्द्र—सेठ गोविन्ददास अभिनन्दन ग्रन्थ, पृ० १४२

२ "Hero would be the spirit of man the human who is drawn up and exalted from the clouded levels of conscious existence into the clearer region of the universal history"

—Hegel—Philosophy of Fine arts—Vol IV p 157

३ I T Myers—A study of Epic development, p 12

नवोन जीवन-दृष्टि देना है तथा ब्रविद्या की वाणी के लिए कीर्ति गीत बन जाता है।

इनगाइजरोपीट्रिया में अस्म्य उत्साह (disembodied spirit) को नायक के लिए आवश्यक माना गया है।<sup>१</sup> उस वहाँ गुणा में देवताका ना निवटवर्ती दिव्य मूर्ति भी स्वीकार किया गया। 'हीरो' एक ग्रीक शब्द है जो शिष्ट पुरुष का पर्याय माना जाता है। नायक में उदात्तता, महानता, शिष्टता, सामाजिक मर्यादा, असद का विरोध आदि गुण हान ही चाहिए। नायक को अनवरत सघष करने के पश्चात् सफलता प्राप्त हो अथवा असफलता, इस की चिन्ता न करके अपने कामल तथा बटोर प्रकृति के नायका की चर्चा की है। हीगल तथा हीरेस ने नायक भेद न करके केवल उदात्त-नायक की चर्चा की है। एमरसन का आदर्श नायक तथा बायरन का दिव्य नायक एक दूसरे का पर्यायवाची हैं। अतः इनके मत से तीन तरह के नायक काव्य में स्थान पा सकते हैं—

- (१) आदर्श नायक या दिव्य नायक
- (२) ऐतिहासिक या पौराणिक नायक
- (३) प्रेरणात्मक काल्पनिक नायक

## नायक में गुण-विवेचन

अरस्तू ने नायक में गम्भीरता, भद्रता, कुलीनता, काय-क्षमता तथा व्यवहार-कुशलता को स्थान दिया है। हीरेस ने अरस्तू की बात का समर्थन किया। नामक में 'उदात्त गुण' और जोड़ दिया। अरस्तू ने नायक में चरित्र की कोई भूल भी आवश्यक मानी थी, जिसका विरोध टसा, एमरसन, जिराल्डी शेन्विड, कार्लामेल आदि सभी ने किया।

जिराल्डी ने हीरेस की तरह उदात्त गुणा को नायक में आवश्यक माना। टसो ने नायक में महामानव के समस्त गुणों को स्थान दिया। एमीकूतो ने दोषरहित 'यक्ति' का नायक माना तथा उत्साह, साहस, धैर्य, प्रेम एवं गुणों की दिव्यता को उच्च आवश्यक कहा। वाल्टर ने नायक के गुणा को सूचीबद्ध तो नहीं किया लेकिन उसने उसे मानवता का प्रतिनिधि चरित्र गुणों के दृष्टिकोण से ही माना है। शडविक् का मत भी वाल्टर से साम्य रखता है कि गुणों के कारण नायक में 'यत्ति' की अनपेक्षित शक्ति होनी चाहिए। कार्लामेल ने परम्परा रक्षक तथा परम्परा प्रेमा दो गुणा की नायक में अलग से चर्चा की है। एमरसन ने स्वायत्त-शक्ति तथा भव्य आत्मा की आवश्यकता का प्रतिपादन किया है। बायरन ने स्वायत्त-शक्ति को स्वीकार करके भी उच्च देश भक्ति की प्रबल भावना को आवश्यक ठहराया, साथ ही गुणा में महान सन्त के गुणा से नायक की तुलना की है। नायक में गुणों

सायरन—(१७८८ १८२४) के मत से नायक को सच्चा देश भक्त होना चाहिए। नायक को उसने समाज का सर्वाधिक प्रमुख एवं उत्तरदायित्व युक्त व्यक्ति कहा है। इसीलिए अभ्यास पर याय (नायक) का विजय का (Subject for an Angel's Song) परिया या देवताओं के गान का विषय कहा है।<sup>1</sup> नायक में महासत्ता की तरह सबहितकारी कामना हानी चाहिए। समझि की सालो में महान आत्मावाला नायक अवतरित होत है तथा समाज के पथ का प्रशस्त करत है।

डिक्सन (बासबी सदी)—इहाने नायक परम्परा पर दृष्टि डालते हुए यह कहा है कि आसदी के नायक तथा महाकाव्य के नायक में भ्रून का भेद है। इसीलिए उसने भरस्तु की बात का विरोध किया तथा नायक को निर्दोष व्यक्ति स्वीकार किया। डिक्सन ने नायक में गुणा की सूची तो नहीं गिनवाई, लेकिन यह स्पष्ट कहा कि नायक सबगुणसम्पन्न होना चाहिए।<sup>2</sup> युद्ध का प्रसंग ही अथवा प्रेम का, नायक की विजय हानी ही चाहिए। एयरशाम्बा ने भी टिकमन की तरह ही नायक पर विचार व्यक्त किए। अतः उस पर अलग से विचार करना उचित नहीं होगा।

सी० एम० शायर के मत से जो नायक युद्ध के म्यान में अपनी वारता के चरम शिखर पर पहुँच कर मृत्यु का वरण करता है वह जीवित नामक से भी अधिक प्रशंसनीय है। अंतिम समय तक वह साहस एवं आत्म शक्ति का लहर प्रयत्नवान रहा। अतः उससे इससे अधिक उम्माद भा नहीं करनी चाहिए। अपने शौर्य तथा पराक्रम के द्वारा वह आताय जीवन का गरिमायुक्त बनाता है।<sup>3</sup> उसने नायक में अजय आत्म शक्ति का गत्यधिक महत्त्व दिया। महान नायक को उसने जीवित का अग्रदूत कहा है।<sup>4</sup> नायक का आदेश काय करता है अगणित मनुष्यों को

1 Byron—The Usland Canto II St 9

2 Dixon—English Epic and Heroic poetry, p 3

3 He gives dignity to the human race by showing of what feats it is capable he extends the bounds of experience for others and enhances their appreciation of life by the example of his abundant vitality. However much ordinary men feel themselves to fall short of such an ideal they none the less respect it because it opens up possibilities of adventure and excitement and glory which appeal even to the most modest and most humble. The admiration for great doings lies top in the human heart and comforts and cheers even when it does not stim to emulation

—C m Bowra—Heroic Poetry, p 4

नवीन जावन दृष्टि देता है तथा कविता की वाणी के लिए कीर्ति-गीत बन जाता है।

इनमादकनाभोनिया म अदम्य उत्साह (disembodied spirit) को नायक के लिए आवश्यक माना गया है।<sup>१</sup> उसे बड़ा गुणा म देवताओं का निकटवर्ती दिव्य भूति भा स्वीकार किया गया। 'हीरो' एक ग्रीक शब्द है जो शिष्ट पुष्प का पर्याय माना जाता है। नायक म उदात्तता, महानता, शिष्टता, सामाजिक मर्यादा, असदु का विरोध आदि गुण होने ही चाहिये। नायक को अनवरत भक्षण करने क पश्चात् सफ़रना प्राप्त हो अथवा अमरता इस की चिन्ता न करके उमर कामर तथा बठार प्रकृति के नायक की चचा की है। हिंगल तथा हारम ने नायक के न करके केवल उदात्त-नायक की चचा की है। एमरसन का आदर्श नायक तथा बायरन का दिव्य नायक एक दूसरे का पर्यायवाची हैं। अतः इनके मत में तीन तरह के नायक काव्य म स्थान पा सकते हैं—

- (१) आदर्श नायक या दिव्य नायक
- (२) ऐतिहासिक या पौराणिक नायक
- (३) प्रेरणात्मक काल्पनिक नायक

### नायक में गुण विवेचन

अरस्तू ने नायक म गम्भीरता, अद्विता, कुलीनता, काय-शक्तता तथा व्यवहार-कुशलता की स्थान दिया है। होरेस ने अरस्तू की बात का समर्थन किया। नायक म 'उदात्त गुण' और जोड़ दिया। अरस्तू ने नायक में चरित्र का कोई भूत भी आवश्यक मानी थी, जिसका विरोध टसा इमरसन जिराल्ड शेन्वि, कारनायन आदि सभी ने किया।

जिराल्डी ने होरेस की तरह उदात्त गुणा की नायक में आवश्यक माना। टमो ने नायक म महामानव के ममल गुणों की स्थान दिया। एमाकूना न ओपरहित व्यक्ति का नायक माना तथा उत्साह साहस भय प्रेम एक गुणा की निव्यता की उगम आवश्यक कहा। वाल्टेयर ने नायक के गुणों का सूचावद ठा नहीं किया लेकिन उमने उसे मानवता का प्रतिनिधि चरित्र गुणा के दृष्टिकोण म ही माना है। मडविक का मत भी वाल्टेयर से साम्य रखता है कि गुणों क कारण नायक में परम्परा प्रेमी द। गुणा की नायक म अनन्य स चचा का है। एमरसन ने स्वायत्त-शक्ति तथा मध्य आत्मा की आवश्यकता का प्रतिपादन किया है। बायरन ने स्वायत्त-शक्ति की स्वीकार करके भी उगम दश भक्ति का प्रथम भावना का आवश्यक ठहराया, साथ ही गुणा म महान सन क गुणा से नायक का चुनाव का है। नायक में गुणों



निरालने का प्रयोग करता सभी महाकाव्यों का सचि हाता था।<sup>१</sup> मध्ययान क घनेन कवि घरे काव्य को निर्मा निराद या दार गता क प्रति निवर्तित करत हैं तथा जिस माय को काव्य भूमि पर स्थापित बना है व या ता नानावर राम है, या कथण। इनके नामों में 'नूर घमुर घनिमातिया को माग्न के लिए तथा घम को स्थापना के लिए जम मत हैं। व गुरायाव जनगुनायव प्रणतगत सभी मुख हैं। व ईश्वर हाता हण भी मानव है यही पर माहित्य में पूण मानव का प्रतिष्ठा है। प्रत्यक्ष रूप ॥ तुनमोनाम पर भरन, तथा विररनाम का नागर विषयव धादन कल्पना का भी प्रभाव स्वीकार किया जाता चान्ति। तुनगा ७ घन नायव में एक घाना नायव क सभी गुणा का एकत्रित कर दिया है। यही कहना प्रीविरद पूण है कि तुनगी का नायव-कल्पना धारानात नायव स भी ऊपर की काटि में आती है। घुक्नजी क ज्ञान में मानस का घमभूमि में क्षाम घम<sup>२</sup> को पूरा प्रतिष्ठा की गई है। रावण पर राम का विजय प्रथम पर घम की विजय है। मगन का यह ज्योति घमगत का नाश करती हुई पड़ता है। तुनस नाग न नायव की चान्ति ता निर्धारित की है परन्तु मानस में नायव के गुणा का मुक्नगाव किया है जिनमें दो विशेषताएँ हैं—

(१) नायव की घमोम घाम शक्ति

(२) कल्याणाभिनिवेशी दृष्टि का आधिक्य

रीतिवाल में कविया ने शृंगारपरक नायको को अपनाया तथा शृंगार क प्राप्ताय के कारण धनुबून दक्षिण, शठ तथा घट्ट नायका का प्राबल्य उनके काव्य में है।<sup>३</sup> मतिराम न हन नायका का लक्षण निरूपण सस्तर के आधार पर हो किया। कुछ कविया ने शील के आधार पर धीरोदात्त, धीरोद्धत, धीरललित तथा धीर प्रशात नायको को भी स्वीकार किया, जिनमें बंशव चिंतामणि, गारेसाल आदि के नाम प्रमुख हैं।

आधुनिक कान में जागरण का स्वर सुन्दर हुआ। अत आचार्य रामचन्द्र शुक्ल जी न काय नायक में लोक मंगलकारी दृष्टि से दो गुणों को स्थापना की—

(१) वरणा

(२) रजन<sup>४</sup>

काय में लोकमंगल का स्थापना के पीछे रवीन्द्रनाथ का यह मत भी छिपा हुआ है कि 'मन में जब एक महत् व्यक्ति का उदय होता है सहसा जब एक पुरुष

१ डा० श्री कृष्णलाल—आधुनिक हिन्दी साहित्य का विकास, पृ० ४४४५

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल—चिंतामणि—प्रथम भाग, पृ० १६०

मतिराम—सलित सलाम।

(४) आचार्य रामचन्द्र शुक्ल—चिंतामणि—प्रथम भाग, पृ० १६०

कवि के कल्पना-राज्य पर अधिकार आ जाता है, मनुष्य-चरित्र का उदार महत्त्व मनश्चक्षुषा के माधन-अधिष्ठित होता है, तब उसके उन्मत्त भावों से उद्दीप्त होकर उस परम-पुरुष की प्रतिमा प्रतिष्ठित करने के लिए कवि भाषा का मंदिर निर्माण करता है, उसी का महाकाव्य कहते हैं।<sup>१</sup> अर्थात् महाकाव्य का नायक महान् चरित्र से युक्त महत्त्वपूर्ण व्यक्ति होना चाहिए। आचार्य गुकल ने पृथ्वीराज रासो राम-चरित मानस पद्मभावत, हम्मीर रासो तथा छन प्रशाश आदि प्रबन्धनाट्या को मानस की मान्यताओं या प्रयत्न पक्ष का नेकर चलने वाले काव्यों की कोटि में रखा है। राम के लोकादश का देखकर व बहुत प्रभावित हुए। परिणामतः आदर्श नायक की परिकल्पनाएँ उहाँ ने 'जनसुखदायक' राम के ही आदर्श में मानी। महत्त्व की दृष्टि से गुकल जी ने प्रबन्ध-नायक का नायक की जीवन माधना का ही परिणाम स्वीकार किया।

बाबू श्यामसुन्दरदास ने नायक में सामाजिक भावना का प्राधान्य एवं सहृदय के व्यक्तित्व में अपने व्यक्तित्व का एक तान कर देने की शक्ति को आदर दिया है।<sup>२</sup> अतः उनकी दृष्टि में नायक का शोकहितकारी रूप ही प्रमुख है।

आचार्य विश्वनाथप्रसाद मिश्र ने महाकाव्य के नायक को महान् गुणा से भलकृत स्वीकार किया है। उनकी धारणा पर विश्वनाथ का प्रभाव है। नायक का सामाजिक एवं सांस्कृतिक यागदान परम्परा के लिए अनुकरणीय बन जाए, ऐसी उनकी मायता है।<sup>३</sup>

डा० भगीरथ मिश्र ने तुलसा के काव्यादर्श की चर्चा करते हुए नायक में ऐसी शक्ति हाना स्वीकार किया है जो 'विश्व की मानवता का जीवन पथ' निर्दिष्ट कर सके। वह उदात्त गुणा से युक्त व्यक्ति हो, जा जानिय जीवन में प्रेरणात्मक ज्योति विकीर्ण करता रहे।

डा० भगवन्त न नायक में तात्कालिक शक्ति का अत्यधिक महत्त्व दिया। उनका शब्दों में—'तात्कालिक रूप में प्रबन्ध-नाट्य का सम्पूर्ण विस्तार नायक की जीवन साधना का ही प्रसार रूप होता है, जिस प्रकार जीवन साधना के दो पक्ष हैं, कम और अधिक, इसी प्रकार कथात्मक के भी दो पक्ष हैं घटना तथा भाव और इन दोनों का संचालन करती है नायक का चरित्र की मूल वृत्ति। यही मूल वृत्ति कम-अधिक में चरम घटना और फलानाम का निवारण करती है और भाव पक्ष में मूल भाव या

१ रवीन्द्रनाथ—मेघनाद सख की भूमिका, पृ० १५७-५८

२ बाबू श्यामसुन्दरदास—साहित्यालोचन, पृ० २३०

३ आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र—वाङ्मय विमर्श पृ० ११६

४ डा० भगीरथ मिश्र हिन्दी काव्य शास्त्र का इतिहास पृ० ३४८

धर्मो रम्यः ॥<sup>१</sup> इस कथन से स्पष्ट है कि अना रम्य न नायक का मूलवर्ति है। नायक बनती है।

रामचारीमिह दिनकर के मत से प्रथम युग अपना आदर्शों के लिए या धर्म जीवन मूल्यों की स्थापना के लिए युगाधार युगनायक का सामने लाता है। दिनकर जी का यह कहना कि 'प्रत्येक महापुरुष अपने समय का परिणाम होता है। बात के हृदय में जो अनुभूतियाँ एकत्र होती हैं, उन्हीं की अभिव्यक्ति के लिए बात कवि सत् तथा सुधारक को जन्म देता है।' यह तथ्य भी इस कथन से स्पष्ट है कि नायक का युग भूमि पर अपना अस्तित्व है। उदाहरणार्थ मध्ययुगान् प्रबंधकारों ने अपने नायक की प्रत्येक-कृति का गान इसीलिए किया है कि वे युग-भरत तथा मानव मूल्यों की स्थापना में आजीवन लग रहते हैं।

## विवेचन

हिन्दी के विद्वानों ने सस्मृत आचार्यों का नायक भेद तथा नायक में गुण निरूपण की परम्परा का नही अपनाया है। इन आचार्यों ने नायक के मूल गुण को पकड़ने की काशिश की है। नायक में लोक-कल्याण की प्रवृत्ति होनी चाहिए इस तथ्य का लगभग सभी ने स्वीकार किया है। आचार्य शुक्ल ने नायक में लोक रक्षक तथा लोक मर्यादा के पालन की वृत्ति पर बल दिया है। शुक्ल जी के ही मत का समर्थन बाबू श्यामसुन्दरदास विश्वनाथप्रसाद मिश्र तथा भगीरथ मिश्र आदि विद्वानों ने किया। इस परम्परा में डा० मणेंद्र ने नायक के साथ सादात्म्य शक्ति के गुण को लेकर मौलिक विचार प्रस्तुत किए। वह घटनाओं का प्रधान विधायक होता है। भक्त उसकी आंतरिक शक्ति का उदघाटन कृति में होना ही चाहिए। दिनकर जी ने नायक में जातीय जीवन का प्रेरणा देने की शक्ति को ध्यान दिया। इस प्रकार हिन्दी के आचार्यों ने बहुजन हिताय के आधार पर नायक में प्रेरणात्मक पक्ष का प्रधानता दी। इन्होंने शील तथा शृंगार के विभाजन को स्वीकार किया है जिस में धीरादासादि तथा अनुकूलादि नायकों को स्थान मिल गया है। इनके मत से नायक का स्वरूप इस प्रकार है—

- (१) लोक रक्षण की प्रवृत्ति
- (२) प्रेरणात्मक व्यक्तित्व
- (३) युग सत्य का वाहक
- (४) लोक मर्यादा का पालक
- (५) समाज का अग्रणी व्यक्ति

१ डा० मणेंद्र—रस सिद्धांत, पृ० २८७

२ रामचारीमिह दिनकर—चरित्र के चार अध्याय पृ० ५३०

## भारतीय तथा पाश्चात्य विद्वानों के मतों की तुलना

भारतीय तथा पाश्चात्य विद्वानों के नायक सम्बन्धी दृष्टिकोण में साम्य अधिक एवं वषम्य कम है। हमारी परम्परा में धीरोदात्त नायक की गरिमा का गान है, जिसमें पूरा मानव का रूपना को स्थान मिला है। पाश्चात्य विद्वान महामानव की महानता में तो भारतीय आचार्यों की तरह विश्वास रखते हैं लेकिन वे यथायथ का रमा के लिए उस महान व्यक्ति में कुछ कमियाँ या दुर्बलताएँ दिखाते हैं। हमारा नायक गुणों के कारण अतिरजित हो देवता बन जाता है तथा उनका नायक अतिरजित गुणों का दूर खेप मानव। यही कारण है कि 'पगडाइज लॉस्ट' तथा 'विपावल्स' आदि के नायक उन अर्थों में धीरोदात्त नहीं हैं जिन अर्थों में भारतीय परम्परा के नायक राम और कृष्ण हैं। अतः अरस्तू तथा भारत की दृष्टि का भेद स्पष्ट है। किंतु यह भारतीय आचार्य की आदर्श निरूपिणी तथा यवनाचार्य की वस्तु निरूपिणी दृष्टि का ही मौनिक भेद है। वैसे व्यवहार में भारत के न तो किसी भी प्रमुख नाटक का नायक ही मर्यादा निर्णय है—(राम और कृष्ण भी मानव दुर्बलताओं से मुक्त नहीं—हा ही नहीं सकते थे।) भेद इतना है कि उन दुर्बलताओं का ध्यान में लाना न कर दिया गया है।<sup>१</sup> इस प्रकार आदर्श के प्रति अटूट श्रद्धा के कारण ही खल प्रवृत्ति का नायक (धीरोदात्त) रावण भी सीना का प्रति अनाचार करने में प्रसमय है। यह कवियों की मर्यादाबद्ध दृष्टि का ही परिणाम है। आदर्श के प्रति बात के कारण ही यह चरित्र 'टाइप' बनकर रह गया। इसके अतिरिक्त पाश्चात्य विद्वानों ने नायक को महामानव मानकर भी सबथा निर्दोष भारतीय आचार्य की भाँति नहीं स्वीकार किया। अतः पाश्चात्य विद्वानों की दृष्टि में यथायथ का ठोस आधार है जो आज के शुद्धवादी व्यक्ति को अधिक सन्तुष्ट करता है। नायक सम्बन्धी दृष्टिकोण का परिवर्तन हिन्दी आचार्यों ने अनुभव किया तथा अन्तिम 'को व नायक में प्रौढियुक्त नहीं मानते। कामायनी के मनु को उन अर्थों में धीरोदात्त नहीं कह सकते जिन अर्थों में मानव' के राम का। मनु के व्यक्तित्व में स्वाभाविक विकास एवं लानयन है।

भारतीय आचार्यों की भाँति पाश्चात्य आचार्यों ने नायक विभाजन नहीं किया है। भारतीय आचार्यों ने सामाजिक आधार का ग्रहण करते हुए उनके अनेक प्रभेद उपस्थित किए हैं। पाश्चात्य आचार्यों ने पौराणिक काल्पनिक तथा यथायथ तीन बाँटियाँ ही स्वीकार की हैं। दोनों के नायक-वर्गीकरण में भेद हाँत हुए भी इतना साम्य है कि महाकाव्य का नायक उदात्त होना चाहिए। अतः नायक की चरित्रिक गरिमा को दोनों ने आदर दिया है। मर्यादवादी वर्ग के हिन्दी आचार्यों

ने जिनम डा० नेगेट्र प्रमुग है, उन्होंने उदात्त नायक को ही स्वीकार किया है। इस उदात्त नायक से पाश्चात्य आचार्यों का आश नायक तथा भारतीय आचार्यों का धीरोदात्तादि नायक का स्थान है।

नायक में गुणों की चर्चा दोनों देशों के विद्वानों ने की है। भारतीय आचार्यों ने तो गुणों की इतनी लम्बी सूची दी है, जिनमें सभी सत्गुणों को समाहित कर लिया है। पाश्चात्य विद्वानों ने नायक में थोड़े गुणों का स्थान देना तो उचित समझा है लेकिन भारत धनजय तथा विश्वनाथ की तरह गुण सूची नहीं दी है। नायक में चारित्रिक भावना कुलीनता जातीय जीवन का रक्षण अत्यन्त उदात्त, दिव्य गुणों की भाँकी विचारों की व्यापकता असीम आत्म शक्ति, कथा का मूल आधार बनने की शक्ति जीवन का उद्गम आवेग अथ चरित्रों द्वारा उसके महत्व की स्वीकृति को दोनों ने आदर दिया है। हिन्दी आचार्यों ने प्रेरणात्मक व्यक्तित्व, युग सत्य का वाहक लोक मर्यादा का रक्षक आदि निष्कर्ष भी इन दोनों दृष्टियों को ध्यान में रख कर ही उपस्थित किए हैं। इस प्रकार भारतीय तथा पाश्चात्य विद्वानों के अनुसार नायक सम्बन्धी निम्नलिखित तथ्य प्रकाश में आ जाते हैं जिनकी महाकाव्य के नायक में अपेक्षा होती है।

## (१) कथा का सूत्रधार

संस्कृत पाश्चात्य तथा हिन्दी कथा के सभी आचार्य इस मत से सहमत हैं कि नायक जितना ही जीव त तथा जीवत वाता होगा, कथा का सत्ता महत्ता उतनी ही अधिक बढ़ जायगी। दाना के मत से नायक की कम बलि का प्रसार सम्पूर्ण कथा है जिसमें नायक की जीवन साधना का सौन्दर्य बोध छिपा है। संस्कृत आचार्यों के मत से सम्पूर्ण घटनाक्रम के साथ नायक का प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष सम्बन्ध होना चाहिए। कथा के अधिकारिक तथा ग्रामगिक भाग उसमें अवश्य प्रभावित रहने चाहिए। अतः तथ्य का पाश्चात्य विद्वानों प्रभावशाली कथा के द्वारा निदिष्ट करते हैं कि नायक जीवत होना चाहिए।

## (२) महत्वपूर्ण व्यक्ति

भारतीय आचार्यों ने धारणागत गुणाधिक तथा पाश्चात्य आचार्यों ने आदर्श नायक (Ideal hero) तथा समन्वयवादी हिन्दी आचार्यों ने उदात्त-नायक को इसी कारण से ग्रहण करने को मन लिया है कि नायक का युगान्तर महत्व होना चाहिए। उनमें गुण काल तथा समय का सीमा में बंध कर पाक न पके अपितु सत्त्व प्रेरणात्मक शक्ति में युक्त रहे। संस्कृत आचार्यों का कहना है कि सामान्य व्यक्ति का नायक बनाने में महाकाव्य की युग-स्थापना गरिमा को टेक लगाना। अतः वह वाहक धर्म का पौराणिक चरित्रिक तथा यथार्थ नायक का या अथवा धीरोदात्त, धार

प्रभात, धीरजलित, वह अपने उदात्त वायों के कारण युग युग के मानव को प्रेरणा प्रदान करता रह। पाश्चात्य विद्वानों के मत से महाकाव्य का उदात्त या भव्य रूप है जिसका जन्म महत्ता के उदय के साथ होता है, अतः नायक की काय शृंखला में युग दृष्टि का होना आवश्यक है। अतः दोनों दशा के विद्वान् इस तथ्य पर एकमत हैं कि नायक बहुत महत्त्व का व्यक्ति होना चाहिए।

### (३) आत्म शक्ति की वृद्धता

भरत, धनञ्जय तथा विश्वनाथ आदि के मत से नायक की आत्म शक्ति अखण्ड होनी चाहिए। इसी कारण भामह ने अष्टिग आत्म शक्ति, दण्डी ने चतुरोदात्त, रघुनन्दन विजिगीषु, विश्वनाथ ने धीरोदात्त की चर्चा की है। 'धीर' शब्द के साथ उदात्त का मूल नायक की आत्म शक्ति की ही सूचना के लिए है। भरतू ने भी युद्ध शक्ति, हारस ने उदात्त तत्त्व तथा परवर्त्ती सभा आचार्यों ने जिनम केर, डिकसन तथा बाबरा का नाम उल्लेख है नायक में आत्म शक्ति की अपराजेयता को विशेष महत्त्व दिया है। हिंदी के आचार्यों ने भी नायक में अटूट जीवन्त की बात इसी तथ्य के समर्थन में कहा है। चाहे नायक भटवत्ता फिर चाहे सुय में फूले, सघष हो या युद्ध उसकी शक्ति अटूट बनी रह।

### (४) प्रतिनिधि चरित्र

भारतीय तथा पाश्चात्य दोनों आचार्य इस मत से सहमत हैं कि नायक में जीवन के आदर्श रूप आकृति दिए जायें चाहिए। जीवन का अन्तरंग एवं बहिरंग उसमें प्रगट हो। उदाहरणार्थ राम का नाम आज आदर्श तथा प्रेरणा का प्रदाय बन गया है। जयसिंह का नायक प्रेम की रम्यता का प्रतिनिधि है 'सूरसागर' के कृष्ण आनन्दरूप। संस्कृत आचार्यों ने नायक में 'पुण्य' चतुष्टय की सिद्धि की तथा पाश्चात्य आचार्यों ने जातीय गौरव का रक्षक तथा हिंदी आचार्यों ने समाज का प्रगल्भीय व्यक्ति उस द्वाारा कारण कहा है कि उसमें जीवन के प्रतिनिधित्व की शक्ति तथा क्षमता होनी चाहिए। संस्कृति की प्राणवान धारा उसके भीतर बह रही हो। सामाजिक परम्पराओं तथा मर्यादाओं का उसके व्यक्तित्व पर प्रभाव हो।

### (५) दिव्य शक्ति से अलंकृत

भरत, धनञ्जय आदि ने नायक की तीन बातें मानी हैं—दिव्य, अदिव्य तथा दिव्यादिव्य। दिव्य शक्ति का नायक पाश्चात्य आचार्यों के उदात्त शक्ति का ही नायक है। इसमें असाधारणत्व अधिक पाया जाता है। जीवन का विषमतर परिस्थितियाँ में भी यह अपने तन का काम नहीं करता है, परिणामतः ऐसा नायक असाधारण रक्तों के कारण जाति के प्रजनीय तथा अनुकरणीय व्यक्ति बन जाते हैं।

सामान्य से अधिक शक्तियों के विकास के कारण साव इन पर आलोचिक शक्ति या दिव्य शक्ति का आरोप कर देता है। महान से महान योद्धाओं के मध्य राम का धनुभंग करना ऐसी ही अद्भुत घटना है। विपत्ति से रक्षणाय कृष्ण का गोवर्द्धन पवत उठा लेना, गौतम का अगुतिमाल तथा अजातशत्रु का वश में कर लेना आदि दिव्य शक्ति के ही उदाहरण हैं। अतः दाना दोषों के आचार्य नायक को दिव्य शक्ति से युक्त मानने के पक्ष में हैं।

### विचारों की व्यापकता

संस्कृत आचार्यों ने नायक में सद्वृत्ति के विकास का अत्यधिक महत्त्व दिया है। पाश्चात्य आचार्यों की दृष्टि भी विचारों की व्यापकता का नायक में आवश्यक मानती है। इन आचार्यों के मत से 'आत्म सुख' ही नायक में न समा गया हो, वह साव जीवन का अग्रणी व्यक्ति हो जो व्यष्टि तथा समष्टि में भेद भाव न करे। हिंदी आचार्यों ने भी इस प्रेरणात्मक 'व्यक्तित्व' विचारों की व्यापकता के ही कारण कहा है। उन्होंने राम का इसी कोटि में रखा है। अतः इन सभी आचार्यों के मत से नायक के विचार सशुचित न होकर व्यापक होना चाहिये।

### कर्मों की उदात्तता

भारतीय तथा पाश्चात्य विद्वान् दोनों इस मत से सहमत हैं कि नायक के कर्मों का गौरव ही महाकाव्य के गूढ़ का विषय है। महाकाव्य के नायक का उद्देश्य पुरुषार्थ चतुष्टय की सिद्धि या जीवन सिद्धि माना जाता रहा है। पाश्चात्य विद्वान् भी नायक के उदात्त कर्मों का महाकाव्य में आवश्यक मानते हैं। नायक अपने कर्मों से हमारे ऊपर निश्चित प्रभाव की छाप नहीं छोड़ेगा तो युग उसका अनुसरण नहीं करेगा। नायक के दुर्बल होने से कृति का प्राणवृत्ता तथा भव्यता में बाधा पड़ेगी। उदात्त कर्मों के कारण ही सामाजिक उससे तादात्म्य ग्रहण करना चाहता तथा वह नायक सहानुभूति का भाजन बनता। अतः नायक में तादात्म्य शक्ति के लिए कर्मों की उदात्तता होनी ही चाहिए।

### कथा के मूल भाव या रस का आधार

इस तथ्य पर सर्वाधिक बल भारतीय आचार्यों ने दिया है। महाकाव्य का नायक घटनाओं का प्राणवान् सूत्रधार होता है, यह तथ्य हम ऊपर कह चुके हैं। अतः कथा के मूल भाव या बीज का पोषक वही है। कृति के भाव—भाव का आधार ही कृति के अंग रस का निर्धारण करता है। संस्कृत आचार्यों ने रामायण का मूल भाव 'वरण' मानकर ही समस्त अंगारग करण कहा है। हिंदी के आचार्य उसका मूल भाव 'भगवद् भक्ति' मानते हैं। अतः उनकी दृष्टि में इसका अंगारग है

भक्ति रस। नायक के जीवन के समस्त बाह्य व्यापार मिसकर मूल भाव का रूप प्रस्तुत कर पाने हैं। सस्कृत आचार्यों का मान्यता है कि महाकाव्य में बाह्य एवं रस अंगों तथा शेष अंग रस आन चाहिए। पाश्चात्य आचार्यों ने रस की खोज नहीं उठायी है। वे क्या की प्रभाव शक्ति को ही महत्व दते हैं और यह प्रभाव शक्ति रस से दूर नहीं है, लगभग समानार्थी है अतः नायक ही क्या के मूल भाव या रस का आधार होना है।

### महाकाव्य के अंग पात्रों द्वारा उसके महत्व की स्वीकृति

लगभग सभी आचार्य इस तथ्य से सहमत हैं कि नायक के महत्व का अंग चरित्र भी स्वीकार करते हैं। इसीलिए नायक में नीतिमान, प्रभावान, बला कुशल आदि अनेक विशेषण सस्कृत आचार्यों ने जोड़ दिए थे जिससे कि यह पात्र उसके महत्व से अभिभूत न पड़े। पाश्चात्य जगत में नायक के गुणों से अभिभूत चाहें हम न हों परन्तु उसके साथ पाठकों की सहानुभूति आवश्यक है। हमारे नायक से विदेशी नायक भिन्न हान हैं।

भारतीय तथा पाश्चात्य विद्वानों ने मता से प्राप्त नायक सम्बन्धी निम्नलिखित प्रकार हैं—

- (१) क्या का मूलपात्र
- (२) महत्वपूर्ण व्यक्ति
- (३) भात्म शक्ति की दस्ता
- (४) प्रतिनिधि चरित्र
- (५) दिव्य शक्ति से अनुरक्त
- (६) विचारों की व्यापकता
- (७) कार्यों की उदात्तता
- (८) क्या के मूल भाव या रस का आधार
- (९) महाकाव्य के अंग पात्रों द्वारा उसके महत्व की स्वीकृति

अंग विवेचन में इन्हीं आचार्यों का ध्यान में रखकर, नायक का महत्ता का महाकाव्य के अन्तर्गत विचार करेंगे।

### प्रतिनायक

देश विदेश के आचार्य इस मत में सहमत हैं कि नायक का प्रतिद्वन्द्वा प्रति नायक होता है। भारतीय काव्यशास्त्र में धीरादत्त नायक को ही प्रतिनायक का पर्याय माना जाता है। 'मोक्षी, धीरादत्त, पापा, व्यसनी प्रतिनायक ॥ (सूत्र २५०)।



नाट्य दण्ड म मुख्य नायक क विराधी का प्रतिनायक कहा गया है।<sup>१</sup> मुषिष्ठिर, रावण, वस तथा दुर्योधन आदि का इसी काटि म रखा जाता है। धारोद्धत या प्रति नायक उस बहुत ह जो द्वेषी, छत्री, मायावी, प्रचण, चपल भसहनशील अहकारी, शूर और स्वयं अपनी प्रशंसा करने वाला होता है। मन बल से कभी-कभी कुछ का कुछ कर दिखाने की माया रखता है। उस अपने बल तथा वैभवकादप बहुत होता है।

उपनायक नायक से कुछ कम गुण वाला, नायक के दुख सुख म दुख-सुख का अनुभव करने वाला तथा नायक प्रिय होता है। उस रामायण म सुग्रीव तथा लक्ष्मण। उपनायक भी नायक के साथ प्रतिनायक का शत्रु बन जाता है। हमारा यहा नायक सतवत्सिया का प्रतीक तथा प्रतिनायक अमर वत्सिया का प्रतीक माना जाता है। उदाहरणार्थ राम तथा रावण एक ही दो प्रतीक है।

हमारे नायका से त्रिदशा नायक यादें भिन्न होते हैं, लेकिन प्रतिनायक (विलन) का स्वरूप हमारे यहा से बहुत साम्य रखता है। वहा भी खलनायक म पाप वत्सिया का पराकाष्ठा दिखाई जाता है। वहा नायक के प्रति पाठक की सहानुभूति, श्रद्धा तथा खलनायक के प्रति घणा अवश्य जगाता चाहिए। दृज्जी के नायक म वहा समय बड़ा तत्व सहानुभूति हा है। इयागा द्वारा आबलो का पतन भी हमारी सहानुभूति का के द्र है। यदि वहा नायक तथा प्रतिनायक की शक्ति का विसा एक म ही के द्रत हा जाना है तो यह प्राणैगानिस्ट कहलाता है। वहाँ मत्त्वपूर्ण व्यक्ति के पतन से हम ठेस लगत हुए भी जीवन के मयाव का परिचय मिलता है। इस प्रकार प्रतिनायक नाटक अथवा महाकाव्य दोनों म हा पापा वत्सिया का टुट्ट यक्ति होता है।

प्रतिनायक जिनका महान होगा नायक का महत्व उतना ही उभरगा। प्रतिनायक भी शक्ति म नायक से टुबन नहीं होता है। अपार शक्तिशाली होते हुए भी अपनी असह वत्सिया के कारण उसका पतन होता है। हिंदा महाकाव्या म प्राचीन परम्परा से प्राप्त रावण, वस आदि प्रतिनायका का हा गहीन किया गया है। दूसरे ऐतिहासिक महाकाव्या म भी जहा श्रीरामजीव या अलाउद्दीन को प्रतिनायक दिखाया गया है उस रागविनास या हमीर रासा म, यहाँ भी सम्वृत आचार्यों के धीरोद्धत नायक का ही रूप उनम उभारा गया है। अत प्रतिनायक का बल्पता दुनिया भर म दुष्टता के प्रतीक रूप म ही का जाती है।

## नायक भेद

भारतीय आचार्यों ने स्वभाव जानि गुण कम तथा घम आदि अनेक माधारा का ग्रहण करते हुए नायका का विभाजन किया है। इन आचार्यों का यह विभाजन मूलत नाटका का ध्य न म रण कर किया गया है। नाटक के नायक

नायिका की चचा परिचर्चा में ही उद्धान् मूर्ध्म से मूर्ध्म भेद-प्रभेद की पद्धति का अपनात हुए संकटा प्रकार के नायक नायिकाओं का स्वीकार किया है। नायक-नायिका का यह वर्गीकरण हिन्दी के मुक्तक नायक के व्यावहारिक धर्मानुसार बहुत मिलता है। हिन्दी का रीतिवाला मम तथ्य की पुष्टि करना है कि नायक नायिका विरूपण के प्रयास का विशाल भण्डार उन्हीं मर्मज्ञ आचार्यों से ही प्राप्त हुआ था।

महानायक के नायक का हा भारतीय आचार्यों ने ही या स्वभाव के अनुसार ही धीरादात धीरादत्त आदि रूपा में वर्गीकृत किया। सभी मम मन में मर्ममन हैं कि महानायक का नायक 'धीरादत्त गुणाधिक' ही होना चाहिए। धीरादत्त, धीर प्रज्ञात तथा धीरतन्त्रि महानायक के नायक नहीं हो सकते हैं। धीरादत्त नायक धीर, हृदय धीर मस्तिष्क के समस्त गुणों से सम्पन्न तजस्वी पराक्रमी, आत्मिकता धीर बभ्रवशाली है। सम्पूर्ण में नायक 'धीरादत्त' धर्मवा महानायक के मर्ममन में उत्तम भाव है नायक के सहयोगी प्रमुख पात्रों में सभी गुण युनायित मात्रा में विद्यमान होने ही चाहिए।

पाश्चात्य जगत में भारतीय आचार्यों की भाँति नाटक धर्मवा महानायक का लकर नायक भेद की परम्परा नहीं है। धर्मज्ञान प्रामाण्य के नायक की रूपा वर्णन हुए महानायक में तीन प्रकार के चरित्रों का होना चाहिए है, आत्म, यथाय धीर परम्परागत चरित्र। आत्म महानायक मात्र आदर्शों की कल्पना पर आधारित होत है, यथाय से उनका सम्बन्ध प्रायः नहीं ही बंध पाता है। भारतीय आचार्यों ने नायक की आदर्श चरित्रों की कल्पना की है, जो समष्टि के लिए ही जीवन का मान देते हैं। पाश्चात्य विद्वानों में भी भारतीय आचार्यों की भाँति उनका विश्वास भी नायक की आदर्श चरित्र का रूप देने का मम है। परन्तु उनके यहाँ यथाय चरित्र धर्म व्यक्तियों का ही महानायक का नायक बनाना अधिक श्रेष्ठ समझा जाता है। परम्परागत या नूतन चरित्र ऐसे होते हैं जिन्हें ऐतिहासिक व्यक्ति नहीं माना जा सकता, नरिन उगातार समाज उन्हें मानता चला आ रहा है। ये चरित्र कारे काल्पनिक तथा निज-जीवि विश्वासों के होते हैं, इनमें चमत्कार अधिक होता है। दबता राजा, गणपति आदि इनमें ही आते हैं। सभी-सभी मानव को भी पुरातन-यात्रा से जाटकर प्रतीकितता में युक्त बना दिया जाता है। महानायक में अनेक प्रकार के चरित्र होना पर भी नायक उसी को कहते हैं जो अनेक महत्वपूर्ण कार्य करता है तथा महानुभूति का उगातार कर रहता है, दबता राजा या बुलीन होने से ही नायक महान नहीं बन जाता, बल्कि उसे अपनी कल्पना शक्ति से महान रूप देना है। प्रधान घटना का कारण बनकर वह कथा का मर्मदण्ड बन जाता है। महानायक उद्देश्य की सिद्धि के लिए वह समस्त मानवता का प्रतिनिधित्व करता है। दाना देशों के मता का समन्वय करने पर वह प्रकार के नायक की कौटुम्हिक निर्धारित की जा सकती है। यथा—

(१) देव काटि का नायक—इस काटि के नायका में पराजित लाष्ट का नायक ईगा तथा अनेक काया के नायक मनु तथा शनर इत्यादि आते हैं।

(२) मनुष्य कोटि का नायक—इस प्रकार के नायका में यथाथ तत्त्व की अधि कता होती है। इनमें भ्राडगी, डिवाइन कमडी, पञ्चीराज रासा, वीरसिंह दश चरित्र आदि के नायक आते हैं।

(३) अवतारी नायक—इस प्रकार के नायका में धर्म दर्शन तथा सत्सृष्टि का बहुत प्रभाव होता है। यह अतिप्राकृत तथा अतीविक चमत्कारी से युक्त होते हैं। यह पुराण परम्परा में होने के कारण निजधरी कथायासे प्रायः निर्मित होते हैं। इस तरह के नायका में राम कृष्ण बुद्ध, महावीर आदि हैं।

(४) राक्षस कोटि का नायक—इस प्रकार के नायका में भ्रम वस्तुओं का प्राधान्य होता है जिसमें आद-बध का नायक रावण।

कथानक की दृष्टि से भी नायका का वर्गीकरण किया जा सकता है—

(१) ऐतिहासिक नायक—इस प्रकार के नायको में जातीय वीरता का प्रति निधित्व पाया जाता है। ये प्रायः मानव रूप में आकर इतिहास बदलते हैं तथा युग धर्म में नवीन प्रान्ति लाते हैं। इस प्रकार के नायका में पञ्चीराज चौहान, राणा प्रताप, राजसिंह, छत्रपति शिवाजी, छत्रसाल आदि अनेक नायका का स्थान है। इति हास में अनेक कथानक के आधार पर ही इनका स्वरूप उभरा गया है।

(२) पौराणिक नायक—इन नायका का विकास परम्परागत या रच्य होता है। इनमें पकट तथा पिक्कम मिलता रहता है। निजधरी कथाया तथा अतिप्राकृत सत्त्वा से इनका इतना निस्तार किया जाता है कि इनका वास्तविक स्वरूप छिप जाता है। अनेक युगों में इनका विकास हो पाता है। अनेक प्रकार की अवस्थाया से गुजरते हुए यह लगातार नवीन स्वरूप को प्राप्त करते रहते हैं। इन नायका को ही सांस्कृतिक नायका का पर्याय समझना चाहिए क्योंकि विस्तार में ये ही समस्त सत्सृष्टि का प्रति निधित्व करने लगते हैं। प्रमाण में राम तथा कृष्ण का लिया जा सकता है।

रस की दृष्टि से भी नायको का वर्गीकरण किया जा सकता है क्योंकि समस्त साधारणीकरण का व्यापार नायक पर ही आधारित होता है। यह नायक ही कवि वरूपना की शक्ति का मूर्तिवत् रूप होता है। प्रकृतिक आधार पर इनमें तीन भाग हो सकते हैं—(१) शृंगारी नायक, (२) शान्त नायक (३) वीर नायक।

इन समस्त नायक भेदों में दृष्टि की स्पष्टता के लिए ऐतिहासिक तथा पौरा णिक नायका का भेद ही अधिक बनाने की प्रतीति होता है क्योंकि सत्सृष्टि तथा रचना के सम्बन्ध में उन्हें स्पष्ट समझा जा सकता है। नायक रमानुभूति का माध्यम ता है ही, अतः सर्वश्रेष्ठ नायक राजनीतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक प्रगति का

माध्यम भी होता है। धीरे-धीरे गुण तो महाकाव्य के सभी नायक में यूनाधिक मिलते हैं। किन्तु इतिहास तथा पुराण की दृष्टि से उद्भूत स्पष्ट समझ, समझाया जा सकता है।

नायक का व्यक्तित्व ऐसा है, जिसमें हर स्थिति में प्रभावित करने की शक्ति है, जो केवल एक विचारधारा के लागू का ही नहीं बल्कि किसी भी विचारधारा का प्रेरणा दे सके जिसकी आर व्यक्ति विशेष जाति विशेष या समुदाय विशेष ही प्रभावित न हो, सभी का वह आकर्षण केन्द्र है। सभी उसका अनुकरण तथा अनुसरण कर सकें। यदि किसी को उससे विरोध भी हो तो वह नायक के प्रभावशाली व्यक्तित्व से पराजित हो जाए क्योंकि नायक की पूर्ण महत्ता तो दुःख की सत्ता नष्ट होने पर ही उभरती है।

# हिन्दी के सूफी कवियों की नायक दृष्टि

## आधिर्भाव और विचारधारा

सूफीमत का जन्म इस्लामी परम्परा से हुआ। हजरत मुहम्मद साहब (सं० ६२८-६८८) के निधन के पश्चात् उनका उत्तराधिकार इस्लाम के खलीफाओं का मिला। इन खलीफाओं ने अरब, शाम, ईरान, तुर्किस्तान आदि अनेक देशों में अपना मत का प्रचार बड़े ही उत्साह से किया। इस्लाम धर्म की शायी विचारधारा उन जिनो अपना करम पर थी, जिसका सम्बन्ध सूफिया से गहरा है। सूफी मत का उद्भव परन्तु अब्दुल्लाह की मृत्यु के बाद ही हुआ। भारतीय धर्म दशन गुरुन के सिद्धान्त तथा सूफी साधना के मुक्त चिन्तन का प्रभाव है। भारत तथा ईरान के सांस्कृतिक तथा व्यापारिक सम्बन्ध प्राचीन काल से ही रह चुके थे। अतः विचारधारा का आदान प्रदान स्वाभाविक ही है। इन सूफियों पर भारतीय दशन एवं साधना का भी प्रभाव अधिक दिखाई देता है। सूफियों ने इन अनेक विचार धाराओं का प्रभाव का ग्रहण करते हुए भी अपनी अलग दृष्टि का निर्माण किया, जिसमें 'इश्क़-मय' सत्कार का महत्व दिया है। सामान्य भोग से विरक्त इन साधकों का हृदय की 'हकीकत' प्राप्त करने की लगन लग गयी थी। इन्होंने अपने उपदेशों तथा काव्यों में माध्यम से अपने दृष्टि कोण का उदात्तता के साथ जनता में रखा। 'सूफी प्रेम प्रकाश की लेकर चलें, अतः उनके ऊपर प्रेम पथ ही सबका छाया हुआ है।

इन सूफियों का प्रथम ध्येय अपने मत का प्रचार-प्रसार था। सूफी मत का प्रचार में उमर खय्याम (म० सं० ११८०) सनाई (म० सं० ११८८) निजामी (म० सं० १२६०), अत्तार (म० सं० १२८७) रूमी (म० सं० १३३०) सादी (म० सं० १३४६) शसतरी (म० सं० १३७७), हाजिफ (म० सं० १४४७) एवं जामी (म० सं० १४४६) आदि ने अत्यधिक मूल्यवान् काव्य किया। मसनवी आदेशों

- १ डा० सरला शुक्ला—जायसी के परवर्ती सूफी कवि और काव्य पृ० २
  - २ डा० पोताम्बरदत्त बडयवाल—हिन्दी काव्य में त्रिषु ण संप्रदाय, पृ० १७
  - ३ सूफी मत के जन्म के समय इस्लाम की उदात्तता मस्तिष्क में रह चुकी थी उसका तेज विश्राम कर रहा था।
- रामधारी सिंह दिनकर—संस्कृति के चार अध्याय पृ० २५३

को इन कविया ने अमर कर दिया। भारत में सूफी मत बारहवीं सदी के सूफी अल हजिरी के आगमन के साथ हुआ। सूफी सम्प्रदाय में से चिश्ती, सुहारावर्दी, नादरी तथा नवशवदी चार सम्प्रदाय यहाँ विशेष प्रसिद्ध हुए, जिनमें जायसी आदि भारतीय साहित्य के कविया न चिश्ती मत का विशेष प्रभाव ग्रहण किया है।

बाहुर से आये सूफी साधक अपने 'प्रेम मिद्धा त' को जनता तक पहुँचाना चाहते थे, अतः उन्होंने जिस अरबी क़ारसी की प्रेम कथाओं (लला मजनू, भीरी फ़रहाद) को अपना कर अपने सिद्धांत को फनाया था, वैसे ही हिंदुओं की प्रेम कथाओं को अपने काव्य का आधार बनाया। ये कवि लौकिक प्रेम कथा के माध्यम से लोकोत्तर या अलौलिक प्रेम का विधान करते हैं। कथाओं में नायक की साधक के रूप में परमात्मा का प्रेमी तथा नायिका को परम ज्योति के रूप में प्रस्तुत करते हैं।

कथा का समस्त प्रेम व्यापार नायक के प्रेमी रूप का लेकर ही चलता है। नायक में अपने सूफी सिद्धांत का प्रायः पूरा विधान किया है। सूफी साधक तथा कवि अपने जीवन में जसी 'इश्क-मजाजी' तथा 'इश्क-हकीकी' की साधना कर रहे थे तथा 'तूदी का मिदावर' 'खुदा में एवमेक' हो जाने का इरादा बनाए हुए थे, उसका पूरा विधान इन्होंने अपने नायक में किया है। इस प्रकार समस्त सूफी काय में, उनका नायक सूफी साधना का प्रतीक है जो 'इश्क' में ही जीवन को अर्पित कर देता है।

सूफी कविया न नायक का प्रेम के दिव्य-साधक रूप में अपनाया है। जैसे सूफी साधक अतक साधनाओं के पश्चात् अपनी अंतिम मजिल परमात्मा तक पहुँचता है ऐसे ही सूफी कविया का नायक अनेक 'मुकामात' सापाना को पार करता हुआ अपने अभीष्ट का प्राप्ति होता है। भारतीय सूफी काव्य पर समनवी तथा भारतीय दोनों ही प्रभाव पड़े हैं। साथ ही मुल्नादाउद के 'चदायन' लकर उनी सबी शताब्दी तक के प्रेम-काव्य पर मसनवी प्रभाव स्पष्ट मनकता है। 'पदमावत' में नायक निरूपण पर विचार करने से पूरा यह आवश्यक है कि मसनवी में नायक विषयक प्रचलित धारणाओं का स्पष्टीकरण करें तथा बाद में भारतीय धारणाओं तथा सिद्धान्तों के प्रभाव का निर्देश किया जाए। यहाँ पर मसनवी परम्परा के सूफी साधक तथा कविया की नायक विषयक धारणाओं को प्रस्तुत करना अनिवार्य ही प्रतीत होता है।

### नायक का सूफी रूप

इनका नायक तरुण युवा तथा सुन्दर होता है। वह किसी पक्षी दूती चित्र आदि के माध्यम से 'इश्क' जग जग पर अपने जीवन का 'इच्छित' प्रेमिका पर वार देता है। प्रेमिका (परम ज्योति रूप) का प्राप्ति करने के लिए वह

'दीवाना' हो जाता है।' इसी समय वह 'सूफी' या मोमन जीवन का त्याग कर 'सूफी साधक' या साधक बन जाता है।' नायक के 'सूफी' रूप को 'सूफी शरण' के आधार पर भी स्पष्ट किया जा सकता है। निदाना में 'सूफी शरण' की व्युत्पत्ति पर यदा विचार है। सूफी शरण का 'सफा' में बना हुआ मानकर विद्वान पवित्रता का अर्थ समझते हैं तथा पवित्र आचरण करने वाला व्यक्ति का 'सूफी मानत है।' इनके मत में परमात्मा के प्रति आगमन करने वाला हुआ निश्चय सत्य मानता है कि सूफी कहलाता है। यह मत सूफी शरण में शरण की व्यवस्था का अर्थ समझता है। कुछ विद्वान सूफी शरण का सोफिया का रूपांतर मानते हैं तथा परम जानी के लिए उस शरण का प्रयोग मानते हैं। निदाना का एक कथ सूफी शरण को सूफ से बना मानते हैं तथा अन्तर्गत भाग विलास को त्याग कर साधन भला, आध्यात्मिक साधना में समर्पित मोटे वस्त्रों को पहनने वाला साधक का सूफी मानते हैं। इनमें अन्तिम मत अधिक सन्तुलित तथा सब भगवत् प्रणीत होता है। इसका कारण यह है कि सूफी साधक वस्त्र विलास, भोग को त्यागकर आध्यात्मिक इश्वर में सगुन समाते थे तथा समाज के कमजोरों को ब्रह्म आचरण उपायों दृष्टि में फीका पड़ जाने थे। 'दिव्य प्रेम दृष्टि' के उदित होने ही के परम उपायों की सार उपाय ही जान थे। जायसी ने अपने नायक का सूफी साधक की भाँति 'बन्धा धारण किया हुआ वर्णित किया है तथा समस्त वस्त्र भाग को त्याग कर वह सूफी साधक की भाँति हो जाता है।' फारसी के नायक मजनु का रूप भी सूफी साधक का ही रूप है। इस प्रकार अपने स्वरूप में ये नायक 'सूफी' हैं। अतः 'युत्पत्ति के मूल से ही सूफी' शब्द अपने आडम्बर रहित प्रेमी साधक के रूप की घोषणा स्पष्टता से करता है।

मरानयी पद्धति के नायक प्रायः अविवाहित ही होते हैं तथा प्रेमिका द्वारा किसी अर्थ से विनाश हो जाने के उपरान्त भी अपना लगाव कम नहीं करते हैं। कभी कभी तो आजीवन अविवाहित रह कर मर भी जाते हैं तथा उनके मरणोपरान्त

१ सार० ए० निकल्सन स्टडीज इन इस्लामिक मिस्टीसिज्म, पृ० १६१

२ डिक्शनरी ऑफ इस्लाम प० ६०६

३ Most Sufis favour the theory that it is derived from 'Sofa' (Purity) and that the sufi is one of the elect who have become purified from all worldly defilements

—Encyclopedia of religion and ethics Vol. XII P 10

४ रामपूजन तिवारी—सूफीमत साधना और साहित्य, प० ३

५ स० डा० धीरेन्द्र वर्मा—हिन्दी साहित्य (द्वितीय खण्ड)—सूफी प्रेमसाधनाक साहित्य, प० २४३

उनके 'माझूका' में इश' की भाव का 'इजहार' होता है। मजनू आजीवन अविवाहित रहा। लता व माता रिता न उनकी शान्ति बिगो अथ स कर दी थी। लेकिन उमने अपने प्रेम का तगाता तौर रूप में रखा है। मरणोपरान्त लता उमके लिए धृत अधिक रिताप करती है तथा प्राण त्याग देती है। इनके विपरीत भारतीय सूफी प्रेमाख्यानक काया के नायक प्रायः विवाहित होते हैं। किसी दूनी या पक्षी आदि में किसी राजकुमारी का रूप-वर्णन मुनो ही उनका रूप-प्रोभ उमड पड़ता है, तथा वे अपनी प्रथम पत्नी को छोड़ कर दूसरी राजकुमारी के लिए घर-बार, राज पाट त्याग कर निजान पन्न हैं। रत्नमेन, मनाहर, सुजान आदि सभी इस कालि के उदाहरण हैं।

मननवी पद्धति के नायक मनातन कोटि के प्रेमी होते हुए भी रूप-प्रोभ नहीं हैं। इनकी नायिका प्रायः बाह्य रूप में सुन्दर नहीं होती, उनका नख निख भारतीय नायिकाओं की भांति 'रूप निधि' का न होकर सामान्य ही होता है। उनका कालापन तो जगत विख्यात है। वह ऐसी नहीं थी कि उसे देखते ही सौन्दर्य का रूप-भागर हिलारें लेने लग। इसके विपरीत भारतीय सूफी कवियों की सभी नायिकाओं का 'रूप मणि' बना कर प्रस्तुत किया गया गया है। नायिकाओं के हम वर्णन में इन सूफी कवियों ने भारतीय पद्धति का अनुकरण किया है। भारतीय परम्परा नारी की सौन्दर्य-वर्णना में आकाश पानान के कुनारे छू लेती है। सम्पूर्ण काय में वर्णित नायिकाएँ अपने सौन्दर्य की अनुपम छटा में श्रेष्ठ से श्रेष्ठ पुष्प के सौन्दर्य को भी लज्जित करती हैं, तथा कवि उनके रूप का वर्णन करते धक्का नहीं हैं। कभी-कभी तो नायिका के रूप वर्णन में सरस्वती भी उसका साथ नहीं दे पाती तथा उसके अनुकूल कवि को कोई भी उपमा उपयुक्त नहीं लगती, सभी उपमाएँ भठी तथा निरर्थक लगती हैं। विद्यापति की राधा विधाना की एसी अनुपम मण्डि है कि दुनिया में उसकी समता या कोई भी उदाहरण ही नहीं है। तुनसीदास की 'सीता' भी अलौकिक शोभा में अदभुत है जिन्हें देख कर कभी न टिगन जाने रघुवशी गम भी अधीर हो जाते हैं। उन्हें सीता के समक्ष ब्रह्मा भी फीका लगता है। सूर की राधा अपनी छवीनी छवि में छवि भागर कृष्ण का भी बचन कर देती है। गीतिकालीन नायिकाओं के रूप सौन्दर्य का वर्णन में कवियों ने कोई भी कसर नहीं छोड़ी है। विद्यापी की नायिकाएँ तो 'झाया के भार से सूर्य पाव ही धरने में अमथ हो जाती हैं। आनुनिक काल में नायिकाओं का यह रूप-वर्णन प्रिय प्रवास तथा 'कामायनी' में स्पष्ट है। प्रिय प्रवास की राधा रूपोधान प्रपुलित प्रायः बलिका हान पर भी गाना प्रसार संचित्रि की गत है तथा कामायनी या अर्द्धा का रूप तो हिन्दी समार की अन्तम निधि है। अर्द्धा के सौन्दर्य-वर्णन में प्रगाढ़ जीवन 'प्रथम कवि का ज्या मुन्नर छन्द बह कर न जान कितन रूपों में उस विधित किया है। इन



प्रकार भारतीय परम्परा नायिकाओं में अनन्य गौण्य का रूप प्रस्तुत करती है। आचार्यों द्वारा वर्णित पद्मिनी कमलिनी आदि नायिकाओं का प्रभाव इन सूफी कवियों पर भी है। ये सभी नायिकाएँ चाहें मगधवती हों या गुप्तावती, पदमावती हों या मधुमालती, इन्द्रावती हों या जुगता दमयन्ती हानिश्चरता सभी पद्मिनी नायिकाएँ हैं। 'पद्मावत'। हीरामणि गुप्ता राजा में पद्मावती के गौण्य की ऐसी चर्चा करता है कि राजा उस प्राप्त करने के लिए उतावला हो जाता है। इस प्रकार विदेशी सूफी नायिकाओं से ये नायिकाएँ रूप-गौण्य में सबका विपरीत हैं तथा भारतीय नायक का सौंदर्य के प्रति स्मरण भी स्पष्ट है। यद्यपि मदनवी के नायक भी नायिका में परम अति का रूप पाते हैं तथा भारतीय नायक भी प्रेमिका में परम प्रकाश की प्राप्ति कल्पना करते हैं।

सूफियाँ व सभी नायक प्रायः सामान्य वन या परिवार से आते हैं, उनकी जाति का या सा पता नहीं होता या होता भी है ता के नीचे की धरती में ही आते हैं। साथ ही साथ पारिवारिक रूप से भी वे समझ नहीं होते अर्थात् उन्हें प्रेरित करता है। परिहास की प्रसिद्ध कहानी द्वारा उन्होंने इस तथ्य का सबूत दिया है। वह प्रेमिका को प्राप्त करने के लिए पक्षी खाद करदूध की सन्तिता निकालना चाहता है लेकिन अकेला ही। कोई साथी नहीं कोई साधन नहीं। अकेला ही जी जान होमता रहता है। इससे विपरीत भारतीय प्रेमात्मयानत्र काव्या के सभी नायक उच्चकुलीन राजकुमार हैं, प्रेम उनका व्यसन है। क्षणित्व का अव्यष्ट तेज उनमें विद्यमान है। राजा का अपार वभव अतः पुर का मादक विलास, समस्त परिवार का सुख, सब कुछ होने पर भी वे योगी हो जाते हैं। भारतीय सूफिया की नायक कल्पना पर यहाँ पर भी भारतीय प्रभाव स्पष्ट है। संस्कृत आचार्यों ने नायक में उच्च कुलीनता, वीरता आदि अनेक गुणों की कल्पना की है। उनकी कल्पना में नायक कम से कम राजा हों। इस भारतीय आचार्य परम्परा का भी प्रभाव इन नायकों पर है। रत्नसन मनाहर, मुजान मल आदि सभी नायक उच्चकुलीन, सम्पन्न राजकुमार हैं। वे पारसी परम्परा के नायक से भिन्न भारतीय प्रभाव ग्रहण किए हुए हैं।

मदनवी पद्धति के नाम पर प्रेम के लिए प्रेम नहीं करते हैं, उनका प्रेम वासना का गिलवाड नहीं है उनके प्रेम में शारीरिक भूयस प्रबल आत्म मिलन की समस्या है। एरनिष्टता तथा लगातार प्रेम के विकास का दृष्टि से ये नायक शायद दुनिया के इतिहास में अकेले ही हैं। अपने 'दक' में ये बड़े ही ईमानदार हैं। एक सूफी साधक के मन में—'इश्क के बिना निरदगी बर्बात है। इश्क का दिल दे देना कमाल है। इश्क

बनाना है इश्क जलाना है, दुनिया म जो कुछ है, इश्क का जनना है। आग इश्क की गर्मी है, हवा इश्क की बचनी है, पानी इश्क की रफ्तार है। रात इश्क की कियामत है, मोत इश्क की बहाली है जिदगी इश्क की हागियागी है। रात इश्क की नाद है, दिन इश्क का जगना है।" सूफियों का यह प्रभाव भारतीय प्रेमार्थान नायका पर भी है तथा आज भी नायका का प्रेम मूल से अमूल की आर जाता है वे या ही अमूल तान नहीं छाडने। 'प्रेम के नाम पर इन नायका की जगन इनका रूप सप्त प्रग है।'

फारसी परम्परा के इन नायका की प्रेम साधना का सौंदर्य मुमीबना के पहाड आन पर दीप्तिमान हा उठता है। 'प्रेम-मय' के कठिन से कठिन पथ के य पथी है। विरागी साधक इतने पक्के हैं कि इन्हें शूल भी फूल हैं। मसूर 'अनहनक' कहता हुआ जान ब दता है पर नगता नहीं। मजनू लला के नाम पर मोत की जिदगी ममभे बठा है, परिहाद पवता को काटन म हिचकता नहीं, नरक की एसी काई यातना नहीं है जिससे उन्हें डर लगता है। मध्ययुगीन प्रेमार्थान काव्यों के नायक भी ऐसे ही हैं। जायसी का नायक सात समुद्र पार कर लेता है। लूरी मिलने पर भी डरता नहीं है। उनके भीतर मच्चा 'मरजिया भाव है। जायसी द्वारा वर्णित सात समुद्र प्रेमी साधक (मात्विज) की साधना के सात मापान है। सूफी मायता के अनुसार परमात्मा का प्राप्ति करन के लिए सात सोपना का पार करना पडता है।'—

(१) ईश्वर की आज आरम्भ करत ही, अपार कठिनाइया परीक्षाया तथा विपत्तिया का सामना करना पता है। उन्हाहरणार्थ रत्नसेन की मिथल यात्रा क अपार कष्ट का वगन जायसी न किया है। राजा की शिव पावती परीक्षा सेत हैं। वह पत्मावती के साथ लौटन समय भी समुद्र की विपत्ति म पम जाता है।

(२) द्वितीय स्थिति म प्रेमार्थान का प्रवर्तित रूप लवर बूदता है। रत्नसेन पत्मावती के रूप म इतना जगता है कि जिन म अममथ हो जाता है।'

१ चन्द्रबली पाण्डे—तसम्मुक्त अथवा सूफी मत से उद्धृत, पृ० ११६

२ वही पृ० ११

३ अक्षर—३ परनिधन मिस्तिस्त, पृ० २६

४ परासी प्रेम समुद्र अपारा । लहरहि लहर होइ बिसफारा ।  
विरह भीर होइ भावरि देई । खिनगिन जोव हिलोरहि लेई ।  
खिनहि उसास बूडि जिउ जाई । खिनहि उठै निमर बोराई ।  
खिनहि पोत खिन होइ मुख सेता । खिनहि चेत खिन होई अचेता ।  
कठिन गरन तैं प्रभ विवस्था । ना जिउ जिउ न दसव अवस्था ॥

जनु लेनिहार न लेहि जिउ हरहि तरासहि ताहि ।  
एतन बोल आव मुख कर तराहि तराहि ॥'

—स० रामचन्द्र शुक्ल—जायसी प्रभावली, पृ० ८८ (प्रेम लण्ड)

(३) प्रेमोग्नि म घन प्रकाश पाता है तथा प्रेम ही उसने जिम सब कुछ हा जाता है। रत्नसन पद्मावती की प्रेमोग्नि म जीरा रा प्रम गोष्म गता है' तथा उसी म बिस्स का तय कर लेता है।

(४) प्रेम पंचजुष सोपा पद्मगा र निरनिन हा जाती है। रत्नसन के पम म भी यह अवस्था दोगी ग मवती है। वह गज पाठ घर बार छोड़ कर जाती है। जाना है तथा समार स उस विरनिन हा जाती है। जन्मपारी योगी की तरह घर स निक्कल पडता है।

(५) पाचवें सोपा म साधर सायुज्य की घाटी म पडूब जाना है तथा 'मैं' और तू का भाव मिटा देना है। रत्नसन म भावना की यह स्थिति भी स्पष्ट धणित है जब वह पद्मावती तथा अपने का भेद गही कर पाता है। उसके रक्त की बंद बंद मे पद्मावती समा गई है।'

(६) इस सायान पर 'हृन्' की 'हृन्वित' का पान हा जाता है, सा गत्वार तथा परमात्मा की स्थिति। उपाहरणा रत्नसन तथा पद्मावती का मिलन दिया जा सकता है। पद्मावती पूण श्रु गार क माय रत्नसन के साथ ध्यान द मन हो रति श्रीडा करती है।' यह स्थिति पूण ध्यान द की स्थिति न हाने पर भी ध्यान द की सानिकट स्थिति है।

१ सुनिसो बात राजा मन जागा। पलक न भार प्रेम धित सागा।

ननह डरहि मोती और मूषा। जस गुर खाइ रहा होइ गूषा ॥

—वही पृ० ५१

२ तजा राज, राजा भा जोगी। ओ कितरी कर गहेउ बियोगी ॥

तन जितमेर मन पाउर लटा। ग्रहसा पम परो निर जटा ॥

वह जोगी खण्ड प० ५३

३ रक्त क बंद क्या जग ग्रहही। पद्मावति पद्मावति कहरी ॥

रहै ॥ बूद बूद माह ठाऊ। पर त सोई लेई लेइ नाऊ।

रोय रोय तन तासो ओषा। सूतहि सूत धधि जित सधा ॥

हाडहि हाड सबद सो होइ। नस नस माह उठ धुनि सोई।

जगा विरह जहा का गूद मास के हा ?

हो पुनि साचा होइ रहा धाहि क रूप समान ॥

—जायसी श्रयावली रत्नसेन सूली खण्ड पृ० १३३

४ जो तुम चाहो सो करो ना जागी मल मद।

जो मान सो हाइ मोहि तुम्ह। चहो अन ॥

—वही पद्मावती रत्नसेन भेंट खण्ड प० १४१

(७) अन्तिम सोपान आत्म-तय की अवस्था है। जायसी न 'पदमावत की समाप्ति पर इस अवस्था का विशद वर्णन किया है।'

इस प्रकार साधक के इन सात मापानों को साधक की सात मानसिक स्थितियों का ही रूप मानना चाहिए।

सूफी साधक (नायक) सृष्टि में सौन्दर्य देखकर प्रियतमा या परमतरय का ही प्रतिबिम्ब उमने पाता है। यह 'फना' के 'बका' की घोर उड़ना है तथा परम सत्ता में लीन हो जाना चाहता है। सूफी साधक द्वारा निर्धारित चार अवस्थाओं में नायक की गुजरना पड़ता है—

(१) शरीअत—इस अवस्था में आत्मा 'रसूल' द्वारा दिये गये उपदेशों का पालन करती है।

(२) तरीकत—बाह्य जगत से दूर रह कर आत्म-बुद्धि द्वारा ईश्वर का चिन्तन करता है।

(३) हकीकत—चिन्तन के बाद यह ज्ञान की अवस्था है।

(४) माफत—यह आत्मा तथा परमात्मा की मिलन अवस्था है। शरीअत तरीकत, हकीकत तथा माफत को आचाय रामचन्द्र गुस्ल ने कम बाण्ड उषामना-बाण्ड नाम बाण्ड, तथा सिद्दावस्था का नाम दिया है। पदमावत में 'चार बनेरे मौय है'<sup>१</sup> द्वारा इन्हीं अवस्थाओं का संकेत दिया गया है। 'प्रेम रस के लेखक शेर रहीम'<sup>२</sup> ने भी इन चार अवस्थाओं का स्पष्ट उल्लेख किया है। इस प्रकार इन सूफी कवियों तथा साधकों ने नायक में सूफी साधना के सिद्धान्तों का आरोपण किया है। इसका कारण स्पष्ट है कि ये साधक अपनी कविता के द्वारा जनता में अपने प्रेम सिद्धान्तों की स्थापना करना चाहते थे। अतः उन्होंने अपनी साधना के मर्मस्वरूप नायक के ऊपर आरोपित कर दिए हैं। इनके नायक की साधना में सूफी साधक की पठार साधना स्पष्ट भक्तवती है।

सूफी नायक का प्रेम प्रायः सामाजिक या मगन भावना से रहित होता है। साथ

१ पदमावति पुनि बहिर फगोरी । चली साथ फिज के होइ जोरी ॥

—यही सती खण्ड प० २११

२ जायसी प्रयावसी—भूमिका भाग, प० १४२

३ फेरी तरीकत नाधि क देख हकीकत आप ।  
होय भारफ्त जो तुमसे बात होय मिलाप ॥

—शेर रहीम—प्रेमरस ५ १२



के ऊपर गुरुवाद का प्रभाव बहुत गहरा है। सभी गुरु का परमात्मा से मिलान का साधन मानते हैं, जो साधक का दृष्टि दता है। फारसी में भी गुरु या पीर का बड़ा आदर है। गुरु साधक की साधना का पथ निर्देश करता है।

नायक म पत्नी द्वारा रूप वणन सुनकर, चित्र चक्कर स्वप्न दशन अथवा प्रत्यक्ष-दर्शन से प्रेम का बाध दूर जाता है, नायक वेहाश हो जाता है तथा होश-आन पर सब कुछ त्याग कर योगी हो जाता है। प्रेम में फकीर बन जाता है। यह आकस्मिक प्रेम मनावधानिक नहीं है। यह धीरे-धीरे नहीं बढ़ता, आकस्मिक बाढ़ का सामना करता है।

कुछ नायक इसके अपवाद भी हैं। उनका प्रेम साथ-साथ रहने से ही बढ़ा है। 'लला मजनु' का प्रेम विद्यालय से आरम्भ होता है। चन्द्रकला तथा प्रेमसैन का प्रेम भी पाठशाला से ही आरम्भ हुआ है। 'मधुमालती' में भी ऐसा ही है। 'नान दीप' में दक्कानी तथा नानदीप का प्रेम भी दिन प्रतिदिन व मिलन का मसुर रूप है।

नायक का प्रेम पथ कष्टवादी दिवना अमरतीय तथा भारतीय दाना कवियों की विशेषता है। लोक कथाओं के रूप इनमें हैं। अतः काव्य रूढ़िया का पालन नायक के प्रेम पथ में अधिक किया जाता है। पत्नी द्वारा कहानी कहना, नायक का जागी हो जाना अथवा विधन आना, अनिप्राकृत तथा आनौकिक शक्तियों द्वारा महायत्ना करना आदि। वास्तव में ये काव्य रूढ़िया संस्कृत पालि, प्राकृत साहित्य की दत्त हैं।<sup>१</sup> इन सभी काव्यरूढ़ियों के भीतर ही यह नायक अपने व्यक्तित्व का निर्याग करते हैं। नायक प्रेम-पथिक बनकर पहाड़ से मुमीवन को भी भेलता है। बौद्ध जंगल सागरा राक्षसों तथा हिंसक जीवों के मध्य भी निभय हाजर दिखता है। मार्ग में उस प्रलोभन भी दिखाए जाते हैं किन्तु यह झिगना नहीं है। सूफी-साधना में भी 'मालिक की विधन बाधाओं का उगरी प्रेम-मरी' के लिए अनिवाय माना गया है। कष्ट की कमीटी में साधक बचन बनता है, दग निशाम का रूप समस्त सूफी साधक में देखा जाता है।

नायक तथा गुरु

सूफी नायक अपने पीर या गुरु द्वारा निर्देशित किए जाते हैं। गुरु ही इम 'प्रेम की भाग को जन्म देता है।' 'पदमावत' में हीरामन गुरु का प्रतीक है, जो

१ डा० सत्येन्द्र—मध्ययुगीन साहित्य का लोकतात्त्विक अध्ययन, पृ० १७२

२ 'पीर और मुसिद (गिल्फ) के सम्बन्ध के बिना सूफियों में साधना का कोई अस्तित्व ही नहीं है।

—रामधारी सिंह दिनकर—संस्कृति के चार अध्याय, पृ० २६०

रत्नसन का 'प्रेम पथ पर अग्रसर करता हूँ। गुरु उपामना की परम्परा भारतीय साहित्य में प्राचीन है। वैदिक काल रामायण काल, उपनिषद काल तो गुरु महात्म्य से भरा पड़ा है। हिंदी साहित्य के भक्ति काल में गुरु महिमा का अपार वर्णन है। नाय-नायिका न साधना में गुरु को अनिवार्य माना है। निगुण ज्ञानमार्गी शाखा के प्रतिनिधि कवि कबीर ने गुरु को 'गाविन्द' से बड़ा धारित किया है। वृष्ण भक्ति शाखा के सभी कवि गुरु महिमा का गान तमय हाकर करते हैं। राम भक्ति के कवि तुलसी ने तो मानस में सबप्रथम 'बंदी गुरुपद पदुम परागा' से ही अपने अमर-काव्य का श्री गणेश किया है। भक्ति-काल के समस्त वातावरण में गुरु के प्रति अपार तथा असीम श्रद्धा भाव व्यक्त है। भारतीय गुरु-साधना का प्रभाव सम्भव है सूफियों पर भी पड़ा है। भारत में रहने वाला सूफी हुजिरी गुरु महिमा की अनिवार्यता मानता है। 'सूफी साधना के ज्ञान के लिए 'पीर की शरण ग्रहण करनी पड़ती है, नही तो वह 'इश्क' में साफल्य प्राप्त ही नहीं कर सकता है।' साधन शब्द के शाब्दिक से 'पीर' तक जाता है, 'पीर' उस ज्ञान देता है तथा रसूल खुदा या मुहम्मद तक पहुँचाता है। य सभी सूफी नायक गुरु द्वारा ज्ञान प्राप्त कर अपने इष्ट के प्रति प्रवृत्त हैं।

### नायक का प्रेम योग

सूफी काव्या के 'प्रेम-मयी' नायक अपने प्रेम सिद्धांत के प्रति अपार निष्ठावान हैं। वह प्रेम में भाग्यभाग कम-भाग, ज्ञानयोग तीनों को एकत्र कर लेता है। उगरी दृष्टि में भ्रम गही रहता तथा वह अपने 'प्रेम शक्ति' में अधिन विश्वास रखता है। प्रेम-युक्त के सभी गपन बाधा है साथ ही जय भी इन्होंने प्रेम-मुक्त किया है, कभी य पीछे नहीं हटते हैं। अन मानसिक होता का पक्ष हम प्रबलतम है। मानव के मन का जीवन के लिए यह पूर्ण समर्पण के साथ भाग बढ़ते हैं तथा जिसके प्रति समर्पित हैं उम छाड़ कर किसी भी चीज की चर्चा भी इन्हें प्य नहीं है। अतः हमने प्रेम का आधार निश्चय तथा एकाग्र प्रेम ही है तबबार की शक्ति नहीं। भारतीय परम्परा में नायक नायिका के लिए तबबार उठाना है, मुक्त से रक्त की सन्तान बढ़ा देना है वह जमी या अस्त्रहीन नहीं बनता है वन से विजय प्राप्त करता है। 'पथ्वीराज राग' योगनन्द राग' धार्मिक काव्या के नायक एस हा हैं। और

१ रामचरित मानस—यातक काण्ड ७० ६

२ डा० पीताम्बरदत्त बडस्याल—हिन्दी काव्य में निगुण सम्प्रदाय ७० १८

३ 'गुरु मुझा जहि पथ लियावा । किनु गुरु जगत को सबगुन दावा ॥

—जायसी-समाजती पृ०

सूफी नायक कभी भी प्रेमिया के लिए खनपात का महारा नहीं गत, सदैव प्रेम के द्वारा प्रेम प्राप्त करा है।

प्रेम की भुक्त अभिव्यक्ति म इह मवान नग हाता है। प्रेम का छिप छिप कर उपाया स नही चलात स्पष्ट प्रवट बग है। 'प्रेम की भाग उत्पन हो जान पर अपना समय साचन विचारन म नही गगा। मस्कृत व नायका म प्रेम पहिन प्रच्छन हुता है तथा बाद म प्रगट जेम दुप्यन तथा शकुतला का प्रेम। शकुतला स प्रेम करने म पहिल राजा, कुन, जानि मयादा आदि अनर तथ्या का विचार करता है तय भाग बढता है। इसके विपरित सूफी नायक प्रेम उत्पन हो जान पर बिना साचे, विचार, निकल पडत हैं। वह 'प्र म पय' म विचलित नहा हात, भाधन घनात नही, स्वय जुट जान हैं। प्रेम-दृष्टि की एकनिष्ठता से द्रवित हाकर अनौनिक शक्तिया इनको स्वय महायता बरती है। जस ग्लमन के निश्छल मिद्ध-यागी रूप का दखवर शिव-भावती मभी दबता सहायता परत है तथा निव तिद्धगुटिया प्रदान करत हैं तथा कभी कभी ता उह भाट भी बनना पड जाता है। फारमी क काव्या म इस पद्धति के अनेक मकेन मिलत है, जिनका अनग स विवेचन करना यहा विषयात्तर ही प्रस्तुत करगा। लकिन इतना स्पष्ट है कि प्रेम का शासनत रूप दिव्य शक्तिया की सहायता स सिद्धि की आर बन्ना है तथा नायक का सफलता मिलती है।

प्रेमी हात हुए भी यह नायक भारतीय काव्य शास्त्र म वर्णित शृंगार के नायक अनुबूल, दक्षिण, शठ तथा धूत नायका<sup>१</sup> की भांति नहीं है। प्रवृत्ति स कृष्ण मार्गों कविया क नायका स भिन्नता रखत है। वे कभी भी रसाधिपति, रमिक्ेश्वर, रम सागर कृष्ण की भांति सामान्य गापिया नायिकाया स छेदछाड नहीं करत। सूरदास ने 'सूर सागर क आरम्भ मे ही राधा द्वारा कृष्ण की दधि घारी का उल्लव प्रस्तुत किया है।' सूफी नायक उसे खेल जानता ही नहा। वह लूट नहा करत, बासुरी नहीं बजाने, मार जाल म फाम कर सवना बाधन नही। 'धतरस घाल कर सखा रिभात खिलात नही। एवान्त म छेदछाड नहीं करत, चालिया का गिनाश उह आता ही नहीं है। व प्रेम के माग मे कृष्ण की तरह अधीर तथा रम लूटन नहीं लग जात प्रेम पय म पवत से घयशाली तथा वृत्ति से अचंचल रहत ह। व रम-लाभी नहीं हैं,

१ डा० कमलकुलधरेष्ठ—भारतीय प्रेमशास्त्रांक काव्य, प० २२६

२ दिव्यशतरा आव इस्लाम प ६०६

३ कामशास्त्र—वात्तायन प० ४०३

४ सूरसागर प० १६०



अतः मधुकरी रति का इन नायका में सबका अभाव पाया जाता है। इसका कारण है कि इनका प्रेम लौकिक प्रेमिका से वासनात्मक न होकर नित्य होता है तथा प्रेमिका पर-उपेक्षा का रूप होती है जहाँ वासना का कालुष्य छाड़ कर जात है। दूसरे भागतीय सूफी काया के नायक सभी राजा हैं, राजाओं शान उनमें है अमर्यादित वे नहीं हैं। रत्नसेन, नरत मनाहर, सुजान सभी इस तरह के हैं। परीक्षा के लिए पावतीया द्वारा अप्सरा का रूप धारण करने पर भी रत्नसेन टिगता नहीं है तथा पावतीया अप्सरा की उपेक्षा करके अपने इष्ट के प्रति अनुराग ही व्यक्त करता है। 'मानस' में भी पावती सीता का रूप धारण करती है तथा राम के समक्ष अस्पर्श हो जाती है। यह प्रसंग मानस में पदमावत से ही नायक के प्रेम में एकानिष्टता दिखाने के लिए तुलसी ने ग्रहण किया जान पड़ता है।

सूफी नायक 'सौन्दर्य' के ही साधक हैं इस सौन्दर्य में विश्व राग मिता हुआ है। मण्डि के कण कण में उसका सादर्य बिखरा पड़ा है। वह एक तत्त्व ही सौन्दर्य मय है यह एकेश्वरवादी भावना ही इसमें प्रधान है। रामिण का सौन्दर्य लाक तारा

१ पावती मन उपजा चाऊ । देखौ कुंवर घर सत भाऊ ।  
 मोहि एहि बीच बि पेसहि पूजा । तन मन एक बि मारन दूजा ॥  
 भइ सुरप जानहु अपधरा । बिहसि कुंवर कर आचर धरा ॥  
 सुनऊ कुंवर मासौ एक बाता । जस मोहि रग न औरहि राता ॥  
 और बिधि रूप दीछ है तोका । उठा सो सज्ज जाइ तिथ तोका ॥  
 तब हीं सो पह इन्द्र पठाई । गइ पदमिनि त अछरी पाई ॥  
 अब तबु जरनु मरनु तप जोगू । मोसौ मानु जनम भरि भोगू ॥  
 हौ अछरी बबिसास के जेहि सर पूज न कोई ।  
 मोहि तजि तमरि जो मोहि मरसि कीन नाभ तेहि होई ? ३ ॥  
 भलेहि अग अछरी तोर गाता । मोहि दूसरे सौ भाव न बाता ॥

+

+

+

मोहि न गोरि कछु आता हौ मोहि आस करेउ ।

तेहि निरास पोतम कह जिउ न देखे का देख ॥

—नायकी प्रभावती—पावती-महेन्द्र खण्ड पृ० ६१

२ इन्होंने कल्पना की कि अतिम सत्य का रूप पूरा सौन्दर्य का रूप है। यह सत्य स्वयं तो अछन है किन्तु मण्डि रूपी दक्षण में उसका जो बिम्ब पड़ता है यही उसका अनिर्गम्य है। यह अनिर्गम्य प्रथम का सत्य दली है प्रेम है सौन्दर्य की पहचानने की शक्ति प्रेम है सौन्दर्य पर योद्धावर होने की योग्यता।

—रामचारीसिंह दिनकर—संस्कृति के चार अध्याय, पृ० २५



काम-मूत्र तथा काम ज्ञान्य का विषय ही 'काम' का विवेचन है। 'काम' पारिभाषिक रूप से 'उर-नारी' व परस्पर आनन्द का व्यञ्जन शब्द है। भावनाओं का कामनात्मक रूप रति या अनुराग में निवृद्ध है। 'काम' अर्थन व्यापक स्वल्प में चराचर का प्रेम भाव है। सूफियों ने इसी 'काम' व स्यात् पर 'इश्क' शब्द का प्रयोग किया है। आनन्दतम काम तथा 'इश्क' दाना शब्दों का अर्थ-संकाच हुआ गया है तथा वे मात्र वास्तविक अर्थ का ही अभिव्यक्ति करते हैं। 'काम' शब्द सामान्य 'प्रेम' व रूप में आ गया है। चरत सूफियों ने नायक में जिन 'इश्क' या 'काम' की चर्चा की है, वह 'इश्क' परम-सत्ता या विराट्-व्यक्ति व तिए है। अतः 'इश्क' का नायक स सम्बन्ध व्यापक धरातल या शाश्वत भूमि का है, सामान्य नहीं।

वेदा में 'काम' जीवन की असाध्य शक्ति का याचो है तथा जीवन की इच्छा-शक्ति का अर्थ देता है। 'काम' तथा प्रेम दाना ही समान वहाँ आ जात हैं जहाँ वे शाश्वत काम का अर्थ प्रकट करते हैं। उपनिषद् तथा पुराणों में 'काम' का प्रयत्न विस्तार है। 'काम' के अर्थ का पतन बहुत बाद में हुआ। 'काम' की उपासना भारत में प्रचीन काल से है, यह उपासना भी सौन्दर्य के प्रति आदर भाव ही है। भारतवर्ष में 'काम' का काव्य शास्त्रीय दार्शनिक तथा मनोवैज्ञानिक विवेचन प्राप्त होता है उससे लगता है 'काम' या 'प्रेम' की यह भावना भी विद्वानों में यहाँ से ही पहुँची है। श्रीमद्भागवत की प्रेम कथाएँ—कृष्ण तथा राधिका की दल पर लगता है यही सूफीकाव्य की आधारभूमि है। फारस तथा अरब के साथ भारतीय सांस्कृतिक सम्बन्ध प्राचीन हैं। अतः प्रेम-चर्चा भी वहाँ पहुँची होगी। सूफी मत के प्रसिद्ध विद्वान इब्नअरबी ने बारहवां शताब्दी में 'काम' प्रेम की या 'इश्क' की व्यापक धरातल पर चर्चा की है। रोबियन का 'इश्क' तो जगत प्रसिद्ध है, यह तो प्रत्येक घमक में 'हक' के दर्शन पाती थी। फारस में आगिक माशूक का गम्भीर चर्चा, उनके 'नखरो' का बखान, 'सामी' 'तराब' की बहानियाँ, शमा परवाता के चित्र बहुत हैं तथा सभी में 'इश्क' ही है। फारसी-सूफी तथा हिन्दी प्रमास्यानक दोनों ही काव्यों के नायक का आधार काम, इश्क या प्रेम ही है। प्रेम शब्द की व्याख्या अनन्त है तथा विद्वानों द्वारा दी गई परिभाषाएँ अपर्याप्त हैं। प्रेम अन्तर्गतियों का व्यापक

१ Encyclopedia of Religion and Ethics Vol. VII P 3

२ "The very essence of sufism is poetry. Hastings and the eastern mystics are never tired of expatiating on the 'Ishq' or 'Love to God' which is the one distinguishing feature of sufi mysticism

रूप है तथा मानसिक प्रक्रिया भी। 'भक्ति सूत्र' में 'अनिवायनीयम् प्रेमस्वरूपम्' कह कर प्रेम की अनिवार्यता का स्पष्ट उद्घोषित किया गया है। परमात्मा का 'प्रेम रूप' मानने की बात तो अब स्थिर सी हो गयी है। जीवन में प्रेम का स्थान सर्वाधिक है।

मध्यकाल में 'प्रेम-साधना' का स्वर प्रमुख है। दक्षिण के भक्त कवि प्रेम धारा में निमज्जित थे। कृष्ण भक्तिधारा के सभी सम्प्रदाय राधावल्लभ सम्प्रदाय, बल्लभाचार्य का पुष्टि मार्ग आदि सभी प्रेम-द्वारा भगवान की उपासना कर रहे थे। जयदेव विद्यापति तथा मीरा का प्रेम समयता का उदाहरण है। कबीर ने भी 'राम की बहुरिया बन कर भगवान से नवधा भक्ति के सम्बन्ध स्थापित किए। वृष्णवा की प्रेम-साधना में देश रस विभोर था, उसी समय सूफी-साधक इस देश में 'इश्क मज्जाजी' के द्वारा इश्क हकीकी का संदेश देने यहाँ आये। आचार्य तुकल ने हिंदुओं तथा मुस्लिमों के इन विचार-संगम का ही 'एकत्व' की ओर उन्मुख करने वाला सिद्धान्त माना है। उन्होंने चार प्रकार के प्रेम' रूपों का संकेत दिया है। चौथे प्रकार का प्रेम गुण-श्रवण—चित्र दर्शन, साक्षात् दर्शन आदि से होता है। सूफी-काव्यों में इस प्रकार का प्रेम ही व्यक्त है। परम ज्योति रूप नायिका का प्राप्त करने के लिए, कथा' धारण कर उनके सभी नायक भोगी रूप से हट कर यागी बन जाते हैं। गुण-श्रवण के अन्तर्गत पदमावत, चित्र-दर्शन के अन्तर्गत 'चित्रावली', स्वप्न-दर्शन के अन्तर्गत कनकावली, इन्द्रावली तथा साक्षात्-दर्शन के अन्तर्गत, मधुमालती, मधुकरमानस आदि रचनाएँ आदि हैं।

प्रेम चित्रगारी' के उद्गम हान ही साधक प्रेम प्रेम की रट लगान लगता है। 'फारसी मसनवियों का प्रेम एकात्मिक, लोक व्यापक और आदर्शात्मक (आइडियालिस्टिक) होता है। वह संसार की वास्तविक परिस्थिति के बीच नहीं दिखाया जाता संसार की और सब बातों से अलग एक स्वतन्त्र सत्ता के रूप में दिखाया जाना है। इसमें जो घटनाएँ होती हैं वे केवल प्रेम मार्ग की होती हैं, संसार के और व्यवहारों से उत्पन्न नहीं। साहम, दृढता और वीरता भी यदि कहीं दिखाई पड़ती है तो प्रेमा-

१ नारद भक्ति सूत्र २

२ Love is God and God is love

Love I What a Volume is a word

—(Unknown)

३ जायसी चित्रावली (मूजिका भाग), पृ० १

४ वही, पृ० २६

‘माद के रूप में, साव-वस्तु के रूप में नहीं।’ भारतीय लोक व्यवहारिक पद्धति का इनमें अभिप्राय होता है। सूफिया की आध्यात्मिक भूमि, प्रेम की ही धमक में सभी कुछ मानकर चलती है। सूफीवाक्य में एक ही ध्वनि है प्रेम। प्रेम की इस प्रबलता के कारण ही उनका नायक नायिका प्रेम के प्रतीक मान जाते हैं। प्रेमी (नायक) सौंदर्य स्रष्टा (नायिका) में उस ही पाता है। नायक के लिए परम-ज्योति के रूप को माखी, शराब तथा मधुशाला बना दिया गया है।

जायसी ने प्रेम का प्रेम पहार बहिन विधि गन का वएन अनेक प्रकार स किया है। प्रेमी प्रेम-पथ के बच्चा की चिन्ता ही नहीं करता। प्रेम-भाग बादा एव कलाश है। इस प्रकार इनके नायक का प्रेमी रूप अदभुत है।

### नायक पर नाथ पथी प्रभाव

सूफी नायका पर हठयोगी प्रभाव अत्यधिक दृष्टिगोचर होता है। भगवान् शिव हठयोग-साधना के भादि प्रवक्तृ माने जाते हैं। यह हठयोग-साधना भ्रान्तमाग की प्रमुख साधना मानी जाती है। योगी कुण्डलिन शक्ति जाग्रत कर उस मूलाधार से सहस्रार चक्र तक पहुँचा कर परम शिव से आत्मा का संयुक्त कर देता है। योगी कुण्डलिनी द्वारा चक्रभेदन के पूर्व ही अष्टछाप की उपासना से शरीर को दिव्य एवं अप्राकृतिक बना लेते हैं।

सूफी प्रेमी नायक अपनी साधना में हठयोगी बनकर अपनी इच्छा का प्रतीक बन जाता है। नाथ पथ का प्रभाव मुसलमान तथा हिंदुओं के ऊपर व्यापकता से मध्यकाल में पड़ा है। सूफिया ने अपने नायक को भागी होने से पहले ही योगी रूप में प्रस्तुत किया है। नायक भीतिरता के माया जनित बंधन को तोड़ कर अपना मन दिव्य शक्ति में तगा देता है वह राज पाट माता पिता, पत्नी, सम्बन्धी सब कुछ

१ परशुराम चतुर्वेदी—अध्यात्मिक प्रेम साधना पृ० १७

२ सुए कहा मन बुझहु राजा। करब पिरात बहिन हे काजा।

+ + +

ओहि पथ जाइ जो होइ उदासी। जोगी, जती, तथा सयासी ॥

—प्रेम सङ—जायसी ग्रन्थावली, पृ० ११

३ सप्त पतार खोजि क, काढ़ी वेद गरब।

सात सरग अदि धावों, पदमावति जेहि पथ ॥

—बट्टी, पृ० ६३ (ओहित खंड)

४ स० हजारिप्रसाद द्विवेदी—गोरखबानी, पृ० ३६ पद १७

छोड़ कर चन देता है। सासारिकता से पूर्ण विरक्ति तथा एकदिव्य रूप के प्रति परम आसक्ति का इनमें उदय होता है। यह आसक्ति उन्हें नाथ योगी का रूप दे देती है। हठयोग-साधना का इन नाथों पर प्रभाव इसलिए अधिक पड़ा, क्योंकि यहाँ साधना का रूप हठयोग तथा रसायन के रूप में विद्यमान था। सूफिया ने हठयोग को उपयुक्त समय पर अपना लिया तथा वे 'पिण्ड' में 'ब्रह्माण्ड' की चर्चा में रम गये। 'कथा' पहन कर अपने नाथक का नाथ-योगी रूप में उठाने प्रायः प्रस्तुत किया है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी जी ने नाथ योगियों के रंग की चर्चा करते हुए लिखा है कि "मेखला, स गौ सेली, मूँरी सम्पर, कणमुद्रा, वधवर भोला आदि चिह्न ये लोग धारण करते हैं। पहले ही बताया गया है कि कान फाड़ कर कुण्डल धारण करने के कारण ये लोग कनफटा कहे जाते हैं। यह कण-कुण्डल निस्सदेह योगी लोगों का बहुत पुराना चिह्न है। सुधारक मनोवृत्ति के लोग मानते हैं कि श्रीनाथ जी ने यह प्रथा इसलिए चलाई होगी कि कान चिरवाने की पीड़ा के भय से अनधिकारी लोग इस सम्प्रदाय में प्रवेश ही नहीं कर सकेंगे।<sup>१</sup> इस प्रकार सूफी नायक का नाथ-योगी बन जाना भी विपत्तियों से न डरने का प्रतीकामय रूप ही है। मधु-मालती का नायक मनोहर, मधुमालती को प्राप्त करने के लिए नाथ-योगी योगी की भाँति निकल पड़ता है—

कथा मेखली जरकटा, जटा, बढ़ाई कैस ।

वज्र बछीटी बाधि के बस्यो गोरख बेप ॥<sup>२</sup>

इसी प्रकार उसमान ने 'चित्रावती' के नायक मुजान को भी नाथ पंथी योगी के रूप में प्रस्तुत किया है—

करहु कान जनि एकहु, कहै कोऊ जो लख ।

पहिरि लेहु पग पावरी, बालहु सिरि गोरख ॥<sup>३</sup>

'पन्मावत' भी रत्नसेन 'गुरु सुआ' से काफ़ी जोन कथन के कथ' यह उक्ति सुनकर योगी हो जाता है—

तजा राज राजा भा जागी । और बिगरी कर कहेउ बियोगी ॥

तन विसगर मन बाडर जटा । अरुभा अंम परीखर जटा ॥

चंद्र बदन श्री चंदन-तेहा । मसम चढ़ाई कीह ता येहा ॥

मखल सिंधी, चक्र, घघारी । जोग बार, सद राख, अघारी ॥

१ हजारीप्रसाद द्विवेदी—नाथ सम्प्रदाय पृ० १४ १५

२ मसन कृत मधुमालती (स० डा० माताप्रसाद गुप्त) ।

३ उसमान—चित्रावती, पृ० ८६

क्या पहिरि दण कर कहा । सिद्ध हाइ कह निरस कहा ॥

मुद्रा स्त्रवन, कठ जपमाला । कर उपजान, बांधि बंध छाता ॥

पावरि पाव दीह सिर छाता । सप्पर लोह भेस करि राता ॥

चला भुगुति माग नह, साधि क्या तप जोग ।

सिद्ध हाइ पन्मावती, जेहि कर हिये वियोग ॥<sup>१</sup>

इन्द्राक्षती, वनमावती क्याचलावती गान दीप हसजवाहिर आदि प्रेमाख्यानक काव्या में नायक के जागी वेश की रर्चा अवश्य है, केवल मूसुफजुलेला तथा प्रेमदपण काव्य ही इसके अपवाद हैं। इस अपवाद का कारण भी स्पष्ट है कि यद्यप्य 'कुशन' के प्रभाव में अधिक हैं। लेकिन गृह-याग कर निवृत्त पड़ने की वजह से यहाँ भी जाती है। इस प्रकार य मभी नायक 'प्रेम पथ' में सिद्धि प्राप्त करने के लिए 'साधना पथ' का आधार ग्रहण करते हैं।

### मन्त्र सिद्धि गोष्टिका तथा तान्त्रिक रूप

इन सूफी कवियों ने वेश भूषा से ही अपने साधक का योगी नहीं बनाया, अपितु नाथ पथ की समस्त त्रियाभा का भी आत्मभात किया है। जायसी पर डा० मुन्शी राम शर्मा ने नाथ साधना का पूरा प्रभाव स्वीकार किया है।<sup>१</sup> परन्तु छोटकर योगी बन जाने वाले गोपीचन्द और भत हरि का नाम भी उन्होंने स्मरण किया है—

जो भल होत राज और भोगू । गोपीचन्द कस साधन जागू ॥

जानहु भाहि, गोपीचन्द जोगी । कसा भरघरि भाहि वियागी ॥

दोहा १९९

जायसी गोरखनाथ के गुरु मत्स्येन्द्रनाथ का भी स्मरण बड़ी श्रद्धा के साथ करते हैं—

गोरख सिद्धी कीहि ताहि ताहि । तारे गुरु मछिंदर नाथ ॥

दोहा १६०

सम्पूर्ण पदमावत में 'जागी सिद्ध होइ तब जब गारख से भेंट इस परम्परा को अपनाया गया है। ये सभी 'जागी' गाष्टिका मन्त्रसिद्धि तथा तान्त्रिकता का भी सहारा लेते हैं। रत्नसेन न शिवजी से सिद्धगोष्टिका प्राप्त की है। कहा जाता है कि जायसी स्वयं भी सिद्ध योगी थे तथा इच्छानुसार वे बाध आदि का रूप धारण कर लेते थे। वन में मुक्त विचरण करते हैं। ऐसे सिद्ध ने अपने नायक को साधना में

१ जायसी—प्रयावली—जोगी खण्ड, पृ० ५३

२ भक्ति का विकास, पृ० २११

रत दियाया, तो आश्चर्य क्या ! 'चित्रावती' का नायक आँखों में लुब्धजन लगा कर भोली लेकर, मोटिका दवाकर, डन्ग लेकर चल देता है तथा वह दिव्य शक्ति सम्पन्न होकर सबको दत्त भक्तता है, साथ ही उसे कोई नहीं दत्त सरता । इस प्रकार तन्त्रप्रियाएँ तथा मन्त्रसिद्धियों का वणुन भी बहुत मिलता है । 'कुवरावत' में एक तपस्वी नायक को एक मन्त्र तथा लकुटिया दत्ता है । जन्म से सिद्धिया तथा लकुटी से समुद्र पार किया जा सकता था ।

एक लकुटिया और दिया कहा कि लियो मुजान ।

समुद्र डार बाहित भई सय है काज की खान ॥<sup>१</sup>

'नानदीप' के नायक ने भी लुब्धजन तथा गाटिका को अपनी सिद्धि का सहारा बनाया है । इन कवियों ने बिन बजाना जैसे क्या सीलावती में, गुरु से माला लना जैसे धनुराग रामुरी में, गेहूँ बस्त्र पहाना जोम कवरा सारंगी, शरीर पर भस्म मलना, खड़ाऊ पहनकर घर से बरागी हाकर निकल पडना, हाथ में किंगरी लेना, शरीर में मेखना भस्म शमी पपारी, चक्र वद्वारा धारण करना, जटा बनाना, कथा पहनना, गोरखनाथ का निरन्तर स्मरण करना आदि कई विशेषताएँ सूफी काव्यो में मिलती हैं ।

## साधना

हठयोगी साधना पर भी नायक का प्रभाव ही अधिक है । यह साधना बहुत ही जटिल तथा दुष्कर है । उसमें मांस राककर योगी का उलटे सिर के बल चलना पड़ता है । वस हठयोग-साधना साधरण रूप से, 'सिद्ध सिद्धान्त पद्धति' के मत में 'ह' अर्थात् सूर्य तथा 'ठ' अर्थात् चन्द्र । इस प्रकार सूर्य तथा चन्द्र का योग का नाम हठयोग है ।<sup>२</sup> सूर्य से इडा नाडी तथा चन्द्र से पिंगला नाडी का अथ प्रायः लिया जाता है । इस प्रकार इडा, पिंगला तथा सुषुम्ना हठयोग के आधार रूप हैं । हजारीप्रसाद द्विवेदी जी ने 'गुह्य समाज में बोधि प्राप्ति' के साथ इसका पुराना सम्बन्ध स्पष्ट किया है ।<sup>३</sup> गोरखनाथ ने योग धारा में नवीन प्राप्ति

१ उसमान—चित्रावती, पृ० ८५ ८६

२ अलीमुराद—कुवरावत ।

३ हकारेण तु सूर्य स्यात्सकारेण दुश्च्यते ।

सूर्य चन्द्रमसीरक्ष्य हठ इत्यभिधीयते ॥ पृ० १३३

—स० पण्डित महादेव नास्त्री—योग उपनिषद् ।

४ नाय सम्प्रदाय, पृ० १२३



की है। डा० रागेय राघव ने शकराचार्य व साथ ही गोरखनाथ को महत्व दिया है। "शकर ने जिस प्रकार समन्वय करने का प्रयत्न किया और इस समन्वय में बौद्ध मत की दार्शनिकता को आत्मसात करके खोपला कर दिया, उसी प्रकार गोरखनाथ ने अपने युग के पूर्ववर्तियों के सब मतों को पहिले अच्छी तरह ध्यान लिया और रस निवाल कर बाकी को फेंक की भाँति छूँछा करके फेंक दिया। विद्वानों ने नाथ-सम्प्रदाय की महत्त्वपूर्ण शक्ति का उल्लेख अवश्य किया है किन्तु उन्होंने यह नहीं स्पष्ट किया कि भारत में गोरखनाथ का जितना ही बड़ा काम था जितना कि शकर का।<sup>१</sup> गोरखनाथ ने नापातिक, शास्त्रों की चीनाचार सोचान सौर, गणपत्य सबको अपने में मिला लिया। उन्होंने सब प्रत्यभिज्ञा के दर्शन के अनुसार कायायोग को परिष्कृत किया तथा दार्शनिकता के सिद्धांतों में शकर के निकट आ गये। हठयोगी परम्परा के अनेक ग्रंथों को गोरख ने समन्वित रूप दिया। गोरखनाथ हठयोग-साधना को जाति-धर्म के बाधन से उठाकर व्यक्ति के स्तर पर लाये। राजा हो या रक्त इस साधना में मिला दिया गया। हिंदू तथा मुसलमान दोनों ही इस प्रबल साधना में प्रभावित हुए।

सूफिया पर नाथ पंथ की हठयोगी साधना के प्रभाव का एक कारण यह भी है कि हठयोगी सिद्धान्त में रूढ़ न होकर व्यक्ति विकास तथा परक तत्व का मार्ग सीधा करता है।<sup>२</sup> गोरख का जिस समय इस देश में उदय हुआ उस समय भारतीय धर्म-साधना की स्थिति डावाडोल हो गई थी। शकर के अद्वैतवाद का प्रभाव तो था, लेकिन कम हो चला था। उसी समय गोरखनाथ ने देश को अपनी सिद्ध-साधना पद्धति में बांधने का प्रयास किया। उस समय मुसलमान भारत में प्रवेश कर रहे थे और दूसरी ओर बौद्ध साधना, तंत्र मंत्र आदि में कसती जा रही थी। साथ ही बौद्धों, शाक्तों और शैवों का एक बड़ा भारी समुदाय ऐसा था जो ब्राह्मण तथा वेद के आचार्य को मानने के लिए तैयार नहीं था। गोरखनाथ ने पिण्ड में ब्रह्माण्ड<sup>३</sup> की उद्घोषणा की तथा अनेक नानी साधक उनके भण्ड के नीचे आ गये।

सूफिया पर हठयोग, रसमयन तथा तंत्र का प्रभाव आचार्य शुक्ल जी के शब्दों

१ डा० रागेय राघव—गोरखनाथ और उनका युग पृ० १५१

२ "नाथ पंथियों की दृष्टि में योग के द्वारा स्वाय और परमाय का सामंजस्य स्थापित किया जा सकता है। भोग तथा त्याग का सामंजस्य इसी में है। इस प्रकार गीता के मध्यम मार्ग का उपदेन ही इस पंथ को ग्राह्य है।"

—स० डा० धीरेन्द्र वर्मा—हिंदी साहित्य, प्रथम खंड पृ० १०८

३ आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी—नाथ सिद्धों की बानियाँ, पृ० ११

म इसलिए भी अधिक पड़ा, 'जिम समय सूफी यहा आए उससमय उह रहस्य की प्रवृत्ति हठयोगियो, रसायनियो और तार्किकों म दिखाई दी। हठयोग की ता अधिकारा वाता का समावेश उहाने अपनी साधना-मदति म कर लिया।' 'इधर रामानंद के शिष्य कबीर न भी साधक की साधना के लिए हठयोग की चर्चा की है। ब्रह्मरूप म ध्यान की दृष्ट करने, निराकार की उपामना, अनहद नाद, शून्य महल आदि की चर्चा कबीर ने डट कर की है।

नायक पंक्तियों म नायक कही जागी, रही अवधूत तथा कही कही रावल कहा जाता है। इन म सम्प्रदाय की दृष्टि से रूप भिन्नता थी। भक्त मध्यकाल के अधिकांश कवियों ने 'जोगी' रूप का ही अपनाया है। सगुण प्रेम की पुजारिन मीरा ने 'हठयोग' साधना को अपनाया है, उन पर भी नायक पंथ का प्रभाव स्पष्ट है—

धूताराजोगी एवर मू हमि बोन ॥  
जगत बदीत करी मनमाहुन कहा बजायत डोल ॥  
धम भगूति गले मगछाला तू जन गुनिया खोल ॥  
मदन गुरोत्र वदन की शोभा ऊभी जाऊ कपोल ॥  
मेली नाद वभूत न बटवा भजू मुनी मुख खोन ॥'

कबीर के काव्य म तो इन योगियों का विशद वर्णन मिलता है। सूर ने उदब के माध्यम से याग-साधना पर सगुण की प्रतिष्ठा की है तथा पापियों द्वारा योग योग हम नाही कहकर योग का खण्डन कराया है। तुलसीदास ने भी 'गोरख जगयो जोग भगति भगाया भोग' कह कर हठयोग का खण्डन किया। लेकिन सूफी कवियों ने हठयोगी साधना का अपनाया तथा उन म जोगी और अवधूत दोनों ही साधक के रूप म मिलते हैं। जायसी ने 'पदमावत' म गोरख पंथी सिद्ध 'गोरख गोरख' की रटन रटते थे, वडास की माला कुण्डल, बिगरी कमण्डल, व्याघ्र चम खडाऊ, मेखला, सिंगी चक्र, घघारी चक्र और खप्पर लेकर घर से निकल पड़ते थे, वे (नायक) साधक गए वस्त्र पहनते थे तथा 'जोग का कथनी म नही करनी' म विश्वास करते थे। साधक को अपार शारीरिक कष्ट मिलने के उपरान्त मिद्धि हुता उनकी साधना का लक्ष्य है। नायक नाय-योगी वेश भूषा धारण कर निकलता था तथा जब तक मिद्धि नहीं प्राप्त कर लेता, लगातार साधना के पथ पर चलता रहता था। इस पथ पर प्राण देने का भय भी इह नही होता है। इस प्रकार सूफियों के ये नायक साधना की दृष्टि से परे

१ भा० रामचंद्र शुक्ल—जायसी प्रयासों की भूमिका पृ० १६३

२ स० परगुराम चतुर्वेदी—मीराबाई की पदावली पृ० ८४

३ कवितावली—उत्तर बाण्ड पद ८४

नाय पंथी साधन की भाँति हैं। साथ ही उारी साधना वं उत्कृष्ट उपमान स्वरूप गोरसनाय, मत्स्येन्द्रनाय, गायीनाय, भतु हरि आदि का नाम लिया जाता है।

इन सूफी साधका म वाम माग का विरोध मिलता है—

कहा ग्वद तुम दाहिनि लेऊ।

बाये पंथ पाउ जिन दऊ ॥<sup>१</sup>

इसी प्रकार आयमी ने भी वाम माग का विरोध किया है। दक्षिण माग अपना कर उहोन साधना म दृढ आसन<sup>२</sup> का भी अपनाया है। आसन के पश्चात् प्राणायाम की साधना भी इन नायकों म प्राप्त होती है। प्राणवायु का निराध करके ये साधक कुण्डलिनी<sup>३</sup> का उदबुद्ध करता है। जागित कुण्डली पटवत्रा का भेदन करती हुई अंतिम चक्र सहस्रार म शिव से मिलती है। मन यटा अचंचल हो जाता है तथा साधक को अनहद नाद सुनाई पड़ने लगता है। अनहद नाद के दस प्रकार कहे गये हैं। 'मुसुफ जुलेखा म गुन वचन सत्र कोउ, अनहद दस प्रकार का सबैत स्पष्ट है। निसार ने मुसुफ जुलेखा म साधक (नायर) की जागत स्वप्न, सुषुप्ति एव तुरीया वस्था का भी सबैत किया गया है।

## सिद्धों का प्रभाव

नाथा के अतिरिक्त सिद्धों का भी प्रभाव इन नायकों पर पाया जाता है। सिद्ध प्राचीन जजरित रुढ़िया, पारतण्डा तथा अंध विश्वासा के प्रबल विराध को ले कर उपस्थित हुए थे। सिद्ध सहज जीवन तथा सहज साधना का आधार लेकर आये थे तथा अय मन्त्रप्रदायो म फली भूठी कम कण्ठी पद्धति का उग्र खण्डन कर रहे थे। इन सिद्धों ने आत्मावलम्बन से युक्त अस्तित्ववादी विचारधारा को आधार

१ कासिमगाह—हसजवाहिर, पृ० १४५

२ शिव संहिता मे पद्मासन, बीरासन, मयूरासन आदि बीरासी प्रकार के आसनों की चर्चा है।

—स० महादेव शास्त्री—योग उपनिषद् पृ० १५६

३ कुण्डलिनी शरीर के मम स्थान म, चक्र के आकार वाली सफ़ा नाडियों का आश्रय, मात्र पेष्टनिका (आंतों से घिरी हुई) नाम की एक नाडी है। उसका आकार बीणा के अग्र भाग की गोलाई जल भवर या श्रोकाराद्ध तथा कुण्डल चक्र के समान है। वह देव घमुर मनुष्य, खग जल मृग, कीटादि मे है। यह ऐसी सीढ़ी है जसे जाड़े म आत कुण्डली भार कर सपिणी।

—डा० रागेय राधव—गोरसनाय और उनका योग, पृ० ८३ ८४

दिया। निगमाशात्र, यशस्वशात्र आदि सिद्धान्तों का उद्देश्य जीवन की महत्त्व प्राप्त करना तथा आशाशात्र का उद्देश्य जीवन में सत्य भाव की पद्धति का अन्वेषण है। सिद्धा की उक्त गद्यांशों का भी प्रभाव गूढ़ी कविता पर पड़ा। सिद्धा द्वारा अपनायी गयी गुरु महिमा परम्परा गूढ़ी नायका में स्पष्ट है, नायक ही 'प्रलय तिरज' की प्रति में भी इनका ही प्रभाव है। सिद्ध-भाषना के साधन एतिहास का अतिरिक्त मन्त्र दत्त, त्रिगुण प्रभुपण इन गूढ़ियों ने नहीं किया तथा परमात्म-भाषना में वे गूढ़ी कवि नमयी या मरजिया भाव में व्यस्त रहे। नायक तथा सिद्धा के प्रभाव ने ही घन साधना में 'गुरु महारम्य' का पाठ इन गूढ़ियों पर पड़ा तथा वे गूढ़ी नायक भी गुरु या 'गौर' के प्रति मममयि हैं। रत्नावली का 'गुरुमुखा' ही इनकी प्रेम-भाषना का आधार है। सिद्ध तथा नायक साहित्य के कारण प्रभाव के ही गूढ़ी नायक आचार, विचार व्यवहार मन्त्रिया तथा आचरण से युक्त हैं। वे नायक सच्ची साधना में 'बाना' रण कर कण कण व्यापी 'परम ज्योति' की उपमा में निमग्न हो जाते हैं। यही कारण है कि कुरान में प्रतिपादित सिद्धान्त तथा भारतीय आध्यात्मिक साधना के तरंगों का रूप इन नायकों में मिलता है। बामन में इन नायकों का स्वरूप ही दाना के मम-वय से उभर कर सामान्य आता है।

इनकी नायिकाओं में ईश्वरीय भक्त तथा सौन्दर्य के दमन होते हैं। ईश्वरीय सौन्दर्य की सृष्टि नायिका है, जिसे सौन्दर्य से प्रभावित होकर ही नायक अपनी साधना आरम्भ कर देता है। सभी नायक नायिका की नूर के प्रति ही दीवाने हो कर बिगामी हो जाते हैं। कवन 'युगुप जुनेरा' का नायक ही इनका अग्रवाद प्रतीत होता है क्योंकि वह 'हूक' का प्रतीक बनाकर प्रस्तुत किया गया है। नायक का सामाजिकता से मुक्त मोड़ लेना, पारिवारिक सम्बन्धों का तोड़ देना, सम्बन्धियों के समझाने पर भी उनकी बात न मानना, नायिका की ही रट लगाना, मिह्रन की घोर योगा होकर निरन्तर पढ़ना तथा नायिका की प्राप्ति के लिए जान लगा देना प्रदर्शित किया गया है।

बौद्धधर्म के पतन के पश्चात् सिद्धा तथा नायों का सिद्धलपट तीर्थ में घन गया था। दूसरी ओर सिद्धलपट की यात्रा भारतीय साक कथाओं में भी बहुत आती है। समुद्र-यात्रा तथा मिह्रन द्वीप की सुन्दरी तथा घन को प्राप्त करना—यह कथा प्राचीन साहित्य में भी उपलब्ध होता है। संस्कृत नाटिका 'रत्नावली' में 'रत्नावली' भी सिद्ध की ही राजकुमारी बनी गयी है। प्राच्य में कौतूहल निमित्त रत्नावली कथा

१ डा० हरिवंश कोट्ट—अपभ्रंश साहित्य, पृ० ३६४

२ भारतेन्दु—रत्नावली-नाटिका, पृ० ४

३ डा० आदिनाथ प्रेमनाथ उपाधे द्वारा सम्पादित भारतीय विद्याभवन १९४६  
बम्बई से प्रकाशित रत्नावली कथा।

म लीलावती भी सिंहन की ही राजकुमारी है। अपभ्रंश में लिखित धनपाल कृत 'भविष्यत बद्धा' में समुद्र यात्रा का वर्णन है। बटवड चरित में बटवड का सिंहल जाना तथा रत्न वेग में विवाह करना भी वर्णित है। 'जिनदत्त चरित में भी नायक सिंहल की यात्रा करता है। जायसी के 'पदमावत का नायक भी जागो होकर 'सिंहलगढ़' की यात्रा करता है। आनाय रामचन्द्र शुक्ल ने भी 'सिंहलगढ़' की यात्रा का कथानक अदि ही माना है। उनका रहना है कि वहाँ के लोग बाले होते हैं तथा वहाँ पद्मिनी नायिकाओं के लिए नायक की यात्रा लोक कथा से ही सम्बन्धित जान पड़ती है।'

### निष्कर्ष

इस प्रकार हिन्दी प्रेमाख्यानकथाया में वर्णित नायक का स्वरूप अभास्तीय तथा भारतीय सत्त्वों से बना है। पारसी पद्धति की प्रेम-साधना अध्यात्म साधना तथा भारतीय बौद्ध योगजिन, 'राज-माध्यात्मक', निष्ठा, नाया, अपभ्रंश के चरित काव्यों आदि धनक प्रभावा का ग्रहण कर उनका व्यक्तित्व निर्माण किया गया है। यात्रा साधना के कारण ये भारतीयता में रम गये हैं तथा ये साधक नायक, विन्नीपन की भावना न जगा कर भारतीय नायक की ही भावना जगाते हैं। नायक के व्यक्तित्व निर्माण में उदारता का परिचय देने के कारण ही सूफी प्रेमाख्यान का अर्थ भारतीय जनता में हज़नी इयानि प्राप्त कर सका तथा जन मानस का रमान की नकिन उगम उत्पन्न हुई।

१ दे० दग घघ्याय, प० १४

२ दे० सावडी घघ्याय प० १८१

३ आदमी घघ्याय प० २६

## मध्ययुगीन सूफी प्रेमाख्यानक काव्य

हिंदी के सूफी कवियों ने लौकिक प्रेम के द्वारा अलौकिक प्रेम की चर्चा की तथा, हिंदुओं के धरा की प्रेम कहानियाँ का हिंदुओं की भाषा में कहा तथा अपने सिद्धांत का प्रचार किया। मसनवीशली में लिखे गये इन काव्यों में नायक, कथा आदि सभी दृष्टि से भारतीय प्रभारतीय तत्त्वों का सामंजस्य हो गया है। इन काव्यों में पद्मवती की वदना, खुदा की वदना, शाह बक की प्रशंसा आदि का कथारम्भ में अपनाया गया। रूपकालम्बुपद्धति से आध्यात्मिक धरातल पर एकेश्वरवाद का प्रचार है।

इस धारा में सबसे प्रथम नाम मुल्ला पंडित का 'चंदावत' या 'चंदावत' कहा जाता है लेकिन यह ग्रंथ अधूरा है। परशुराम चतुर्वेदी ने इस धारा का सबसे प्रथम ग्रंथ शेख रिजक़ुल्ला मुस्तासी रचित 'प्रमदवन आव निरजन' (सं० १५४६) को माना है। जायसी ने 'पदमावत' में स्वप्नावती, भुधावती, मृगावती, मधुमालती, प्रेमावती तथा उषा अनिरुद्ध नामक प्रेमकाव्या का संकलन दिया है।<sup>१</sup> इनमें स्वप्नावती भुधावती तथा प्रमावती आज भी अप्राप्य हैं। मन्नन कृत 'मधुमालती' प्राप्त है जिस डा० माताप्रसाद गुप्त ने प्रबल प्रेम का खण्ड-काव्य माना है। कुनुवन की 'मगावती' की खण्डित प्रति उपलब्ध हुई है। इसमें चंद्रगिरि के राजा गणपति तथा कचनागर की कुमारी मृगावती का प्रेम-वर्णन है।

इस परम्परा का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण ग्रंथ जायसी का 'पदमावत' है। सूफी काव्य-परम्परा में केवल इसे ही विद्वान प्रेममूलक महाकाव्य स्वीकार करते हैं। पदमावत की रचना के आनपास ही मन्नन की 'मधुमालती' चतुर्भुज दास की 'मधुमालती सद्यवत्मसार्वात्म्या' आदि को भी लिखा गया। 'ढाला मारु रा दूहा तथा 'छिनाई वार्ता' पदमावत के पूर्व ही लिखे जा चुके थे।

१ सूफी काव्य संग्रह पृ० ६३

२ जायसी प्रमावती पृ० १००

३ मधुमालती, पृ० १० (भूमिका भाग)

४ डा० शम्भूनाथ सिंह—हिंदी महाकाव्य का स्वरूप विकास, पृ० ४०६

स० १६७२ म रचित उसमान की चित्रावली एक सग्न रचना है। इस काव्य म चित्र दशन द्वारा नेपाल के राजकुमार मुजा तथा रूपनगर की राजकुमारी चित्रावली का प्रेम वर्णित है। नायक बीलावती नामक मुन्त्री से विवाहित हान हुए भी अपार प्रेम कष्टों को चित्रावली के लिए सहता है। कवि 'यामत क प्रमाख्यान भावसनि, कनकावली (१६७५) वामलता (१६७८) रूप मजरी (१६८५) पुष्पवरिषा (१६८५) रतनमजरी (१६८६) मधुवरमालनि रतनावति, बुद्धिसगर लता मजनु कामावली पीतमदास च द्रसेन शीलनिधि छोता (१६९४) तथा कमलावती प्रसिद्ध हैं। सभी सूफी सिद्धांतों म जकड़ो सामान्य काँटि की रचनाएँ हैं।<sup>१</sup> इस काल मे शेख नबी क 'ज्ञान-द्वीप' (स० १६७६) का अपना विशिष्ट स्थान है। इसम नमिसार क राजकुमार ज्ञानद्वीप तथा विद्यानगर की राजकुमारी दवजानी की प्रेम-कथा अपार व्यापक साथ वर्णित है। नायक हठ-योगी जागी हो भटवता तथा मिद्धि प्राप्त करता है। 'पदभावत का काफी अनुकरण इसमे किया गया है। सेवक के जगन्नामा म सूफी सिद्धान्त का प्रकाशन मान है, यह बहुत महत्वपूर्ण कृति नहीं है।

भक्ति-काल म आरम्भ हुई सूफीकाव्य परम्परा रीतिकाल म भी जागृत रही। अनेक कृतियों के सज्जन कवि जान की उनहत्तर रचनाओं का सग्रह हिंदुस्तानी एकादमी प्रयाग म है।<sup>२</sup> कवि भक्ति तथा रीतिकाल दाना का कवि है इनकी 'मलदमयती प्रसिद्ध रचना है। यह प्रजभाषा म लिखित प्रेम कहानी है। प्रीरग जेव के काल म कवि ने बेमपरगास नामक प्रेमाख्यान लिखा। हुसेन अली न पुहुपावती काव्य की रचना की। इसम काशी के मानिक चंद रूपनगर की राज कुमारी पुहुपावती के प्रेम की कथा है। स० १७६३ म कासिम ग़ाह ने एक सुंदर काव्य 'हसजवाहिर' नाम से लिखा। इसम राजकुमार हस तथा राजकुमारी जवाहर की कल्पित कथा है। यह भी रूपकात्मक काव्य है तथा पदभावत का अनुकरण है। नूर मुहम्मद नामक कवि ने 'इद्रावती' (स० १८०१) तथा 'अनुरागवासुरी' नामक दो प्रेम-काव्यों का सज्जन किया। इद्रावती म बालिजर के राजकुमार तथा आरामपुर की राजकुमारी इद्रावती के प्रेम का वर्णन है। यह भी धीरे रूपकात्मक काव्य है तथा इस्लामी प्रचार का माध्यम है। सूफी कवियों के उदार दृष्टिकोण का इसम पूर्ण लाभ है। शेख निसार न कुरान शरीफ की एक कथा 'युसुफ जुलेखा के आधार पर एक काव्य स० १८५७ मे युसुफ-जुलेखा लिखा। इसम नबी याकूब के पुत्र युसुफ तथा तमूर की कथा जुलखा के प्रेम का वर्णन है। यह भी सूफी सिद्धांतों का प्रचार मात्र ही है।

१ जायसी परवर्ती सूफी कवि और काव्य, प० ३३०-३३५

२ नागरी प्रचारिणी पत्रिका, प० १४, अंक १ स० २००६, पृष्ठ ५६

मध्यकालीन इन समस्त प्रेमाम्याना में जायसी का 'पदमावत' ही महान्नायक पद का अधिकारी ठहराया जाता है। काव्य का नायक रत्नसेन भारतीय तथा अभारतीय तत्वों से प्रेम का महान् आदर्श स्थापित करता है। वह महान् आदर्शप्रेमी है। 'पदमावत' में सूफी प्रेमाम्यानाक काव्य की सम्पूर्ण उपलब्धियाँ का विकास मिलता है। काव्य सभी सूफी-काव्यों में विखरी विशेषताओं का, इस काव्य में एक स्थान पर देख सकते हैं। यह काव्य इतिहास तथा कल्पना से बना है। इसका नायक रत्नसेन काल्पनिक तथा ऐतिहासिक नायक है। इस काव्य का पूरवाङ्क काल्पनिक तथा उत्तराङ्क ऐतिहासिक है। इस महाकाव्य के नायक पर हम अगले पन्नों में विस्तार से विचार करेंगे।

## पदमावत का महाकाव्यत्व

प्रेममार्गीशास्त्रों की प्रतिनिधि कवि मनिक् मुहम्मद जायसी के प्रख्यात काव्य 'पदमावत' का इन शास्त्रों का सर्वोत्तम काव्य माना जाता है। शुक्लजी के शब्दों में "पदमावत हिन्दी के सर्वोत्तम प्रबन्धकाव्यों में है।" प्रबन्धकाव्य में मानवीय जीवन का पूरा उद्देश्य होता है। 'उगम कथानक' की झट्ट झट्टला रमात्मकता, मशकन भावाभिव्यक्ति हानी ही चाहिए। 'पदमावत' प्रेम का विस्तार जीवन व्यापी है कथा प्रसंगा की ममस्पर्शिता अदभुत है। अतः प्रबन्धकल्पना में यह कृति बेजोड़ है। यद्यपि शुक्लजी ने प्रबन्धकाव्य 'मानकर भी इसे मनावाय नहीं कहा है। तथापि परवर्ती विद्वानों में जिनमें आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी, डॉ० रामकुमार वर्मा आदि ने इसके महाकाव्यत्व पर प्रकाश डाला है। यहाँ मनावाय की पूर्व निर्धारित कमीटी में इसके महाकाव्यत्व पर विचार करेंगे।

## व्यापक परिधिमुक्त कथानक

मानव-जीवन की सूक्ष्मवस्तुओं चट्टाओं तथा काय व्यापारों का इस काव्य में स्थान मिला है। महाकाव्य की पद्धति के अनुकूल यह नायकप्रधान कथानक का आधार बना कर लिया गया है जिसका पूरवाङ्क कल्पित तथा उत्तराङ्क ऐतिहासिक है। इस अर्द्ध ऐतिहासिक काव्य में प्रबन्धकल्पना उत्पादलावण्य का कथा गठन में विशेष महत्त्व है। जिसमें नर-नारी की मनातन कथा को अपनाया गया है। इसमें नायक रत्नसेन तथा नायिका पदमावती की जन्म से लेकर मृत्यु पयन्त तक की कथा है। जीवन के उतार चढ़ाव का नेकर जायसी ने इस कथानक का प्राणवान बनाया है। नायक सधप में ही जीता है फूँतता फूँतता है। इस जीवन-व्यापी सधप-माधना के



कारण कथानक में यथाथ बोध तथा जीवन-बोध को स्थान मिला है। जीवन का रागात्मक बोध काव्य का महान् तत्त्व है और रागात्मक बोध को ही इस प्रेम कहानी में व्यक्त किया है। 'पदमावत में एक नहीं अनक ऐसे स्थित हैं "जो मनुष्य को रागात्मिका प्रकृति का उत्त्पादन कर सकते हैं उसकें हृदय को भाव मग्न कर सकते हैं।" अतः प्रेम की जीवन्त ज्योति से जग मग्न यह कथानक, भाव बाध के कारण अपनी व्यापक परिधि रखता है।

पदमावत का कथानक खण्डो (सर्गों) में परिवर्द्ध न हान पर भी दुबल नहीं है। हाँ, जायसी की घटना विस्तार प्रवृत्ति खटकती है। वही वही खण्डो के अति लघु हो जाने से सन्तुलन बिगड़ा है। उदाहरणार्थ रत्नसन सतति खण्ड रत्नमेन साथी खण्ड अत्यन्त लघु हो गए हैं। नाममती वियोग खण्ड में भाकर कथा का दम फूल गया है, लेकिन रत्नसन तथा पदमावती की अधिकारिक कथा के साथ, राघव चेतन का वृत्तान्त हीरामन सुए का वृत्तान्त आदि प्रासंगिक कथामो में संयोजित प्रवाह भी है तथा प्रभाव भी। 'पदमावत' के कथानक में प्राचीनों के द्वारा वर्णित पंचसंघषा, अथ प्रकृतियों तथा कायावस्थाएँ नहीं मिलती हैं। इसका कारण स्पष्ट है जायसी लौकिक कथा के माध्यम से आध्यात्मिक प्रेम की सफल यजना करना चाहत थे। अतः महाकाव्य की रूढ़ियाँ की भवर में बंधे फसे नहीं सहज प्रवाह में कथात्मक सरसता लाने में वे पूर्ण समय रहे हैं। 'जो यह पढ़ कहानी हम सबरे दुइ खोल' में ही उनकी भावाविवृति निहित है। घटना प्रवाह तथा चमत्कारी स्थलों पर भी 'पदमावत' में कथाविवृति पाई जाती है।

'पदमावत' भारतीय आचार्यों की सगर्ब पद्धति का काव्य नहीं है, यह फारसिया की खण्डबद्ध पद्धति पर लिखा गया (५८) खण्डों का काव्य है। खण्ड का विभाजन करत समय कवि ने घटनात्मक-पद्धति के अनुकूल खण्डों का नामकरण किया है। जैसे जन्म खण्ड, मानस रोदन खण्ड आदि।

### गरिमा से युक्त नायक

भारतीय तथा पाश्चात्य आचार्यों का मन से नायक उच्च कुलीन, युवा तथा महान् व्यक्ति होना चाहिए। पदमावत नायिका प्रधान महाकाव्य है किन्तु नायक रत्नसन भी राजपूत का धीरोदात्त नायक है। धीरोदात्त नायक की जिस आदर्श कल्पना का विश्वनाथ तथा बागमट्ट द्वितीय ने प्रस्तुत किया है, वह यही नहीं है।

, यह प्रेम-पथ का अडिग नायक है। विपत्तियाँ के तूफानों से गुजरता है। पद्मावती लिए राज्य रानी सब कुछ छोड़ सकता है। अतः महाकाव्योचित गरिमा को यह नायक सामने लाता है। हा, लौकिक घरातल पर विचार करने पर यह नायक रूप में भी तथा कामुक ठहरता है, किन्तु जायसी न प्रतीकात्मक रूप में रत्नसेन को 'प्रेमपथ का दीवाना' चित्रित किया है, इस दृष्टि से यह अपराजेय नायक है। क्या 'समस्त कलेवर में नायक की सत्ता महत्ता है। आदर्श प्रेमी की दृष्टि से जायसी नायक उत्तम कोटि का व्यक्ति है।

## रसात्मकता

काव्य का प्राणतत्त्व या आत्मतत्त्व रस है। आचार्यों के मत से शृंगार, वीर शान्त में से कोई एक अग्रा तथा शेष अग्ररसा की महाकाव्य में याचना हो। पद्मावत में जीवन के मूल भाव 'रति' को विस्तार दिया गया है। शुक्लजी पद्मावत का अग्री रस शृंगार मानते हैं।<sup>१</sup> किन्तु डा० शम्भूनाथ मिह्र उसमें रहस्यवाद की दृष्टि से शृंगार का नहीं शांत रस को ही प्रधान मानना पड़ेगा। + + + जिस तरह सूर, मीरा, कबीर के शृंगारिक वर्णन शांत रस के अंतर्गत माने जाते हैं, उसी प्रकार पद्मावत का समान प्रभाव शांत रस समर्पित है शृंगार रस वाला नहीं।<sup>२</sup> अतः लौकिक क्या की दृष्टि से देखने पर पद्मावत में विप्रलम्भ शृंगार अग्री है और आध्यात्मिक अर्थ की दृष्टि से वह शांत रस प्रधान काव्य है। जायसी ने शांत कहा, वीर तथा शृंगार रसा की 'यचना' की है। शृंगार के संयोग तथा वियोग पक्षा में से उद्भूत विभाग के समस्पर्शी स्थला को उभारने में सफलता मिली है। 'नाममंती का वियोग' हिंदा जगत में प्रचलित है। कायन का कुटुंब कुटुंबकर रोना, पक्षी का जल जाना, वक्ष से पना का भट जाना विरह की बात के कारण ही है। अलाउद्दीन के साथ गीरा बादल के युद्ध में वीर रस का परिपाक है। फिर भी पद्मावत में शृंगार को अग्री रस न मान कर शांत को ही अग्री रस मानना चाहिए—

‘हार उठाइ लीह एक मूठी। दीह उठाइ पिरबिमी भूठी ॥’<sup>३</sup>

## उद्देश्य की अडिग ज्योति

महाकाव्य का उद्देश्य ऐसा जावत ज्योति वाला हा जो युगा युगा के मानव को नवजीवन की प्रेरणा दे सके अर्थात् प्रेरणात्मक उद्देश्य महाकाव्यों में होना ही चाहिए। जायसी न प्रेम की व्यष्टि से समष्टि तक फैलाया है। अतः इसके उद्देश्य में

१ जायसी पद्मावती, भूमिका, पृ० ६८

२ हिंदी महाकाव्य का स्वरूप विकास, पृ० ५७७

३ जायसी पद्मावती, पृ० ३००

जीवन के व्यापक सम्भार सुदृढ तथा दृढ़, जाति या विश्व मानवता की अनन्य पीढ़ियों का जीवन सत्य प्रस्तुत किया गया है। कवि आध्यात्मिक सत्यो को लौकिक कथा के माध्यम से प्रस्तुत करता है। डा० शम्भूनाथ सिंह ने ठीक कहा है कि 'अत उत्तमा उद्देश्य व्यापक और उदार मानवता का प्रसार और मानव हृदय का विस्तार और परिष्कार करना है।' यह कहना अधिक सगत है कि प्रेम के समुत्पन्न स सधप के विष को समाप्त करने की शक्ति तथा पारलौकिक जीवन का अन्तिम सिद्धि प्राप्त करना हा हम आध्यात्मिक का य का उद्देश्य है।

### अभिव्यजना मे असीम शक्ति

महाकाव्य का अभिव्यजना शिल्प अत्यधिक समय होना चाहिए। जायसी ने फारसी की मसनवी पद्धति पर इस काव्य को लिखा है। जायसी अवधी के दक्ष कवि थे। लोककथा को लोकवाणी में कहना प्रभावशाली बन गया है। देशज, तदभव, ठेठ भाषा के घुल मिल शब्द लोकोक्तिया तथा मुहावरों के कारण अभिव्यजना में सहज अभिव्यक्ति की बला फूट पड़ी है। अभिव्यक्ति साफ तथा शब्द चयन बजाड है। इनकी अभिव्यजना में ताजें गुड की मिठास तथा सुगंध है। वस्तु वर्णन, व्याह, पर्वान-वर्णन, रूप वर्णन वधा-वर्णन, अतिप्राकृत कहानियाँ व वर्णन में यह अभिव्यक्ति फूली नहीं है, एवदम बसावदार है। प्रलकारी में भाव का प्राणों को प्राकृतिक शक्ति देने की बला है। प्रेममार्गी शाखा में अनुभूति तथा अभिव्यक्ति दोनों पक्षा में जायसी अपने ढंग के टकनोशियन हैं। मधुर तथा विराट शला के दाता रूप बड प्रभावशाली तथा गत्यात्मक है। प्रातःकाल की तालिमा में भरा हुआ प्रकाश जो शोभा पाता है वही शाभा जायसी की कथा में उनका अभिव्यजना शिल्प पाता है।

'पद्यावत का विशालकाय आकार तथा वर्णन विस्तार भी उदात्त काव्यत्व के कारण सुरजिपूर्ण है। कवि ने लौकिक कथा में साकेतिक पद्धति का अपनाकर भावतत्त्व का सौ दय विस्तार किया है। भावतत्त्व का यह सौ दय विस्तार हम चाह शब्दों द्वारा अभिव्यक्ति न कर सकें, लकिन पद्यावत पडते समय उसका अनुभव अवश्य करते हैं। अनुभूति का सम्प्रपणालता पद्यावत के काव्यत्व का निवारती है। चित्रमय विम्बा को उभारने की जायसी की आदत है, पद्यावतों के रूप वर्णन में का सिमार चाहिए का अनूठा महत्त्व है। दाशनिक् कठारता को का य का सहजता में लज्ज, दया, कवि को आता है। प्रेम पहर वर्णन में कवि का प्रतिपादन में जायसी की बला बडा जीवत है। आध्यात्मिक अनुभूतिया का ममस्पर्शी चित्रण विचारों की उदारता तथा जावन व सांस्कृतिक रूप का लाने के कारण 'पद्यावत का काव्यत्व महाकाव्यान्वित है।

अतः 'पद्मावत' में एक सफल महाकाव्य के सभी तत्व अनायास ही उपलब्ध हैं। हाँ, भारतीय आचार्यों की परिगणना के अनुसार चाहे उसमें कुछ दाप हो लेकिन पाश्चात्य दृष्टि से समन्वय तथा फारसी की महाकाव्यात्मक पद्धति (मसनवी) को ध्यान में रखने से इस महाकाव्य कहने में कोई मकोच नहीं होगा। जीवन की वृत्ति 'काम' मगल मंडित हावर यहाँ विराजमान है। जीवन एक भ्रमयुक्त सपना है, इसमें हम शाश्वत सत्य की अभिवृत्ति भी है। कथात्मक अवृत्ति, भाववृत्ति जीवन बाध, नवीन मानवमूल्य, काव्यत्व, उद्देश्य की गरिमा सभी इस बात के प्रमाण हैं कि पद्मावत हिंदी जगत का अमर महाकाव्य है।

## 'पद्मावत' का नायक

### कथा का सूत्रधार

महाकाव्य का नायक कथा का मेरुदण्ड होता है। नायक के महत्कर्मों का प्रतिफल ही कथा है। कथा का समस्त घटना चक्र नायक के चारों ओर ही घूमता है। देश विदेश के सभी आचार्य प्रायः इस मत से सहमत हैं कि महाकाव्य का नेता हाँ कथा में भव्यता उदात्तता, जीवन्त प्राणवृत्ता तथा महत्ता को जन्म देता है। इस दृष्टि से 'पद्मावत' की समस्त कथा रत्नसेन एवं पद्मावती पर आधारित है। सूफी काव्य में नायिका को शाश्वत सौंदर्य तथा परम-सत्ता का प्रतिनिधि माना जाता है उस दृष्टि से कवि ने इस काव्य को नायिका प्रधान बना लिया है, तथा कथा का नामकरण भी 'नायिका' के नाम पर ही किया है। वस भी सूफी प्रेमार्यान्क काव्या में 'नायिका' के नाम पर ही काव्य के नामकरण की परम्परा—मृगवती, मधुमालती बिनावती आदि से प्रकट होती है। 'फारसी' में नायिका का नाम नायक से पहिले ही आता है, जैसे श्रीरी परिहाद, लता मजनू आदि। इस नामकरण का कारण 'नायिका' की दिव्य सत्ता के ही कारण है। परन्तु इस दिव्य सत्ता का द्वार आकृष्ट होने वाला साधक या नायक ही है।

'पद्मावत' का कथा मान रत्नसेन पर ही नहीं टिकी है उसमें पद्मावती की प्रधानता है। लम्बिन पद्मावती तथा नागमती दोनों का आधार रत्नसेन ही है। वह दोनों छारी की गम्हाले रहता है। नागमती धरती का आदेश है तथा पद्मावती, आध्यात्म लोक का आदर्श। रत्नसेन दोनों को ही अतः समय तक अपनाता है। 'पद्मावती' का प्राप्त करने के लिए रत्नसेन प्रत्येक कठिनाई को सहज बनाता रहता है। विपत्ति के भीषण प्रहार से टकराने वाला व्यक्ति रत्नसेन ही है। समस्त कथा को गति देने का कार्य वही करता है।

इस प्रेम-कथा में राजकुमार तथा राजकुमारी का प्रेम साधारण रूप में नहीं

है, असाधारण है। कवि कथा से प्रेम साधना का सद्भ जोड़ देता है तथा 'इश्वर मजाजी' और 'इश्वर हकीमी' दोनों को साथ लेकर चलने के कारण कथा सूफी सिद्धांतों का स्पष्ट करने का माध्यम बन जाती है। चित्तौड़ के राजा चित्रसेन के पुत्र रत्नसेन का जन्म ही प्रेम पथ का धीर साधक बनने के लिए होता है। ज्योति पियो की भविष्यवाणी तथा 'गुरु सुभा हीरामन के द्वारा पद्मावती के 'फारसी रूप' का अद्भुत वर्णन सुनकर राजा के मन में 'प्रेम पीर' उठने लगती है, इस प्रेम दाध स्थल से ही कथा का आरम्भ हो जाता है।

### कथात्मक विकास की सरणिषा

कवि ने इस प्रेम कथा का अनेक अद्भुत मोड़ों, साव-कथाओं का तत्त्वोच्चात्मिक संकेता, प्रतीकों द्वारा व्यंजित किया है। सूफी साधक जिस अनेक विघ्न बाधाओं से टकराते, जूझते, प्राणों का मोह त्याग कर एकनिष्ठता के साथ परम सत्ता की ओर लगातार बढ़ते हैं वैसे ही जायसी ने रत्नसेन को चित्रित किया है। विघ्न-बाधाओं का प्रेम पथ के पुष्प समझ कर उन पर चलन वाला असाधारण जीव का पात्र रत्नसेन ही है। वास्तव में विघ्नों के दुग्म तथा को पार करने की कथा ही 'पद्मावत' है। सभी ओर से मुह मोड़ कर, परमात्मा रूपी प्रियतमा में चित्त को दृढ़ता से लगा देने का भाव रत्नसेन में आरम्भ से अंत तक मिलता है। राज्य का माह नहीं माता, पत्नी की चिंता नहीं सम्बंधा, कुटुम्बिका का समझाने का असर नहीं हीरामन द्वारा प्रेम पथ की काल पथ बहने पर भी प्राणों की परवाह नहीं जोगी बनकर कथा पहिने में हिचक नहीं पायसी द्वारा अप्सरा बनकर परीक्षा क्षेत्र पर भी असफल नहीं सात समुद्रों की भयंकर तरंगों से मन में कोई कम्पन नहीं, मूर्ती पर चढ़ने में भी कोई हज नहीं। केवल पद्मावती के नाम की रत्न में ही जीवन की साधकता है। अपनी धुन में रमन का पूरा भाव है।

पद्मावत की कथा में रत्नसेन की लगन ही निराखी है। 'फारसी' कथा में पात्र वस्त्र फाड़ता, पहाड़ खादता प्रेम बिरह में जल जल कर मरता दिखाया गया है। जायसी ने रत्नसेन को मुसीबतों के कठोर से-कठोर प्रतिघात भी सहन दिखाया है तथा प्रिया से रमण करते हुए भी प्रदर्शित किया है। वियोग याग तथा भोग फिर भोग से चिर वियोग की ओर चित्रित किया है। फारसी तथा हिंदी कथानकों में पर्याप्त अंतर पट गया है।

जायसी ने पद्मावती का रूप-वर्णन करते समय विश्व शांति की एक सार कर दिया है फिर हीरामन द्वारा राजा के समक्ष उसके रूप का वर्णन बड़ी विमर्शता से है। पद्मावती के नख शिखर-वर्णन में कथाकार थकना जानता ही नहीं। ऐसा दिव्य रूप से रत्नसेन प्रभावित होता है तथा उसे प्राप्त करने के लिए निराल

पड़ता है। समुद्रों को पार करना है, गड पग चढ़ाई करता है, बंदी बनाया जाता है शूली पर चढ़ाने की तयारा होती है, दिव्य शक्तियाँ सहायता करती हैं, हीरामन भी सहायता करता है अंत में विवाह हो जाता है। कथा में रत्नसेन का भोग, एक पत्नी द्वारा अपनी पूर्वपत्नी की विरह कथा सुनकर वापस होना, माग में जहाज डूबना, प्रेम परीक्षा होना चित्तोड आना आदि कथा के भाग हैं।

रत्नसेन यहाँ भी सुख से रह नहीं पाता। अचानक राघवचैतन को दश निकाला होता है। राघव अलाउद्दीन को पदमारुती के रूप-वर्णन से वासना विबल पगु-सा बना देता है। अलाउद्दीन का पदमारुती को प्राप्त करने की आश्रमण, राजा द्वारा युद्ध, दोनों में सलाह, अलाउद्दीन द्वारा कूटनीति की चाल तथा राजा पुन बंदी हो जाता है। जेल के अपार कष्ट भेसता है। 'पदमारुती' गारा-बादल की सहायता से उसे मुक्त करती है, तथा देवपाल नामक राजा की बाली करतूत बताती है। रत्नसेन-देवपाल युद्ध तथा युद्ध में देवपाल का वध, आहत होने से स्वयं की मृत्यु तथा पत्नियाँ का सर्ती हो जाना। सम्पूर्ण कथा में रत्नसेन ही जूमता रहा है। जन्म से लेकर मृत्यु पर्यंत वह कथा की आगे बढ़ता रहा है। उसके ही प्रयामों से कथा बनी है और उसकी सास रक्ते ही कवि ने कथा को समाप्त कर दिया है। ऐसा लगता है कि जायसा ने कथा के इस प्राणवान मूत्रधार का ही उदघाटन किया है जिसमें सभी पात्र आते रह हैं। गौरा बाल कथा के बीच में आते हैं राघव चैतन तथा अलाउद्दीन भी अपनी दुष्टता का आरम्भ कथा के मध्य ही करते हैं। कथा को आरम्भ से अंत तक ले जाना वाला रत्नसेन ही है। अंत कथा का प्राण वान मूत्रधार होने के कारण उसे नायक कहना उचित ही है।

### महत्त्वपूर्ण व्यक्ति

महाकाव्य का नायक शाश्वत महत्त्व का व्यक्ति होना चाहिए। इस कसौटी पर रत्नसेन का बसने से स्पष्ट हो जाता है, प्रेम-योग की साधना में वह अमर चरित्र चित्रित किया गया है। इतिहास में चित्तोड का राजा रत्नसेन बड़ा ही सामान्य चरित्र है लेकिन जायसा ने अपनी कल्पना के द्वारा उसे 'प्रेम-पथ' का अपराजेय योद्धा बना दिया है। मूफिया के मत से परमात्मा का कोई रूप है, तो वह प्रेम ही है। गजाला ने सम्पूर्ण मौ-दय सत्ता ईश्वर को ही ब्रह्मा है। इस विराट मो-दय की ओर झुकने वाला साधक स्वयं ही अमर बन जाता है। जायसी ने रत्नसेन को प्रेम माग की चार भजिलें तथा सप्त सोपानों पर सफलता से गुजरते दिखाया है। दिव्य प्रेम में मस्ताना बनाकर उसमें दिव्यता का फूँक दिया है। उसके आदर्श प्रेम से शिव-

१ ए० एम० ए० नास्त्री—आउट लाइंस आंव इस्तामिक कल्चर, प० ३१

२ मागरेट स्मिथ—अलगजाली दि मिस्टिक, पृ० १०९

पावती द्रवित हो गयी हैं, तथा बन्धी बन्धी तथा बन्धी भाट बन कर उसको राह दिखाते हैं। हीरामन राजा के प्रेम मम को समझ कर उस राह दिखाता है। मौत को भी प्रेम से राजा जीत लेता है। प्रेम-तोष का यह यात्री भी ३० माताप्रसाद गुप्त के मत से धरती का सर्वाधिक निमल रत्न है—

मूर परससा भएउ निरीरा । किरिन जामि उपजा नग हीरा ॥

तहि ते अधिक पदारथ करा । रतनजोक उपजा निरमरा ॥<sup>१</sup>

ससार में उसकी बराबरी कोई नहीं कर सकता। राजा अपने प्राणों की धाजी लगाकर पद्मावती को प्राप्त करता है तथा पावती और लक्ष्मी द्वारा परीक्षण लिए जान पर मग्न हो जाता है। पावती परीक्षा लेने के बाद बहती है—

निस्व यह मोहि कारन तथा । परिमल प्रेम न आछ दया ।

निस्व पेम पीर यह जागा । बसत बसीटी कचन लागा ॥<sup>२</sup>

जायसी ने मनुष्य में प्रेम को ही वैकुण्ठी तत्त्व स्वीकार किया है नहीं तो मुठठी भर राख ना मानव क्या था ?<sup>३</sup> प्रेम की इस शाश्वत उपासना के कारण ही रत्नसेन शाश्वत महत्त्व का व्यक्ति मिद्ध होता है। जिस अर्थ में भारतीय सांस्कृतिक चेतना के नायक राम तथा कृष्ण को शाश्वत महत्त्व वाला व्यक्ति कहा जाता है उस अर्थ में रत्नसेन का शाश्वत महत्त्व का व्यक्ति मानने का तात्पर्य नहीं है क्योंकि वहाँ कवियों की दृष्टि ही और थी। तुलसी के राम आदर्शों की प्रतिष्ठा के कारण अमर नायक हैं लेकिन जायसी का रत्नसेन प्रेम साधना का मिद्ध साधक होने के कारण अमर व्यक्ति है। वास्तव में रत्नसेन के माध्यम से जायसी ने प्रेम के अमरत्व को ही प्रतिष्ठित किया है। प्रेम के इस अमरत्व की प्रतिष्ठा करने वाला आज भी अमर है।

### अलौकिक सौंदर्य की अनुभूति से नायक ने उद्वेग

शाश्वत प्रेम और सौंदर्य का कोश तो ईश्वर हा है। जायसा ने परमब्रह्म के उसी रूप का 'हस्त और हार' का पद्यावता में एवबित किया है। जन्म से ही वह अद्भुत और अलौकिक ज्योति इस प्रकार है—

प्रपम सा जाति गगन निरमई । पुनि सा पिता माथ मति भई ॥

पुनि वह जति मातु घट आई । तेहा मोदर भादर बहु पाई ॥

जस अवधान पूर हाइ मासू । दिनदिन हिये होई परमासू ॥

जस भवन मह छिय न दायो । तम उजियार दिसाव हीयो ॥

१ पदमावत—दो० ५२ (स० माताप्रसाद गुप्त)

२ वही, दो० २११

३ वही, दो० १६६

सान मंदिर सवारहि श्री चंदन सय तीप ।

दिया जो मनि सिवनाक मह उपजा सिषल दीप ॥<sup>१</sup>

शिवलोक की इस मणि का अवतार जायसी ने सिंहल द्वीप में दिखाया है ।

जन्म से ही उसका प्रकाश भूय तथा चन्द्रमा से भी बल्कर था ।

जानहु गुरुत्र किरिन हूति बानी । सूख-बला घाटि, वह बानी ॥

मानिमि मह दिनकर परगामू । सब उजियार भएउ बबिलामू ॥

इने रूप मूरति परगटी । पुनौ समी छीन होइ घटी ॥

घटतहि घटत अमावस भई । दिन दुइ साज गाडि भुइ गई ॥

पुनि जौ उठी दुइजि होइ नई । निइ बलर ससि विधि निरमई ॥

पदुम गध बेघा जग बासा । मकर पतग भए चहु पासा ॥

अतैं रूप भइ कया जेहि सरि पून न काई ।

धनि मा इस रूपबता जहा जनम अस हाई ॥<sup>२</sup>

उमने राजमहल को शिव लोक बना दिया । द्वितीया का चन्द्रमा उसके रूप से पराजित होकर द्विषने लगा । उसकी कमल-नाथ दमो दिशामा में व्याप्त हो गई—

मूर परम मा भएउ विरीरा । किरिन जामि उपजा नभ हीरा ॥

+ + + +

रामा घाइ अजोध्या उपन लछन बतीसो सग ।

रावन रूप सौ भूलिहि दीपक अस पतग ॥<sup>३</sup>

पद्मावती के बड़े होने पर जट चेतन उसके रूप से विमाहित होने लगा । 'मान मरावर उसके रूप पर अपार मुग्ध है—

मरवर रूप विमोहा हिए हिलार करेइ ।

पाय छुअइ मकु पावौ तेहि भिमु सहरे देइ ॥<sup>४</sup>

मानमरावर का जल उसके स्पर्श में सुगन्धित हो गया । वह शीतल हो गया तथा उसकी दाढ़क उष्मा समाप्त हो गयी । जिस जिसने पद्मावती के उस दिव्य रूप का पान किया उसमें अदभुत परिवर्तन हुए—

विगमे कृमुद देखि समि रेखा । मठहि आप जहा जोइ देखा ॥

पावा रूप रूप जग चहा । ससि मुख जनु दरपन होइ रहा ॥

१ जायसी प्रेमावली, जन्म खण्ड, पृष्ठ १९

२ वही पृष्ठ १९

३ वही पृष्ठ १९ २०

४ वही, मानसरोदक खण्ड, पृष्ठ २४



नयन जो देता कमल भा निरमल नीर सरीर ।

हसत जो देखा हम भा दसन जोति नग हीर ॥<sup>१</sup>

इस अपार रूपा का नाम लेकर ही हीरामन नागमती को उसके परो की धूल कहता है । राजा के पूछने पर वह कहता है—

पद्मावति राजा के बारा । पदुम ग घ ससि बिधि श्रीतारी ।

ससि मुख अग मलयगिरि रानी । पनक सुगन्ध दुआदस बानी ॥<sup>२</sup>

हीरामन राजा के समक्ष उसका रूप वर्णन करता हुआ चक्का नहा । उसके रूप का और कोई है ही नहीं—

उमरत सूर जस देखिये चाद छप तेहि धूप ।

ऐसे सब जाहि छवि, पद्मावती के रूप ॥<sup>३</sup>

यह अदभुत रूप राजा के चित्त में चित्र की तरह चिपट जाता है । तीन लोक तथा चौदह साका का समस्त रहस्य उसे स्पष्ट हो गया तथा पद्मावती के लिए प्रेम नामक आकार शब्द उसमें कूटन लगा । हीरामन वही पर राजा को 'प्रेम' का नाम लेकर बहुकने से रोगता है तथा प्रेम पथ की कठिनाइया की समझाता है—

पेम मुनत मन भूषु न राजा । बठिन पेम सिर देइ तो छाजा ॥

पेम पाद जो परा न छूटा । जाइ दी ह बहु पाद न टूटा ॥<sup>४</sup>

लेकिन राजा 'हुइ जग तरा पेम जेइ सेला' <sup>५</sup> कह कर अपनी साधना का आरम्भ कर देता है । पद्मावती रत्नसेन के लिए सामान्य नारा नहीं है, वह उसमें बिराट सत्ता का दर्शन करता है । वह उसके रक्त की बूद बूद में रमी हुई है । रोम रोम में बहा बसी हुई है । हाड हाड में उसका शब्द है नस नस में उमरी ही ध्वनि है ।<sup>६</sup> इस ईश्वरीय ज्योति को प्राप्त करने के लिए रत्नसेन सब कुछ त्याग देता है तथा भक्त बन कर उसने ही नाम का जाप करता है । सूफी साधक परमात्मा के प्रत्यक्ष सौंदर्य की खर्चा करते हुए जगत में जड़ चेतन के रूप को उसा का रूप मानते हैं । जगत के दण्ड में उस भलीबिक सौंदर्य की प्रतिच्छाया देखकर वह उस पर मुग्ध हो जाता है । पद्मावती का यह बिराट सौंदर्य ही नीयन का प्रेरणा है । इस प्रेरणा से बलीभूत होकर ही वह मोन ॥ टकराने की तयार है । अतः (आत्मा) रत्नमन उम

१ जायसी पद्मावती—मानसरोदक स्रष्टा, पृष्ठ २५

२ वही—राजा मुघा सबाद-स्रष्टा, पृष्ठ ३८

३ वही पृष्ठ ३९

४ वही, पृष्ठ ३०

५ वही, पृष्ठ ३९

६ ३१० "यामनोहर पाण्डेय—मध्ययुगीन प्रेमाख्यान, पृष्ठ २०१

अलौकिक (परमात्मा) पद्मावती से मिलन के लिए ही उद्वेग शील है। प्रेम सष्टि का मूल है, इस भाव का वशिष्ट्य हो उसे अमरत्व की ओर ले जाता है।

### प्रेम में उदात्त वृत्ति की पराकाष्ठा

रत्नसेन प्रेम का उदात्त रूप है। वैसे सुफियों ने प्रेमवृत्ति का असीम विस्तार किया तथा प्रेम और ईश्वर का पर्यायवाची स्वीकार किया है। जायसी ने भी मानुस पम भएउ बकठी। नाहिन काह छार एक मूठी<sup>१</sup> के प्रश्न को प्रेम की अमरता से पुष्ट किया है। प्रेम में विरह मिलन का संयोग अनूव है। रत्नसेन प्रेम-मय को 'ब्रह्म-मय' मानता है। वह प्रेम को सर्वस्व मानकर अपना भाव विस्तार करता है तथा प्रेम-लोक के लिए प्रेम-योग करता है। 'प्रेम दशा भाव-योग की दशा है इसी-लिए अपने प्रेम को व्यक्त करने या उसके आधार पर जगत के प्रति अपने जीवन के अनुराग को प्रदर्शित करने में हृदय को जो उत्साह मिलता है, वह दूसरी स्थिति में नहीं।'<sup>२</sup> इस प्रकार प्रेम हृदय की विशदता को सामने लाता है। रत्नसेन प्रेम सागर का अमर 'मरजिया' है। यही कारण है कि वह पद्मावती के प्रेम-सागर में अपने को निमग्न कर लेता है। वह मात्र हमारे चित्त को आकर्षित ही नहीं करता, हमारे चित्त का उत्कर्ष भी करता है।<sup>३</sup> प्रेम की इस ब्रह्ममय उत्पत्ता के कारण ही उसमें लोकोत्तर उदात्तता उत्पन्न हो गयी है। डा० आमप्रकाश ने इसी कारण रत्नसेन को प्रेम-पगम्बर माना है। उनके शब्दों में 'रत्नसेन पगम्बर का प्रतिनिधि सूफी गुरु (या स्वयं पगम्बर है। सोलह सहस्र राजकुमार उसके अनुयायी हैं जो उसके रास्ते पर ईमान लाते हैं। समुद्र का किनारा ही इश्क का आरम्भ है माग के मात समुद्र नाना प्रकार की यातनाएँ हैं। अतः मसिहल का सुख स्वर्ग भाग है पावती बीबी फातिमा जान पड़ती है, क्योंकि उही की दया से सब का उद्धार होता है तोते का वचन कुरान का उपदेश था।'<sup>४</sup> जायसी ने प्रेम को हल्के धरातल पर प्रस्तुत नहीं किया।

उनके प्रेम निरूपण में 'मुक्त अल्प तथा दुःख की भरमार है। नायक की स्थान-स्थान पर परीक्षा है, कदम-कदम पर गिराई है तथा मुसावता के हिमालय उसके सामने न जाने कितने खड हैं। उसे समुद्र पार करने हैं उनके भयकर जीवा से बचना है तथा माग की प्रत्यक्ष बाधा का सामना भी करना है। प्रेम नायक का विलास नहीं बन सका है प्रेम नायक का जीवन है, उसके सधप की साधना है।

१ जायसी पद्मावती—महापयमन खण्ड, पं० ७१

२ लदमीनारायण मिश्र 'शुधा'—जीवन के तत्व और काव्य सिद्धान्त।

३ 'साहित्य' (पत्रिका) १९५५, पृष्ठ ९, ले० प्रो० जगदीश पाण्डेय।

४ डा० आमप्रकाश—हिन्दी काव्य और उसका सौंदर्य, पृष्ठ ६०



उस परमरम्य निधि को प्राप्त करने के लिए वह अपने उदात्त प्रेम का परिचय देता है।

## प्रेम माग मे मृत्युञ्जयी

इस प्रेम पथ में वह मृत्युञ्जयी है। सूरियो की अपनी धारणा में 'प्रेम-पथ' 'मसूर-पथ' है। उसमें पग पग पर कठिनाइयों का होना अपेक्षित है। वह जब तक अपना तादात्म्य (पना) नहीं कर लेनी है उसे अपार बेचनी रहती है। मजनु फिर हा' की यातनाएँ इसका उदाहरण हैं। 'पदमावत' का नायक भी मुमीवता के पहाड़ से गुजरा है। गुरु सुभा उन कठिनाइयों का विस्तार से वर्णन करता है—

पम मुनत मन भूल न राजा । कठिन पम, सिर, सिरदह जी छाजा ॥

पम फाद जा परा न छूटा । जीठ दीह प फाद न दूटा ॥<sup>१</sup>

'पदमावत' में सुग्गा सौंदर्य ब्रह्म पद्मावती के रूप का खुल कर वर्णन करता है। वह नागमती के सौंदर्य को सराहन में समथ नहीं है, क्योंकि उसने क्षितिज तलसार रूपा' पदमावती को देखा है। वह जब राजा का पदमावती के रूप में अपने वर्णन द्वारा ल जाता है तो विस्मय, आश्चर्य और जिज्ञासा को ज में देता है। रूप-वर्णन करने से पूर्व ही वह का सिंगार ओहि बरनी राजा । ओहिक सिंगार ओहिक को छाजा' कह कर अपनी बाणों की अममथता प्रकट करता है। रूप वर्णन करते समय वह थकता छवता नहीं नरतय में जीता है। राजा अपनी अत प्रेरणा से उस रूप का आत्म साक्षात्कार करता है तथा उसके विरह की तड़पन एवं रटन में ही आत्म लाभ करता है। उस परम सौंदर्य शक्ति रूपा के लिए अपने को पूर्ण समर्पित करना तथा अपने को तदावार कर लेना उसकी अकथ साधना का परिणाम है। सौंदर्य जिम साधना की अपेक्षा करता है वह इस साधक में पर्याप्त है। यह प्रेमी वाचसता, बहक या दियावे का मुखौटा नहीं लगाय है उसमें प्रेम का अमा धारणत्व तथा 'दिव्यत्व' स्पष्ट भवता है। इसी साधना में वह नायक-यी हठयागी बन गया है। 'इस साधना में हठयाग की अनेक नियाझा का प्रताकात्मक वर्णन कवियों ने किया है। अत में साधक अपने सक्षय तक पहुँच कर अपने प्रिय अथवा उस सत्ता का साक्षात्कार कर सता है जिस के लिए वह असीम व्याकुलता लेकर चला था।<sup>२</sup> अपना इस अटूट एवं अमीम जगन के कारण ही उसकी मो-दर्यामिक्ति, दियासक्ति बन गई है और वह मच्चा मो-दय-योगी मिट्ट हुआ है।

## नायक मे सौ दर्यासक्ति

रत्नसेन नायिका पदमावती में विराट सत्ता का सौंदर्य प्राप्त करता है।

१ जायसी प्रभावती—राजा सुभा सम्वाद खण्ड, पृ० ३९

२ ब्रजकिशोर मिश्र—अवध के प्रमुख कवि, पृ० ९५

यह सामान्य नारी नही है, उसमें अद्भुत तथा अनीति तत्त्वों की प्रधानता है। इस सौन्दर्य-केन्द्र का आधार पद्मावती का रूप वागनात्मक नहीं है। नाथों तो निमग्न मन से उधर उधर होता है। उसकी प्रत्येक तड़पन में ईश्वर का स्मृति है तथा प्रत्येक प्रयास में उस अद्भुत स्वरूप को पान का आग्रह है। उसका प्रयास स्वतन्त्रता से सूर्यना की ओर बढ़ता है। मन की निमग्नता ही उसका पाप है। जायसी न शरीरात्मिक को प्रेम भागता प्रयत्न कठिनता मानता है। प्रेम का यह भाग दुःख तथा अतिशय ऊँचा है—

एक नष्टि सौ जाइ पड़वा । प्रेम अन्तिम नग्न सौ ऊँचा ॥

धुव तैं ऊँच पेम धुव उवा । सिर द पाउ दइ सौ छुवा ॥

तुम राजा हो सुतिमा करहु राज सुग भोग ।

एहि र पथ सो पहुँच सहे जो दुख नियोग ॥<sup>१</sup>

यह प्रेम ही सच कुछ है लकिन यह प्रेम सौ दय से ही जन्मता है। यह प्रेम सौन्दर्य साधक को साधना की उच्च भूमि पर पहुँचने का माध्यम है तथा इस प्रेम से लौकिक तथा अलौकिक सिद्धियाँ में सफलता तथा भक्ति मुक्ति प्राप्त होती है। प्रेम ही पृथ्वीतल का सौन्दर्य है। इस सौन्दर्य के लिए जिनमें गपना जीवन नहीं शिवा उसका जीवन निष्पन्न है—

अलेहि पेम है नठिन दुहला । दुइजग तरा यम जेइ नेना ॥

दुख भीतर जा पेम मधु रासा । जग नहि मग्न सहे जो बासा ॥

जो नहि सोस पेम पयलावा । सो प्रियमी मह पाहेक भावा ? ॥<sup>२</sup>

समस्त सृष्टि में विसर्ग हुआ सौन्दर्य का सागर प्रेम का ही रूप है। तीन लोक, चौदह खण्डों में जायसी न प्रेम के अतिरिक्त और कुछ स्वीकार ही नहीं करता है।<sup>३</sup> पद्मावती वही सौ दय है जो अपने रूप से सबको व्याप्त है। राजा में पद्मावती के प्रति भाव सौन्दर्यासक्ति ही है।

## दृढ़ आत्म-शक्ति

प्राच्य एवं पाश्चात्य आचार्य इस तथ्य से पूर्णतः सहमत हैं कि महान् काव्य या महाकाव्य का नामक अपराजेय आत्म शक्ति से युक्त व्यक्तित्ववान् चरित्र होना चाहिए। जो चरित्र सधय की धार में टिकता नहीं है वह दुबल एवं असहनीय है एवं जो चरित्र सधय की प्रत्येक चुनौती का स्वीकारता है तथा सफल होता है वह निश्चय ही अपार जीवन्त वाता प्रमर चरित्र होता है और उसे ही महाकाव्य का

१ जायसी प्र यात्रली—प्रेम खण्ड, प० ५०

२ वही राजा सुभा सवाद खण्ड, प० ४०

३ वही, प० ३९

प्राप्त होना चाहिए। परिस्थितियों के सघर्ष 'यूह' में वह मलिन न पड़े, चमक उठे या अपने प्रकाश से औरों को भी अभिभूत कर दे। इस प्रकार नायक की 'आत्म' त्तिक उसके चरित्र का आत्म-तत्त्व है। इस दृष्टि से विचार करने पर जायसी का तत्सेन मध्ययुगीन वाक्य-नायकों में एक विशिष्ट महत्त्व का अधिकारी है। प्रेम का अर्थ वैसे भी तेज धार का पथ है और उसमें अपार संकट हो, ता जीवन ही जाता है। जायसी के नायक में प्रेम की साधना के रूप में लिया है तथा कष्टों का भी याचना नहीं माना है।

### प्रेम सागर का अमर मरजिया

प्रेम समुद्र में डूब कर उसने अपने को डूबाया या छिपाया नहीं, उसकी आत्मा में छिप रहने का लेकर ही सास सा है। राजा की प्रेमी बनता हुआ दखकर हीरामन ने 'प्रेम-पथ' की अपरिमित यातनाओं का धुमाधार वणन किया है। सामान्य प्रेमी होता तो वहाँ पर अपना मत परिवर्तित कर देता, लेकिन रत्नसेन को कष्टों की चिन्ता नहीं। प्रेमिका के लिए सबस्व त्याग कर अपार कष्टों का चुनौती भेलेने वाला नायक में रत्नसेन मूढ-य है। वह कठिनाइयों के प्रलय में मनु है, जो बहुत सहता है। अपनी साधना में हिमानय मा अडिग है और अपना प्रेमिका का एकनिष्ठ, निश्चल योगी राजकुमार है। पग पग पर उसके प्रेम की परीक्षा है तथा उसके परीक्षकों में देवता दानव मनुष्य और पक्षी समुद्र आदि सभी हैं—शिव पावती उसके प्रेम की परीक्षा लेते हैं तथा उनकी प्रेम साधना से मदगद होकर उसे 'शिव गाटिका' दत्त हैं। तोता विष्णो के वणन कर मसूर आदि साधकों के उदाहरण द्वारा पराक्षा लेता है। समुद्र, दानव सभी उसे परमत्त है। राजा के समान हीरामन ने प्रेम सागर की कठिनाइयों का विशद सकेत दिया है—

सुए बहा मन बूझहु राजा । करव पिरित कठिन है काजा ॥  
तुम गता जइ घर पोई । बबल न मनेउ, मेतेउ काई ॥  
जानहि भीर जी जेहि पथ लूटे । जाउ जाहू ओ दिऐ न छूटे ॥  
कठिन आहि सिपल कर राजू । पाइय नाहि जूझ कर साजू ॥  
आटि पथ जाहि जो हाद उदामी । जोगी जती, तथा सयासी ॥  
भाग किए जो पावत भागू । लजि सा भोग कोद करत न जोगू ॥  
तुम राजा चाहहु मुग पावा । भागहि जोग करत नहि भावा ॥  
साधहु सिद्धि न पाइय जो लगी सध न ताप ॥

सो प जान बापु रा नर जो सास बलाप ॥१॥'

पथ अग्रगम, दुगम घाटियाँ, विपथ गढ़ है, उसमें पक्षी नहीं जा सकता, चीटी

नहीं बढ सकती । पग पग पर बिघ्ना के सिंह मुह ग्याले गडे है । प्रेम म योग की चर्चा करने से भी सिद्धि नहीं है । सिद्धि तो साधना म अपने कम पाग की लगा देने म है—

कामा जोग कयन क कये । निरुस छिठ न बिना दधि मये ॥  
जो लाई आप हराय न बाई । तो लहि हरत पाव न मोई ॥  
पग पहार नठिन बिधि गडा । साप चढ जो मिर न चढा ॥  
पय मूरि कै उठा अकूरु । चाप चढ, की चढ ममूर ॥  
तू राजा का पहिरसि क्या । तेरे घरहि माफ दस पया ॥  
काम, क्रोध, तिस्ता, मद माया । पाचौं चोर न छाडहि बाया ॥  
नवो सिध तिह क दिठियापारा । घर भूसहि निसि की उगियारा ॥  
धबहु जाग अजाना, होत आव निसि मोर ।

तब किछु हाथ न लागिहि मूसि जाहि जब चार ॥<sup>१</sup>

सूफी प्रेम साधना म साधक को इतनी अधिक पराक्षाए भेलना पडती हैं कि उसका जीवन प्रायः करुणा का पात्र बन जाता है । वास्तव म सूफी नायक आध्यात्मिक यात्री हाता है और अपना अध्यात्म यात्रा के लिए उह तन मन धन, रिमा की भा धिता नहीं होती है । पचावनी का पारस रूप निव्य रहस का सौंदर्य कहा गया है । रत्नसत (आत्मा का) प्रताक है । प्रेम की ज्वाला का मुसगान बाला हारामन गुर है । इस प्रकार साधक या साधिका क सूफीविधान जायसी ने अपन नायक म समाहित कर दिए है । सूफिया क अनुसार एकेश्वरवादी मूल निय पार मार्गदर्शक सत्ता है । रूपा म अनकत्व दिखाने दन पर भा आंतरिक एकत्व की भावना सधम बिद्यमान है । यह सत्ता उमी हक' की 'हकीकत का ही अभिव्यक्ति है । सगार म जो भा सौंदर्य है वही है । 'हारामन रत्नसन क लिए सुरगिद गुह है, जो उस 'प्रेम माग' की भार उमुख करता है तथा इश्कमजाजी क माध्यम स इश्क हबाबा की भार अग्रसर करता ह । साधक म गान स्वत उत्प न हाता है तथा रत्नसन पचावनी म प्रेम म पछाईं छाता, रोता मूर्च्छित हाता हुआ अपना समस्त ध्यान उसी पर केंद्रित कर देता है । अपन तीम' या अनुताप क दाणा म यह गमस्त राजपाट क ऐश्वर्य म उतांग हातर जीवन म विरक्त हा जाता है तथा उसकी समस्त साधना पचावनी म निमग्न हा जाता है । यही कारण है, राजा पनागों का माना धारण कर जाता हा जाता है । गारमब'या साधुयो क उपकरण जुगता है तथा पचावनी पचावनी रत्न लगना है । किमा क भा समझाने म यह अपना प'म नहीं छाता है । साधना की दक्षता हा उस बहुत थोष्ट साधक सिद्ध करता है । जायसा न भूफा मिदना का अभिव्यक्त करत क अनुभूत ही क्या का

रूप दिया है। 'इ ही सिद्धांतों के अनुरूप हा कथा की सृष्टि हुई है। एक राजकुमार एक राजकुमारी से प्रेम करने लगता है, पर माग में बहुत सी बाधाएँ हैं। प्रेमी प्रेमिका से मिला नहीं पाता। अनेक प्रयत्न विफल हात हैं। अंत में किसी हितपी या पथ प्रदर्शक का सहायता पाकर दोनों का मिलाप होता है। यही परिस्थिति खुदा और उसके बंदे में है। सायब ईश्वर की विभूति, उसका सौंदर्य देखकर मोहित हा जाता है पर उसका मिलाप नहीं हा पाता। समार की अनेक कठिनाइयाँ माया मोह हैं। अंत में गुरु की सहायता पाकर दोनों मिल जाते हैं।' इस प्रकार यह कथा गठन भारतीय एवं अभारतीय मन्त्रों का लेकर हुआ है। सूफी उपासना के अनुकूल ही अन्त में सौंदर्य एवं अन्त में शक्ति का रूप नायिका में प्रस्तुत किया है। रत्नसेन उस के प्रेम में (पना) मानवाय गुणा का नष्ट करता हुआ, ईश्वरीय गुणा (वका) की ओर बटता है। वस भी साधक की प्रेम-साधना का पथ सूफी-काव्य के चित्तका न बहुत ही कठिन माना है। उनके मत से साधक का परमेश्वर से मिलने के लिए जाना हुआ, माग में सात स्थानों से होकर जाना पड़ता है, जिनमें से प्रत्येक दस पदा से आवृत है।<sup>१</sup> लेकिन इस मत पर विवाद है, य कुछ सूफियों के मत से आगम्बिक अवस्था के प्रतीक है।<sup>२</sup> जायसा न रत्नसेन में आध्यात्मिक-माया के इन सप्त सोपानों का स्थान दिया है—

(१) प्रथम अवस्था तोबा या अनुताप का अवस्था है। यह अवस्था भयजय न हाकर प्रेमज होता है तथा साधक अनुताप की ज्वाला में दग्ध होकर जगत के प्रति विराग और ईश्वर के प्रति अनुराग प्रदर्शित करता है। रत्नसेन में पद्मावता का रूप-श्रवण यह प्रेमज अनुताप है। वह उसी प्रेम घाव में धायल हा जाता है तथा अपने राज पाट एखव का परित्याग कर देता है। सबस्व का गमपण वह पद्मावता के लिए करता है जिस हम ब्रह्माप ही मान सकते हैं।

(२) दूसरी अवस्था (उज्ज) में साधक अपने पर अधिकार करने का प्रयास करता है तथा मानसिक बण्डा में जाना है। पद्मावत का साधक भी अपनी आत्म साधना में लग जाता है। जागा जाता तथा सयासा हाकर वह निवर्तता है, अपार बण्डा का भेदन में उसे अपार मानसिक बण्डा का सहना पड़ता है।

(३) इस तृतीय साधन सत्र के अंतगत वह बण्डा का धिन्ता नहीं करता तथा 'आहि न भारि बहुत आशा' की उक्ति का संकेत देता है। दुनिया से निराश हाकर वह उस प्रियतम (नायिका) को प्राण देना चाहता है।

१—३१० रामकुमार वर्मा—हिंदी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास, पृ० १७५

२—परगुराम चतुर्वेदी—सूफी काव्य संग्रह पृ० २९

३—३१० सरला गुप्त—जायसी के परवर्ती सूफी कवि और काव्य, पृ० ७८



(४) इस अवस्था में वह हीरामन का 'गुप्त' मानता है, जिमने उसे जान ज्याति दा है ।

(५) तथा अनन्त परीक्षाओं में 'धय' का परिचय देकर, सप्तम सापान ईश्वर मिलन (मती हाना) तक पहुँचता है ।

रत्नसन सापना के चतुर्विध सोपानों का भी पार करता है । मारिफत की इस अवस्था में उसका 'इत्म' हृदयगत होता है । परमावत का सात्त्विक अपनी प्रारम्भ भुभूति के क्षणों में ही जीता है ।<sup>१</sup> वह इशक के सम्बल से सब का भुना देता है । दयता तथा मानव सभी उसका सोहा मान गये हैं । स्वयं पद्मावती उसके प्रेम से प्रेम करती है । इस प्रेम पक्ष के दोनों रूप विषम नहीं उभयात्मक हैं । बिरहाग्नि प्रथम नायक में तथा पश्चात् नायिका में उत्पन्न हुई है । नायक अपनी बिरहाग्नि का विश्व-यापी बना देता है । उसे वज्र भी बहता है । समाधिस्थ रत्नसेन पूजा तादात्म्य की स्थिति में आकर उससे मिल जाता है । यही अवस्था 'अभेदोपलब्धि' की सूचक है ।

सासारिक पथिक रत्नसेन भोगपुर से गोरख पथ ग्रहण कर गोरखपुर चल दिया । यह मिमी, चन्न, भधारी बना है—

तजा राज राजा भी जोगी । श्री बिगरी कर कहूँ वियोगी ॥  
तन बिसभर मन बाहर लटा । अरन्ध पम परी सिर जटा ॥  
चन्द्र बदन श्री चन्दन दहा । भसम चन्दा काँह तन खेहा ॥  
मेलल सिधो चन्न भधारी । जोग बाट, रदराक्ष भधारी ॥  
कया पहिरि दण्ड कर गहा । सिद्ध होइ वह गोरख कहा ॥  
मूद्रा खवन कठ जप माला । कर उपदान काध बधाला ॥  
पावरि पाव, दीह सिर छावा । लप्पर लीह मेरकर राता ॥<sup>२</sup>

गोरखपथी वेश धारण के पश्चात् वह प्रेमी प्रेम-नगर जाता है । यही से वह अध्यात्म नगर पहुँचता है तथा सौन्दर्य नगर का अधिकारी बन जाता है । रत्नसन की प्रेम पक्कीरी हा उसकी सच्ची पत्तह है—

जायसी न चार मजिला का भी सवेत दिया है । डा० श्याम मनोहर पाण्डेय ने रत्नसन के जन्म से लेकर सुग्गे के आगमन तक की स्थिति को 'नासूत' कहा है । 'राजा का जोगी' बनना समुद्रों को पार कर सिधल द्वीप पहुँचना मलबूत' की स्थिति मान सकते हैं । सिधल गढ़ में पहुँचने के पश्चात् ब्याहिक गतिविधियों को 'जवस्त' मान सकते हैं । लेकिन बाद की स्थिति अस्पष्ट है । पद्मावती के मिलन के

१—परगुराम चतुर्वेदी—सूफी काव्य संग्रह, पृ० ३१

२—जायसी प्रभावती—जोगी खण्ड, पृ० ५२

साथ ही वियोग आ जाता है। सधप तथा युद्ध में फँस कर नायक मर जाता है। अतः व्यावृत्त की स्थिति उद्धृत स्पष्ट नहीं है। इसी प्रकार 'गरीबत' तरीकत तथा हकीकत तब की स्थिति तो रत्नसेन में है लेकिन गारिबत की अवस्था थोड़ी अस्पष्ट है, बस सती रूप में रत्नसेन पदमावती का भाग उसकी साधना की जीत है, चिरन्तन साथ एव चिर मिलन है।<sup>१</sup> प्रेमानुभूति की चरम सद्गति है। उपयुक्त विवेचन से यह निष्कर्ष निश्चयता है कि जायसी ने अपने नायक में सूफी सिद्धान्तों का व्यावहारिक रूप भी समाविष्ट कर लिया है। वह साधना का प्रतीक (सालिक) होने के कारण प्रताकात्मक चरित्र बन गया है। उसमें जायसी का अपना दार्शनिक चिन्तन, आध्यात्मिक अनुभूतियाँ समविक्त हो गयी हैं। 'पदमावत' का नायक रत्नसेन गार्हस्थ्य महावाक्या के रूप का धीरान्त चरित्रवाला आदर्श नायक नहीं है।<sup>२</sup> वह सूफीसाधना का प्रतीकात्मक नायक है जिसमें सूफियों का 'फासूला' प्रायः दृष्टिगत होता है। फिर भी रत्नसेन के क्षत्रियत्व में भारतीयत्व की रक्षा की गई है। इस प्रकार यह नायक भारतीय तथा अभारतीय तत्त्वा का मिश्रण बन गया है।

## भारतीय दृष्टि

जायसी के इस नायक पर नाथ पंथ, हठयोग तथा बौद्ध धर्म का प्रभाव है। नाथ ही यह नायक भारतीय काव्य-रूढ़ियों में अन्तर्गत ही अपना विस्तार पाता है। चन्दबरदाई के पञ्चोराज रामो में 'शुभ' 'शुभी सवाद' के रूप में ही कथा वर्णित है। जायसी ने 'पदमावत' में भी हीरामन सुग्गा द्वारा कथा को आगे बढ़ाया है। हमारे रत्नसेन का लोक रूप दत्तना अमित्र भारतीयता ग्रहण कर चुका था कि जायसी उसे पूर्णरूप से अभारतीय चरित्र बनाने में असमर्थ रहे होंगे। उसमें भारतीय इतिहास का एक गौरवमय रूप भी रक्षित है तथा वह ऐतिहासिक पात्र पूरी तरह अतिहासिक भी नहीं किया जा सकता था। यह सत्य है कि जायसी ने रत्नसेन तथा पदमावती के सम्बन्ध में प्रचलित मनी लाहक्याओ का स्थान दिया है। जायसी के नायक सम्बन्धी ऐतिहासिक ज्ञान की चर्चा करते हुए भी आचार्य शुक्ल ने इस कथा के लोक-तत्त्व पर बल दिया है— जायसी ने प्रचलित कहानी को ही लेकर सूक्ष्म धीरो की मनोहर कल्पना करके, उसे काव्य का सुन्दर रूप दिया है।<sup>३</sup> 'उत्तर भारत में, विनोदित अवध में पदमनी रानी और हीरामन सुग्गा की कहानी अब

१ डा० 'पाममनोहर पाण्डेय—मध्ययुगीन प्रेमसाधन, पृ० १३७

२ डा० 'गम्भूतसिंह—हिन्दी मर्यादा का स्वरूप विकास, पृ० ४३३

३ डा० रामचन्द्र शुक्ल—जायसी प्रयावती, पृ० ३०

तब उसी रूप में बहो जाती है, जिस रूप में जायगी। उमरावणी तिया है।<sup>१</sup>  
 युक्त जो वे इन घाघारों को साथ साथ कर डा० गत्येद्र ने एक प्रकार का मन्त्र  
 व्यवस्था किया है—

(१) पदमावत की सम्पूर्ण कथा सोर राणी है।

(२) उमराव एतिहासिक युक्त में मध्ययुगीन काव्य का है। हा गया था  
 जिसका कहानी में एतिहासिक नाम का गद्य और सोर कहानी का कविप्रसाद की एति  
 हासिक व्याख्या लोक मानस में प्रस्तुत कर दी गई जिसका काव्यरूप जायगी ने कहा  
 किया।<sup>२</sup> यही कारण है कि पदमावत के नायक का नाम-जयरा का जाने का मान  
 मल हो गया है। काव्ययुगीन हजारीप्रसाद द्विवेदी ने इन नायकों की जाना मल अपनी  
 बात पहुँचाने का माध्यम माना है। इस मूणी साधना ने पौराणिक कथाओं को  
 पहले इन लोक प्रचलित कथानकों का माध्यम बना ही अपनी या जाना तब पहुँ  
 चाई।<sup>३</sup> लोक प्रचलित परम्पराओं में प्रसिद्ध कथाएँ जो जाना तथा उनकी  
 दर की लोक छानना भी है। जगन्निब का आह्वान में आह्वान करने का अर्थ  
 बार जोगी बनना पड़ता है। हीर राभा में भी राभा हीर के लिए जोगी बनता है  
 तथा उसके घर जाता है। डा० रवीन्द्र भ्रमर ने इसी तर्क से इस प्रकार प्रस्तुत किया  
 है कि 'नायक का योगी का वग बदलकर अपनी प्रिया से मिलन जाना या उस प्राप्त  
 करने का प्रयास करना लोक कथाओं की एक प्रिय रङ्गि भी है। पजार का  
 लोकप्रिय कथा हीर राभा में हीर से मिलन के लिए राभा योगी का वग धारण  
 करता है। सारंगी सदावृत्त की कहानी में भी 'सदावृत्त भीरु मायने वाले योगी  
 का रूप बदल कर सारंगी से मिलन जाता है। जगन्निब का आह्वान में आह्वान  
 ऊँदल कर्द स्थाना पर योगी का वग बदलते हैं। युतवन वृत्त 'मयावती' के उद  
 के बाद राजकुमार उसका विवाह में योगी का वग धारण करने घर से बाहर निकल  
 पड़ता है।<sup>४</sup> जायसी का रत्नसन भी पदमावती के लिए जाती बन कर घर से  
 निकलता है तथा गारुडनाथ की धारण ग्रहण करता है। वस सिंघल द्वीप पदमिनी  
 रानी, युक्त आदि भी लोकमानस के रूप हैं। 'पदमावती भारतीय साहित्य में न  
 जाने कितने स्थानों पर नायिका है। चाट भाग का 'स्वप्नवासवदत्तम्' हो या  
 'पृथ्वीराजरासो' सभी में विद्यमान है।<sup>५</sup> 'पदमिनी' नायिका की कथा भी भारतीय

१ आ० रामचन्द्र युक्त—जायसी कथावली, पृ० ३०

२ डा० सत्येन्द्र—मध्ययुगीन हिन्दी साहित्य का लोकेनात्मिक अध्ययन, पृ० २७६

३ आ० हजारी प्रसाद द्विवेदी—हिन्दी साहित्य की भूमिका, पृ० २७

४ डा० रवीन्द्र भ्रमर—पदमावत में लोक तत्त्व, पृ० ६६

५ डा० शम्भूनाथ सिंह—हिन्दी महाकाव्य का स्वरूप विकास, पृ० ४२१ २८

काव्यशास्त्र में प्रायः होती रही है। इसी प्रकार 'सिधलगढ़' भी स्त्री प्राप्ति का स्थान भारतीय साहित्य में बहुत बार आया है। हठयोगिया के लिए भी 'सिधलद्वीप' की यात्रा एक रुढ़ि ही है। अतः पदमावली तथा 'सिधलगढ़' को भी रुढ़ि के रूप में ही मान सकते हैं।

जायसी के रत्नसेन पर भारतीय प्रभाव होने का एक कारण यह भी है कि जायसी सूफी धर्म का प्रचार प्रसार चाहते थे, सभी सूफियों की दृष्टि ऐसी ही रही है। मुस्लिम धर्म ग्रन्थों के आश्रय से ही जायसी का काव्य नहीं चला, उन्हें निरन्तर पढ़ने वाले भारतीय प्रभावों, संस्कारों का भी बाह्य रूप से ग्रहण करना पड़ा। साथ ही सूफी नायक का अधिक विद्वान् रूप न अपना कर भारतीय रूप देना पड़ा। जायसी का रत्नसेन भी साधक बनने से पूर्व योगी का रूप धारण करता है। वह तिर पर जटा, हाथ में बिमरी, शरीर में मर्म लपेट, शृंगी घघारी, मगला, वन व्रतों के साथ क्या धारण करता है? तथा 'मोरपनाथ' की तब बान्ता हुआ अपने प्रेम-योग में लग जाता है। वैसे भी प्रेमाख्यानाका के अधिकांश नायक ऐसी ही वन भूषा धारण करते रहते हैं।<sup>१</sup> वस भक्तिवाला का 'आध्यात्म प्रेम काल' भी कह सकते हैं। हठयोगी, नामधारी, तान्त्रिक सिद्ध भी आध्यात्मिक प्रेम की तलाश में थे। सगुणभक्ति के कृष्ण काव्य से सम्बंधित भागवत सम्प्रदाय में ही मधुरता या प्रेम का जयगाद था। ऐसे समय में जायसी इन प्रभावों से अछूत रह भी कैसे सकते थे। उन्होंने तब से राजा को 'सिद्ध मोटिका' दिलाकर अपनी भारतीयता का प्रमाण दिया है नहीं तो वे मुहम्मद या किसी भी पैगम्बर से यह काव्य करा सकते थे। तब भी सभी पैगम्बरों को ताक में रखते हुए शिव पावती, हनुमान आदि को लाना उनके भारतीय रंग का ही लेश है। शिव के द्वारा भी हठयोग-साधना का उपदेश दिया है—

गढ़ जस बार जसि तारि काया । पुरुष दखु ओही क छाया ॥  
पाइप नाहि जूझ हठ कीह । जेइ पावा तेइ आपुहि चोहे ॥  
नो पौरी तेहि गढ़ मभियारा । ओ तह फिरहि पाथ कोतवारा ॥  
सब दुसर मुपुन एक ताका । अगम चडाव, बाट सुनि बाका ॥  
भेद जाइ साइ वह घाटी । जा लहि भेन, चढे हुइ चोटी ॥  
गढ़ तर मुण्ड सुरम तेहि भाहा । तह वह पथ कहीं ताहि पाहा ॥  
चोर बैठ तस संधि सवारी । जुआ पैत जस लाव जुमारी ॥

१ जायसी प्रभावित—जोगी खण्ड, पृ० ५२

२ देखिए, ३१० सरला शुक्ल—जायसी परवर्ती सूफी कवि और उनका काव्य, पृ० ६६

जग मरजिया समुद्र म पठ कर अपा हाथ म माती बाती गोपी लाता है, तू

दूडि सद् जो सरग दुमारी चढ़ गो निपत नीर ॥<sup>१</sup>

जस मरजीया समुद्र म पठ कर अपा हाथ म माती बाती गोपी लाता है, तू भी उसा ॥ १२ मूलापारात्र म दुपरी लघातर जग रंग द्वार (ब्रह्मर प द्वार) मुमुग्मा को राज कर सिपतनीय (ताया) पर विजय प्राप्त करा । दूगरी घोर सिद्धिगुटिका का प्राप्त करन से सिद्धि प्राप्त राजा मगल व देवता गणन जो की जय घोषना है । गणन हमारा विघ्न हरण द ता है निगको पूजा प्राय बाम्य का निदिष्ट गमापि के लिए सवप्रथम करत है । उग गणन की रत्नसन का जय मानना गामा भी देता है—

निधि गुटिका राज जब पावा । पुनि भद सिद्धि गनन माया ।<sup>२</sup>

इसक साथ साथ राजा सामान्य जागा या मिगारी नहीं है वह अपार जीवट का जिहो योगी है । वह बसाठा व समभान पर कहता है नि—

पदमावति राजा व नारी । हो जोगी ओहि तागि भित्तरा ॥

खप्पर लेह बार भा भागी । भुगुति दह, सद् मारग लागी ॥<sup>३</sup>

योगी को बानर भी भली भाँति काट, इस स्थिति म भा उस योग माग का ही एक माय सहारा है । मसार की सभी साधनाएँ तो साधना करन से आती हैं लेकिन याग साधना अपने को दग्ध करन से आती है । राजा इस स्थिति पर डर कर ही अपने को गला रहा है । पदमावती व याग म रक्त व मांगू तथा दग्ध पत्र का सहारा है—

सवरि रक्त नन्हि भरि मुघा । राइ ह्वारसि माभी मूपा ॥

परी जो घामु रक्त व टूटी । रंगि बली जस बीर बहूटी ॥

आहि रक्त लिलि दीनी पाती । मुघा जो लीह बाव भई राती ॥

बाधी बठ परा जरि काठा । विरह के जरा जाइ कित नाठा ॥

मसि नना लिखनी बरनि, रोड रोड लिखा अकथ ।

आखर दहे, न कोई छुब, दीह परेवा ह्य ॥<sup>४</sup>

साथ ही यह सन्देश भी भेजता है कि तुमने देवतामा को बलि दी थी, उसी पक्ष में बलि दिया हुआ मैं अभी तक पडा हुआ हूँ तथा वनस्थल पर लिखे गये 'आखर' अत्यधिक

१ जापसी प्रपावली—पावसी महेश-खण्ड, पृ० ६३

२ यही, रागागढ़ छंका खण्ड, प० ६४

३ यही, प० ६४

४, यही, प० ६६

आहत करते हैं। परमावली यह सब कुछ जाकर, अपने आपकी सम्हाल ली जाती तथा उसकी दशा भारतीय विरहिणी नारी की भाँति हो जाती है—

विरह आया सुभार, मल चोर, सिर रग ।

पिउ पिउ करन रान निज जस पहिहा मुख मूय ॥<sup>१</sup>

रत्नसा अपने समस्त प्रेम पथ में निवृत्ति के अधिन रहा है। निवृत्ति ने ही उसे मिट्टि देकर सच्चा सिद्ध, मिट्ट कर दिया है। अतः उसने ऊपर भारतीय साधना का प्रभाव ध्यायित है। यह हठयोग नाथ पंथ, बौद्ध-दशन तथा पौराणिक प्रभावों को लिए हुए है, जिसका सबैत 'पदमावत' में पग पग पर मिलता है। डा० बीरेन्द्रसिंह ने यह निष्कर्ष इस प्रकार दिया है कि 'उनका समस्त काव्य आदि से लेकर अतः तब प्रतीकात्मक सन्दर्भों से भरा पड़ा है इनके साथ साथ प्रतीकात्मक मूल क्या भी है। जायसी का साधन नाथपंथ, बौद्ध धर्म तथा पुराणा के प्रभाव से प्रभावित होने के कारण भारतीय रंग में रंगा है दूसरी ओर वह सूफी साधना के समस्त आधारों को अपने साथ लेकर चलने के कारण सूफी साधन का प्रतीक है।'<sup>२</sup>

## प्रतिनिधि चरित्र

महाकाव्य का नायक जीवन का प्रतिनिधि चरित्र होना चाहिए। उस चरित्र में जीवन के गत्यात्मक तत्व समाहित हैं। उस दृष्टि से विचार करने पर थोड़ी सी कठिनाई 'पदमावत' के रत्नसेन के सम्प्रत्य में आता है। वह उस कवि का प्रतिनिधि चरित्र नहीं है जिस कवि ने राम आते हैं घबरा इतिहास पुरुष पृथ्वीराज चौहान, गुजानमिह या छत्रसाल रूढ़िवादी माने हैं। तुलसीदास के 'राम' ने तो प्रतिनिधित्व करने का कोश भी नहीं छोड़ा है। वे आत्मा पुत्र, राजा, योद्धा, स्वामी, मित्र सभी कुछ हैं। जीवन में उनका चरित्र तो आदर्श का अन्वय भण्डार बन गया है जिसका अनुसरण करना आज भी हम सब का इष्ट रहता है। इसी प्रकार चन्दबरदाई के नाम नायक का भी आत्मा राजपूनी आन का आदर्श है। वे अस्त तथा सत्ताएँ हुए सागा को घड़क धारण दान दत्त हैं। पृथ्वीराज चौहान चालुक्य राजा भीम के निकाले हुए सात वीरा का गण देता है तथा उनके ही पीछे युद्ध आन लेता है। इन राजपूतों का आत्मा अपनी आन के लिए मर मिटना ही है। युद्ध पराक्रम, शौर्य तथा रक्षण की प्रवृत्ति के कारण इनके आदर्श भी जीवन का प्रतिनिधित्व करते हैं।

'पदमावत' के रत्नसेन राजपूत होना हुआ भी राजपूती परम्परा के आदर्श का आदर्शरूप नहीं है। फिर भी पदमावत के उत्तरार्द्ध में उनके क्षत्रियत्व के रक्षण

१ जायसी प्रयावली—मह छंका लण्ड, पृ० ६८

२ डा० बीरेन्द्रसिंह—हिन्दी काव्य में प्रतीकवाद का विकास, पृ० २६४

का प्रयास कवि ने किया है। अपना रानी व अपमान का बन्ना लेने व तिर ही व देवपाल का वध करता है। पद्मावत' व पूर्वार्द्ध में उमरा चरित्र 'प्रमी का चरित्र है। वह ऐसा चरित्र है कि अपनी आत्मा पत्नी गामगी का छोकर बन देता है। माता पिता, भूटम्बो, सम्बन्धी तथा हिनिया की बात यह मानता है। हठपूर्वक यह 'पद्मावती पद्मावती' की रटा लगाता हुआ भस्म लगाकर सितल द्रोप सासल हजार योगिया की साथ लेकर बन देता है तथा गात समुद्र का घोर यातना सहता है। जिस प्रेम के त्रिध रत्नसन सब कुछ छोड़ देता है वह गुनिया का आत्म भले ही हो भारतीय जनता का आदर्श नहीं है। भारतीय प्रेम में गम्य का विषय महत्त्व है उसका घोर अभाव रत्नसेन में है। इस लोचदष्टि तथा धमदृष्टि से उसका चरित्र लोक निर्दा का रूप ले लेता है। साथ ही उसका चरित्र में एक महत्तर प्रेम धारा का भी अपना भूय है जिस नकारना ठीक नहीं है। आत्म प्रेम का है और गहरे सच्च प्रेम का। अतः उस प्रयत्न प्रेम के आवेग में जो कुछ बरणीय अबरणीय रत्नमेन ने किया है, उसका विचार साधारण धर्म नीति की दृष्टि से न करना चाहिये।' आ० युक्त जी लोक मन्त्रमादी भावना व धर्म समर्थक ज्ञान पर भी रत्नसेन को अपने 'फागुले' से नहीं आनने। उसका मूल्यांकन उद्धाने एक आदर्श प्रमी का रूप में करना ही उचित समझा है। इससे बड़ा लाभ हुआ है एक तो रत्नमेन के प्रति प्रीति का दृष्टि दूसरा दीवानापन सूफी नायका के प्रभाव के कारण ही जामसी ने उत्पन्न किया है।

### प्रेम-पथ का प्रतिनिधि चरित्र

रत्नसेन ने चाहे धर्म के क्षेत्र में अपना स्थान न बना पाया हो चाहे उसने अक्षय्य क्षत्रियत्व के तेज की रक्षा न की हो चाहे उसने सामाजिक दृष्टि से कोई लोक के लिये आदर्श धर्म न बनाया हो, लेकिन उसका कमग्न प्रेम श्रेष्ठ निश्चय ही प्रेम लोक या स्वर्ग है। इस प्रेम के पथ को उसने कही भी मलिन नहीं होने दिया है। अपार त्याग के साथ उसे अपने स्वतः से सांचा है। वह पद्मावती के लिए घोर से घोर नारकीय यातनाओं का सहना अपना सोभाग्य समझता है। जायसी ने प्रेम मार्ग की सराहना की है, तो रत्नसेन उससे आगे ही है—

प्रेम पथ जो पहुँच पारा

बहुनि मिल आइ एहि छारा

यही कारण है कि उद्धाने प्रेम को गगन से ऊँचा कहा है। प्रेम से बड़ा आदर्श सूफी कोई भी दूसरा नहीं मानते हैं। प्रेम के इस आदर्श की प्रत्यक्ष गत रत्नसेन पूरी करता है। उसका प्रेम योग आसक्ति का नहीं, 'पुद्धता का लोभ' है। यह प्रेम याचना व पर से पतित नहीं है इसमें सात्विकता है त्याग है धर्म है, कर्म है, निष्ठा है तथा

अखण्ड रागात्मक घन है। यह प्रेम लाभ नहीं आत्मा का सींदर लोक है। इस लोक में जा मन मारता है, इन्द्रिया का दमन करता है तथा उल्टे परा चलता है सिर के बल चढ़ता है मसूर बनता है, वही पहुँच सकता है। इस साम्राज्य में पीड़ा ही पीना है काटे ही काटे हैं, बाहि बाहि का ही भीषण स्वर है, लेकिन यह पीड़ा भी सूफी प्रेम का वरदान है। यह पीड़ा ही साधक का ब्रह्म के पास ले जाती है। यह दुख सब को मात्र रहा है। पदमावती के विरह में रत्नसेन मज गया है। किसी भी परिस्थिति में प्रलोभन में, अपने इष्ट से न मिरने वाला यह प्रेमी साधक है। प्रेम के क्षेत्र में उसका असाधारणत्व निश्चय ही अनुपम है। हिंदी के सूफी काव्य में उसकी कोई दूसरी मिसाल नहीं है। प्रेम ब्रह्म का ही पर्याय है। यह धारणा ध्यान पुराना हो चली है।

प्रेम प्रेम से होय, प्रेम से पराई पड़्य।

प्रेम बाध्यो ससार, प्रेम परमारथ पाइय ॥<sup>१</sup>

यह प्रेम मात्र लौकिक नहीं है इसमें अलौकिकता का तत्त्व स्वतः प्रवेश कर गया है। रत्नसेन के इस प्रम-याग की साधना से प्रभावित होकर ही डा० माताप्रसाद जी गुप्त ने उस धरती का सर्वाधिक रत्न स्वीकार किया है। जायसी ने रत्नसेन के द्वारा गुप्त प्रेम का एक आदर्श स्थापित किया है।

मुहमद कवि यह जारि सुनावा । सुना सो पीर प्रेम कर पावा ॥

जोरी लाइ रक्त क लेई । गानि प्रीति नयन-ह जल मेई ॥

ओ मैं जानि गीन अम कीहा । भवु यह रई जगत मह कीहा ॥<sup>२</sup>

उन्होंने 'फूल मर पर मर न बामू की उक्ति अपने नायक के प्रेमादर्श के लिए ही प्रयुक्त की है। इस प्रकार नायक को प्रेम-पथ का प्रतिनिधि चरित्र मानना चाहिए।

दिव्य शक्ति से अलंकृत, समन्वित

पदमावत के रत्नसेन को हम मानवीय धरातल पर रख कर नहीं परख सकते हैं। वह 'सामान्य' नहीं विशेष प्रकार की प्रवृत्ति रखता है। इसमें 'शक्ति' मानवीय या लोकोन्मुख के तत्त्व का प्राधान्य है। लौकिक व्यक्ति माया एवं वासना में जितनी प्रगल्भता से बंध जाता है रत्नसेन उतनी ही शक्ति से इनसे दूर है। वह सब तज हरि भज की काटि का साधक है। अपनी साधना में वह अपनी प्रियतमा

१ सूरसागर।

२ डा० माताप्रसाद—पदमावत, पृ० ८०

३ जायसी प्रभावली (उपसहार), पृ० ३००



में परम सत्ता के अखण्ड सौन्दर्यवाद का दर्शन करता है। 'पद्मावती' का रूप-अवयव ही उसमें 'दिव्यत्व' को जन्म देता है। उसकी आत्म शक्ति अक्षय्य हो जाती है। वह अपनी प्रेम धुन में इतना दिग्गज प्राप्त कर गया है कि पावती से कहता है कि—

आहि न मोर कुछ आस, मैं मोहि आस करेऊ ।

तहि निवाम पीनम कहैं, जिउ न देउ का देउ ॥<sup>१</sup>

रत्नसन अपनी साधना से अपार शक्ति प्राप्त करता है। अपने समस्त 'अहं' का समर्पण उसमें निवेदन शक्ति उत्पन्न करता है। अपनी एकनिष्ठता से वह पावती द्वारा परीक्षा लेने पर भी सफल हो जाता है। मानस में पावती जब सीता का रूप धारण कर परीक्षा लेती है उस समय राम उन्हें सत्नाम ही पहिचान सत है। यह उनकी दिव्य शक्ति का ही प्रभाव है। इस प्रकार 'पद्मावती' में रत्नसन पावती को पद्मावती मानने की भूल नहीं करता तथा उनके समक्ष अपनी साधना के दृष्ट का उद्घाटन है—

भलेहि रग अछरी तोर राता । मोहि दूसरे सो भाव न बाता ॥

मोहि मोहि सबरि भुए तस साहा । जन जो दखसि पूछसि काहा ॥

अबहि ताहि जिउ दन न बाता । ताहि अमि अछरीठाणि मनावा ॥

जो जिउ दइ हो आहि फँ आसा । न जानो काह होइ कवि लासा ॥

हो कविलाम काह न करऊ । साइ कवि सास साणि जेइ मरऊ ॥

मोहि के वार जाउ नहि वारी । सिर उतारि न बछावरि सारी ॥

ताकरि चाह कहै ता आई । दीउ जगन तहि देहु यडाई ॥<sup>२</sup>

यह पावती के समक्ष अपनी दृष्टि-वश की दत्ता तथा दृष्ट में प्रेम की प्रगटना का परिचय देता है। 'सूफी काया' में 'गमक' का घर गार छोड़ कर निजल पड़ना और वियोग की दशा में अपने को समस्त जगत् में अभिन्न दग्गा प्रथम पग की माधना है और प्रेम की उन्मत्ता प्रिय की प्राप्ति और उससे लिए आत्म विसर्जन भक्तिम व्यवस्था का।<sup>३</sup> यह प्रेम-साधना सूफीराज्य की दिव्य साधना है। 'गायन एक दिव्यानुभूति के प्रति आर्शयित्व हारर ही नावायोग कम-नाम एवं जान याग का प्राप्त होता है। उससे इस दिव्य माधना में दृष्टा, जिया एवं जान जाना का सामंजस्य होता है। रत्नसन के प्रादुर्भाव प्रभावस्था योगी की ममाधिगम्य व्यवस्था है। इस व्यवस्था का साधना में उसका रूप आनाथ धुन जो के शान्त में, "ताप के अनिर्विकल विरह के और और अगा का भी विचार। जायसी ने इसी दृष्ट-हारिणी

२ जायसी प्रभावती पावती महेश-राज, पृ० ६३

१ जायसी प्रभावती—पावती महेश-राज, पृ० ६१

२ भा० हजारी प्रभाव द्विवेदी—मध्यमोक्त धर्म साधना, पृ० १८

गीत श्रावण विद्याविनी पद्धति पर बाह्यप्रकृति का मूल आत्मतत्त्व का प्रति  
बन्ध सा निखान हुए किया है। काम हनु प्रेमा से लिया गया है। प्रेम पाणी  
रत्नसं के विरह व्यथित हृदय का भाव हम मूल चन्द्र बन के पड, पत्नी, पत्थर,  
वृत्तान सब म देखने चन्त हैं—

राव रोव बै बान जो फूटे । सून हि सून रहिर भुव छूटे ॥  
ननहि चली रक्त के धारा । क्या नीति भरउ रत गारा ॥  
सूरज बूढ़ि उठा होइ नाता । आमजीउ टेमू बन राता ॥  
भा वसंत, रानी बनसपती । श्री राने सब जोगी जती ॥  
भूमि जो भीति भएउ सब गेन । श्री रात सय पय पखेरु ॥  
रातो सती, अगिनि सुब काया । गगन मय रात सेहि छाया ॥  
इगर मा पहार जो भीजा । पै सुम्हार नहि राव पसीजा ॥<sup>१</sup>

योग के ताप म जल जन कर उसने तपस्या की है। उसने अपनी समस्त  
रागात्मक वस्तियाँ उसी ब्रह्म म कै श्रुत कर दी ह—

श्री सबेरी पदमावति रामा । यह जिउ नवछावरि जेहि नामा ॥  
रक्त क बूढ़ क्या जम अहही । पदमावति प्रद भावति कहही ॥  
रहै त बूढ़ बूढ़ मट ठाऊ । परत सोई लेइ सेइ नाऊ ॥  
रोव राव तन तासा ओषा । सूनहि सून बधि णिउ ओषा ॥  
हाडहि हाड सबद सो होई । नस नम माह उठ धुनि सोई ॥

जागा विरह जहा का गूद मास, कै हान ?

हो पृनि साचा होइ रहा ओहि के रूप समान ॥<sup>२</sup>

अपनी समस्त प्रेम परीक्षाया मे वह सफ़नना की अन्तिम मजिल पर है। जा 'पेम  
मधु को पलकर प्रेम-मय' म अपना सिर दान जहा कर देता है उसका प्रियमी  
मह आना ही व्यय है। वह 'कायारि क्या' पहन कर पदमावती का 'भिलमगा'  
बन कर 'प्रेम समुद्र' म उतर आना है। वह 'मरजिया भाव से कहता है कि—

सात पनार खोजि कै छाजि क काढी पेम गरम ।

सप्त सरग चडि धावीं पदमावति जेहि पय ॥<sup>३</sup>

इस पथ' म वह सूनी पर चढन म भी नही टिगता है। विरह-सरागहि  
भूज मामू । गिरि गिरि परे रक्त के आसू । रक्त के आसू गिरा कर वह मिट हो

१ जायसी प्रथावली, प० ३६४०

२ वही, प० १११ ११२

३ वही, प० ६३

४ वही, प० ६५

जाता है, उस अपनी साधना का शीघ्र प्राप्ति होना है। इस साधक को नियमबद्ध सफलकर्म मानना ही उचित है।

## कार्यों की उदात्तता

साधक का उत्साही होना अत्यन्त आवश्यक है। आचाय मुक्ल जी ने साहस पूर्ण ध्यान की उपाय का नाम उत्साह दिया है तथा कम सौन्दर्य के उपासक को ही सच्चा उत्साही कहा है। 'कम सौन्दर्य का उपासक फनासबिन नहीं रहता वह तो काय करने में ही अपनी साधकता समझता है। इस दृष्टि से विचार करने पर रत्नसेन भी सच्चा उत्साही व्यक्ति ठहरता है। उसके काय व्यापारों में आछापन नहीं, एक महावाक्योक्ति गरिमा है। हीरामन के द्वारा पदमावती का सौन्दर्य वणन सुनकर उसका भीतर जा चाह उत्पन्न होती है उस वह पूरा ही करता है। अपने समस्त जीवन को उसके लिये होम दना सामान्य मानव के लिय सम्भव नहीं है। चाहे चन्द्रमा चमकना बन्द कर दे या सूर्य गर्मी न दे सब भी रत्नसेन अपने मार्ग से भ्रष्ट नहीं हो सकता। पायती हो या अप्सरा, रत्नसेन अपने कर्तव्य पथ में डिगना जानता ही नहीं। हीरामन कठिनाइयाँ का वणन करे या गणपति उस कोई भर्त्ता नहीं पड़ता वह 'ओमी' बनकर झूनी गमा देता है। उसका प्रेम सम्बन्ध काय व्यापार इतने परिष्कृत हो चुके हैं कि वह अपने प्रियतम को प्राणों का दान देना चाहता है। पदमावती को भी वह धन कपट या छीन कर नहीं लाता अपना दिव्य साधना के बगैरे मन्त्रीभूत करता है। 'पदमावती के चरित्रों में साधक रत्नसेन का जीवन यद्यपि बहुत अधिक साधक और बहिष्कृत काय कर्ताप से युक्त नहीं है, पर उसमें कर्तव्य भावना, प्रेम भावना और वीर भावना का सहयोग दिखाई पड़ता है।' फिर अपने कार्यों की भावना के लिए वह मानस के नाथन के आगे नहीं ठहरता है। उसमें मानव गुण, लोभ, क्रूरदक्षिणा आदि दुर्बलताएँ भी हैं किन्तु आदर्श प्रेमी के रूप में। उसके कार्यों में अद्भुत उदात्तता है। उसने कार्यों में सूफी नायकों से भी भिन्नता है। वह चाहे आदर्श महापुरुष न हो लेकिन आदर्श प्रेमी त्यागी एवं बलिष्ठाई भावनावादी का प्रतीक मान्य चरित्र है। वह आध्यात्मिक जगत का विजयी यादव है जिसने काय व्यापारों की उदात्तता पग पग पर मिलती है। जायसी ने रत्नसेन द्वारा अपना मिद्धान्त पुष्ट किया है। राजा ने आत्मा का सम्मान आत्मा से तथा हृदय का सम्मान हृदय से जीता है, तलवार से नहीं। सामान्य काव्या के नायक की भाँति रत्नसेन मुक्त या अग्रहण से पदमावती का नहीं प्राप्त

२ वितामसि (भाग १) — उत्साह ।

३ डा० गन्धर्वनामसिंह — हिंदी महाभाष्य का स्वरूप विज्ञान, पृ० ४०४

करता है, उसे श्रद्धा साधना या कम याग, ज्ञान-याग, भक्ति योग तीनों की समवित  
शक्ति से प्राप्त करता है। रत्नसेन ने सिद्धा, फकीरा मुल्ताघा, साधुओं एवं भिक्षुओं  
के समान अपनी 'माधुता' का प्रतिष्ठा कर दिया है। उनमें अपनी इष्ट साधना में  
यह सिद्ध कर दिया है कि "एक ही गुप्त तार मनुष्य मात्र के हृदय से हाता हुआ  
गया है जिसे छूते ही मनुष्य सारे बाहरी रूप रंग के भेदों की ओर से ध्यान हटा  
एकत्व का अनुभव करने लगता है।" वह जायसी की अपनी बसोटी है कि मनुष्य  
प्रेम से ही वैकुण्ठी हो गया है, नहीं तो यह मिट्टी था। इस रूप में रत्नसेन का  
प्रस्तुत करना ही उनका उद्देश्य रहा है। 'प्रेम' की आध्यात्मिकता एवं लौकिक  
उदात्तता के कारण ही डा० शम्भूनाथ सिंह ने उसे 'प्रेम, प्रवण मानवतावाद' का नाम  
दिया है। उन्होंने परम सत्य के चिरन्ता, अनन्त और अनिवचनीय सौन्दर्य का  
मानव जगत् में प्रतिबिम्बित करने भी उसकी विराटता और अनन्तता का नहीं  
नष्ट होने दिया। साथ ही उसी अनिवचनीय वष्यवस्तु की आभा को पूणत झलका  
भी दिया है।<sup>१</sup> रत्नसेन की साधना दृष्टि भी चरम काटि की प्रेमरूपा है। 'सूफी  
काव्य में नायक का घरबार छाड़ कर निकल पटना और वियाग की दशा में अपने  
को समस्त जगत से अभिन्न देखना प्रथम पथ की साधना है, और प्रेम की उलामता  
प्रिय की प्राप्ति और उसके लिए आत्म विमर्जन अर्थात् अवस्था की।'<sup>२</sup> रत्नसेन का  
यह उक्त आत्म विसर्जन भी जायसी की उदार दृष्टि का ही परिणाम है।

जायसी ने अपने नायक का सूफी हाते हुए भी भारतीयता में ही अधिक  
भर पाया है। वह फारसी नायको की भाँति फकीरी धारण कर 'दीवाना' मात्र भी  
रह सकता था। परन्तु जायसी ने उस पर गोरखपंथी, हठयोगी तथा बौद्ध धर्म का  
प्रभाव दिया है। वह पद्मावती का भिखारी ही नहीं है, गेरु वस्त्र के साथ छप्पर,  
मेखला, व्याघ्र चम, रुद्राक्ष माल, किंगरी, खटाऊ, मिंगी, चक्र, घघारी लेकर यागी  
वन जाना है। वह यागी भी सामान्य नहीं, ऐसा जिसका पावती एवं शिव भी लाहा  
मानते हैं। ऐसा प्रेमी जिसने रोम राम में दिव्य शक्ति के प्रति लिखाव है। उसका  
निश्चय भी महापुरुष का वह निश्चय है जिसमें 'ध्रुवत्व' है। सात समुद्र उस निश्चय  
में गीघ्र यतीत होने वाली सात साँसें हैं। यह लयाव भी शरीरी कम अशरीरी  
अधिक है। वह हृदयवाद में जीता है। इस प्रेम पथ में काया के नवद्वारा और पञ्च  
विकारा को वशीभूत करना ही पडेगा नहीं तो साधक का सबनाश हो जायगा।  
यह प्रेम पथ तेज धार पर चलने से भी कठिन है, क्योंकि पहिले तो मिर के बल

१ डा० शम्भूनाथ सिंह—हिन्दी महाकाव्य का स्वरूप विकास, पृ० २

२ वहाँ, पृ० ४३१

३ डा० हजारीप्रसाद द्विवेदी—मध्यगुणोत्तम साधना, पृ० २५८

चलना पड़ता है और फिर मत वा चीनी में सूक्ष्म बनाकर ले जाना पड़ता है। जीव को गेदिकता पर विजय प्राप्त करनी पड़ती है, तपस्या, लोभ का नाश करना पड़ता है। रत्नसेन त्याग का नाम पर पीछ नहीं है। हीरामन से जान पथ की राह पा कर निबल पड़ता है तथा ससार के नश्वर स्था से दौर्भाग्य फेर लेता है। अपनी आदश स्त्री नाममती का सदेव मुनकर वह द्रवित हो जाता है तथा रानी से चित्तोछ भाकर क्षमा-याचना करता है। क्षत्रिय हाता हुआ भी बिना भिक्षु के भताउहोन के साथ भोजन करता है। एवेस्वरवाद तथा प्रतिविम्बवाद का अद्वैत दर्शन में भी वह रुढ़ नहीं है। उस प्रकार उनकी उदार चेतना बलि प्रमुख है। विचारों की यह व्यापकता विश्व ही महाकाव्य का नायक के अनुकूल है। उस विचार के काल की परिधि में सीमित नहीं है, प्रेम के असीम रूप का अपनाकर उक्त विकास हुआ है। रत्नसेन के विचारों की व्यापकता उस सूफी साधक के व्यापक विचारों का प्रतीक है, जो सब कुछ सहज कर प्रेम पथ की उच्चतम चोटी पर पहुँचता है। जिसे किसी भी रूप को अपनाते में आपत्ति नहीं। केवल उनकी धुन में धुन लगी रहे। विपत्ति उनका सामग्य बन जाती है तथा प्रत्येक के प्रति नम्र, सहिष्णु रहते हैं। जनजीवन में अपनी साधना को स्थान मिल तथा राजा मत उनसे सहमत हो इसलिए भी विचारों का व्यापक होना आवश्यक था। जायसी ने रत्नसेन को प्रायः सबीणा स युक्त रखा है तथा बटुरपथा न स्मिताकर अपनी विचार दृष्टि का परिचय दिया है।

### विचारों की व्यापकता

विचारों की व्यापकता समस्त सूफीनामा का मूलधार है। ये सूफी अपने विचारों में समग्रवादी तथा हृदय से उगरे थे। यही कारण है कि उनके काव्य का सामाजिक सांस्कृतिक धार्मिक एवं साहित्यिक पक्ष अत्यंत उज्ज्वल है। \* हान प्रभासीय हान हुए भी अपने को भारतीयता के रंग में रंगकर एक नवान वातावरण खोला है। ये सभी साम्प्रदायिकता एवं धार्मिक कट्टरता के कायल कम ही थे। इन्होंने अपनी जो भी इच्छा मजाती तथा इच्छा कबीसी की कहानी का कहना चाहा है उसमें हिंदुओं की ही कहानियों को स्थान दिया है। प्रेम का मानवतावादी रूप इनके काव्य में प्रायः मिलता है। मानव अपने हृदय का प्रेम से परिष्कृत कर कितना व्यापक बन सकता है यह इन कवियों ने अपने नायकों में समाहित कर दिया है। जायसी तो हिंदुत्व को अपनाने में गौरव समझते रहे, उन्होंने सूफी सिद्धांतों की माध्यात्मिकता एवं मतवादी दृष्टि का साक्षात्कार नहीं है। जानि रंग भेन घम घाति को भुनाकर सन्त मानव अपने काव्य में प्रस्तुत किया है। एसा 'मानव' जिमम बालुप्य नहीं, प्रेम का रत्न स्वयं मान है। आवाय सुल जो न विचारों का दम सार उगत रूप का देखकर ही कहा है कि हिंदू हृदय और मुसलमान हृदय का

अपने सामने करके अजनगीपन मिटाने वाला मैं इही का नाम लेना पड़ेगा। इन्होंने मुसलमान हाकर हि दुआ की हो कहाजिया का हि दुआ की ही वाली मैं पूरी सहृदयता में कहकर उनके जीवन की समस्याओं के साथ अपना उदार हृदयपूर्ण मामजस्य दिखा दिया। कबीर ने केवल भिन्न प्रतीत हाती हुई परोक्ष सत्ता की एकता का आभास दिया था। प्रत्यक्ष जीवन की एकता का दृश्य सामने रखने की आवश्यकता नहीं थी। वह जायसी द्वारा पूरी हुई।<sup>१</sup> जायसी ने रत्नसेन व चरित्र का एनिहासिक पत्र तो निभाया ही है उमरे व्यक्तित्व की सुसज्जित हाते हुए भी पूरा रक्षा की है। भेद भाव से घरे हाकर वह मुहम्मद तथा गिर—दाना का भक्त है। अपनी भक्ति धारा में भी वह संकुचित नहीं है। 'प्रेम मार्ग' में उसने नल दमयंती एवं लला नज्मू दोनों के आदर्श अपनाये हैं। ईश्वर प्रेम से ही प्राप्त होता है, धर्म या सम्पत्ति के मग से नहीं।

### कथा के मूल भाव या रस का आधार

आचार्यों के मत से समस्त कथा का प्राण रस है। कथा के मूल रस के अनुरूप ही कवि कथा में विभिन्न प्रसंगों की योजना करता है। कथा को रूप दते समय वह रस विधान पर अपना ध्यान देता है तथा कथा में रम्य स्थला का प्रस्तुत कर कथा मूर्ति का निर्माण करता है। यह समस्त कथा नायक या नायिका को केन्द्र मानकर ही चलता है। घटनात्मक पत्र का पूरा विधान नायक पर ही निर्भर करता है कभी कभी कवि नायक में अपनी सज्ज कल्पना से जीवन का विविध प्रस्तुत करने के लिए अवसर जुटाता है। जिस प्रकार अनेक कथाओं के रहते हुए एक कथा की अभिन्नारिता अनिवार्य है, अथवा यह कहना चाहिए कि घटना बाहुल्य के रहते हुए भी समस्त कथा विधान की एक घटना में परिणति अनिवार्य है और अनेक पात्रों के समारोह में एक पात्र की नायकता असंदिग्ध है। इसी प्रकार अनेक रसों के मिश्रण में एक रस की अभिज्ञता भी स्वयं सिद्ध है।<sup>२</sup> अनेक रसों में जो स्थिति अमीरस की है, वही स्थिति अनेक पात्रों में नायक की है। नायक के चित्त की मूल प्रवृत्ति ही मूल रस का नियंत्रण करती है। कथा व धर्म के अमीरस का नियंत्रण भी नायक का जानने का एक माध्यम है। मूल भाव की व्युत्पत्ति में ही नायक का लक्षण छिपा है।

पदमावत का मूल भाव या रस क्या है, इस दृष्टि से विचार करने वाले विद्वानों की एक विंगल परम्परा है। अतः उनके विचारों की पुनरावृत्ति करना यहाँ

१ जायसी प्रचाम्नी, पृ० २

२ डा० नगेन्द्र—आख्या के अन्तर्गत, पृ० १४४

निरया ही है। हमारा उद्देश्य तो मूल रंग में नायक के योग का निरूपण करना है। पदमावती सूफियों की प्रेम दृष्टि का चरित्र चित्रित किया गया प्रेम गाथा है। उनके यहाँ प्रेम ही धर्म है, काम है, पूजा है, शास्त्र है, शास्त्र है। प्रेम का अपरिमित विस्तार उनका वाक्य है। सभी सूफीवाक्यों का मूलधार है प्रेम और यह प्रेम या रति का नरतय इन कथाओं के आदि, मध्य एवं अन्त में है। सभी वृत्तियाँ—साहे मृगावा, स्वप्नावती, नलकामयती चित्रावती मधुमावती, उषा अनिरुद्ध अनुराग-वागुरी यूसुफ जुनगा, मदरावती कामकामता, भाषा प्रेम रंग अथवा गुडगावती कोई भी रचना है। उसमें शृंगार की प्रधानता है। यह रति गुण अथवा चित्र-रत्न स्वप्न-रत्न प्रत्यक्ष रत्न किसी भी प्रकार से उत्पन्न नहीं है। लेकिन उसकी प्रगति सत्ता वहाँ है। इस रति की लीनता एवं अलीनता दोनों का सामंजस्य इन काव्यों में दिखाई पड़ता है। य रति की दिव्यता का वाक्य है। नर-नारी के सनातन भाव—रति का विस्तार ही इसमें है। सूफिया ने प्रेम ससार के रूप को ससार माना है। यह प्रेम जीवन की दिव्य चेतना का प्रतीक है। प्रेम का विस्तार का चित्र ही प्रतीकात्मक प्रेम कथा की सृष्टि है। प्रेमपरक प्रतीकों में मृग मगी पुष्प भ्रमर चाद चकार, स्वाति नग्न तथा पपीहा की प्रतीकात्मक स्थिति को लिया गया है। शृंगार के सयोग एवं वियोग दोनों पथों में स इनका मन वियोग में अधिक रमा है। मिलन मधुर प्रेम का सुप्त रूप है तथा विरह प्रेम की जाग्रत चेतना का जीवन्त रूप। बिना विरह में दग्ध हुए साधक की साधना का स्वर्ण फलक नहीं है। सभी नायक विरही हैं तथा धार यातनाओं से हस कर गुजर गये हैं। मनाहर यूसुफ तथा रत्नसेन सभी इनके भीतर समाहित हैं।

रत्नसेन प्रवृत्ति से भी प्रेमी है। वह वासनात्मक प्रेमी नहीं साधनात्मक प्रेमी है। उसी की प्रेम यात्रा पदमावती है। पदमावती के सौन्दर्य से अभिभूत रागा को और कोई सोहता ही नहीं है। गुरु सुभा पदमावती (श्रद्धा) की प्रेम चिनगी रत्नसेन (आत्मा) में प्रज्वलित कर देता है—

भलेहि पेम है कठिन दुहला ।

दुइ अंग तरा पम जेइ खेला ॥

+ + +

जो नहि सीस प्रेम पथ लावा ।

सो प्रियमी मह काहे क आवा ॥<sup>१</sup>

जो “सच्चा प्रेमी है वह चित्त की एक तान स्थिति में जीता है। ऐसा प्रेम प्रिय को छोड़कर किसी अन्य वस्तु का आश्रित नहीं होता। न उस सुराही चाहिए,

न प्याला, न गुलगुनी गिलमे न गलीचा । न उनम स्वर्ग की नामना होती है न नरक का भय ।<sup>१</sup> यही प्रेम हम रत्नसेन म दष्टिगोचर होता है । आचार्य गुबल जी 'पदमावत' का शृंगार रस प्रधान काव्य मानते हैं ।<sup>२</sup> दूसरी ओर डा० गम्भूनाथ सिंह का कर्ना है कि 'पदमावत म आक्षत रति भाव की पूर्ण व्यञ्जना हुई है किन्तु उसका पयवसान रहस्य रस म हुआ है । यन्त्रि अनाउद्दीन और दक्काल के माध हुए मुद्र म वह विजयी होता तो यह नायक का अभ्युदय कहलाता । तब यह काव्य सुखात हाता और उसम प्रधान रस शृंगार तथा गीण रस बीर माना जाता । किन्तु अत म रत्नसेन की मृत्यु और पदमावती नागमती के सता होने की घटना से उसका पयवसान कर्ण रस म हुआ है ।'<sup>३</sup> जायसी ने क्या के अत म ससार की असारता सिद्ध करते हुए निर्वेद भाव की अपनी आध्यात्मिकता द्वारा प्रस्तुत किया है । 'उहान प्रतीक और सकेत पद्धति द्वारा आध्यात्मिक प्रेम की स्पष्ट व्यञ्जना भी की है तो उसम रहस्यवाद की दृष्टि स शृंगार रस को नहीं, शांत रस को ही प्रधान मानना पड़ेगा । अंतिम दृश्य म जो रस व्यजित हाना है वह उमी अप्रस्तुत पक्ष के शांत रस की अंतिम परिणति है । जिस तरह मूर मीरा और कबीर के शृंगारिक वणन शांत रस के अंतगत माने जात है उसी प्रकार पदमावत का प्रभाव शांत रस समवित है शृंगार रस वाला नहीं । अत सौंकि कथा की दृष्टि से देखन पर पदमावत म विप्रलम्भ शृंगार अंगी है और आध्यात्मिक अर्थ की दृष्टि म वह शांत रस प्रधान काव्य है ।'<sup>४</sup> इस प्रकार नायक को सौंकि धरातल पर दखन स वह प्रेमी या शृंगारी वृत्ति का है जिसमे डल कर क्या न शृंगार को प्राधाय दिया है । नायक को आध्यात्मिक यात्रा का माधक मानने स क्या की प्रेम वृत्ति या धार्मिक प्रेम वृत्ति और नायकवृत्ति शांतरस प्रधान हा जाती है ।

### कथा के ऋषि पार्श्वों द्वारा नायक के महत्त्व की स्वीकृति

'पदमावत का नायक प्रेम समुद्र का अमर मरजिया है । अपनी साधना से उसने जड चेतन को भुजा दिया है । उसके महत्त्व की सबसे बड़ी स्वीकृति यही है कि 'पदमावत' के सभी पात्रों का भुवाय उसकी ओर है । यद्यपि 'पदमावत' नायिका प्रधान काव्य है तथापि उसम नायक का जीव त चित्र भी प्रस्तुत किया गया है । जायसी क्या म ही आध्यात्मिक यात्रा की गिद्धि चाहते थे तथा सूफी सिद्धांतों के अनुसार ही वे नायिका (परम-ब्रह्म) तथा नायक (आत्मा) का प्रतीकत्व भी निभाना

१ जायसी प्रथावली—राजा शुभा सवाद खण्ड, पृ० ६७

२ वही, पृ० ७१

३ डा० गम्भूनाथ सिंह—हिंदी महाकाव्य का स्वरूप और विकास, पृ० ४७७

४ वही, पृ० ४७७



निरर्थक ही है। हमारा उद्देश्य तो मूल रस में नायक के योग का विणय करना है। पदमावत सूफियों की प्रेम-दृष्टि को लेकर लिखा गया प्रेम काव्य है। उनका यही प्रेम ही धर्म है, कम है, पूजा है, दत्त है, सर्वस्व है। प्रेम का अपरिमेय विस्तार उनके काव्यात्मक है। सभी सूफीकाव्या का मूलाधार है प्रेम और यह प्रेम या रति का नर-नारी इन कथाया के आदि मध्य एवं अन्त में है। सभी कृतिमें—चाहे मृगावती, स्वप्नावती, नलदमयंता चित्रावती, मधुमालता, उषा अनिरुद्ध, अनुराग-वामुरी, यूसुफ जुलेखा, मदवानल कामकन्दता, भाषा प्रेम रस ध्रुववा पुष्पावती कोई भी रचना है, उसमें शृंगार की प्रधानता है। यह रति गुण ध्वज चित्र-रंग, स्वप्न-दृश्य प्रत्यक्ष दृश्य किसी भी प्रकार से उत्पन्न हो, लेकिन उसकी अडिग सत्ता बहा है। इस रति की लोचकता एवं अलोचकता दोनों का सामञ्जस्य इन काव्यों में दिखाई पड़ता है। प्रेम रति की दियता का काव्य है। नर-नारी के सनातन भाव—‘रति’ का विस्तार ही इसमें है। सूफिया ने प्रेम सत्सार के रूप को सत्सार माना है। यह प्रेम, जीवन की दिय चेतना का प्रतीक है। प्रेम की दितान के लिए ही प्रतीकात्मक प्रेम कथा की सृष्टि है। प्रेमपरक प्रतीकात्मक मृगमगा पुष्पभ्रमर चाद चकोर, स्वाति नग्न तथा पपीहा की प्रतीकात्मक स्थिति को लिया गया है। शृंगार के संयोग एवं वियोग दोनों पक्षों में इसका मन वियोग में अधिक रमा है। मिलन मधुर प्रेम का सुप्त रूप है तथा विरह प्रेम की जागृत चेतना का जीवन्त रूप। बिना विरह में दग्ध हुए साधक की साधना का स्वर्ण चमकता नहीं है। सभी नायक विरही हैं तथा धार यातनाओं से हस कर गुजर गए हैं। मनोहर यूसुफ तथा रत्नसेन सभी इनके भीतर समाहित हैं।

रत्नसेन प्रवर्तित भी प्रेम है। वह वासनात्मक प्रेमी नहीं साधनात्मक प्रेमी है। उसी की प्रेम यात्रा पदमावती है। पदमावती का सौन्दर्य से अभिभूत राजा को और कोई सोहता ही नहीं है। गुरु सुभा पदमावती (ब्रह्म) की ‘प्रेम चिन्ता’ रत्नसेन (आत्मा) में प्रवर्तित कर देता है—

भलेहि प्रेम है कठिन दुहला ।

दुइ जग तरा पम जेइ खेला ॥

— + —

जो नहि सीस प्रेम पय तावा ।

सो प्रियमी महु काटु कथावा ॥<sup>१</sup>

जा सच्चा प्रेमा है वह चित्त की एक तान स्थिति में जीता है। ऐसा प्रेम प्रिय को छोड़कर किसी अन्य वस्तु का आश्रित नहीं होता। न उस सुराही चाहिए,

प्याला, न गुलगुली गिलमे न गलीचा । न उनम स्वर्ग की कामा होती है न रक का भय ।<sup>१</sup> यही प्रेम हम रत्नसन म दष्टिगोचर हाता है । आचाय गुजन जी पदमावत को शृंगार रस प्रधान का य मानते हैं ।<sup>२</sup> दूसरी ओर डा० गम्भूनाथ सिंह कहना है कि 'पदमावत म आद्यत रति भाव की पूर्ण व्यञ्जना हुई है किन्तु उसका पयवसान करुण रस म हुआ है । यदि अचाउहीन और दवपाल के माथ हुए युद्ध म वह विजयी होता तो यह नायक का अभ्युदय कहनाता । तब यह काव्य सुखान हाता और उसम प्रधान रस शृंगार तथा गौण रस वीर माना जाता । किन्तु अत म रत्नसन की मृत्यु और पदमावती नागमती के सती होने की घटना म उसका पयवसान करुण रस म हुआ है ।<sup>३</sup> जायसी ने क्या के अत म ससार की असमरता सिद्ध करते हुए निर्वेद भाव की अपनी आध्यात्मिकता द्वारा प्रस्तुत किया है । 'उहनि प्रतीक और सकेत पद्धति द्वारा आध्यात्मिक प्रेम की स्पष्ट व्यञ्जना भी की है तो उनम रहस्यवाद का दष्टि स शृंगार रस को नहीं शांत रस को ही प्रधान मानना पड़गा । अन्तिम दृश्य म जा रग व्यजित होता है, वह उसी अप्रस्तुत पण के शान्त रस की अन्तिम परिणति है । जिस तरह मूर मीरा और कबीर के शृंगारिक बणन शांत रस क अन्तर्गत माने जाते हैं उसी प्रकार पदमावत का प्रभाव शांत रस समाहित है, शृंगार रस वाला नहीं । अत लौकिक क्या की दष्टि मे देखने पर पदमावत म विप्रलम्भ शृंगार अग्री है और आध्यात्मिक अर्थ की दष्टि म वह शांत रस प्रधान काव्य है ।'<sup>४</sup> इस प्रकार नायक को लौकिक धरातल पर दखन त यह प्रेमी या शृंगारी वृत्ति का है जिसम डल कर क्या ने शृंगार को प्राधान्य दिया है । नायक की आध्यात्मिक यात्रा का माधक मानने से क्या की प्रेम वृत्ति आध्यात्मिक प्रेम वृत्ति और नायकवृत्ति शांतरंग प्रधान हो जाती है ।

### कथा के अन्य पात्रा द्वारा नायक के महत्त्व की स्वीकृति

पदमावत का नायक प्रेम समुद्र का अमर मरजिया है । अपनी माधना से उसने जड़ चेतन को भुजा दिया है । उनके महत्त्व की सबसे बड़ी स्वीकृति यही है कि 'पदमावत' के सभी पात्रा का भुक्ता उगकी ओर है । यद्यपि 'पदमावत' नायिका प्रधान काव्य है तथापि उसम नायक का जीवन्त चित्र भी प्रस्तुत किया गया है । जायसी क्या म ही आध्यात्मिक यात्रा की निधि चाहते थे तथा सूफा सिद्धांत के शृंगार ही थे नायिका (परम ब्रह्म) तथा नायक (आत्मा) का प्रतीकत्व भी निम्नाना

१ जायसी ग्रंथावली—राजा सुभा सवाद खण्ड, प० ६७

२ वही, प० ८६

३ डा० गम्भूनाथ सिंह—हिंदी महाकाव्य का स्वरूप और विकास, प० ४७७

४ वही, प० ४७७

चाहते थे। यही कारण है कि उसमें नायिका' के रूप का असीम विस्तार है तथा स्थान स्थान पर निर्व्यक्त के संकेत लिए गये हैं। इस निर्व्यक्त में साक्षात्पन तिरोहित सा हो गया है। सुम्न के द्वारा 'पदमावती' का रूप वणन सुनकर राजा का प्रेम भाव में पम ममुद' में गाने खाना आरम्भ हो जाता है। गुरु मुन्ना 'पमपथ' की कठिनाइयों का वणन करता है लेकिन राजा वही भी अपनी चित्तवृत्ति को दुबल नहीं करता है। राज पाठ भोग तिलाजलि देता हुआ क्या पहनकर 'गोरक्षनाथ' की जय बोलता हुआ निकल पड़ता है। प्रेम की पावनता को चाहने के लिए माग में मानस' की भांति दिव पावती मिलते हैं तथा साधना से प्रभावित होकर उसकी परीक्षा लेते हैं। पावती रूप बदल कर अम्परा बन जाती है तथा लोक रीति के अनुसार प्रेमाचार की बातें कर रही हैं। यहाँ भी रत्नचन अपनी लगन की एकतानता का प्रमाण देता है। यथा—

ओहि के बार जीउ नहि मीरों । मिर उतारि नेव छावरि सारो ॥

ताकरि चाह कहै जो आर । दाउ जगत तहि दउ बडाइ ॥

आहि न मोरि निछु आमा, हा माहि आस करेउ ।

तेहि निवास पीतम कहै जिउ न दउ कर देउ ॥<sup>१</sup>

रत्नचन के इस उत्तर का प्रभाव पावती पर अत्यधिक गम्भीर हुआ है और उन्होंने 'प्रेम' की सत्यता पर विश्वास प्रकट करते हुए अपनी निजम स्पष्ट किया है—

गोरइ हसि महेस सौ कहा । निहच दहि बिरहानल कहा ॥

निहच यहि ओहि कारन तथा । परिमत पम न आछ दपा ॥

निहच पम पीर यह जागा । बस कसोटा कचन लागा ॥

वदत पियर जल उमनहि नना । परगट दुनो पम के बना ॥

यह एहि जनम लागि ओहि सीमा । चहै न औरहि ओही सीमा ॥

महान्व देयह के पिता । तुम्हरी सरन राम रन जिता ॥

एह कह तस मया करेह । पुरबहु आस किहत्या सहू ॥<sup>२</sup>

महादेव स्वयं पावती की भांति राजा की तप साधना से गद गद हो उठे। मिद्ध पुरुष के समक्ष यह यागा फूट फूट कर निर्विकार भाव से रोने लगा। उसको रोता हुआ देख कर भोलनाथ द्रवित हो गये—

कहि ह न रोव, वहुत त रास । अब ईसर भा, दारिद सावा ॥

जा दुग सहै होइ दुस आवा । दुस निनु मुख न जाइ सिवलावा ॥

१ आ० रामचन्द्र गुप्त—नायसी प्रभावती, पृ० ८१

२ यही, पृ० ८१

अब त सिद्ध मरुसि मिधि पाइ । दरपन क्या छूटि गई काइ ॥  
कहा बात अब हो उपत्ती । लागु पय, भूत परदसी ॥

×

×

×

कहो सो ताहि सिधलगद, है खण्ड मात चढाव ।  
फिरा न काइ जियत द्विद सरण पय दइ पाव ॥<sup>१</sup>

प्रेमपथ का सच्चा साधक सीमिन दायरे में रह ही नहीं सकता । फिर सूफी साधक तो कण-कण में उस परम प्रकाश रूप के जगत् करना है । उहान प्रेम का विगद प्रतीकात्मक कथन भी हृदय की विगलता को प्रस्तुत करने के लिए ही किया है । इस प्रकार के प्रतीकात्मक ढंग से वर्णित प्रेम धर्म का भावात्मक तत्व सिद्ध पुरुष का आनन्दानिरेक शहीद का साहस, सत का विस्वास तथा नितिक पूर्णता एवं आध्यात्मिक ज्ञान का एक मात्र आधार है ।<sup>२</sup> क्रियात्मक जगत् में यह आत्म त्याग और आत्म विराग है । वह क्या के प्रत्येक नर नारी पात्र पर अपना प्रभाव डालता है । उसने मनुष्य ही नहीं देवता (शिव-भावती) का भी अपने प्रेम-योग से मोह लिया है । जड़ समुद्र भी उसकी साधना को देखकर उसका सहयोगी हो जाता है । रत्नसन के महिमावान् व्यक्तित्व से ही असम्भव सम्भव हाता गता है, तथा प्रत्येक परिस्थिति में उसमें मात मानी है । अखण्ड एवं अक्षय जीवन्त के इस पात्र की सराहना सन तथा सद दोनों यत्तिना के पाना न अवसरानुक्रम की है ।

### प्रतिनायक

इस मूलाकाव्य का प्रतिनायक इतिहास में प्रसिद्ध 'विलासी सरानत का बाग' गाह प्रसादहीन है । 'छितार्दक्ता' नामक प्रेम काव्य में भी उसका प्रतिनायक रूप मिलता है लेकिन जायसी ने उसे नायक के प्रेम-पथ की एक अपार बाधा के रूप में प्रस्तुत किया है । असादहीन में कामिनी के रूप का अनिर्णय मोह है । अतः उस विलासी युति का रूप जोभी रूप ही क्या में मिला है । त्वचरित्र राघवचेतन के कथन में वह राजा रत्नमेन पर घावा धारण गता है । छत्र कपट की नीति से पवित्र रूप पद्मावती को दखता है तथा राजा का अपहरण करता है । उसके साथ गोरा बादल जूमते हैं तथा राजा की मुक्ति कराते हैं । फिर भी कवि ने प्रतिनायक के चरित्र को विस्तार नहीं दिया । उसे मात्र एक पवत से बाधा के रूप में ला खना किया है । इस घटना में पद्मावती के चरित्र में दिव्यता आ गया है तथा उसने पतिव्रत धर्म का पूर्ण निखार मिला है । राजपूनी मर्यादा तथा रानी का चरित्र दोनों

१ वही, पृ० ६३

२ इस्लाम के सूफी साधक - निजमतन, अनुवादक श्री नमदेववर चतुर्वेदी, पृ० ६०

ही अमरता को प्राप्त हुए। खलनायक देवपाल भी कथा के एक भाग में आता है। रत्नसन का कैदी समझ कर वह भी परिस्थिति का लाभ उठाना चाहता है तथा दूती द्वारा रानी को छलना चाहता है। उसे भी रत्नसन युद्ध क्षेत्र में समाप्त करता है, लेकिन यह युद्ध उस इतना महंगा पड़ा है कि बाद में उस अपनी जीवन लीला समाप्त करनी पड़ी है तथा उसके ही साथ दोना पनिया को सती हो जाना पड़ा है। इन समस्त घटनाओं से नायक में प्रेम सत्ता तथा महत्ता का पूर्ण उदघाटन हुआ है तथा प्रतिनायक के चरित्र का विकास हुआ कथा में नहीं हो पाया। जीवन भर प्रेम पथ में जुझा हुआ विजयी साधक, 'युद्ध पथ' में भी चला नहीं है तथा अपनी मर्यादा के लिए उसने जीवन की आहुति देकर ही दम लिया है। प्रमी और योद्धा दोनों का मणि वाचन याग इस योगी में दिखाना निश्चय ही सराहनीय है।

### नायक निर्धारण

रत्नसन के महाकाव्योचित काव्य व्यापारों पर विस्तार से विचारोपरांत भी एक प्रश्न महज ही उठ खड़ा होता है कि वह किस कोटि का नायक है? साथ ही उस पर सूफीसाधना की दृष्टि का आघक प्रभाव है अथवा भारतीय दृष्टि का? उसका ऐतिहासिक चरित्रत्व वाचक बना है अथवा साधन? साथ ही वह प्रेम पथ में भी किस कोटि में रखा जाए?

भारतीय परम्परा के मुख्य नायक राम कृष्ण, गौतम महावीर, छत्रसाल, गिवाजी, बारासिंह मुजान सिंह आदि सभी में उनका व्यक्तित्व बहुमुखी होकर आया है। उनका काव्य व्यापारों का कविव्य उनका व्यक्तित्व के अनेक रूप सामने लाता है। लेकिन सूफिया ने अपने नायकों में ऐसा नहीं किया। वे सभी प्रेम के लोक में जीवन्त हैं इससे बाहर उनका क्षेत्र ही नहीं है। सभी नायक आत्मा के प्रतीक हैं साधना तप याग के प्रतीक हैं। सभी प्रेम पथ में आध्यात्मिक यात्री हैं। साधक के रूप सभी में है।

पौराणिक एवं पारंपारिक दोनों ही आचार्यों ने महाकाव्य के नायक को महान उपात्त या महत्त्वपूर्ण व्यक्ति के रूप में ही स्वीकार किया है। भारतीय आचार्यों ने महाकाव्य के नायक का धीरान्तर्गत तत्वाच्छिन्न या मानकर अनेक गुणों का वर्णन किया है। धीरान्तर्गत गुणावित्त का अर्थ सामायण, रघुनाथ विष्णुपालयथ, विराता युनीय कुमार-गम्भव, विजयाचरित में वर्णित चरित आदि सभी महाकाव्यों में है। भारतीय आचार्यों ने नायक में अनिष्ट भय के समस्त निर्व्यगुणों का स्थानाच्छाद तथा उसमें सभी अन्तर्गत गुणों का स्थान दिया वहीं भी उसमें दुर्लभा का वर्णन नहीं किया। इस दृष्टि से ससार के अन्य महाकाव्यों के नायक कहा नहीं सकते हैं।

हमारी दृष्टि आदशवादी तथा उनकी दृष्टि यथायवादी रही है। 'पैराउइज लास्ट', वियोवूल्फ, 'डिवाइन कामेटा' के नायक धीरोदात्त की कसौटी पर नहीं ठहरते हैं। अतः भारतीय नायक दृष्टि से उनका साथ नाथ नहीं जाता है। ऐसे ही सूफिया के सिद्धांतों से प्रभावित 'पद्मावन' पर भी भारतीय दृष्टि नाथ नहीं कर सकती है। अतः यह मानना उचित है कि महाकाव्य का नायक आदर्शों का जमघट न भी हो, धीरोदात्त भी न हो, ऐतिहासिक महामानव भी न हो पर अपने कार्य-यापारा का महत्त्व रखता हो तथा उद्देश्य की महानता में तन, मन, धन से समर्पित हो। इस दृष्टि से जायसी का नायक अपने ढंग का यक़ेला ही है। 'प्रम पथ' में वह ससार भर का नायक का आदर्श है। 'प्रम-याग' में वह ससार भर की कठिनाइयों को पार करता हुआ यक़ता नहीं देखता तथा प्रकृति की परीक्षा में अद्वितीय, धीर, तपस्वी, महान साधक तथा एकनिष्ठ वृत्ती है। उसमें मधुवरीवर्ति का पूरा अभाव है उसका स्थिर समपण अदभुत है। सूफिया के 'प्रमवाद' का अमर कर देने वाला नायक प्रेमकाव्य में रत्नमन की टक्कर का दूसरा नहीं।

जायसी ने अपने नायक के निर्माण में सूफी साधना के 'फामूले' का तो पूरा उपयोग किया, लेकिन उन्होंने आचार्यों द्वारा पूर्वनिर्धारित मानदण्डों का आश्रय नहीं लिया। जायसी ने उस बेवत प्रेम-यथ का अथाह और असीम जीवत वाला साधक प्रस्तुत किया है। वह राजा क्षत्रिय तथा योद्धा हात हुए भी प्रम भीष का भिलारी, नाम पथी कथा घघारा घारी योगी है। उसने जीवन के अन्त्य क्षेत्रों में आदर्श स्थापित नहीं किए हैं। राम का भाँति वह आदर्श क्षत्रिय, आदर्श राजा, आदर्श पति, आदर्श राजनीतिज्ञ, आदर्श योद्धा तथा आदर्श धर्म सस्थापक नहीं है। वह तो प्रेम का चरम आदर्श है। जायसी ने उस आध्यात्मिक यात्रा का पथिक बनाकर भी मानव बना रहने दिया है। माथ ही उसमें कुछ मानव सुलभ दुर्गुण जैसे द्रव्य-लोभ, रूपाभ, धन का भव, अदूरदर्शिता, उतावली आदि भी हैं।<sup>१</sup> इस दृष्टि से वह मानस का नायक के समान नहीं भी नहीं टिकता है। 'पृथ्वाराज रामा' का नायक जितना बड़ा योद्धा तथा गरण रक्षक है उस रूप का भी इसमें अभाव है। धीरोदात्त नायक का जो स्वर्ण अथ भारतीय महाकाव्यों में मिलता है, उसका अभाव जायसी के नायक में है। डा० जयनाथ नलिन ने सूफी नायक का प्रम पथ का बघडक<sup>२</sup> और आस्थावान पथिक मानत हुए उसे धीरोदात्त नायक स्वीकार किया है। वास्तव में अतिरिक्त, असामान्य धीरोदात्त गुणिकों का दावेर में रत्नमन नहीं आता है। उसमें धीरोदात्त नायक का कुछ पथ तो है लेकिन वह सम्पूर्ण अथ में धीरोदात्त नायक नहीं है।

१ डा० गम्भूनाथ सिंह—हिन्दी महाकाव्य का स्वरूप विकास, पृ० ४१३

२ डा० जयनाथ नलिन—भक्ति-साध्य में माधुय भक्ति का स्वरूप।

रत्नसे। आध्यात्मिक नायक का चरित्र है इस दृष्टि से उसे प्रतीकात्मक नायक कहना अधिक समीचीन है। जायसी ने उसे प्रेम की निष्पत्ति यात्रा में पूर्ण सफल निरतिष्ठ किया है। प्रेम ही प्रयत्न नायक का धारण है और उसकी कठिनाई द्वारा कवि ने नायक की प्रेम का तात्पर्य है।<sup>१</sup> उद्देश्य नायक का ऊपर लक्षण गद्य भाषा का भी स्पष्टन किया है कि प्रेम का साधन-बाल में रत्नसन में जो माहुर कष्ट सहिष्णुता, नम्रता, कामनता तथा आत्मि गुण तथा अधीरता दुराग्रह और बोध आदि दुष्गुण निर्गम पड़ने हैं वे प्रेम जय है वे मृत्यु गुण या दोष नहीं माने जा सकते।<sup>२</sup> धुस्त जा के इसी मत की पुष्टि करते हुए डा० शम्भूनाथ सिंह ने लिखा है कि 'पदमावत का नायक रत्नसन आश्रय मन्त्राध्याय का धर्म का धारण दात चरित्र वाला आत्म नायक नहीं है। फिर भी उगम कुछ चरित्रित बहिष्कृत प्रत्यक्ष है। वह विनिष्कृत उत्तर आत्म प्रेम और प्रिय की प्राप्ति के लिए अन्त्य साधन और प्रणाम-लग्न का प्रदर्शन में निरतिष्ठ है।<sup>३</sup> आश्रय आचार्यों की भाँति जायसी का भ्रमण ही नहीं है उनकी दृष्टि तो शूफी प्रेम मान्यता पर रही है और उगी के अनुकूल उसे उद्देश्य चरित्रित किया है। जायसी आत्म महापुरुष को नहीं, आत्म प्रमी साधक को सामने ला रहे हैं। इसीलिए आध्यात्मिक प्रेम के क्षण का यह 'प्रतिवात्मक नायक' सामने आया है।

जायसी ने नायक के चरित्र में भारताय तथा अधारताय दोनों रूपों का सामंजस्य कर दिया है। वह शूफी नायक मनाहर गुमान सारिक प्रानमोतिह चानदोष आदि की भाँति बोरा आदेश प्रेमी नहीं है उगम जायसी ने प्रेम का साथ साथ बीरता का रूप भी प्रस्तुत किया है। नायक का अनाउद्गो एन प्रथम प्रति नायक से पराजित न होना तथा अपनी मर्यादा के लिए दवपाल का वध उसके चरित्र का उज्ज्वल करत है। यहाँ पर यह संकेत भी अनिवार्य प्रतीत होता है कि यह नायक, फारसी नायक मजनु तथा फरिहाद की भाँति भी नहीं है। उनका प्रेम बग आरम्भ में ही बहुत होता है तथा वे विवाहिताओं से प्रेम करते हैं तथा जान देते हैं। रत्नसन कुमारी पदमावती की ओर बढ़ता है तथा एक निष्ठ माध्याय के साथ। अतः वह फारसी नायक से भिन्न है। फारसी का जितन भी कवि है वे कविता में प्रेम के अतिरिक्त कुछ जानते ही नहीं हैं।<sup>४</sup> रत्नसन ऐसा नहीं है। पदमावत के उत्तराद में उसका

१ डा० रामवद्र शुक्ल—जायसी प्रयास, भूमिका, पृ० २६

२ यही, पृ० १२३

३ डा० शम्भूनाथ सिंह—हिंदी महाकाव्य का स्वरूप विकास, पृ० ४३३

४ डा० बीरेन्द्रसिंह—हिंदी काव्य में प्रतीकवाद का विकास, पृ० २६४

५ डा० रामकुमार वर्मा—हिंदी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास, पृ० १७

योद्धा रूप भी उभर कर सामने आया है।

रत्नसेन की अतिथि रमानी वृत्ति से उम धीर नलिन मानने का भी भ्रम होता है। आचार्यों ने कलासक्त, निश्चित, कोमल तथा अनुरागी नायक ही का धीर-नलिन कहा है।<sup>१</sup> जमे मात्राविक्रान्तिमित्र का अग्निमित्र 'स्वप्नवासवदत्ता' के उन्मत्त आदि। वह उदयन या विलापी प्रेमी नहीं है, वह स्त्री का नहीं परम-ज्योति का साधक है तथा प्रेम की उन्मत्तता के लिए अलाउद्दीन तथा दक्कान से जूझता भी है। अतः उस धीर-नलिन नहीं कह सकते हैं।

शृंगारपरक नायक की दृष्टि से वह दक्षिण नायक<sup>२</sup> कहा जा सकता है। प्रेमी के रूप में वह धरती का 'मर्वाधि' निमल रत्न है। उस आचार्य मुकुल जी ने 'दक्षिण-नायक'<sup>३</sup> माना है। इस मत का समर्थन डा० रामकुमार वर्मा ने भी किया है।<sup>४</sup> यह मत अत्यन्त सवसाय हो गया है कि दक्षिण नायक के सभी लक्षण उसमें विद्यमान हैं अतः पुनरावृत्ति की यहाँ आवश्यकता नहीं है।

सम्पूर्ण 'पदमावत' में माय-व्यापारों की दृष्टि से वह धीरोन्मत्त धीर प्रान्त, धीर-नलिन या धीरोद्धत नायक नहीं कहा जा सकता है। उसमें धीरोन्मत्त नायक की दृढ़ता के कारण अपनी भद्रक अवश्य है। वास्तव में जायसी की दृष्टि ही सूफी प्रेम साधना के कठघरे में सीमित रही। उस 'सात्त्विक' का ताज पहनाया। अतः इस नायक को एक नवीन प्रकार का आध्यात्मिक यात्री स्वीकार करते हुए प्रतीकात्मक नायक ही कहना चाहिए। क्या रस, उदात्त वस्तुओं की दृष्टि से भी उसमें महाकाव्य के नायक के सम्पूर्ण गुण विद्यमान हैं। साथ ही 'प्रेम समुद्र' का ऐसा 'मरजिया' तो और कोई उसकी तुलना में ठहरेगा ही नहीं है। प्रेम साधना की दृष्टि से वह अदभुत साधक है।

## नायक के ऊपर कतिपय आक्षेप

जायसी का दृष्टिकोण एक प्रेम कोण प्रस्तुत करने का था। यही कारण है कि पदमावत में उनकी सर्वाधिक दृष्टि प्रेम पथ पर रही है। अतः विघ्न बाधाओं को चाहे वे दैविक, दैहिक या भौतिक किसी भी कोटि की हों पदमावत का नायक पार करता रहा है। यह अदम्य उत्साह उस अयाह जीवट का गुरुपार्थी चरित्र सिद्ध करता है तथा अपना प्रेम नृपि में आनन्द प्रेमी की सभी अनिवाय गतों की भी पूरा

१ निश्चितो धीरनलिन कलासक्तमुखो मधु । ६० स० २३

२ डा० माताप्रसाद, पदमावत, पृ० ४०

३ आ० रामचन्द्र शुक्ल—जायसी आचार्य, भूमिका, पृ० ३६

४ डा० रामकुमार वर्मा—हिंदी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास, पृ० १७



करता है। फिर भी रत्नसेन के चरित्र पर विद्वानों ने कुछ आक्षेप लगाय है। इन आक्षेपों पर विचारोपरांत ही हम इस निष्कर्ष पर पहुँच सकते हैं कि वे आक्षेप कितनी शक्ति रखते हैं तथा उनमें कितना सत्यांश निहित है।

आचार्य रामचन्द्र गुक्ल जी ने 'पदमावत' के नायक को 'रूप लाभी' कहा है। वह हीरामन सोते के मुख से पद्मावती का अलौकिक रूप वर्णन सुनकर 'मुरझा' जाता है तथा प्रेम के समुद्र में डूबने उतरने लगता है। वह उसके विषय में गम्भीरता से सावधान नहीं है, चावत प्रेमी की भाँति बिना देखे ही छपर धौड़ पड़ता है। साथ ही साथ अपनी प्रथम सुन्दर मती रानी नागमती से एकदम मुह फेर लेता है तथा पद्मावती, पद्मावती रटने लगता है। उसका यह रूप एक आदर्श प्रेमी का नहीं, एक रूप लोभी का रूप है। गुक्ल जी के इस कथन पर डा० माताप्रसाद गुप्त ने गम्भीरता से विचार करत हुए लिखा है कि 'वस्तुतः यह समझा जायसी के अध्ययन की ही समस्या नहीं है। हिंदी के समस्त सूफी कवियों के अध्ययन में हमारे सामने आती है। प्रेम का प्रादुर्भाव, गुण-श्रवण, स्वप्न दर्शन चित्र दर्शन अथवा प्रत्यक्ष दर्शन से इन सभी की कृतियाँ में होता है। इसलिए इस समस्या का समाधान भी कुछ अधिक व्यापक रूप से खोजा जा सकता है।<sup>१</sup> वास्तव में रत्नसेन के इस प्रकार के प्रेम के पीछे जायसी का भ्रमना दृष्टिकोण तथा सूफी सिद्धांतों का भी आधार है। सूफियों ने स्त्री पुरुष प्रेम को आध्यात्मिकता भविष्यता तथा भयता का जामा पहिनाया है। उनकी दृष्टि में स्त्री से किया गया, प्रेम ईश्वर से प्रेम होता है। यह प्रेम सनातन है तथा जन्म से ही आरम्भ होता है। अर्चानक किसी गुण श्रवण या चित्र दर्शन की घटना से यह प्रेम जाग उठता है।<sup>२</sup> जायसी ने यह प्रेम सूर्य चंद्रमा, मूस कमल चंद्रमा चकोरी पुष्प तथा भ्रमर अनेक प्रेम प्रतीकों के माध्यम से प्रगट किया है। सूफी कवियों ने नायक-नायिका में जो एक दूसरे के प्रति अद्भुत भाव की घोषणा की है, वह भाव भी उन्हीं सत्ते प्रेम के घरातल पर नहीं आने देता। भारतीय सूफीकाव्य में प्रायः गुण श्रवण चित्र दर्शन आदि की परम्परा प्रेम प्रसंग में कथानक रूढ़ि सी रही है, जबकि फारसी से सूफी कवियों ने जय निजामी का सला मजनु' नायक की नायिका के 'मलतब' का दास्त कह दिया है।<sup>३</sup> अतः उनके प्रेम के आधार स्पष्ट हैं। भारतीय परम्परा में कुछ कृतियाँ ऐसी हैं जिनमें प्रेम का अभाव उमड़न है। परमान रासो' में ऊँच रानी का रूप-वर्णन सुनकर जोषी का वग धारण करता है तथा भाग लेता

१ जायसी-पद्मावती, मुमिका, पृ० ३२

२ स० डा० माताप्रसाद गुप्त—पदमावत ।

३ डा० इनाममनोहर पाण्डेय—मध्ययुगीन प्रेम-ग्रन्थान्तक, पृ० १६

४ वही, पृ० ४७

है। लेकिन वह अविवाहित है। भन उसकी समस्या का रूप दूसरा है। रत्नसेन को विवाहित होने के नाते 'मनिवर्णनीयम पद्मत्रयम्' की उक्ति माननी चाहिए थी या फिर उस थोड़े घेय से राजाचित व्यवहार करना चाहिए था। इसका एक ही समाधान है कि मुल्ला दाउद के 'चदायन' में यह प्रेम परम्परा चल पड़ी थी। साथ ही उन कवियों ने प्रेमी तथा रूपलोभी में क्याचित ही कोई अन्तर क्या किया हो। रत्नसेन के प्रेम-द्वार ताना अपने वर्णन से खोल देता है तथा जीवात्मा में (रत्नमेन) परमात्मा (पद्मावती) से मिलन के लिए अनुकूलता है। प्रेम की यह मधनता जो रत्नसेन के मन में पद्मावती के लिए है वह गहरा है। मृत्यु भय नहीं शिव परीक्षा में वह सफल, समुद्रा को पार करने का भय नहीं। वह सभी तरह पद्मावतीमय हो गया है, उसकी मास साम में, बूढ़ बूढ़ में, पद्मावती की तडपन है। वह रूप लोभ नहीं है। सामान्य प्रेमी, भोग चाहता है जिसका आधार है वासना की तृप्ति। वह प्रेमिका के लिए प्राण देने में आनन्द का अनुभव नहीं करता। रत्नसेन प्राण देने में भी आनन्दमय रहता योगी है। वह प्रथम योगी है, फिर भोगी तथा अन्त में सच्चा मर्यादा रक्षक भी। उसके विपरीत प्रतिनायक अलाउद्दीन तथा देवपाल का पद्मावती का पाने की कोशिश करना रूप-लोभ है। अलाउद्दीन राघव चेतन से रूप वर्णन सुनकर तथा देवपाल अपनी दूती में रूप वर्णन सुनकर दौड़ पड़ता है। इनका यह दुष्ट प्रयत्न सबका निघ है क्योंकि उनका आधार ही सारीरिक व्याम है। वे वासनात्मक भूख के अधे हैं, जिनमें मात्र भोग है।

समस्या का एक पहलू और भी है कि पद्मावती रत्नसेन, मधुमालती मनोहर आदि सभी में दोनों ओर से प्रेम की प्रधानता है जबकि देवपाल तथा अलाउद्दीन के लिए पद्मावती का मन में तनिक भी आसक्ति नहीं है। उनका एकपक्षीय प्रयत्न है जो सबका निन्दनीय तथा अनौचित्य से भरा है। इसके विपरीत रत्नमेन के लिए पद्मावती में एक अजीब तडपन पैदा होती है तथा हीरामन के द्वारा अपना प्रेम मन्त्र भेजती है। अतः रत्नमेन का प्रेम एकपक्षीय नहीं है, हाँ, उसमें एकनिष्ठता है। इसमें रूप-लाभ नहीं है दो विरही हृदयों का मधुर मिलन है।

रत्नसेन रूपलोभी नहीं है, एकनिष्ठ प्रेमी है। 'लाभ सामा यो मुख होता है और प्रेम विशेषो मुख। वही कोई अच्छी वस्तु सुनकर दौड़ पड़ना लोभ है किमी विशेष वस्तु पर इस प्रकार मुग्ध रहना कि उसमें किन्हीं ही अच्छी अच्छी वस्तुओं के सामने आने पर भी उस विशेष वस्तु से प्रवृत्ति न हटे रुचि या प्रेम है। किसी स्त्री या पुरुष के रूप की प्रशंसा सुनते ही पहिला भाव लोभ का हापा। किमी को हमने बहुत सुंदर देखा और लुभा गये, उसके पीछे दूसरों को उनसे भी सुन्दर देखा

तो उस पर लुभा गया। जब तक प्रवृत्ति का यह अभिचार रहेगा, तब तक हम रूप लोभी ही माने जाएंगे। जब हमारा लाभ किसी एक ही व्यक्ति पर स्थिर हो जायेगा हमारी वृत्ति एकनिष्ठ हो जायगी तब हम प्रेमी कह जाने के अधिकारी होंगे।<sup>१</sup> इस कसौटी पर भी रत्नसेन सामान्यो मुख न हाकर विगेषो मुख ही हैं। वह पद्मावती के अतिरिक्त और किसी को स्वीकार ही नहीं करता। हीरामन राजा को आकस्मिक रूपलोभी बना देकर उमने समस्त प्रेममाग की कठिनाइयाँ का भी वणन करता है। लेकिन प्रेम-समुद्र में मान राजा हीरामन के समझाये जान पर भी डिगना नहीं ह—

सुए कहा मन बुझहु राजा । करव पिरीत कठिन है काजा ॥  
 तुम रागा जेइ धर पोई । कवल न भेंटउ भेटउ पाई ॥  
 जानहि भौर जो जेहि पय नून । जीउ दीह और किए हु न छूटे ॥  
 कठिन चाहि सिषल कर राजू । पाइय नाहि जूझ कर साजू ॥  
 ओहि पय जाइ जो होइ उपासी । जागी जनी, तथा, सयासी ॥

X

X

X

जो लहि आय हेराइ न कोई । तो लहि हरत पाव न सोई ॥  
 पम पहार कठिन ग्रिधि गढा । सो पै चढ़ै जो सिर सों चढा ॥  
 पम शूरि के उठा अकूठ । चोर चर की चढ भसू ॥<sup>२</sup>

इन अनन्य कठिनान्यो को मुनकर भी राजा अपने मत में स्थिर रहता है। उसका प्रेम भाव कम नहीं होता। कठिनाइयो को मुनकर और उभरता है। वह सब कुछ छोड़ कर योगी का वस धारण करता है—

तना राजा राजा भा जोगी । और विगरी कर गहउ वियोगी ॥  
 तन विसभर मन बाढर सटा । अम्भा प्रेम, परी सिर जटा ॥  
 चन्द्र घन श्री चन्दन दहा । भमम चढाइ की तन मेहा ॥  
 मराल सिंधी चन धयारी । जोग बाट फरास धयारी ॥  
 कथा पहिरि दण्डर गहा । सिद्ध होइ कह गारय कहा ॥<sup>३</sup>

गौरव पची योगियो का रूप धारण कर, राजा पूव पत्नी नागमती तथा अपनी माँ माँ को त्याग कर चन दत्ता है। सामान्य राजा भी भाँति राज्य वभव का अग्रजाम उसे नहीं सोचना है। माग में गजपति या परीणा रूप में धाता है। राजा का प्रेम उग्र दम कर वह भी माग की कठिनाई का वर्णन करता है तथा सात समुद्रों के दुग्ध रत्ना का सर्वेन दत्ता है—

१ आ० रामचन्द्र पुराण—चितामलि (सोन और प्रीति), प० ७०

२ जायसी प्रेमावती—प्रेम-सङ्घ, पृ० ५१

३ वही, जागी-सङ्घ, पृ० ५३

सात समुद्र अमूव अपारा । मारहि मगरमच्छ घरिआरा ॥  
उठ तहर नहि जाइ मभागी । भागिहि कोइ निवहै बपारी ॥  
+ + +  
मिथल दीप जाइ सा काइ । हाथ लिण आपन जिउ हार्ई ॥  
मार, मीर, दधि जल उदधि, सुर, बिलबिला अकूत ।  
का चढ़ि नाथ समुद्र ए, है कारर अम वृत ? ॥<sup>१</sup>

राजा का प्रेम यहाँ भी अटन, अचल है। वह प्रेम को ही शक्ति तथा शिव मानता है। वह सिर देकर अपना पर आगे रखा जाता है। अतः मरण से उसे भय नहीं है। वह समुद्र का बूद समझता है। उस मगरमच्छ आदि का भी भय नहीं है। अपनी प्रेमिका के निष्ठ प्रत्यक्ष विपत्ति उसे प्यारी लगती है। 'प्रयत्न नायक की ओर से है और उसकी कठिणता द्वारा कवि ने नायक के प्रेम का नापा है। नायक का यह आदेश लला भजनू, शीरी परहाद आदि उन घरबी फारसी कहानियाँ के आदर्श से मिलता जुलता है जिसमें हूडकी की ठठरी भर लिए हुए टाकियाँ से पहाड़ थोड़ डालने वाले आशिक पाए जाते हैं।' 'रत्नमेन यदि रूप तोभी हाता ता इन विपत्तियाँ से उसे कापना अवश्य चाहिए था।

रत्नमेन रूप तोभी है या सच्चा प्रेमी, यह परीक्षा जायसी ने शिव पावती द्वारा भी प्रस्तुत की है। पावती द्वारा परीक्षा देखिए—

पारवती मन उपजा बाऊ । नेखीं कुवर कर सत भाऊ ॥  
दहु यह बीच कि येमहि पूजा । तन मन एक कि मारग दूजा ॥  
म मुत्प जानु अपदरा । बिहसि कुवर कर आंचर घरा ॥

+ + +  
हो आछरि बबिलास की जेहि सरि पूति न कोइ ॥  
मोहि तजि सवरि जो मोहि मरमि कौन लाभ तोहि होइ ॥<sup>२</sup>

रत्नमेन अप्सरा के रूप पर नहीं डिगता जस विश्वामित्र, मारद आदि डिगते रहे हैं। वह 'मोहि दोमरे सौं भार न बाता' वह कर अपने विशुद्ध प्रेम की एर निष्ठता प्रत्यक्ष करता है—

अब ही तहि जिउ देइ न पावा । तेहि अम आछरि ठाठ मनावा ॥  
जो जिउ दहु भाहि के आमा । न जानी काह होइ बबिलास ॥

- १ जायसी प्रभावली जोगी खंड, पृ० ५३
- २ वही, राजा गजपति सवाद खंड, पृ० १६
- ३ वही, भूमिका भाग, पृ० २५
- ४ जायसी प्रभावली—महेन खंड, पृ० ६२ ६३

मध्यगुणीन सुखी प्रमाद्व्याप्तक काम्य

हों करिनाम चाह स करूँ । मर्द करिनाम सागि चाहि मरूँ ॥  
 चाहि क बार जीराहि धारी । गिर उनाहि तबछाबरि डारी ॥  
 तावर चाह करै जा मर्द । दुखी जगत् तहि नउ बगर्द ॥

धोखि न मानि कहु धागा ही चाहि माग करूँ ।  
 तहि रिगल जीम क जिउ न नउ वा नउ ॥'

पावती उस निशय ही पन्मावती का तपस्वी मान ली है । वह उन्हें 'कसल बगोली कचा तागा' कहा पर मजबूर कर देता है । पावती का मान इकित हो जाता है तथा शिरम दया करनी की माग करती है । महान्त का नेत्र कर उगरी प्रम-नीन समीपिन हो जाती है तथा यह पन्मावती का निग पूर पूर कर रोने लगता है—

सग राव जग जिउ जर गिर रा घी मायु ।  
 रोन रोन सब रावहि सून सून भरि धाँयु ॥'

स्वयं शिर राजा की महायता करने हैं गमभान हैं उभका माग निर्रग करन हैं । माय ही व उस सिद्ध गाटिका भी देने हैं । नम प्रवार रत्नसन का प्रेम सामान्य बावले का सम्वाभाविक प्रम उहा है, वह पूरण समर्पति प्रेमी का प्रेम है । उगम वासना या उयनी इच्छामा को कोई स्थान नहीं है । अपने प्रेम म राचा की दन्ना अपार है । यह अपार नूना ही उस रूप-नाम से दूर आन्ध्र प्रमी कहने को विवश कर देती है ।

फारसी के सुफीवाक्या म नायक अथ विवाहित नायिकाओं स प्रम तो करते हैं लेकिन इस प्रम का आधार भी हृदय ही है । व अपनी प्रमिका के पति के लिए शानीनता का पालन करते हैं । डा० माताप्रसाद जी न हिन्दी व समस्त सुफीवाक्य को ध्यान म रल कर केव न चदायन व सौरिक का नायिका को भगाने के कारण अपयश दिया है । नहीं ता सुफी नायक विरह म तडप-तडप कर अपना ही मास गलात हैं लेकिन अपनी धुन में धूनी रमाते व थकत नहीं । वे आत्मा का सश्रम अस्व से नहीं, दुष्ट प्रयत्न स नहीं कूटनीति के छन कपट से नहीं, हृदय स जीतत हैं । इसीलिए य हृदय-वीर नायक है । ये मभी महान निरही नायक हैं विरह किसी भी नायक स कभी भी छूटा नहीं हैं ।

कहसि दुखल मानुम कर आसा । जहा दुका तह भोर निवासा ॥

- १ जायसी प्रयावली—महेस खण्ड पृ० ६३
- २ वही पृ० ६३
- ३ जायसी प्रयावली—पावती महेस खण्ड प० ६३

जेहि हा दुख होइ जग भीतर प्रीति होइ अग ताहि ।

प्रीति बाज का जान बपुरा जेहि गरीर दुख ताहि ॥<sup>१</sup>

विरह प्रेम की जामनि गति का नाम है, इस दष्टि में समानार विरह की गति उसे विशुद्ध प्रेमी ही मिट करती है ।

(२) रत्नसेन के चरित्र में अद्वैतदर्शिता तथा अनस्पर्शता की भी आवाय मुखल जी में चर्चा की है ।<sup>२</sup> इसका कारण यह है कि अलाउद्दीन के साथ राजा न बुद्धिमत्ता का परिचय नहीं दिया । अपना राजमहल में लाना, भोजन कराना, शतरंज खेलना दण्ड में अपनी रानी का दिखाना, उचित नहीं है । राघव चेतन उसमें क्रुद्ध होकर दिल्ली गया था, तथा वह कभी भी राजा का अहित कर सकता था । अपने उस क्रुद्ध शत्रु का भी उसे ध्यान रखना चाहिए था । साथ ही अलाउद्दीन के ऊपर एकदम विश्वास कर लेना उसके व्यक्तित्व की कमी का सामन नाना है । पहिले तो राजपूनी परम्परा की दष्टि में उसे कभी अलाउद्दीन का किसी भी प्रकार से पदमावती का जियाने की बात नहीं माननी चाहिए थी । जायसी न फिर भी उससे पहले के भीतर दण्ड में दिखाकर राजपूनी गौरव की रक्षा की है । लेकिन रत्नसेन अलाउद्दीन के अभिन्न भाव को नहा जान पाता है तथा बड़ी बनता है । इस प्रकार एक सफा राजा के रूप में या नीति के रूप में, उसमें दण्डता का अभाव खटवता है । राजा में दूरदर्शिता तथा बुद्धि की जो तीक्ष्णता होती है वह उसमें कम है । 'रत्नसेन की व्यक्तिगत विशेषता की सलक हम उस स्थल पर मिलती है जहाँ मोरा-बादल के चेताने पर भी वह अलाउद्दीन के ध्वज को नहीं समझता और उसके साथ गड के बाहर तक चला जाता है । दूसरे पर छल का सह न करने से राजा के हृदय की उदारता और सरलता तथा नीति की दृष्टि से अपनी रक्षा का पूरा ध्यान न रखने में अद्वैतदर्शिता प्रकट होती है । " वह मुहब्बत सम्मत" तथा बान्ता सम्मत" नीतिया का ठुकराता है । अपने विश्वास पात्र मरदारा की मंत्रणा पर ध्यान नहा देता । आत्म मूढ़ कर सब क्रुद्ध करता है इनसे उसमें भविष्य दष्टि का अभाव लगता है तथा वह राजा होता हुआ भी नीति से अनभिज्ञ लगता है ।

दुमरी और अलाउद्दीन से युद्ध करने के लिए वह सभी राजाओं का पानी भेजता है । साथ ही अपने निवर्तमान सम्बन्धी राघवसेन का कोई भी खबर नहीं देता । जायसी ने सिंहन के राजा का अपार प्रतापी तथा शक्तिमान चित्रित किया है । ऐसे बलशाली व्यक्ति को इस घोर विपत्ति में स्मरण न करना भी राजा की बड़ी भूल है ।

१ मसन—मधुमालती (स० माताप्रसाद गुप्त) प० ११६

२ जायसी अथावती—भूमिका भाग प० ११२

३ वही, प० १२३

यदि उगत क्षयत क्षारम-गम्मात वा कम न कर्म न निग मयसमत वा तनी युताया है, ता भी बाव नष्ट जमती रही। माय ही गिरमगद म न भवता भी कटिा नहीं था। सिंहल व व्यापारी लगातार घान जा। ये, लगी काई मात्रा समुविधा भी रही थी। यह उस न्य निगम स्थिति म न युतात भी धदूरन्तिता प्रर न कानी है।

धार्मिक दृष्टिकोण म भी राजा न उन्नता स्थित का प्रयत्न किया है। वह सिद्ध शासन की सुगन्मान के साथ भाजा करन का नयार हा जाता है। निरन्तर म स्पष्ट है कि उग बाव की धार्मिक स्थितियाँ न लगा समझन है। नगता है नमन अत्राउद्दीन के प्राप्त के समन भुन गया था घुन्न टर गया था। वह समीन व मिद्वान पर उन्नत थाया था निगम न पून समपन रहता है। नगयम्भीर व बीर नाया नम्भीरदन न कभी भी गया नही किया गया क्षणी मर्याद के डिग नहा। गंगा प्रताप कभी भी क्षयचर व भाष ऐसा करन को नयार रही हूँ। राजपूनी परमाग पर नम नमन का या बाय पत्रव ही है।

नम तत्त्व का एक कारण यह भी है कि जयसी न नमारा का उत्तर परा नित्याम न माध मून सम्युद्ध किया है नायन वही जायसी का नित्याम-बाव प्रबल हा गया था। इतिहास म रत्नमेा अत्राउद्दीन से विवग हातर उस क्षणी गनी स्थिता है तथा वह यदी बताया जाता है। जायसी ने एतिहासिक तथ्या का विवृण नहीं किया तथा अतिरिक्त पक्षपान व चक्कर म न पडने हुए सही रूप को प्रस्तुत किया है। यदि रत्नमेन म नीति की दूरदर्शिता दिगात तो इतिहास व साथ पाय न हाना। अत इतिहास-बोध का पालन करन के कारण भी उ न धदूरन्तिता का पक्ष सना पना है।

वस रत्नसन पदमावती के लिए भी बिना सोच-समझे ही निवृत्त पडता है। यह ठीक है कि वह बाधा को बाधा नहीं मानता राजा होने के नाते उसे बाधा सा विचार भी करना चाहिए था। लोक दृष्टि म यहाँ भी उसकी धदूरदर्शिता ही प्रकट होती है। साथ ही साथ राजा हीरामन के हाथ का खिलौना सा बन गया है। जब सभी विषया म वह हीरामन का पण्डित माधता है तत्र अत्राउद्दीन के भावमण व समय हीरामन की बुद्धिमानी का साथ क्यों नहीं उठाता। युद्ध की भयाव्तात स्थिति तथा राजा की घबराहट न उसका चरित्र दया का पात्र बना है। वदी वन गाने पर पदमावती का अपना स-देश भेज कर उसने बुद्धिमानी ही की है तथा उस विपत्ति म भी पदमावती का, न दने की टानने के कारण उसका चरित्र की घापी रक्षा हुई है। वस एक महान् राजा की दृष्टि स उसका चरित्र भगवन्तीय नहीं है।

(३) राजा रत्नसन म अधय, अविश्राम कूनीतिना का अभाव, सफल नामक के गुण तथा सफल पनि के गुण कम हैं। पदमावती के रूप सत्कार म खाकर वह नागमती को दूध की मक्खी की तरह दूर फेंक देता है। वह उम कभी भी याद नहीं करता, जब कि मनायनातिव दृष्टि स उम याद करना चाहिए था। पक्षी व द्वारा एक रान का अचानक नागमती की कहानी सुनकर त्रिल हा जाना तथा फिर उस सती व प्रति सहानुभूति दिखाना, बड़ा खिावा लगना है।

नागमती के प्रति राजा की आरम्भिक उपेक्षा बड़ी बठोर है जो उसे मानवीय घरातल स थाडा नीचा कर देती है। उम एबदम ठुकराना किसी भी आदश पनि की दृष्टि से अविश्वयूज नहीं है। इस प्रकार नागमती की पावनता, कामनता का दखन ही रत्नसन व प्रति हमार मन म घृणा जागती ह तथा साक दृष्टि स यह काय उसके लिए गहित अवश्य है। अपनी मा की उपेक्षा, मंत्रिया, सम्बन्धिया की उपेक्षा थाडा आश्चर्य पदा करती है।

राजा का नाराज हाकर राघव धनन का निकाल देने वाली घटना भी उनकी बुद्धिमत्ता नहीं प्रकट करती। राघव ऐसा पण्डित जिस यक्षिणी सिद्ध थी, तथा जा यक्षिणी के प्रभाव से कुछ भी करने म ममथ था उसे वाममार्गी तथा वैद-विरुद्ध कह कर निकाल देना अधिक सगत बात नहीं है। ऐस गुणी का दश निकाल का दण्ड, राजा की अदूरदर्शिता का प्रमाण सा है। दूसरी आर पदमावती दस गुण से कभी भी अप्रसन्न नहीं ह। वह मूय ग्रहण व दान का बहाना लेकर उसे अपना अमूल्य बगन दवर प्रसन करना चाहती है।

कनियान धनि आगम विचार। भल न की ह धस गुनी निसारा ॥

जेहि जाविनी पूजि ससि बाग। सूर के ठाव कर पुनि ठाढा ॥

जायती न पदमायती म भविष्य दृष्टि का संकेत लिया है, लेकिन रत्नसन को राघव ने आघात दियाकर उम अदूरदर्शी बना दिया है। इसी अदूरदर्शिता का परिणाम यह हुआ है कि उस स्त्री जाकर अपन अपमान का बदला 'न' के लिए अनाउही म बासनात्मन अग्नि का प्रज्वलित किया है, तथा युद्ध के नगाने बजवा दिए हैं। इसी युद्ध म मारा तथा बाप्स ऐसे अमर सरदारा का अपन प्राणा की बाजी लगाकर राजा की भून का ठीन करना पना है।

राजा का मूर्च्छा तथा मरण की स्थिति म पाकर भी प्रका उठती है। वह पुन पुन मरन के लिए तयार हा जाना है। फिर भी डा० सुधीन्द्र न पदमावत व नायक पर विचार करन हुए लिखा ह कि 'परंतु इनक साथ साथ दृष्टि म कुछ अवशुण ना गिाई देने है, उस आनुगता (पदमावती का पान की तनी व्यग्रता हाना) दुःश्रान्त (जा बात बात पर मग्न का ज्ञान हा जान है) स्तय (चारी) जा



परमारती का पाव बं निग गिहृणगड छिग कर घुगन म प्रगट हारी है परन्तु इन सयरी प्रच्छाई चुराई उगवे उद्देश्य पर धनसम्पत्ति है। इन वृत्तिया का निरपरा रूप से नहा देगा जा साना। फिर उगकी म सब वृत्तियाँ ताबवि ब प्रधान सधय, आध्यात्मिक सवेन देने की वृत्ति ब कारण प्रकट हुई है। चारी ॥ गड म घुगना लोकिन धय म ही चुरा है सानेतिन धय म वह योगिन प्रियाया की अभिव्यजना करता है।<sup>१</sup> जायगी न प्रम गय ब जिस भ्रमर साधन ब रूप का निया, वह मभा दापा का परिहार कर देना है। अपनी समस्त लोकिन वृत्तिया पर विजय पा लना भी अनाधाररूप की ही सृष्टि है। 'वह जानता है कि उसका प्रेम गय शून्य है, किन्तु वह यह भी जानता है कि साधना की राह म शून्य भी फूल हा जान हैं। वह जानता है कि साधना की राह अधिघात और मभधार सी है। उगका सधय अत्यन्त दूर है— सात सागर पार<sup>२</sup> शिव-महाय जी न भी गाय ब समस्त आनपा का उत्तर इस प्रकार निया है कि प्रियनमा की प्राप्ति उसकी गिद्धि है। प्रेम की साधनावस्था म तो उसका शील ब परम भूषण है किन्तु साथ ही कतिपय प्रेम जय रूपण भी लक्षित होते हैं। वह पदमावती ब निग अधीर हा उठता है आत्मपात ब लिए प्रस्तुत हा जाना है। स्वयं का उसका भियारी बताना है अभीष्ट की प्राप्ति हेतु दुराग्रह करता है, मध लगान तथा चारी म ता वह कुशल ही है, नाय ही भूत आनन म परावण भी है। अध-लोभ का रूपण भी उसम है। किन्तु य रूपण प्रेम जय होने ब कारण उसके शील ब भूषण हैं।<sup>३</sup> इस प्रकार पाठक जी न सुनिया क प्रेम सिद्धांत के आधार पर अपना मत स्थापित किया है।

जायसी के नायक पर साक दृष्टि से विचार करने पर रूप लाभ, अध लाभ दुराग्रह अदूरदर्शिता भवकीपन पत्नीप्रेम धम का नाशन मात्र वएन सुनकर ही प्रेम म मूर्च्छित होकर भटवने वाला 'यत्तिस्व, राजकाय म डीला, राधक ब निष्वासन म राजनीतिज्ञ दृष्टि का लोभ शत्रु का अपनी स्त्री दिखान की सहमति बूटनीति पता की कमी, अपने गोरा बादल से सरदारों पर अविश्वास, चारा की तरह सिंगल म संध लगान की घटना म व्यक्तिगत का पतन आदि अनेक दाप दिखाइ देत है। आदर्शवादी भारतीय दृष्टि से अपनी प्रथम रूपवती सती नारी को छोड़कर अय की रट लगा लना सबमा अनुचित है। पदमावती के लिए रत्नसन की तडपडाहट म निश्चय ही रूप जय विकार है तथा चार सज्ज के बगड उसका घोर भोग भी कवि न वर्णित किया है। रत्नसन न जम हारावन ब मुख से पदमावती का अपार सौंदर्य वएन सुनकर हाथ पर छाड दिए हं तथा बावला बनकर खूब रोया गया है, यदि वसे

१ डा० सुधीन्द्र कविश्वर जायसी और उनका पदमावत पृ० ७८

२ डा० शिवसहाय पाठक—पदमावत का काव्य सौंदर्य, पृ० १८२

३ यही पृ० १८२

ही लाज में बाई सामान्य या असामान्य व्यक्ति करने लगता तो जाग उस पर यूँगे तथा सामाजिक बाध का उत्तरदायित्व उस बहुत नीचा व्यक्ति साबित करेगा ।

### निष्कर्ष

जायमी न शायद अपने नायक की मर्यादा का आध्यात्मिकता का मान पहिना कर पूरा बना दिया है । 'एतिमरी' के माध्यम से भी परिस्थितियाँ तथा ध्वनियाँ उत्पन्न की हैं कि वह लावास्तर भूमि पर गड़ा हो जाना है । जायमी न रत्नसन एन एनिहासिक चरित्र में भारतीय कथानक रूढ़ियाँ तथा सूफिया के प्रेमवाद से एक मवीनता उत्पन्न की है उस पूरा सूफी साधक की तरह उपस्थित किया है । 'पदमावत' के नायक पर विचार करने के लिए यह अनिवार्य है कि सूफिया के प्रेम मिथान्त का दृष्टि में रखकर ही विचार किया जाना चाहिए । सभी सूफी-काव्य नायिका प्रधान हैं तथा नायिका परम मत्ता का प्रतीक है । जायमी ने भी पदमावती को परम मत्ता के प्रतीकात्मक में ही दिया है । रत्नसेन में इस दृष्टि से जो 'गुरु सुभा' के सवेन से जागरण उत्पन्न होता है, वह धम्मम्व नहीं लगता तथा रत्नसेन बावला नहीं एक आदर्श प्रेमी लगता है । श्री इन्द्रचन्द्र नारंग का यह मत उचित ही है कि वास्तव में इस काव्य के नायक के रूप में वह प्रेमी था—एसा प्रेमी जो पावती तथा लक्ष्मी तब की ओर आँखें उठाकर नहीं देख सकता और अपनी प्रेमिका के लिए अपने प्राणा का उत्साह करने में आधा-बीछा नहीं करता । वह पदमावता के प्रति अनुचित प्रस्ताव करने वाला का गिर काट कर उसके सम्मान की रक्षा करने में प्राणोत्सर्ग करके काव्य जगत में अमर हो गया है । उसके जाड़ का दूसरा प्रेमी काव्य सत्कार में नहीं है । 'इस प्रकार सभी विद्वान इस मन से सहमत हैं कि रत्नसेन प्रेम-भाग में अन्तर्भूत और अपार जीवित का नायक है तथा प्रेम साधना की दृष्टि में वह अमर सूफी साधक है । प्रेम भाग में वह वही भी मिल भर छुट नहा हाना तथा मरुजयी स्वरूप का सामन करता है । विपत्तियों के समक्ष असीम विश्वास उस प्रमजयी नायक मिद्ध करता है । 'अनुराग उनकी निधि है, विराग और कष्ट महिष्णुता उसका सबल, त्याग उसका मवल्य है, प्रियतमा मिद्ध उसका व्रत ।' ' अपनी समस्त इच्छाओं से वह समर्पित नायक है । अतः रत्नसेन के चरित्र पर लगाये जाने वाले दाप प्रायः निराधार हैं । यन्तुस्थिति यह है कि हम उन्हें लाजदृष्टि की ध्यान में रखकर उस पर दाप देते हैं, जबकि वह सूफी प्रेमसाधना से निमित्त पात्र है । उस सूफी मिथान्त के आधार पर स्वरूप प्राप्त आदर्श प्रेमी की दृष्टि से ही परलना चाहिए । प्रेम की दृष्टि से वह निर्णय तथा अपने ढंग का सूफी सत्कार में अवलोकनायक है ।

१ इन्द्रपाल नारंग—पदमावत का अनुगोचन पृ० १७६ ८०

२ डॉ० शिवसहाय पाठक पदमावत का काव्य सौंदर्य पृ० १८० ८१

## राम के नायकत्व का स्वरूप-विकास

### राम के नायकत्व का उद्गम

प्रारम्भिक काल में तब तक राम भारतीय संस्कृति में प्राण नहीं हैं। भारतीय जीवन एवं साधना पर इस स्थिति में नायक का इतना व्यापक प्रभाव पड़ा कि भारतीय आदर्श एवं मर्यादा का सम्पूर्ण स्वरूप उनके व्यक्तित्व में दर्शा जा सकता है। प्राचीन साहित्य में अभ्यस्त स्पष्ट है कि राम नाम का कभी कोई व्यक्ति रहा होगा, जो भार-भार संस्कृति के विकास के साथ-साथ विकास प्राप्त करता गया। जिसके विराट तथा मधुर व्यक्तित्व के निमाण में ऋषियों का मध्या, मार्गियों की चिन्तन साधना, सत्ता में रहना भक्तता तथा न जान बित्तन गहस्या का हाथ है। जीवन तथा जगत् में ता कुछ महान अनुकरणाय दिव्यशक्ति से ललित उद्भूत लगा, वह राम के व्यक्तित्व में समाविष्ट कर दिया गया। राम गुण सागर मनकर हमारी सांस्कृतिक चेतना के प्रतिनिधि हो गए। राम मानव, महामानव, विष्णु रूप, अवतारारूप, नारायण, पतित पावन, ब्रह्म निगुण-माकार लोक जीवन के एक मात्र आधार बन गए।

भारतीय जीवन को राममय दखकर लगता है कि राम के इस नायकत्व का विकास अचानक एवं वष या एक युग में नहीं हुआ वह प्रत्येक युग में युगानुक्रमिक बढ़ता रहा युग के नवीन जीवन मूल्य राम के व्यक्तित्व में मिलते रहे और वे प्रेरित नतयुग, द्वार तथा कलियुग तक लगातार नविक विकास का प्राप्त करते रहे हैं। तुलसी का नायक इसी युग युग की साधना का विकास प्राप्त रूप प्रस्तुत करता है। मध्ययुगीन महाकाव्यों में राम के नायकत्व पर विचार करने से पूछ यह अनिवार्य सा प्रतीत होता है कि राम के व्यक्तित्व से प्रभावित साहित्य की विधाओं में चाट्य प्राचीन महाकाव्य ही या नाटक जो आख्यायिकाएँ हो या गुरु शिष्य परम्परा की चर्चाएँ उन पर सशिष्ट प्रकाश डालना चाहिए ताकि इस सांस्कृतिक नायक का पूर्ण चित्र स्पष्ट हो सके। साथ ही यह भी देखा जा सके कि वे कौन सा राजनैतिक सामाजिक धार्मिक सांस्कृतिक अथवा नैतिक परिस्थितियाँ थी जिन्होंने राम के व्यक्तित्व का तुलना के मानस तक उतना विराट व्यक्तित्व दिया। इस व्यक्तित्व में युग-बाध तथा जावन बाध का कितना अपार रूप दर्शन है, यह रूप किन मानदण्डों या प्रतिमानों को लेकर विकसित हुआ है, इस रामकथा का इतना लोक व्यापक प्रचार-

प्रसार कैसे हुआ, तथा यही क्या भक्तों एवं गृहस्थों के जीवन का आधार कैसे बन गई ? इन सभी प्रश्नों को देखते हुए राम के नायकत्व का क्रमिक विवास देखना अनिवार्य है ।

भारतीय सभ्यता के नायक राम की कथा के मूल स्रोत कितने हैं, तथा यह कथा कितनी प्राचीन है राम में कहीं-कहीं से क्या-क्या मिलता रहा है इस प्रश्न पर गम्भीरता से विचार होता रहा है, फिर भी विद्वान् किसी एक सर्वमाय निष्कर्ष पर नहीं पहुँच सका है । भारतीय ज्ञान साधना के प्राचीनतम साहित्य वेदों में राम तथा राम-कथा के पानों के नामों का उल्लेख मिलता है, किंतु यह कहना सम्भव नहीं है कि वे प्राचीन नाम जो वेदों में उपलब्ध हैं उनका सम्बन्ध आज तक प्राप्त होने वाली रामकथा से है । राम ऐतिहासिक पुरुष थे या केवल कवि कल्पना के छादशपुत्र ? इस प्रश्न का उत्तर लगभग सभी विद्वान् यही देते रहे हैं कि राम कथा कोरी कल्पना नहीं है, राम निश्चय ही ऐतिहासिक व्यक्ति रहे होंगे, जिनके चरित्र का बाद में धर्मपूर्ण विवास हुआ ।

### वैदिक साहित्य में राम

वैदिक साहित्य में राम नामक अनेक व्यक्तियों का उल्लेख स्थान-स्थान पर मिलता है कहीं वे राजा हैं, कहीं वे आचार्य हैं, कहीं वे महिमाशाली यजमानों के साथ हैं ।<sup>१</sup> ऋग्वेद में एक स्थान पर 'राम' प्रतापी यजमानों के साथ हैं ।<sup>२</sup> हमसे पता चलता है कि वे पराक्रमी राजा रहे होंगे एवं यह राम ही पीछे से रामचन्द्र या दाशरथि राम बनकर विराट् रूप प्राप्त कर गये । 'सामण' के अनुसार 'राम' का अर्थ 'रमणीय पुत्र' है ।<sup>३</sup> डॉ० बलदेव प्रसाद का कहना है कि "राम नाम तो उस समय इतना प्रचलित था कि इस नाम के धारी लोग न केवल भारत में ही पाये जाते थे किंतु मिथ के रमसेस, ईरान के राम हुआस्य, असीरिया के रम्मेन अथवा रामानु आदि में भी उसकी छटा देखी जा सकती थी । भारत में राम नाम तो इतना सामान्य बन चुका था कि 'रमणीय पुत्र' के अर्थ में भी वह प्रयुक्त होने लगा था ।"<sup>४</sup> इस प्रकार राम नाम की व्यापकता असदिग्ध है । ऐतरेय ब्राह्मण में राम मागध्वेय और जनमेजय को लेकर एक कथा प्राप्त होती है,<sup>५</sup> जिससे पता चलता है कि वे श्याम

१ वैदिक कोश—गी सुषकांत, पृ० ४४६

२ प्रतद् गोमि पथक्के वेने प्र रामे योचम मुरे मद्यवस्तु ।

—ऋग्वेद—१० ६३, १४

३ रामायण—५, ८, १३

४ डॉ० बलदेवप्रसाद मिश्र—मानस में राम कथा, पृ० ३

५ ऐतरेय ब्राह्मण—७, २७, २४



राम क्या एक ही युग की वस्तु प्रतीत होती है, जबकि वदित युग के जीवन के आदर्श बन गए थे जबकि वदित दत्तनाथा का प्राणाय बना हुआ था + + + राम राजा का युद्ध भी आध्यात्मिक संघर्ष की ही घटना है, जिसमें आध्यात्मिक विजय हुई, पुनः रामकथा के जिन आदिम रूप का वर्णन किया गया है, उसमें नहीं, वाल्मीकि की कविता जो मूल रूप विद्वानों के स्वीकार किया है उसमें भी राम का रूप अवतार का नहीं महापुरुष का ही है। इसीलिए रामायाग्य में वदित युग की वस्तु नहीं तो उसके कुछ ही पाठ्य की है यह बदाचित्त माना जा सकता है।<sup>१</sup> राम के नायकत्व के बीच वदित साहित्य में मानना चाहिए था कि वह रूप में ही प्रयत्न प्रतीति राजा के रूप में। वदित जनता सर्वत्र यहाँ अवश्य विद्यमान है। पांडित्य ने भी वेदा के इस राम की परवर्ती परम्परा के नायक राम के रूप में स्वीकार किया है।<sup>२</sup> श्री विनायक चिन्तामणि वदित का भी यही माना है।

### रामायण में राम

भारतीय परम्परा यह मानती है कि वाल्मीकि रामचरित व प्रत्यक्ष द्रष्टा थे अतः वे समकालीन हैं। वदित इस तथ्य पर बड़ा विवाद है। राम से सम्बन्धित कथाएँ रामायण से पूर्व प्रचलित थीं, उनके प्रमाण मिलते हैं। यह कथा गुरु शिष्य परम्परा में चलती रही। मौखिक कथाओं का वाल्मीकि ने 'जन श्रुत' कह कर प्रयत्न किया। रामायण की कुशीलव गाँव की सुनाते रहे मौखिक परम्परा के ही कारण रामायण में पाठभेद है। लेकिन 'रामायण' के राम अथाह जीवित के सबगुण सम्पन्न उदात्त मानव हैं, जिनका जीवन के समस्त आदर्श गुणों को राम के रूप में साकार कर दिया।<sup>३</sup> यहाँ राम का स्वरूप अवतार का नहीं, जनजीवन की प्रेरणा दान वाला महापुरुष का है। यही से राम अत्यन्त भव्य स्वरूप प्राप्त कर गये हैं।<sup>४</sup> परवर्ती परम्परा में राम के नायकत्व का आधार स्तम्भ यही वाक्य है। पीछे

१ स० डा० धीरेन्द्र वर्मा—द्वितीय खण्ड, पृ० ३००

२ F E Pargiter—Ancient Indian Historical Tradition p, 170

३ 'Still as depicted by Valmiki Rama was a high-souled hero and poets including those nameless one's who wrote Puranas in the name of old Rishi, Particularly Bhava Bhuti still more highly exalted his character Rama therefore won a place in the heart of Indian people and that must have soon led it to the foundation of cult

—R G Bhandevkar—Vaisnavism Saivism p 47

४ Rama was perhaps a Victorious historical king the hero of the second great Indian epic Ramayana

—Max Beber—The Religion of India, p 306

से बौद्ध तथा जनियो के साहित्य में राम के जो उल्लेख मिलते हैं वे इस तथ्य के निश्चित प्रमाण हैं कि बुद्ध तथा महावीर स्वामी से पूर्व ही राम ग्रन्थान नायक के रूप में प्रतिष्ठित हो गये थे।<sup>१</sup> उपर्युक्त मतों से स्पष्ट है कि 'रामायण' का राम के नायकत्व का महत् आरम्भ है।

## महाभारत में राम

'महाभारत' में राम कथा का चार स्थानों पर उल्लेख है। इसमें 'रामो पाटनान साराधिव ग्रन्थान तथा महत्त्वपूर्ण माना जाता है। 'रामोपाख्यान' में ब्रह्मा देवताका से कहते हैं कि विष्णु मेरे आदेश के अनुसार अवतार लेकर रावण की हत्या करेंगे।<sup>२</sup> 'स्मर्गरोहण' सर्ग में भी रामावतार का उल्लेख है।<sup>३</sup> 'आरण्यक पर्व' में एक स्थान पर राम का दशरथ गृह निवास तथा रावण-वध का वर्णन है।<sup>४</sup> 'रामोपाख्यान' में रावण की कथा तथा 'शान्ति पर्व' में शम्भू-वध का वर्णन मिलता है।<sup>५</sup> इन सभी अध्यायों को देखकर ही डॉ० वेबर ने 'रामोपाख्यान' का ही रामकथा का आधार माना है।<sup>६</sup> किन्तु उनका मत समीचीन नहीं है। रामायण निश्चय ही महाभारत से पूर्व की रचना है। महाभारत के पात्रों का संकेत तक रामायण में नहीं है जबकि महाभारत रामकथा का उल्लेख करता है। अतः राम कथा का आधार भी रामायण पर ही अधिक टिका है। 'आरण्यक पर्व'<sup>७</sup> में

- १ 'अनेक बार पण्डितों ने यह सिद्ध करना चाहा है कि रामायण बुद्ध के बाद रची गयी और वह महाभारत से भी बाद की है। किन्तु इससे समस्याओं का समाधान नहीं होता। भारतीय परम्परा एक स्वर से मालमीकि को आदि कवि मानती आई है। यहाँ के लोगो का विश्वास है कि रामावतार भेता युग से हुआ था।"

—श्री रामचारीसिंह 'विनकर'—संस्कृति के चार अध्याय, पृ० १६

- २ तदयमवतीर्ण सौ मनि योगाच्चतुभज ।  
विष्णु प्रहरतां श्रेष्ठ स कमलकरिष्यति ॥१॥ ३, २६
- ३ वेदे रामायणे पुण्डे भारते भरतपंथ ।  
आदौ चाते च मध्ये च हरि सवत्र गीयते ॥२३॥ १८, ६
- ४ विष्णुना वासता चापि गते दशरथस्य व ।  
दत्त प्रीयोहृत्तच्छन सयुगे भीम वमणा ॥१८॥ ३, २६६
- ५ श्रुयते शम्भुके गूढे हते ब्राह्मणदारक ।  
जीवतो धर्माक्षय रामत्सत्यपराप्रमात ॥६२॥ १२, १४६
- ६ ऐ० वेबर—अनादि रामायण—पृ० ६५
- ७ महाभारत आरण्यक पर्व—३ १४७, २८, ३८

हनुमान ग्यारह श्लोकों में राम बनवास और सीताहरण से लेकर अयोध्या लौटने तक की कथा को संक्षेप में कहते हैं। द्रोण पर्व में 'षोडश राजोपाख्यान'<sup>१</sup> के अन्तर्गत भी रामकथा प्राप्त है। नारद राम-महिमा के उत्पाटन के लिए अयोध्यावाण्ड से लेकर मुद्ग-वाण्ड तक की कथा कहते हैं। राम यहाँ देवतामा, ऋषिमा, प्राणियो आदि सब में महान् घोषित किए गए हैं। 'शान्ति पर्व' में कृष्ण धर्मराज का राम के अश्वमेध यज्ञ की कथा सुनाते हैं।<sup>२</sup> रामोपाख्यान तथा रामायण में साम्य की अधिकता है। 'रामोपाख्यान' के कुछेक स्थल तो 'रामायण' के बिना स्पष्ट ही नहीं हो सकते<sup>३</sup>, इससे भी रामायण की प्राचीनता सिद्ध है। 'वनपर्व' का रामोपाख्यान भी रामायण का ही समुद्र रूप प्रस्तुत करता है। यहाँ तक आते आते राम के नायकत्व में ईश्वरत्व का समावेश हो जाता है। रामायण तथा महाभारत के समय से ही परशुराम तथा बलराम की कथाएँ प्रचलित थीं। शायद इसीलिए कामिल बुल्के का मत है कि रामायण के नायक को निर्दिष्ट करने के लिए विशेषण का सहारा लेना आवश्यक था, यही कारण है कि 'दाशरथिराम' तथा 'रामचन्द्र' के स्थान पर 'रामचन्द्र' शब्द मिलता है।<sup>४</sup> अपने मत की पुष्टि में उन्होंने निम्नलिखित उदाहरण प्रस्तुत किए हैं—

१ राम—पूण च द्रानन ।<sup>५</sup>

२ राम—पूण च द्वाभिवोदितम् ॥<sup>६</sup>

३ राम—मोमवस्त्रिदशा ।<sup>७</sup>

'रामचन्द्र' पूरा नाम सम्पूर्ण 'रामायण' में केवल एक ही बार प्राप्त होता है।<sup>८</sup>

### बौद्ध साहित्य में राम

राम का व्यक्तित्व इस समय तक बहुत लोकप्रिय हो गया था। बुद्ध ने स्वयं अपने को राम का ही रूप कहा है। बौद्धों ने अपने जातक साहित्य में 'राम-कथा'

१ महाभारत—द्रोणपर्व—१, ८, ४३७, ४२२

२ महाभारत—शान्तिपर्व—१२, २६ ४६, ५५

३ वे० बी० एम० सुक्याकर—रामोपाख्यान एण्ड महाभारत, केमोरेशन, पृ० ४७८

४ वे० कामिल बुल्के—रामकथा—उत्पत्ति और विकास पृ० ११

५ रामायण, ५, ३४ २८

६ वही, ६ ३३, ३२

७ वही १, १, १८

८ 'रामचन्द्र' मतदृष्ट्या अस्त रामायण राहुणा ॥'६, १०२, ३२



को जब तब स्थान दिया है। प्राचीन बौद्ध साहित्य में राम कथा से सम्बंधित अब तक तीन जातक मिले हैं जिनमें से दशरथ जातक बहुत प्रख्यात है।<sup>१</sup> 'जातवन' में बुद्ध द्वारा एक कथा इस प्रकार कही गयी है कि किसी महस्य का पिता मर गया था उस ने सभी काय शाक से अभिभूत होकर त्याग दिया था। भगवान बुद्ध ने उसे उपदेश दिया कि प्राचीन काल में पण्डित लोग पिता के मरने पर शोक सन्तप्त हो सबथा निष्क्रिय नहीं हो जाते थे। उन्होंने दशरथ के सत्यधाम में जाने पर राम के असीम धर्म का उदाहरण दिया है। यही पर स्वयं को बुद्ध ने राम स्वीकार किया है। इस कथा से भी यही पुष्टि होती है कि भगवान बुद्ध से पूर्व राम के गुणों की चर्चा पण्डितों का प्रिय व्यसन था तथा राम के गुणों की धार उस समय के बौद्धों तथा समाज सुधारकों पर जम चुकी थी।<sup>२</sup> कोई भी व्यक्ति अपने को राम कहकर धर्म समझता था। गौतम का अपने को राम कहना यही सिद्ध करता है। रामायण महाभारत तथा दशरथ जातक के अति एक समय की ही प्रतीति होत है किन्तु राम कथा के सम्बंध में रामायण का ही विशेष प्रमाण है। जातक से जो रामकथा हम प्राप्त होती है उस पर भी रामायण का ही प्रभाव मानना चाहिए।

### जन साहित्य में राम

जन साहित्य में राम का विस्तृत वर्णन प्राप्त है। राम, लक्ष्मण तथा रावण को जनियो ने महापुरुषों की कोटि में रखा है। त्रिपट्टि शिक्षण महापुरुष में राम, लक्ष्मण तथा रावण प्रमथ वनदेव वासुदेव तथा प्रतिवासुदेव माने जाते हैं। वासुदेव अपने बड़े भाई बलदेव के साथ प्रतिवासुदेव का पथ चलते हैं। वे दिग्विजय करने के उपरान्त पञ्चवर्ती सम्राट बन जाते हैं। यही यह दृष्ट्य है कि प्रतिवासुदेव का पथ बलदेव (राम) नहीं चलते वासुदेव (जम्भव) करते हैं। इससे धनित है कि ये राम से अधिक शक्तिशाली लक्ष्मण का मानते हैं किन्तु परवर्ती परम्परा में ऐसा नहीं है। जनियो ने राम-कथा का अनेक रूप से प्रयोग किया है। फिर भी राम की महत्ता तथा उनके व्यक्तित्व का विस्तार यहाँ भी है। इससे भी स्पष्ट है कि राम सभी धर्मों में प्रवेश कर गये थे तथा एक आत्मा के रूप में वे अपनाय जाने लगे थे। इन समस्त जन काव्या में राम का व्यक्तित्व एक महापुरुष का है।

१ दे० फासबाल, 'जैन भाग ३' पृ. ४६१

२ जातक स्थित साक्ष्य है कि उन्होंने अथवा उनके वक्ता श्री गौतम बुद्ध ने 'पौराणिक पण्डितों' से यह राम कथा पाई थी। अतएव बौद्ध लोग राम कथा के आदि प्रवक्ता नहीं कहना चाहते ॥

— डा० बलदेवप्रसाद—माना में राम कथा, पृ. ८

राम के नायकत्व का स्वरूप विकास

राम क्या सम्बन्धी गाथाएँ तथा आख्यानक काव्य

बौद्धों के त्रिपिटका से स्पष्ट भलवता है कि बाल्मीकि रामायण से पूर्व गाथाएँ प्रचलित हो चुकी थी। 'आदि रामायण' इसी परम्परा का स्फुट आख्यान काव्य है। विद्वान 'बाल्मीकि कृत रामायण' से भी पूर्व 'आदि रामायण' का समय निर्धारित करते हैं। इसमें राम के क्षत्रियत्व के आदर्श का मुक्तगान है। बाल्मीकि ने राम की बड़ी ही विराट् भूति यहाँ प्रस्तुत की है। लेकिन आज विद्वान यह सिद्ध कर चुके हैं कि बाल्मीकि रामायण ही आदि-काव्य है और शेष परवर्ती रचनाएँ हैं। राम के नायकत्व का जितना विकास बाल्मीकि रामायण में दृष्टिगोचर होता है, उतना पूर्व या समकालीन के किसी भी ग्रन्थ में नहीं होता। रामायण में राम का चरित्र धार्मिक सत्कृति का आदर्श चरित्र है। अतः इन गाथाओं तथा आख्यानक काव्यों का महत्व अधिक नहीं है।

पुराण शैली में राम

सामान्य धारणा यह है कि पुराणों के महान ज्ञान का प्रवर्तन प्रजापति ने किया। याम ने पुराण विद्या का प्रचार किया। अष्टादश पुराणों में विष्णु पुराण, ब्रह्म पुराण भावगन पुराण आदि का विशेष महत्व है। पुराण-शैली में लिखी 'अध्यात्म रामायण' भी मिलती है। पुराणों से प्रभावित इन रामायणों में भक्ति-स्वर का प्राधान्य है। जनसामान्य भगवान् में विश्वास रखता हुआ उनका भक्ति में अपने को डूब करना चाहता है। इसका संकेत 'आनन्द रामायण' तथा 'अद्भुत रामायण' में मिलता है। 'भृगुण्ड रामायण' से लगता है कि तुलसीदास ने काग मण्ड सम्वाद उसी का आधार बनाकर लिखा है। इन सभी में बाल्मीकि रामायण का ही अनुसरण है। हाँ इनके भीतर विष्णु का राम के रूप में अवतार होने का संकेत है तथा राम के व्यक्तित्व में उपासना पद्धति का तीव्र रूप यहाँ मिलता है।

राम और अवतारवाद

धारे धीरे विष्णु के दो रूप कृष्ण तथा राम, कृष्णाश्रयी वधूज शास्त्रा तथा रामाश्रयी वधूजशास्त्रा के रूप में विभक्त हो गये। कृष्णाश्रयी शास्त्रा की सचप्रथम विशेषता यह रही कि वही कृष्ण की विष्णु सचप्रथम माना जाता रहा तथा बाद में

अनेक रूपा की कथाएँ प्रचलित हुई।<sup>१</sup> राम के विषय में इसका ठीक उल्टा है, प्राचीन साहित्य इस तथ्य का प्रमाण है कि रामकथा न जाने कब से प्रसिद्ध थी,<sup>२</sup> न जाने इस कथा का कितना प्रचार प्रसार होता रहा और राम बवल एक नर चंद्रमा या महामानव के रूप में आदरणीय रहे। अवतार के रूप में विष्णु राम का रूप बहुत बाद में प्रचलित हुआ। राम विष्णु के अवतार कब से माने जाने लगे, इस विषय पर बड़ा विवाद है। डा० भण्डारकर का मत है कि ग्यारहवीं शती में राम का विष्णु रूप में अवतार का स्पष्ट प्रमाण मिलता है।<sup>३</sup>

भारत में अवतारवाद की भावना कब प्रचलित हुई, कुछ निश्चित कहना कठिन है। विद्वान अवतारवाद की भावना को शतपथ-ब्राह्मण से स्वीकार करते हैं।<sup>४</sup> प्रारम्भ में विष्णु की अनेका प्रजापति का महत्त्व अधिक हो गया। प्रजापति ने मत्स्य, वृम, वराह आदि का अवतार धारण किया। परम्परा में परिवर्तन आया तथा परवर्ती काल में प्रजापति से विष्णु का महत्त्व अधिक हो गया तथा ये अवतारवाद में प्रतिष्ठा पा गये। 'महाभारत के नारायणोपाख्यान'<sup>५</sup> में वराह तथा विष्णु का सम्बन्ध मान लिया गया। वामनावतार तथा नसिंह अवतार प्रारम्भ से ही विष्णु से सम्बन्धित हैं।<sup>६</sup> कृष्ण का विकास हुआ और उनके साथ साथ अवतारवाद में नया

१— अवतारवाद के इस ऐतिहासिक क्रम के अनुसार श्रीकृष्ण तथा राम दोनों विष्णु के प्रारम्भिक अवतारों में माने जाते हैं। 'महाभारत' और वाल्मीकि रामायण में देवों के सामूहिक अवतारवाद का सम्बन्ध क्षत्रियों से ही अधिक रहा। दधी राज उत्पत्ति के समयक मनु ने मनुस्मृति में राजाओं के शरीर में विभिन्न देवों का अवतार माना है। धर्मव्य अवतारवाद में क्षत्रिय राम और कृष्ण तत्कालीन ब्राह्मण भवतों के उपास्य रूप में प्रचलित हुए।

— डा० कपिलदेव पाण्डेय मध्यकालीन साहित्य में अवतारवाद, पृ० १५

२ Max Müller—The Religion of India, p 307

३ The Cult of Rama therefore must have come into existence about the eleventh century

R. G. Bhattacharya—Vaisnavism, Saivism p 47

४ शतपथ ब्राह्मण, ८, १, १

५ नारायण उपाख्यान—१२, ३१, ७२

६ एच० वाशेबी—अनारमण इनगादरलोरोटिया काव रिताग्रन एव देवित्त, भाग ७

## राम के नायकत्व का स्वरूप विकास

परिवर्तन आया तथा अवतारवाद में प्रेमरूपा भक्ति का प्रादुर्भाव हुआ। भागवतो के उपास्यदेव वासुदेव कृष्ण थे जिनका विष्णु से आरम्भ में कोई सम्बन्ध गत नहीं होता है। सम्भवतः तासरी शताब्दी ई० पू० में वासुदेव कृष्ण तथा विष्णु की अभिन्नता स्थापित हुई।<sup>१</sup> राम की लोक कथा का व्यापकत्व उसे अवतारवाद की ओर मोड़ कर ले गया। 'एक ओर अवतारवाद की भावना फलती जा रही थी, दूसरी ओर कई शताब्दियों से राम का चरित्र भारतीय जनता के सामने रहा था। रामायण की लोकप्रियता के साथ साथ राम का महत्व भी बढ़ता रहा, उनकी बीरता के वर्णन में अलौकिकता की भावना भी बढ़ने लगी। रावण पाप और दुष्टता का प्रतीक बन गया और राम पुण्य और सगुणार का। अतः इस विकास की स्वाभाविक परिणति यह हुई कि कृष्ण की भाँति राम भी विष्णु के अवतार माने जाने लगे।'<sup>२</sup> बुद्ध भी छठी शताब्दी में विष्णु के अवतार माने जाने लगे थे। नारायण उपाख्यान<sup>३</sup> में विष्णु के छह अवतारों की सूची इस प्रकार है— (१) वाराह (२) नरसिंह, (३) वामन, (४) भगवत् राम (५) दाशरथिराम, (६) वासुदेव कृष्ण।

'हरिवंश पुराण'<sup>४</sup> में चार बार विष्णु के अवतारों की सूचना मिलती है। 'भागवत पुराण',<sup>५</sup> में दो बार वाइस तथा एक बार इक्कीस अवतारों के नाम गिनाए गए हैं जिनके नामों की सूची देना यहाँ समीचीन नहीं है।

उपयुक्त विवरणों के आधार पर इतना कहा जा सकता है कि राम के चरित्र का आरम्भिक रूप एक आदर्श पुरुष का रहा होगा। उनका चरित्र जैसे जैसे लोकप्रिय हुआ गया वैसे वैसे उसमें अद्भुत तत्व या अलौकिकता का समावेश होता गया। बौद्ध साहित्य में भगवान् तथगत की राम के रूप में कल्पना है। राम ने रामायण में नर रूप में, महाभारत में क्षत्रिय रूप में, ब्राह्मणों में विष्णु अवतार रूप में तथा पुराणों में भक्त-वत्सल इष्टदेव के रूप में स्थान प्राप्त किया। राम की कथा का सांस्कृतिक गौरव इतना बढ़ा कि भारतीय जीवन का वर्ण वर्ण राम में मिलकर घट्ट हो गया। अग्रज्ड भारत की सांस्कृतिक चेतना के नायक मर्यादा पुरोत्तम राम बनते गये। विष्णु का राम रूप में अवतार सम्पूर्ण भारतीय वाङ्मय में प्रतिष्ठित हो गया।

१ एच० चौधरी—अर्ली हिस्ट्री ऑफ दि वेंकटव सेक्ट, पृ० ६३

२ डा० कामिल बुलके—राम कथा, उत्पत्ति और विकास, पृ० १४६

३ महाभारत—१२, ३२६, ७२, ६२

४ भीमती वीणापाणि—हरिवंश पुराण का सांस्कृतिक अध्ययन पृ० ४०

५ भागवत पुराण—१, २, ३, २, ७

## धार्मिक साहित्य में राम का समन्वित रूप

ध्रुवतारी राम धार्मिक नेता बन गये धीरे धीरे सम्पूर्ण भारतीय धर्म माधना में वे एकाधिकार प्राप्त कर गये। उनका व्यक्तिगत जीवन में मर्यादा का प्रतीक बन गया और धर्म में यह धार्मिक नेता प्रेरणा का अग्रदूत बन गया। भक्ति-भाग का धेदो में मूल तथा भाग्यवत धर्म में विकास मिलता है। सम्भव है कि भागवत का भक्ति भाग बौद्ध तथा जैन धर्मों की प्रतिस्पर्धा से उत्पन्न हुआ है। धीरे धीरे राष्ट्रिय धर्म का समन्वय हो गया और ब्रह्मण्य धर्म का उत्पत्ति हुई। भक्ति भावना त्रिपुण का आश्रय पारर विस्तार पाने लगा। विष्णु के धर्मक अवतार माने जाने लगे, जिनमें रामावतार भारतीय संस्कृति के अधिक अनुकूल पड़ा। फिर भी भागवत धर्म, शाण्डिल्य भक्ति सूत्र भक्ति शास्त्र रामानुज निम्बाक तथा बलभ के सम्प्रदायों में कृष्णावतार का एकाधिकार मिला।<sup>१</sup> रामावतार का संकेत तो बहुत पहिले मिला था। शक्ति राम के साथ भक्ति भावना का संकेत बहुत बाद में मिला।<sup>२</sup> ब्रह्मण्य गहिताओं तथा उपनिषदों में राम पूजा तथा राम भक्ति का गम्भीर प्रतिपादन है। ऐसे ग्रन्थों की रचना सर्वप्रथम रामानुज सम्प्रदाय में हुई। अपने भाष्य में उन्होंने कृष्ण तथा राम का प्रतिपादन किया। सहिता में शक्ति का सम्बन्ध भी विष्णु से हो गया। यही शक्ति सीता तथा विष्णु राम बन गये।<sup>३</sup> राम विषयक तीन उपनिषदें सुरक्षित हैं। (१) रामयुक्तापनीय (२) रामोत्तरापनीय (३) रामरहस्योपनिषद्। मुक्ति उपनिषद् में हनुमान परमात्मा के रूप में राम का वर्णन करते हैं। भगवद्गीता में अनुकरण पर रचित रामगीता नामक ग्रन्थ का उल्लेख डा० कामिल बुल्के ने किया है जिनमें वेदांत के आधार पर राम के परम ब्रह्मत्व का प्रतिपादन है। गीता की भांति इसमें भी अठारह अध्याय हैं। रामानन्द ने 'ब्रह्मण्य मता' 'जगत्स्वर' तथा श्री रामावन पद्धति में विष्णु तथा लक्ष्मी के स्थान पर राम सीता का अपना आराध्य माना है। दक्षिण भारत में आलवारों की राम भक्ति धारा उत्तरी भारत में आई।<sup>४</sup> रामानन्द ने चौदहवीं शताब्दी में इसी राम भक्ति

१ डा० बलदेवप्रसाद मिश्र—तुलसी दान, पृ० ५१

२ डा० कामिल बुल्के—रामकथा उत्पत्ति और विकास, पृ० ५५

३ मुक्तिउपनिषद्—रामत्व परमात्माऽस्ति तच्चिदानन्द' अध्याय १४

४ (१) भक्ति द्राविण रूपजी लाये रामानन्द।

परमार्थ किया बबोर ने, सप्त द्वीप तब खण्ड ॥

(२) उत्पत्ति द्राविडे चाह, कर्पाट बुद्धि मता।

स्थिता किञ्चिमहाराष्ट्रे गुजरे जोयता मता। पद्म पुराण

का प्रचार किया।<sup>१</sup> बलीर न निगुण राम को अपनाया। आगे चल कर राम का अनेक रूपा में विकास 'मानस' में हुआ। इसीलिए तुलसी ने मानस को 'रामा पुराणनिगमागम सम्मन रघुनाथ भाषा'<sup>२</sup> का नाम दिया है।

भक्ति धारा में राम के नायकत्व का विकास कृष्ण के नायकत्व के विकास के बाद में हुआ, अतः उन पर कृष्ण की मधुराभक्ति का प्रभाव स्वाभाविक था।<sup>३</sup> और राम भक्ति में रसिक-सम्प्रदाय का जन्म हुआ।<sup>४</sup> कृष्ण के नायकत्व में आनन्द कला या प्रसार तथा राम में सात्व-मयाना तथा सम्प्रदाय का विकास हुआ।<sup>५</sup>

## पौराणिक साहित्य में राम

पौराणिक साहित्य में राम का व्यक्तित्व अत्यन्त प्रभावशाली ढंग से व्यक्त हुआ। इन गाथाओं में राम के महान गुणों का लघु विशाल चित्र है। पौराणिक साहित्य में राम पर ईश्वरत्व की इतनी प्रतिष्ठा की गई कि वह मूल में व सदैव-मदद के लिए उसी रूप में अमर हो गया। हरिवंश पुराण<sup>५</sup> में संक्षिप्त रामचरित्र उपलब्ध होता है। धरा पर धर्म का स्थापना के लिये रामावतार, पिता की आज्ञा से वनवास तथा अपने अनुल पराक्रम से दक्षताओं की मुक्ति देने के लिए असुरराज रावण के वध तक का एक यथा है। इसमें राम राज्य का बखान बड़ा अदभुत है। लगता है कि तुलसी ने अपने रामराज्य-वर्णन में इसका अवश्य ही उपयोग किया होगा। आदर्श राजा के रूप में उनका यह रूप उन्हीं लोकस्वार्थों के नायक का है। विष्णु पुराण में भी राम का यही रूप प्राप्त है। भागवतपुराण अग्निपुराण नारदीयमहापुराण, तथा पद्मपुराण आदि में राम के गुणों का बखान मिलता है। उपपुराणों में विष्णु धर्मोत्तरपुराण नमिष्ठपुराण शिवमहापुराण, आदिकी भागवत पुराण (इसमें नवरात्रिमहात्म्य की कथा) आदि प्रसिद्ध हैं। देवी भागवतपुराण में राम नवरात्रि का व्रत रम्यत है भक्ति की आराधना में पूर्ण समर्पण के भाव से जुट जाते हैं। यहाँ पर राम का रूप एक धारद्वयी योगी का आता है जो साधना पद्धति तथा अज्ञेय आत्मशक्ति से अनु को जीत लेता है।

१ डा० रामकुमार वर्मा—हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास पृ० ३४१

२ रामचरित मानस—पृ० १

३ ग० भगवतीप्रसादसिंह—राम भक्ति में रसिक सम्प्रदाय पृ० ७६

४ वही पृ० ७७

५ हरिवंश पुराण—२ ६३ ६ ७

## अनेक रामायणों में राम

राम के नायकत्व में विवास्त की दृष्टि से अनेक रामायणों का भी महत्व है। राम देश के कण कण, में किस प्रकार रम गये थे, भारतीय जीवन कितना राममय बन गया था इसका प्रमाण यह रामायणें प्रस्तुत करती हैं। अनेक राम नया सम्बन्धी रामायणों की सूची से लगता है कि 'प्रत्येक कवि इस महान् चरित्र का गुण गान करने में अपने की धन्य समझता रहा होगा। महारामायण, सबतरामायण, लोमश रामायण, भगत्स्य रामायण मञ्जुल रामायण सोपद्यरामायण रामायण महामाला, सौहार्द्र रामायण, रामायण मणिरत्न चन्द्र रामायण मन्द रामायण स्वायम्भुव रामायण, सुब्रह्म रामायण सुवचस रामायण, देव रामायण, ध्रुव रामायण दुरत रामायण रामायण चम्पू आदि अनेक रामायणों का उल्लेख मिलता है। अधिकांश रामायणें आज प्राप्त नहीं हैं। किन्तु लगता है कि इन रामायणों का उद्देश्य अपने भारतीय जीवन के सांस्कृतिक नायक की दिव्यता का उदघाटन रहा होगा।

## ललित साहित्य में राम के नायकत्व की परम्परा

प्राचीन काल से ही भारतीय साहित्य में राम रस का अमृत मिल गया है। धीरे धीरे राम के गुणों का गान जीवन का प्रेरणात्मक राग बन गया। कालिदास ने ४०० ई० के लगभग रघुवंश नामक महाकाव्य के अन्तिम सर्गों में राम के वंशजों का विस्तार गान किया है। 'रघुवंश' का आरम्भ राजा दिलीप से तथा अन्त राम क्या के विस्तार के साथ होता है। प्रसन्नजित ने सेतुबन्ध नामक अपने महाकाव्य में राम क्या की आधार बनाया। सातवीं शताब्दी मध्य का लिखित हुआ 'भार्वकाय' या रावण वध भी राम से सम्बंधित अमर रचना है। कवि न बाइस सर्गों में राम जन्म से लेकर राज्याभिषेक तक की घटनाओं की रामायण क्या के अनुकूल प्रस्तुत किया है। मुद्रवीरव रूप में राम का यह अनुपम उदाहरण है। कुमारदास (८०० वीं शताब्दी) का जानकीहरण महाकाव्य पन्द्रह सर्गों का उपलब्ध है जिसमें राम का विरही नायक का रूप तथा मानव हृदय की कोमलता की प्रस्तुत करने वाला दिखाया गया है। नवी शताब्दी में अभिनव कृत रामचरित भी राम की लेकर लिखा गया महाकाव्य है। क्षेमेन्द्र ने ग्यारहवीं शताब्दी में दशावतार चरित तथा रामायण-मञ्जरा की रचना की। लगभग चौदहवीं सदी में साहित्यमल्ल का उदार रायव' नामक महाकाव्य मिलता है। पन्द्रहवीं शताब्दी में रघुनाथ उपाध्याय ने राम विजय नामक काव्य की रचना की तथा राम का दिव्य-नायकत्व वहाँ पर प्रदग्नुत है। चक्र वाक का १७ वां शताब्दी का जानकी-परिणाम नामक राण्डकाव्य भी राम के नायकत्व का लेकर लिखा गया। इस प्रकार बाल्मीकि रामायण से

राम के नायकत्व की परम्परा ललित साहित्य में बड़ी विशाल है। वे काव्य के सनातन नायक बन गए तथा उनके उद्भात-नायकत्व के बहाने के बिना महाकवि अपनी भक्ति को अपूर्ण समझने लगे। परिणामस्वरूप लोक रचि राम की आर हो गयी थी।

दृग लोक रचि का प्राबल्य नाटकी में देखा जा सकता है। अनेक नाटक राम का आधार बनाकर लिखे गये। नाटक जीवन का सच्चा अनुकरण है तथा जनमानस की सच्ची अभिव्यक्ति का साधन भी। महाकवि भास ने 'अभिषेक-नाटक' तथा 'प्रतिमा-नाटक' में राम-कथा को आधार बनाया। भवभूति ने (छाठवीं शताब्दी) महावीर चरित तथा 'उत्तर राम चरित' नामक नाटकी का रचना की। अनन्त हर्ष ने छाठवीं सदी में 'उदात्त राघव' भोजदेव ने ग्यारहवीं सदी में 'कुदमाता' मुरारि (नवीं सदी) ने 'मनघ राघव' राजशेखर ने (दसवीं सदी) में 'वाल रामायण', हनुमान हठ (दसवीं सदी में) 'महानाटक', जयदेव हठ 'प्रसन्न राघव' आदि का आधार रामकथा ही है। इस प्रकार सस्कृत साहित्य में राम महाकाव्य तथा नाटक दोनों के लिए सवमाय नेता बने रहे। प्रत्येक युग के अनुसार उन के व्यक्तित्व में नर, देव, नारायण, रक्षक, योद्धा, त्यागी आदि अनेक गुणों का अलग अलग प्रस्तुतीकरण किया। तुलसीदास तथा उनके परवर्ती महाकाव्यकार कवियों के समय राम के नायकत्व की एक विशाल परम्परा थी। मुगलों के काल में उत्पन्न तुलसी अपने नायक निसिचर हीन करी मही भुज उठाय प्रण की-ह' से बड़ी प्रतिष्ठा क्या कर सकते थे। हिंदुओं को नवीन प्रेरणा देने वाला चरित्र, उस समय तक राम से बड़कर कोई दूसरा था ही नहीं। विश्वास का सागर यह नायक ही जन-जन का सहारा था। इसी कारण तुलसी ने अपने नायक को धर्म-नायक, सांस्कृतिक नायक आदि अनेक रूपों में प्रस्तुत किया है।

### तुलसी पूर्व हिन्दी के ललित साहित्य में राम का नायकत्व

सस्कृत के ललित साहित्य में राम के नायकत्व की एक विशाल परम्परा है इसका सबेत् ऊपर किया है। तुलसी पूर्व हिन्दी में भी राम-साहित्य उपलब्ध है, जिसका सबेत् प्राचीन साहित्य के अनुमधित्यु समय समय पर देने रहे हैं। खोज विवरण से राम साहित्य का सूचनाएँ उपलब्ध हुई हैं। चौहरी शताब्दी में रामानन्द ने रामरक्षाश्रित में राम की वन्दना की है।<sup>१</sup> नाभादास के 'भक्तमाल' में कबीर पना सना आदि सत्ता के नाम की सूची है जो निगुण राम की परम ब्रह्म एवं



परम उपास्य के रूप में अपनाते हैं।<sup>१</sup> भक्त विष्णुनाम ने 'वाल्मीकि रामायण' का हिन्दी रूप प्रस्तुत किया है।<sup>२</sup> ईश्वरदास की कृति 'भरत मिनार' का भी नाम इस परम्परा में लिया जाता है।<sup>३</sup> कृष्ण भक्ति के अमर गायन मूरदास ने राम का गुण गान साम्प्रदायिकता से मुक्त होकर किया है। मूरसागर के नवम स्कन्ध में सम्पूर्ण 'राम कथा' का उल्लेख है। मूरदास द्वारा वर्णित एक पद रावण वध के सम्बन्ध में देखिए—

रघुपति अपनी प्रान प्रतिपाद्यों ।

तोरयो कापि प्रबल गढ, रावन दूब दूब करि डारयो ।

कट्ट भुज बहु घर बहु सिर लोटत मानो मन् मदवारी ॥

भमकत, तरफत, सोनित मे तन नाही परत निहारौ ॥

+ + +

जियो बिभीषन राज मूर प्रभु किया मुरनि निस्तारौ ॥<sup>४</sup>

तुलसी ने इसी भारतीय सत्कृति के आधार-स्तम्भ राम को अपने काव्य में नायक बनाया। आगे चलकर हम 'रामचरित मानस' के नायक पर विचार करेंगे।

**प्राचीन साहित्य के आधार पर राम के ऐतिहासिक महत्त्व का उदघाटन**

वेदा से राम का ऐतिहासिक महत्त्व आरम्भ होता है। तुलसीदास के 'राम चरित मानस' तक उनके 'यस्मिन् रामे विष्णुत्वं परमब्रह्मत्वं तथा लीलाधनारी ईश्वरत्वं का तत्त्व समाविष्ट दिखाई देता है। विष्णुनिष्ठस का यह मत उचित लगता है कि आरम्भ में राम एक शत्रिय जाति के नेता थे उनके महत्वायों ने महामानवत्व की प्रतिष्ठा की। ऋषियों की बातों ने उनका आदर किया वे एक राष्ट्रीय नेता के रूप में पूजनीय बन गये तथा धीरे धीरे वे परम ब्रह्म के रूप में वर्णित हो गये।<sup>५</sup> रामायण ॥ पूव के प्रताप राजा हैं। रामायण में वे महामानव तथा सबगुण सम्पन्न सांस्कृतिक नेता हैं बौद्ध तथा जैन साहित्य में आश्वष पुरुष हैं, पुराणों में इन पर ईश्वरत्व की प्रतिष्ठा है, वेनात्त का ब्रह्मवाणी परम्परा में वे पूजा ग्रह्य हैं। धार्मिक भक्ति आन्दोलन में वे परम ब्रह्म हैं तथा भक्तों के कष्ट निवारणार्थ ही वे सत्तार में

१ भक्तमाल छाप्य, पृ० ३६

२ काशी नागरी प्रचारिणी सभा का सोन निवरण पृ० ५४

३ वही पृ० २१

४ मूरदास—मूरसागर—प्रथम स्कन्ध, नवम स्कन्ध, पृ० २२६, पन् ६०३

५ विष्णुनिष्ठ—ए हिन्दू आठ इन्द्रियन लिखेर, पृ० ५०१

अवतार धारण करते हैं। डा० माताप्रसाद गुप्त ने इस ऐतिहासिक परम्परा का अध्ययन करने के पश्चात् बड़ा ठोस मन प्रस्तुत किया है कि तुलसी को अपने मूल के साहित्य से एक पूरा चरित्र की प्राप्ति हुई जिसमें उन्होंने और चार चीजें लगा दी हैं। किसी भी जाति की काय प्रतिभा ने कभी भी जिन उदात्त गुणों का बहना की होगी वदाचित्त उनका एक आदर्शमय रूप हमें राम के चरित्र में समाहित मिलता है।<sup>१</sup> आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने चरित्र की इसी पूर्णता का सकेत ज्ञान, शक्ति तथा सौम्य इन तीन विशेषणों द्वारा व्यक्त किया है। 'तुलसी के मानस में रामचरित की आशीर्वात-शक्ति सौन्दर्यमयी स्वच्छन्दता द्वारा निकली, उसने जीवन की प्रत्येक स्थिति के भीतर पहुँच कर, भगवान् के स्वरूप का प्रतिबिम्ब भरवा लिया।'<sup>२</sup> तुलसी ने इस परम्परा से प्राप्त समग्र नायक को शीघ्र पर पहुँचा दिया है।

## मध्ययुगीन राम-काव्य

मध्ययुगीन हिन्दी के राम भक्त कवियों के समस्त सस्कृत का विशाल तथा समग्र राम-साहित्य रहा है। इन कवियों ने वाल्मीकि रामायण तथा अनेक रामायणों से एक विराट् सामूहिक नायक का प्राप्त किया। इस नायक में भारतीय जीवन के समस्त आदर्शों का मन है राम जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में मर्यादा के प्रतीक बन कर भवन्निरत हुए हैं। अपने आरम्भिक रूप से ही रामकथा आदर्शों पर टिकी रही है और इसमें अधिन परिष्कार की सम्भावनाएँ नहीं थीं। राम सामान्य लौकिक नायक न होकर धर्म प्राण, मनुष्य प्राण बनाकर साहित्य में प्रतिष्ठित किए गए और उनमें परिवर्तन करना सम्मति की विकृत करने का प्रयास ही होता यही कारण है कि राम के मानवता तथा ग्रहण्यत्व दोनों रूपों में कोई विशेष परिवर्तन कभी सम्भव ही नहीं हो सका।

हिन्दी में रामानन्द ने जन भक्ति आन्दोलन का जयवन्तु उत्तरी भारत में फैला दिया तथा राम-नायक का प्रणयन हुआ। दिव्यभावधर नालासहृदर अवतारी राम साहित्यिक निहित पर ध्यान जमाने लगा। तुलसीदास ने राम काव्य धारा में सम्भावनाओं का अन्तिम छोर छू लिया। और राम का समस्त नायकत्व तुलसीदास में ही मूर्त के रूप में हासिल रह गया। वेदों, पुराणों, जातकों, कथाओं, रामायणों के राम तुलसीदास में वक्ष्यत्व सत्कारों की अमिट छाप उठकर अमर हो गये। उनका

१ डा० माताप्रसाद गुप्त—तुलसीदास, पृ० २८३

२ आ० रामचन्द्र शुक्ल—गोस्वामी तुलसीदास, पृ० ३

‘मानस’ विश्वमहाकाव्या में आज भी अपना गौरवपूर्ण स्थान बनाकर शाश्वत जीवन मूल्यों के कारण अद्विग है।

तुलसी पूव राम काय परम्परा हिन्दी में बहुत क्षीण रूप में मिलती है। रामानन्द के रामरक्षा सोन का भक्ति की दृष्टि से महत्त्व होने हुए भी साहित्यिक महत्त्व नगण्य ठहरता है। नामानास के भक्तमाल<sup>१</sup> में अनन्ता<sup>२</sup>, वबीर, सुखानन्द सुरमुरारि<sup>३</sup> परमावति नरहरि पीपा, भागानन्द रत्नास, घना सेना, आदि का नाम दिया गया है। इनमें से किसी ने राम में अवतारी परमब्रह्मत्व के रूप का उद्घाटन तक नहीं किया। विश्वनाथदास ने वाल्मीकि रामायण का हिन्दी अनुवाद किया, ईश्वरदास ने भरत मिलाप की रचना की।<sup>४</sup> इनका एक रचना समूह पत्र भी है, किन्तु उसका साहित्यिक महत्त्व नाम मात्र का ही है। मुनिसावण की रावण मदीनी सवाद ब्रह्मजिननास की दा इतिया—हनुमन्तरास तथा रामचरितया रामरस, सुन्दर दान का हनुमान चरित अग्रदास की रामाष्टयाम तथा रामायान मजरा, राम उपानार भागि रचनाओं का भी उल्लेख मिलता है।<sup>५</sup> सविन प्रबन्ध के क्षेत्र में इन रचनाओं का महत्त्व बहुत नगण्य ठहराया जाता है।

रीतिकाल अथ पतन का काल होते हुए भी उस काल में राम पर खूब लिखा गया है। कवियों ने कृष्ण की भाँति उनके चरित्र को भ्रष्ट नहीं किया तथा उनके शील शक्ति एवं सौन्दर्य से युक्त मर्यादित रूप का प्रति अपार आनन्द व्यक्त किया है। लालदास नामक कवि ने स० १७०० में अवध विलास नामक लघु खण्ड काव्य की रचना की। कवि बपूरचन्द ने भाषा रामायण (स० १७००) पुष्पोत्तम ने ‘हनुमत्’ स० १७०१ पीताम्बर ने राम विलास (स० १७०२) बारट्ट नरहरिदास ने ‘राम चरित्र कथा’<sup>६</sup> की रचना की। ये छोटे-छोटे काव्य हैं जो राम के जीवन पर बहुत कम प्रकाश डालते हैं। ईश्वरप्रसाद त्रिपाठी ने वाल्मीकि रामायण का स० १७३० में राम विलास रामायण नाम से अनुवाद किया।<sup>७</sup> मानदास ब्रजवासी ने स० १७३० में रामचरित्र<sup>८</sup> की रचना का। मोहन कवि ने रामायणमय<sup>९</sup> की रचना की। यह सप्तनाम्य काल में बहुत ही सुन्दर है।

१ भक्तमाल—छाप्य ३६

२ नागरी प्रचारिणी सभा का स्रोत विवरण (१९४१—४३) सख्या ५४१

३ हिन्दी-साहित्य, पृ० ३०४ ३०५, भाग २

४ निम्नबद्ध विनोद—द्वितीय भाग, पृ० ४३८

५ वही, पृ० ४८८

६ वही, पृ० ४५८

७ वही, पृ० ५१२

रामचरित मानस की शली पर जेपन तरंगो म समस्त रामकथा को दलेलसिंह ने 'रामरसायन' की रचना का। यह कृति विशाल होते हुए भी काव्यत्व की दृष्टि से बहुत दुबल है। राम प्रियाशरण न 'सीतायन' नामक सात बाण्डो मे विभक्त एन प्रबन्ध-काव्य लिखा।<sup>१</sup> इस नायिका प्रधान काव्य मे कथा भाग कमजोर है। भक्त कवि जानकाशरण ने अथवा सागर<sup>२</sup> स १७६० में विस्तार के साथ लिखा है। राम के घट्टधाम का बरुन १४ सर्गों में किया गया है। यह कृति सत्ता में बहुत प्रख्यात है क्योंकि इसमें कृष्ण चरित जमा आनन्द मिलता है। बहुत सफल प्रबन्ध का व्य हाता हुआ भा यह काव्य महाकाव्योचिन उदारता से रहित जेवकर दु ग हाता है।

रीतिकाल में ही गुरु गाविन्दसिंह ने 'गाविन्द रामायण' की रचना का। यह कृति पुराणकाव्य अधिष है महाकाव्य कम। महाराय इस कहा ही नहीं जा सकता। कवि ने मार्मिक स्थानों को चलाता तथा महत्वपूर्ण घटनाओं का छाड़ दिया है। मुद्द-बरणन महा सिक्ख गुरु रमे १४ है। भरत के प्रति अविश्वाम परगुगम की भद्दे शान्ति का प्रयोग राम की शांतिनता को नष्ट करत हैं। बहुत विशाल कथानक के नायक राम यहां धारोदात्त नहीं बह जा सकते हैं। सहजराम नामक वश्य न तुलसी की शली में 'रघुवन्ध दीपक'<sup>३</sup> नामक विशद प्रबन्धकाव्य लिखा है। कवि ने राम के जीवन का प्रत्येक दृश्य विस्तृत फलक पर लिखा है फिर भी बरुना के वषण्डन में फसा यह काव्य महाकाव्य नहीं बन पाया क्योंकि बरुन शिथिलता तथा कथाविवृति में कमी के कारण यह काव्य मानस की नकल बनकर ही रह गया। सोमनाथ कवि ने भी वाल्मीकि रामायण के आधार पर 'रामचरित रत्नाकर'<sup>४</sup> नामक एन काव्य लिखा है, जिसमें मौलिकता नाम मान की भी नहीं है।

भाजपुरा भाषा में बाबा मुलाकादास ने 'रामायण' की रचना तुलसी शली के अनुकरण पर ही की।<sup>५</sup> इस काल में चन्द्रदास का 'राम रहस्य' (स १८०७) मामदास का रामायण रामायण स० १८१८ रामचरणदास ने 'रामचरित' (स० १८२५), शिवप्रसाद पाण्डेय ने अद्भुत रामायण स० १८३० में मटन भट्ट ने 'मुलाचना चरित्र' (स० १८३०) भूपति न रामचरित्र रामायण' (स० १८३१) हरिदाम न रामायण (स० १८३४) गुनार्थसिंह न रामायण' (स० १८३५) मधुसूदन दाम न 'रामाश्वमेध' (स० १८३६) भवानादाम की 'अद्भुत रामायण' (स० १८४०), आनन्दराम का 'राम मागर' (स० १८५०), सुंदर कुबेर का

१ राम भक्ति में रसिक सम्प्रदाय, प० ३६४

२ वही पृ० ३६६

३ नागरी प्रचारिणी लोड विवरण, पृ० १२२ २३, १६२३

४ वही, प० ६० १६१७ १६

५ वही, पृ० ५१०, १६४१ ४६



राम काव्य की इस विस्तृत परम्परा में रामचरित मानस तथा वैश्व का रामचंद्रिका नामक दो महाकाव्य ही प्रदान किए हैं। अतः इन्हीं का दृष्टि में रखकर अगले पन्थों में इनके महाकाव्यत्व की चर्चा करते हुए राम के नायकत्व पर विचार करेंगे।

## रामचरित मानस का महाकाव्यत्व

नौक-व्याप्ति की दृष्टि से 'मानस' हिंदी का गौरव-ग्रन्थ है। युग युग के मानव को प्रेरणा देने की इस काव्य में अक्षय शक्ति है। प्रणतपात्र राम की यथा गाथा की कवि ने सन्तो महत्ता, दोन-दुस्त्रिया, राजाघा विद्वाना में अमर कर दिया है। मिश्रबधुषा ने ठाक हा पहा है कि यह ग्रंथ जितना सवप्रिय है उतना अग्र ग्रन्थ नहीं। वेदत अक्षर नान स लेकर वेदाती तक इसका समा रूप स आदर करते हैं।<sup>१</sup> इसका कारण कथा स्पष्ट है। इस रचना के अस्तित्व में एक सारा देश, एक सारा युग मूर्तिवत् होकर हिलोत्थित हो उठा है। मानस ने जनमानस में इतना रमण किया है कि इसकी एक-एक अर्द्धांगी सामान्य व्यक्ति के लिए धर्म ग्रन्थ का प्राप्तवचन<sup>२</sup> बन गई है। 'मानस आज के सिद्धमन्त्रों का भण्डार है। नान विनान राति-नीति का पारावार है। इस धर्म ग्रन्थ में इतना कुछ है कि 'राम चरित मानस ससार के श्रेष्ठ महाकाव्या में अपना विशिष्ट स्थान रखता है। इसकी महत्ता में प्रभावित होकर डा० श्रीकृष्णलाल उसे 'पुराणकाव्य'<sup>३</sup> तथा श्यामसुंदर दास यापक हिंदू धर्म का सकलित सस्वरण<sup>४</sup> कहते हैं। सप्त प्रबंध<sup>५</sup> तथा प्रबंध बुद्धि के अनुसार तुलसी को उसकी प्रबंध पटुता पर स्वयं गव है। यहाँ पर हम महाकाव्य का निर्धारित कसीटी को ध्यान में रख कर उसके महाकाव्यत्व पर विचार करेंगे।

## व्यापक परिधिपुवत सुगठित कथानक

जातीय जीवन के इस महाकाव्य में, सृष्टि के परमाज्ज्वल कीर्तिस्तम्भ में कथा चिर सनातन तथा चिर तवीन है। तुलसी ने अनेक ग्रन्थों के मन्थन से अपनी कथा को रूप प्रदान किया है। वाल्मीकीय रामायण अध्यात्म रामायण, हनुमान

१ मिश्रबधु—मक्षिप्त हिंदी मवरत्न, पृ० ३६

२ राजबहादुर समगोटा—वि व साहित्य में रामचरित मानस, पृ० १

३ डा० श्रीकृष्णलाल—मानस दान, पृ० १५७

४ बाबू श्यामसुंदरदास—हिंदी साहित्य, पृ० २५८

नाटक, याग वाञ्छिष्ठ प्रसन्न राघव आदि प्रथा का गौर निचाड़ा है। सम्पूर्ण कथा में एक शृंखला है। रामजन्म से लेकर कथा का अन्त प्राप्त तक आदि, राम वनवास से हनुमान द्वारा सीता की मोक्ष तक मध्यभाग और रावण-वध से लेकर धर्मराज्य या रामराज्य की स्थापना तक कथा का अन्त मानना चाहिए। डा० रामकुमार वर्मा के शब्दों में तुलसीदास ने रामचरित मानस का कथा को एक मन्त्रालय के दृष्टिकोण से लिखा है। 'अर्थात्तर कथा मानस में एकत्र नहीं हैं। नायक के उत्पत्ति के लिए तथा कथा में रमात्मक शक्ति की सम्बद्धताय सहित उद्धार साधनाय, शरीर आतिथय आदि का प्रासंगिक बर्णन आया है। सम्पूर्ण कथा में नाटकीय सधियों अथ प्रकृतियों तथा वायावस्थाओं का पूरता भी डा० शम्भूनाथ सिंह ने सिद्ध की है।<sup>१</sup> इस महाकाव्य का वाय है रामराज्य की स्थापना। इस 'वाय' की प्रतीति में कथा के सभी अंग कारण काय शृंखला में जुटे हैं। घटाना के भवरजान में तुलसी पस नहीं हैं। अतः इस वाय का कथात्मक अर्थ अतिप्रति है। इस कथा में तुलसीदास ने जीवन की इतनी व्यापकता के साथ देखा है कि आज का आलाचक्र आश्चर्य करता है। पुराण-श्रुति मार में कथा के व्यापक प्रसार एक मध्ययुगीन जीवन की भावना का गी है। रावण के अत्याचारों में मुसलमानों का कारणिक काय-बलाप बोल रहा है। मानस में कथा का विराट रूप, बौद्धिक ऊँचाई सूक्ष्म पक्ष के गहन भक्ति तथा गान के प्रसंग, आज के जीवन के अतिप्रति अंग बन गये हैं। मानस में कवि ने आत्मसाधना में लीन रह कर गहराई के साथ अन्तर्यामी की है। डा० बलदेवप्रसाद मिश्र के शब्दों में तुलसीदास ने केवल नायक धर्म और भारतीय संस्कृति का श्रेष्ठ चर्चों की ही समेटे हुए है बल्कि वह गाथा से लेकर गाथावाद तक समस्त धर्म प्रवृत्तियों के साहित्य सिद्धांतों की भी अपनी गी में मिला रहा है। गीता का अनासक्ति योग बौद्धों और जनों का अहिंसावाद, बौद्धों और शकों का अनुराग बौद्धों का जप शब्दराचाय का अद्वैतवाद रामानुज की भक्ति भावना जिम्बाक का द्वैताद्वैत मध्व की रामोपासना यस्ताम का बल रूप आराध्य चतुर्थ का प्रेम शेरख आदि यागियों का समय, कबीर आदि सत्तों का नाम माहात्म्य रामरूप परम हंस का समवयवाद ब्रह्मसमाज की ब्रह्मरूपी आय समाज का आय संगठन और आधीवाद की मध्य अहिंसापूर्ण आस्तित्वपूर्ण लोक सेवा आदि सभी बुद्ध तो उसमें हैं ही साथ ही मुसलमानों का मानव बंधुत्व और

१ डा० रामकुमार वर्मा—हिंदी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास,  
पृ० २५८

२ डा० शम्भूनाथ सिंह—हिंदी महाकाव्य का स्वरूप विकास,  
पृ० ४३१-४३३

ईसाइयो का श्रद्धा तथा कारुण्य से पूर्ण सहाचार भी उसमें प्रतीक कर रहे हैं।<sup>१</sup> अतः मानस का क्या परिधि बड़ी ही व्यापक है।

### उदात्त नायक

महाकाव्य के लिए 'धीरोदात्त गुणवित' की भारतीय आचार्यों ने तथा पाश्चात्य आचार्यों ने उदात्त चरित्र की चर्चा की है। आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी ने चरित्र चित्रण की दृष्टि से विश्व के गिने चुने कवियों में तुलसी को रखा है।<sup>२</sup> अनेक नायकों के सभी सुलभ गुण तुलसी के राम में हैं। वाल्मीकीय रामायण में नारद से वाल्मीकि ने जिस सुलभ नरचन्द्रमा का बात कही सुनी थी, उस व्यापक रूप को तुलसी ने ही ग्रहण किया है। उमो महामानव का उदय तुलसी की आत्मा में हुआ और वह नायक आज भी सरस्वती के मंदिर में अपनी उदात्त प्रशान्त भाभा के तज से अकेला है। शिव सहित पलाश उठाने वाला काल को वश में रखने वाला, चलने पर दिशाप्रद का भयभात कर देने वाला प्रबल प्रतिनायक रावण राम के बाणों से ही शरीरात् कर देता है। प्रतिनायक की पराजय तथा नायक की जय में ही इसकी महत्ता निहित है। मानस का नायक 'पद्मीराज रामों' के नायक की तरह कोरी टेक वाला नहीं, पदमावत के नायक की तरह आसक्त प्रेमी नहीं, 'सूरसागर' के नायक की भाँति रिमानवाला छनिया नहीं, वह मर्यादा का रूप है। समस्त गुणों की सूचा से भी राम बहुत अधिक है। उसी को तुलसी 'जिन कर चरित विदित ससारा' से कहत है। साहित्यिकारी उतन हैं कि राक्षसों की वध की प्रतिभा भुजा उठाकर करते हैं। मर्यादा पात्र इतने हैं कि 'मनुष्य पक्ष भी नहीं रखत हैं। दयालु हतने हैं कि विभीषण बालि विजटा अमर हनुमान मभी उन्हें करुणानिधान कहते हैं। रामायण के अनेक चरित्र दशरथ, कौसल्या, ककेयी, मन्दोदरी, रावण, मेघनाद आदि सभी को यथाय के साथ उभारा गया है। मानस का नायक अपना गरिमा में सबसे अलग है।

### रसात्मकता

भाव वक्ष्य तथा रस वक्ष्य से क्या में प्रभविष्णुता की शक्ति बढ़ जाती है। तुलसी धर्मिणी दीप्त हुए भा 'रसवानी' हैं एवं 'मानस' रस का अथाह सागर। 'रस विशेष' के गाय मरस वक्ष्य में तुलसी ने विशेष योग दिखलाया है। युद्ध की विरतन तथा भक्ति का प्रवाह तथा जीवन की आत्म-साधना जीवन का सर्वांगीण चित्र होने के कारण इस काव्य में सम्बन्ध में यह विवाद है कि उमका धर्मोत्तर

१ डा० बलदेव प्रसाद मिश्र—तुलसी-दर्शन, पृ० ३४१

२ आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी—हिंदी-साहित्य उद्भव और विरास, पृ० २३७



को-ना है ? विद्वानों ने इस वीर रस वरुण रस शांत रस तथा भक्ति रस प्रधान काव्य कहा है। यदि अगौरस नायक की भूत गति का प्रतिपादन हुना है तो उस काव्य में जनमुखादायक प्रारंभपातक नायक राम प्रणिनायक रावण का वध करते हैं तथा पौष्प के प्रताप से विपत्तियों का पवता को ताड़ कर असद का नाश तथा सद् को स्थापना करते हैं। इस दृष्टि से अगौरस वीर है। परन्तु तुलसी का राम वारंवादा ही नहीं, आदर्श प्रभु पिता, भाई गव कुछ है। 'ध्यातुं के' ही पर्याय है। 'आदि धर मुनि ध्याता तथा अवल धनाह मानस' का अनुगार राम कहा है तथा भवतागर के प्राणियों के एकमात्र आचार। तुलसी भका य प्रीत भक्ति उनके जीवन का पर्याय थी। अतः भक्ति रस को ही रामचरित मानस का अगारम मानना चाहिए। राम जन्म से पूर्व देवताओं द्वारा की गई प्रार्थना 'जयजय मुरनायक' उसी भक्ति का प्रमाण है। वैसे भी भवन तरहि उदगरि को भा दृष्टि से यह भक्ति का वाक्य है। मानस में राम जन्म पर वास्तव्य तथा अदभुत रस दशरथ प्ररण में वरुण रस, जनक-यादिका प्रसंग में शृंगार रस परशुराम सवा' में रौद्ररस राम रावण युद्ध में वीर रस तथा उत्तरकांड में भक्ति रस तथा शान्त रस का प्रवाह है। अतः मानस का रसात्मक शक्ति में प्रभावक्षमता अदभुत है।

### उद्देश्य की ज्योति

भारतीय आचार्यों ने पुरपाथ चतुष्टय का सिद्धि को महावाक्य का उद्देश्य माना है। अस्त स लकर बावरा तय पाश्चात्य विद्वान भी महावाक्य का उदात्त उद्देश्य पर एनमत रह हैं। तुलसी वयक्किन सुख साधना से अश्विन लोचन-मंगल को आदर देते हैं। उनके व्यापक उद्देश्य में समाज धर्म राष्ट्र धर्म तथा विश्व धर्म निहित हैं। मानवतावाद का, उद्देश्य की दृष्टि में कोई ग्रन्थ है ना रामचरित मानस। हाँ, आधुनिक कृति 'कामायनी' को भी इसी कोटि में रखना चाहिए। बलिकाल के भव-व्यसन काटने के लिए तुलसी ने यह परमोज्ज्वल आभ्यास चुना है। तुलसी का राम कथा बलि कल्प बिमजनि 'संशय नाशनि भवमरिगा तरनी', आदि विशेषण देना भी लोक हित का समर्थन है। राम के सभा काय लोकहितकारा हैं। नारद का मोह भग कर के उन्हें ज्ञान नम देने हैं। नाक धर्म की स्थापना के लिए रा रसो का वध करते हैं लोक मयादा के रक्षणाय सामान्य बात पर अपनी स्त्री को अग्नि परीक्षा करके भी त्याग देते हैं तथा ताकादश से रामराज्य की स्थापना करते हैं। अतः मानस का उद्देश्य जीवन से अगद् का निष्कामन तथा सद् की स्थापना

मानना चाहिए। तुलसी का उद्देश्य जीवन में भक्ति के द्वारा निमल दृष्टि की प्राप्ति का रूप भी है। उनके मत से ज्ञान तथा भक्ति में प्रभेद नहीं है। दानों से ही सासारिक तापो का हरण होता है। आदश की अडिग भूमि पर विश्व धर्म की स्थापना ही 'मानस' का उद्देश्य मानना चाहिए।

### अभिव्यजना में शक्ति

कति लघुकाय हो या विशालकाय, लेकिन समय कवि के पास समय अभिव्यक्ति अवश्य होना चाहिए। विचारों की गहनता को, प्रतीकों की साकेतिक शक्ति को, भाव की अतन्त ममस्पर्शिता, हृदय को मक्कमोर देने की कला, विम्वार की प्राणवत्ता तथा मूर्निवत्ता, शली की अबाध प्रवाह्यता, प्रभावक्षमता, भाषा की पक्की पकड़, महाकवि की अनिवार्य शक्त है। आत्म-रस से पोषित तुलसी की अभिव्यजना में सब कुछ बद्ध-युक्त है। महाकवि की शली में दुदम नद का प्रवाह हो, मानस की शली ऐसी ही दुदमनीय है। तुलसी की शली में वाग्धारा की स्फीति तथा बचन की स्वच्छता बहुत है। वे कहते समय अधिक हिचकिया नहीं लेते, साफ तथा बटकर कहते हैं। अतः इस शली को जीवन्त शली कहना चाहिए। मधुर प्रसंगों में कवन किविनि की भी उन्हें पहिचान है तथा 'धनधमण्ड गरजत धन धारा' में भी वे माहिर हैं। कवि का मधुर तथा विराट पर समान अधिकार है। अवधी भाषा की शक्तियों का तुलसी ने अत्यधिक विकास किया। भाषा की सहजता तथा भाषा में निबद्ध शब्द के मर्म को किसी ने जाना है तो 'मानसकार' ने। शब्द की आत्मा को टटोलकर जन-जन से उसका परिचय कराया है। अलवारों ने वाणी की अभिव्यक्ति-क्षमता को विशेष बल दिया है। 'मानस' में ज्ञान तथा भक्ति का रूपक, सप्त प्रबंध मुष्ण सोपान का रूपक हिन्दी ससार का शोभा-कोष है। मावानुरूप छंद परिवर्तन के कारण कहीं मात्रिकछंद, चौपाई, दोहा, सोरठा, तामर, त्रिभुजा आदि तथा वणिक् मालिनी ओटक इन्द्रज्या, वशास्थ आदि का स्मरणीय प्रयोग प्रस्तुत किया है। 'सयसे बड़ी विषेपता मोस्वामी जी की है भाषा की सफाई और काव्यरचना की निर्दोषता, जो हिन्दी के अन्य किसी कवि में नहीं पाई जाती।'<sup>१</sup> डॉ० उनदेव प्रसाद मिश्र का तो यहां तक कहना है कि 'उनका एक एक छंद सौ-सौ प्रयोगों के बराबर हो गया है।'<sup>२</sup> इन सभी विद्वानों के मतों से स्पष्ट है कि मानस की अभिव्यजना शक्ति असीम है।

अतः रानचरित मानस का महाकाव्यत्व आदश महाकाव्यत्व का मानदण्ड है। आचार्यों की कसौटी पीछे छूट जाती है और 'मानस' का महाकाव्यत्व उससे भी आगे

१ आचार्य रामचंद्र शुक्ल—तुलसी काव्यवली, भाग ३, पृ० २३६

२ डॉ० बलदेवप्रसाद मिश्र—तुलसी दान, पृ० ३५१



कपोल विनिर्दिष्ट हास<sup>१</sup>, नीकी छवि, ललित चितवन<sup>२</sup>, ललाट पर प्रकाशमान तिलक,<sup>३</sup> कानो में मकरावृत कुण्डल, सिर पर मुकुट मधुप सम काले कुटिल बाल<sup>४</sup>, वक्षस्थल पर बनमाल सिंह सो गदन हाथी की सूड के समान सुभग भुजदण्ड, विजली की लज्जान वाले पीताम्बर के कारण उनका सौन्दर्य अपार है। वे सौंदर्य सागर तथा 'आदि भक्ति छवि निधि जग मूला'<sup>५</sup> के रूप में दिखाई देते हैं। वे देवताओं की विनता करने पर कोणत्या की बोध से जन्म लेते हैं। इस समय भी 'शोभा सिन्धु'<sup>६</sup> के रूप में प्रगट होते हैं। 'काम काटि छवि' या आनन अमित मत्तन छवि छाई<sup>७</sup> का ध्यान तथा राम की शिन्धु नीलामा<sup>८</sup> की भाँकी 'मानस' में अवलोकनीय हैं। शिन्धु-राम विशोरावस्था में प्रवेश करते हैं छत्रियोचित आयुषो से सज्जित हो मुनिप्रा तथा जट चेतो को मोहने लगते हैं।<sup>९</sup> विश्वामित्र राम की इस छवि को देखकर विस्मित रह जाते हैं।<sup>१०</sup> अपने पुत्रों को विश्वामित्र का नेतृत्व समय भी सुन्दर-सुत<sup>११</sup> दशरथ कह उठते हैं। अपने रजक रूप में राम विश्व चित चाँद तथा कात्तिमान श्याम तन हैं। राम न जब विदेह-नगर में प्रवेश किया उस समय जनक, जनकनगर के नर-नारी, सभी उनके दिव्य रूप से मोहित हो गए। जिनकी छवि देखकर सीता घायल हुई।<sup>१२</sup> धनुष-यग में उनकी छवि प्रत्येक व्यक्ति का कामना के अनुकूल दिखाई दी। धनुष भग में प्रोक्षित भगु कुल वसन पतग भी राम के रूप जगधि में निमज्जित हो गये।<sup>१३</sup>

१ विपुकर निकर विनिदक हासा । ११५७

२ विभुजक अवक छवि नीकी । चितवन ललित भावती जोकी । ११४६।३

३ तिलक ललाट पटल दुतिकारी ।—११४६।४

४ कुण्डल मकर मुकुट सिर भाजा । कुटिल कस जनु मधुर समाजा ॥ ११४६।५

५ मानस ११४७।२

६ लोचन अभिरामा, तन घनश्यामा, निज आयुष भुज चारी ॥

भूपन बन माला, रघुन पिशाला, शोभा सिन्धु सरारी ॥ ११६०।१

७ मानस—११६८।३

८ (i) धूसरि पुरि भरे तनु आप । भूपति विहेसि गोद बढाये । म० ११२०७।८

(ii) भोजन करत चपल चित, इत उन अवसर पाइ ।

भाजि चले विलकत मुख, दधि ओदन लपटाइ ॥ ११२०३।

९ राम देखि मुनि देह बिसारी । ११२०६।१

१० वही

११ भय विदेह विज्ञेयी ॥ ११२।४।८

१२ (i) मनहु रव निधि लूटन लागो ॥ ११२१६।२

(ii) मुर न असुर नाग मुनि माही ।

सोखा आसि बहु सुनअत माही ॥ ११२१६।६

(iii) चली राखि जरि स्यामल भरति ॥ ११२३४।१

रामहि चितइ रहे यकि लोचन । रूप अपार नार भद मोचन ॥ ११२६८।८

राम विशाह के घातार पर ब्रह्मनाभ म प्रजापति, इन्द्रनाभ म देवराज इन्द्र, शिवनाभ म शहर धाति 'सौन्दर्य-वसन्तिनिधि' का एगटन देसा रहै।<sup>१</sup> राम-रूप क पावन तुलसी ने राम के सौन्दर्य को सोच चित्तापट्टारी दिख-सौन्दर्य का रूप प्रगट किया। परम ब्रह्म का क सौन्दर्य धाति का बना का शायन सौन्दर्य है। डा० श्रीकृष्णदास ने तुलसी, बर्णित रूप तथा सौन्दर्य का दायर ठीक हा कहा है कि 'मानस के राम का सौन्दर्य ता यह नवनीत कोमल सौन्दर्य है जिनका आधार पौराणिक कामदेव घोर रति है। 'मानस' क राम म सत्य कहा 'वाटि मनाम सजावन हारे' का सौन्दर्य निगई देता है जिस देगकर जीव मान बिन भिग से गटे रह जात है।' इम प्रकार राम का यह मधुर रूप दिख सौन्दर्य म मदिन है।

राम का सति-सौन्दर्य भी समुत्त है। के पून स मुकुमार होने पर भी बस से बठोर है, जस तादृश जिसरा वासि रावण धाति के बध म उनका सौन्दर्य पराक्रम से धमक उठा है। जिग ध्यस्तित्व म बठोरता तथा कोमलता का भणिकावन पाग नहीं, यह धपन सौन्दर्य म धपूण रह जाता है। राम का धार रेश उनका धपना तेज है। पापा स पापी को भी य दया तथा मुक्ति देत है। यह उनसे आत्म सौन्दर्य का प्रमाण है। सत्तार म जो कुछ सुन्दर हो सकता है यह राम क सौन्दर्य में तुलसीनाम न मिला दिया है। वाल्मीकि के राम का सौन्दर्य युद्ध-क्षेत्र म निसरा है लेकिन तुलसी के राम का सौन्दर्य युद्ध तथा प्रेम दोनों म समुपम है। भत तुलसी द्वारा वर्णित राम म सौन्दर्य का कोई भी सीमा रेखा सीचना सम्भव हो नहीं है।

### शीलतत्व

तुलसी के राम का शील सत्तार का आदर्श है। उनका चितवृत्ति सहज ही उत्तेजित नहीं होती मर्यादाओं की रश्मि म नियंत्रित रहती है। वाल्मीकि ने राम के चरित्र म धमकता, वृत्तकता सत्य-श्रद्धा, हृदियजयी आदि अनक गुणों की सूची दी है। उन्हें समुद्र के समान गम्भीर, हिमालय के समान धयशाली विष्णु के समान पराक्रमी श्रेष्ठ मे नालागि सदृश्य पक्षी क समान क्षमादानी तथा कुम्बर के समान दानी बालाया है।<sup>२</sup> के शरीर धारी धम ही है।<sup>३</sup> 'मानस' म राम प्रजा वत्सल

१ (क) निरखि राम छवि विधि हरयाने। १।३१।६।

(ख) रातहि चितव सुरेस मुजाना ॥ १।३१।६।

(ग) सकल राम रूप अनुराग। १।३१।६।२ (१) मुदित देवगण रामहि देखो। १।३१।६।

२ डा० श्रीकृष्णदास मानस दान, प० ५४

३ रामायण-१, १, २।४

४ वही, १६, १६

तथा विनयी अधिक हैं। आरम्भ से व प्रणत निवेदनादि से थोड़े समय में ही विद्या प्राप्त कर लेते हैं।<sup>१</sup> विनय पत्रिका<sup>२</sup> में तुलसी ने 'सुनि सोतापति शीन सुमाऊ'<sup>३</sup> में उनके शील का विशद निरूपण किया है। पारिवारिक परिधि में वे अपने शील के कारण आदश-पुत्र, आदश शिष्य, आदश-स्वामी, आदश योद्धा, आदश पति आदश-त्यागी, आदश राजा आदि सभी कुछ हैं। शील-तत्त्व के कारण ही वे लोक धर्म<sup>४</sup> का आदश प्रस्तुत करते हैं। तुलसी ने 'उमी आदश चरित्र के भीतर अलौकिक प्रतिभा के बल से उन्होंने धर्म के सब रूपों को निरालोक्य भक्ति का प्रकृत आधार खड़ा कर दिया है।<sup>५</sup> उनकी प्रवृत्ति में धर्म पुरीन सत्य, स्नेहयोग के कारण ही धनु भी उनकी मुक्त कठ से सराहना करता है। परगुराम का तेज उनके शील के समक्ष पीका पड़ जाता है विश्वामित्र राम के शील की सराहना करते धक्के नहीं तथा धर्मावतार भरत राम के शील की सराहना में जावन काट दत्त हैं। गुरु श्रद्धा के कारण हा शिवजी का धनुष उठा लेते हैं।<sup>६</sup> राम के शील के आगे ही कुटिल कैंकेयी को पश्चात्ताप करना पड़ता है। इस प्रकार तुलसी ने राम के शील का इतना विस्तार किया है कि सर्वोच्च धनवर मानस से वे ईश्वरत्व प्राप्त कर गये।<sup>७</sup> सामाजिक क्षेत्र में उनके शील का रूप पग-पग पर मिनता है।<sup>८</sup> हृदय विस्तार के कारण ही उनका राम राज्य आदश राज्य का प्रतीक बन गया है। 'रामायण' में राम राज्य की कल्पना है, लेकिन उसका विस्तार तुलसी ने राम ने ही किया है। राम ने अपने शील से धर्म की स्थापना की मर्यादा को स्थिर किया।<sup>९</sup> पतित पावन तथा शरणागत वत्सलता, राम में असीम है। सात्विक गुण का प्रताक भरत उनको अपराधिगु पर काट न काट कहते हैं। कूर कुटिल, वेद विरुद्ध सभी राम के शील

१ (क) अल्पकाल विद्या सब आई ॥ १।२०३।४

(ख) प्रातःकाल उठि के रघुनाथा । मातु बिता गुरु नावहि माया ।

१।२०४।७

(ग) विद्या विनय निपुल गुनसीला । १।२०३।६

२ विनय पत्रिका—पृष्ठ १००

३ रामचन्द्रशुक्ल—मोस्वामी तुलसीदास, पृ० १८

४ यही, पृ० २१

५ गुरुहि प्रताप मनहि मन कीहा । अति लाघव उठाइ धनु सीहा ॥ १।२६०।५

६ राम राज्य नभमेंस गुनु सचरावर जग माहि ।

बाल, कम, सम्भव गुन, कत दुख काहुहि नाहि ॥ ७।२१

७ बरना अम रिज निज घरम, निरत वेद पय लोग ।

चलहि सदा पावहि सुखहि, नहि भय सोक न रोग ॥ ७।२०

कोटि विप्र वध लागहि जाहू । आए सरन तजउ नहि ताहू ॥ ५।२३।१

८ मानस—२।२५।१५

म 'बुल-भूयण' वा जाते हैं। इस प्रकार 'मानस' के रूप में भील का अयाह सागर है।

### शक्ति-तत्त्व

राम कदा म राम की असाधारण शक्ति का गान ही है। उनकी शक्ति निध्नसक नहीं, लोक-वत्पाणाय निमाचरो का वध करके ही। वह पश्वी का भार हरण करन है। राम की दिव्य शक्ति का प्रकाशन मानस के अनेक स्थला पर है—

- (१) विश्वामित्र की यण रक्षा क लिए वे नाडका वध करते हैं।<sup>१</sup>
- (२) अनेक राजाओं के मध्य धनुमय करना।<sup>२</sup>
- (३) परगुराम के तज को मर्ति करना।<sup>३</sup>
- (४) जयन्त, विराध, वरदूषण तिसरा वध वध।<sup>४</sup>
- (५) दुर्दिभि राक्षस की अम्बियों का प्रक्षेपण करना।
- (६) बालि-वध।<sup>५</sup>
- (७) कुम्भकरण का वध।
- (८) रावण वध\*।

सुलसी के राम का बाण ग्रहण शक्ति का प्रतीक है। गवण जिसकी भुजाया के पराक्रम में दिग्पाल विफल हो जाते हैं = निगजा के दाँते की जिसकी छानी मूली

१ कपटी कामर कुमति कृजाती। लोक बेन बाहेर सब भाती।

राम कीह क्षापन जवही सैं। भयत भुवन भूयण तवही सैं ॥ २।१६५।<sup>१</sup>, २

२ एकति धान प्रात हरि लोहा। हीन जानि तेहि निज पद बोहा ॥

१।२०८।५

३ लेत चड़ावत खबत गाढ़े। बाहु न लसा देल सब ठाढ़े।

तेहि छन मध्य राम धनु तोरा। भरे भुवन धुनि घोर कठोग ॥ १।२६०।५

४ बहुछल बल मुघोव कीर, हिय होरा भय माहि।

मारा बालि राम तब हृदय भास सर तानि ॥ ५।८८

५ परनि धसई धरि धाव प्रचण्डा। तब प्रभु काटि कीह बुढ़ लण्डा ॥ ६।७०।६

६ बहु छल बल मुघोव कर हिय मारा भय मानि।

मारा बालि राम तब हृदय भास सर तानि ॥ ५।८८

७ परनि धसई धरि धाव प्रचण्डा।

तब प्रभु काटि कीह बुढ़ लण्डा ॥ ६।७०।६

८ परनि धसई धरि धाव प्रचण्डा। तब सर हति प्रभुजन बुढ़ लण्डा ॥

६।१००।३

की तरह तांड देनी है, जिमने चलन पर घरता डोलती है, दिगाली स जिमने पानी भरवाया है <sup>१</sup> कुम्भकरण जसा प्रबल योद्धा जिमका भाई है, इन्द्रजीत मेघनाद जिसका पुत्र है, बाल जिसकी पाटी में बँधा है, चर और अचर का जिमने पराश्रम स पछाड़ दिया है <sup>२</sup> जगत म जिसका प्रतुलित यश फला है <sup>३</sup> लोकपाल जिसके यहा बंद हैं, जिसकी गति अपार है, <sup>४</sup> उस प्रबल प्रघण्ड प्रतिनायक का वध करना बल में सागर राम का ही सज है। उनके क्षत्रियत्व के तेज में मुनियों का आशीर्वाद दबनाम्रो वा विनय तथा धर्मात्माओं ने आत्मा का सज दिया है। राम के व्यक्तित्व में तुनसो न इतनी शक्ति पौंद्य का दर्शन कराया है, कि ऐसा भाँकी भारतीय साहित्य में कही नहीं मिलगी। राम का युद्ध घम युद्ध है, वे विजयता नहीं, घर्मा बतार, घमनेता हैं।

### अवतारी राम

सम्पूर्ण 'मानस' में एक ही ध्वनि है कि राम अघम का नाश करने के लिए अवतार धारण करत हैं <sup>५</sup> गाता में भी परिनाणाय साधुना विनाशाय च दुष्कृताम् <sup>६</sup> के द्वारा भाँ यही हेतु जिया गया है। परम ब्रह्म के अवतार हेतु तुलसी

१ (क) जानहि दिगज उर बठिनाई । जब जर भिरउ जाइ धरि आई ॥

जिनके दसन कराल न कटे । उन लागर मूलत इव दटे ॥ ६।२४।५,६

(ख) जानु चलत ओलति इमि धरनी । चढत मत्त गज जिमि लघु सरनी ॥

६।२४।७

(ग) दिगालह में नीर भरावा । ६।२७।५

२ कुम्भकरन अत बंधु मम, सुत प्रसिद्ध सकारि ।

मोर पराश्रम महि सुनेउ जितेउ चराचर कारि ॥ ६।२७

३ राघव नाम जगत जस जाना । लोकप जाके बढी जाना ॥ ६।२८।४

४ जिमि जिमि प्रभु हर तामु तिर, तिमि तिमि होहि अपार ।

सेवत विषय विविध जिमि, नित नित नूतन मार ॥ ६।२९

५ जब जब होई धरम की हानी । बांहि असुर अघम अभिमानी ॥

तब तब प्रभु धरि विविध शरीरा । हरहि कृपानिधि सज्जन पीरा ॥

१।१२०।६,८





- (४) मनु तथा शतरूपा की तपस्या से प्रसन्न होकर धरदान देना ।
- (५) अभिशप्त राजा प्रतापमानु का रावण रूप में जन्म लेना ।
- (६) असुरों के अत्याचारों से पीड़ित पृथ्वी का गाय रूप में विलाप करना ।
- (७) शापग्रस्त व्यक्तियों का उद्धार करना ।
- (८) यन्त्रिद्वय में प्रवृत्त मुनिर्षों तथा बाह्यलोको रक्षा करना ।
- (९) भक्तों की मनोकामनाओं को पूरा करना ।

इसलिए 'मानव' में वे 'हरिहृद सख्य भूमि गदग्राई' की प्रतिष्ठा करते हैं । भगवान् के पुराणों में वर्णित मीन, कमठ, सूकर, नसिह आदि अवतारों का भी तुलसीदास ने सकेत दिया है ।<sup>१</sup> अनेक अवतारों के माध्यम से यह विराट् ब्रह्म अपने विराट् स्वरूप में लीलावतार बनकर आता है । 'मानव' में स्थान-स्थान पर यह सकेत है कि राम मानव लीला कर रहे हैं । उनका महाविष्णुत्व, अखण्डत्व, महा मानवत्व ईश्वरत्व, लोक प्रति अपार अपनत्व बड़ा प्रदुर्भूत है । डा० बलदेवप्रसाद मिश्र ने ठीक ही कहा है कि 'गोस्वामी तुलसीदास जी के राम न केवल ब्रह्म हैं (निगुण ब्रह्म तथा सगुण भक्तरीरी परमात्मा हैं) न केवल महाविष्णु हैं (सगुण शरीरी परमात्मा हैं) न केवल मयौदा पुरुषोत्तम हैं (षादश मनुष्य हैं) बल्कि तीनों के सामंजस्य से परम पूण आराध्य हैं ।<sup>२</sup> तुलसी ने राम को प्रत्येक सम्भव जीवन के दृष्टिकोण से देखा है । मध्ययुगीन साम्प्रतिक चेतना को मुगल काल में बाण का आश्वासन चाहिए था, राम ने दिया । 'तुलसी के राम शास्त्र नहीं धर्म की प्रतिमूर्ति है ।'<sup>३</sup> मुगलों के समय में ऐम मत नायक या दिव्य व्यक्तित्व की धर्मावतार बल्यता तुलसी के दिव्य-हृदों का प्रकाश है । उनका नायक दानविका के विवाद में चाहे निराकार तथा साकार दोनों का सामंजस्य माना जाए, लेकिन सत्य यह है कि तुलसी को एक ऐसे अमर मानव का तलाश करनी पड़ी जिसके आदर्श भारतीय साम्प्रतिक जीवन के आधार बन सकते हों ।<sup>४</sup> यह मानव चिर प्राचीन होते हुए भी चिर नवीन है । मानव होते हुए भी ईश्वर है तथा ईश्वर होते हुए भी मानव है ।

**राम—विकसनशील चरित्र**

उपयुक्त विवेचन से एक बात स्पष्ट हो गई है कि राम का चरित्र परम्पराओं, युग से विकसित होता आ रहा है । तुलसी ने उम चरित्र को युगानुक्रम डाला तथा

१ मीन कमठ सूकर नरहरी । वामन परशुराम वपु धरी ॥ मा० ३।५।४

२ डा० बलदेवप्रसाद मिश्र—तुलसी-चरित्र, पृ० १३३

३ डा० रामरतन भटनागर—समसामयिक जीवन और साहित्य, पृ० २३६

४ डा० हजारीप्रसाद द्विवेदी—हिन्दी साहित्य-उद्भव और विकास, पृ० २३७

राम के नायकत्व का स्वरूप विकास

चरित्र में अधिक प्रस्तुत किया। आचार्य द्वारा रामात्म द्विवत्ता का ने एव चरित्रों की व्यवहारणा विश्व साहित्य में तुल्य माना है। राम धर्म की गरिमा से ही नर नारी पर छाया हुए हैं। मानस में भरत जसा निमग्न निष्कल चरित्र भी राम के त्याग से थढ़ावत हो जाता है। राम व नायकत्व का परमन व त्रिए धर्म हम पूरे निर्धारित मानक्यों को ध्यान में रख कर विचार करें—

### कथा का सूत्रधार

भारतीय तथा पाश्चात्य दोनों देशों व आचार्य इस तथ्य पर बल देते हैं कि महाकाव्य का नायक कथा का प्राणवायु सूत्रधार होना चाहिये। यह वसीटी पर तुलसी का नायक बहुत सारा है। राम इस धर्म तथा व मूल में हैं। तुलसी का भी उद्देश्य भक्त होने के नाते अपने आराध्य की मरिमा का उद्घाटन है। राम शत्रु तथा मित्र दोनों के ही आराध्य हैं। मन्त्रों विभीषण आदि शत्रु पक्ष के होने पर भी राम से प्रभावित हैं मन्त्रीव तथा अनुमान राम के चरणों में हा जायन की साधवता समझते हैं।

तुलसी ने राम की कथा के सूत्र वेद पुराणों रामायणों महाभारत बौद्ध तथा जन कथाओं तथा धार्मिक साहित्य से एकरूप किए हैं। इसका सबैत ऊपर दे चुके हैं। राम की कथा में तुलसी ने अधिक परिवर्तन नहीं किए हैं। वात्मीकि रामायण तथा अध्यात्म रामायण से तुलसी ने बहुत कुछ लिया लकिन राम का चरित्र उन्होंने अपने ही ढंग से प्रस्तुत किया है। मानस में राम जन्म से रावण-वध तथा की अनगिनत घटनाओं में राम के हा त्रिया-वलाप पते हुए हैं।<sup>१</sup> प्रासंगिक कथाएँ बालि-वध अहिल्या उद्धार आदि सभा में राम का रूप प्रधान है। मानस के तीनों वक्ता शिव श्यामलक तथा वाक शत्रुघ्नि से तुलसी ने लोक प्रत्यात कथा का ही मम उद्घाटित किया है। इस दिशा में कथा प्रवाह में मम पाठक या श्रोता को प्रसन्न बात का और ध्यान दिलाते रहने की आवश्यकता समय समय पर उत्पन्न की अवश्य मालूम होगी जो नायक की ईश्वरावतार के रूप में त्रिराता चाहता है।<sup>२</sup> सम्पूर्ण कथा में राममय वातावरण होने के कारण धार्मिक परिवर्तता छाई हुई है। राम की धर्म सस्थापक युग नेता के रूप में प्रस्तुत किया है। कथा का समस्त चर ही उसके चरित्व से संचालित है।

१ डा० विद्या मिश्र—वात्मीकि रामायण एवं रामचरितमानस का तुलनात्मक अध्ययन, पृ० २८६

२ आ० रामचन्द्र शुक्ल—गोस्वामी तुलसीदास, पृ० १७

## महत्त्वपूर्ण व्यक्ति

महापुरुष अपने असाधारण कृतित्व तथा व्यक्तित्व से शाश्वत महत्त्व का व्यक्ति बन जाता है। चाहे वे गौतम हा या महावीर स्वामी रत्नसन हो या शिवाजी उनकी महत्ता उनके कार्यों में निहित है। 'राम' का भारतीय जीवन का ऐसा नायक है जो प्रायः सत्कृति में अपने आदर्शों के कारण शाश्वत महत्त्व का व्यक्ति है। सबसम्पन्न इस व्यक्तित्व में अयाय के विरुद्ध लोहा लेने की शक्ति असीम तथा अटूट है उसका कारण है उनका अदम्य अहंकार एवं क्षत्रियत्व से मण्डित उनका आत्मतेज। वे धरा को राक्षसों से मुक्ति दिलाने के लिए निम्न प्रतिज्ञा करते हैं तथा उसे पूरा करना इस विराट व्यक्तित्व के सामने कुछ नहीं है। शरणागत का वे गले लगाते हैं शत्रु भी शरण में आ जान पर उन्हें लक्ष्मण सम प्रिय व धु मगता है।

राम राज्य भी भावनात्मक आनन्द लोच है जिसके अधिष्ठाता राम हैं। रामराज्य की वर्यना करने आज भी व्यक्ति पथ पाता है। पूरा ब्रह्म होने के नाते जो जानबूझ कर मानव लीला करत हैं परमा के वियोग में व सामान्य व्यक्ति की भांति तडपत हैं वधु के वेलोण हो जाने पर वे सामान्य व्यक्ति की भांति वरणा विलाप करत हैं तथा पिता वचन मनते हु नहि छोडूँ आदि गम्भीर वचन भी कहने लगत हैं। भरत का सभी प्रकार से सराहत हुए वे शकते नहीं हैं। वनवास से लौटने के पश्चात् कौशल्या के पास न जाकर पञ्चानाप की अग्नि से पवित्र कवेयी के पास सवम पहिने जान हैं। देवताओं, आह्वणों सन्तो, दुवल दीनों की रक्षा करते हैं। आचार्य शुक्ल न इस मम को इस प्रकार उद्घाटित किया है कि 'किसी श्रेणी का हिंदू हो, वह अपने प्रत्येक जावन में राम को पाना है, सम्पत्ति में विपत्ति में, घर में वन में रण क्षेत्र में आनन्दोत्सव में, जहाँ दखिए वहाँ राम'। आचार्य शुक्ल जा ने उत्तरापथ के जीवन को ही राममय कहा है, लकिन राम ने तो उत्तरापथ तथा दक्षिणपथ दोनों का ही राममय कर रखा है। राम के महत्त्व का प्रधान कारण है अमंगल का नाश तथा मंगल का स्थापना। वे ताडका मुवाहु, सुवध, त्रिसरा खरहुण, कुम्भकर्ण तथा गवण आदि सभी का वध करते हैं। वालि का वध भी वे भाई की पत्नी को वनात् लेन के कारण करते हैं। विद्वानों के मत से वालि-वध राम के चरित्र को निर्दोष नहीं सदोष सिद्ध करता है। लेकिन इसका एक ही उत्तर है कि जानि का वध उन्होंने व्यक्तिगत स्वार्थ के लिए नहीं अपितु कुदृष्टि रगने

वाले को मारना पाग नही है, यह कहकर किया है। बलि का वध भी धम-स्थापना का एवमाय प्रयास ही है। तुलसी ने बलि-नृत्याणाय यह धमधारी चरित्र दिया जिसका चरित्र तरण-तारण होने के कारण जन मा का भजन है—

रामनया सुदर बरतारी । समय विहग उडावनि हारी ।

राम क्या बलि नित्य कुठारी । सान्तर मुनु गिरिराज कुमारी ॥<sup>१</sup>

## दृढ आत्म शक्ति

राम का शाश्वत महत्त्व का कारण है उनके मानस मन की अपराजयता है। कठिन से कठिन रिपति में भी उनका सहज विग्राम अस्ति रहना है। गिर संहिन पलाश पवत को उठानेवाला काल को नियन्त्रण में रखने वाला परम प्रसन्न रावण जिसके चलने से धरती डममगाती है वही रावण राम के बाणों से दमतोड़ दना है। राजकुमार सुकुमार राम को भीषण बनो में भटकते हुए देावर सत्रका धम यहाँ तक कि 'धीरज का भी धीरज' छूट जाता है लेकिन राम हैं कि उनका धम छूटता नहीं है, उनकी गति खती नहीं है। बनवास के अवसर पर पिता की अत्यन्त कष्ट-दशा देखकर भी वे धम-धारण करते हैं। बन में साधन हीन होते हुए भी भयभीत नहीं होते। मायावी रावण का धम के साथ वध उनकी अपराजेय आत्म-शक्ति का ही प्रमाण है। ऐसे अपराजेय आत्म शक्ति के व्यक्तित्व को देावर रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने कहा था 'मन में जब तक एक महत् व्यक्तित्व का उदय होता है सहसा जय एक महापुरुष कवि के कल्पना राज्य पर अधिकार आ जाता है मनुष्य चरित्र का उदार महत्त्व मनश्चक्षुषों के सामने अघिष्ठित होता है तब उसके उन्नत भावों से उद्दीप्त होकर उस परम पुरुष की प्रतिमा प्रतिष्ठित करी के लिए कवि भाषा का मंदिर निर्माण करते हैं। उस मंदिर में जो प्रतिमा प्रतिष्ठित होती है, उसके देव भाव से मुग्ध और उसकी किरणों से अभिभूत होकर नाना दिग्देशों से आ आ कर लाग उसे प्रणाम करते हैं।<sup>२</sup> तुलसी ने राम की तर से नारायण बनाकर उनका शील शक्ति और सौंदर्य चरम सीमा पर पहुँचा दिया। 'रामायण' के राम को तुलसी ने घट घट वासी यथा लोक रक्षक के रूप में प्रस्तुत किया है। राम की आत्म शक्ति में नरत्व विष्णुत्व तथा ब्रह्मत्व तीनों का समावय है। लोकिव लोकोत्तर तथा अलोकिव तीनों प्रकार की भक्तियाँ भी उनमें दिखाई पड़ती हैं। राम अपनी इस विराट शक्ति के कारण ही अपराजेय आत्म शक्ति के नायक हैं।

१ मानस—१।११३।१,२

२ रवीन्द्रनाथ ठाकुर—मेघनाद वध की भूमिका, पृ० १५७, १५८

(हिंदी अनुवाद—चिरगाँव, स० १९८४)

## प्रतिनिधि चरित्र

राम का चरित्र अनेक आदर्शों का कोश है। पिता की आज्ञा पुत्र के लिए शिरोधार्य है इसका आदर्श राम का चरित्र प्रस्तुत करता है। तुलसी ने राम को आदर्श के सर्वोच्च शिखर पर प्रतिष्ठित करके भी उनके मानवत्व को पूरा रक्षा की है। सुख दुःख में वे सामान्य मानव की भाँति अपने प्रिया-वत्साप करते हैं। लक्ष्मण शक्ति के अवसर पर उनके धर्म का वाघ टूट जाता है तथा पश्चात्ताप के क्षणों में 'नारिहेतु प्रिय धनु गवार्द'¹ तथा जहाँ अवघ वचन मुक्त साह² आदि अनेक प्रश्न उनके मन में उठते हैं। जीवन के प्रत्येक रूप में चाहे वह प्रेम हा या युद्ध राम का चरित्र प्रेरणा दता है। 'तुलसी के मानस से रामचरित की जो शाल शक्ति सौन्दर्यमयी स्वच्छधारा निकली उसने जीवन की प्रत्येक स्थिति के भीतर पहुँचकर भगवान के स्वरूप का प्रतिबिम्ब भलका दिया। रामचरित की इसी जीवन व्यापकता ने तुलसी की बाँझ का राजा रक्त, घना दरिद्र मूल पण्डित सत्रके हृत्प और कठम सब दिन के लिए बसा दिया।'³ इससे निष्कर्ष निकलता है कि राम के चरित्र में ऐसा कुछ है जो परलोक में मुक्ति दिलाकर निजलोक की धार ले जाता है। उन्होंने राम चरित्र का आधार लेकर मानव जीवन की जितनी व्यापक समाक्षा की है उतनी ही साहित्य के किसी कवि ने नहीं की। इस समाक्षा के साथ ही उन्होंने लोक शिक्षा का भी ध्यान रखा और मानव जीवन में ऐसे आदर्शों की स्थापना की जो विश्वजनीन हैं और समय के प्रवाह से बह नहीं सकते।⁴ उनका यह विश्वजनीन व्यक्तित्व ही हमारे जीवन का प्रतिनिधि बन गया है। डा० माताप्रसाद गुप्त का कहना है कि 'राम के व्यक्तित्व में तुलसी ने बालक की सरलता का, अनुलनीय नम्रता का छोटो पर स्नेह का, गुरुजनों के प्रति समादार की भावना का, अनुपम उत्तरता तथा निस्वामयता का कर्त्तव्य पालन का एक सर्वजनशाल व्यक्तित्व का अथर्वारिथो के प्रति भी प्रेम-पूर्ण सदभावना का, एक नितान्त सत्तापी स्वभाव का आदि अनेक गुणों का अभ्य रूप प्रस्तुत किया है।⁵ साथ ही राम मानवीय धरातल पर भी स्थित हैं अतः जीवन का प्रतिनिधि चरित्र राम को बहना ही चाहिए। मानस के कवि का उद्देश्य राम भक्ति का प्रचार मान ही नहीं है, बलि-कलुष

१ मानस—६।६०।६

२ जो जनतेऊ बन ब धू बिछोहू । पिता वचन मनतेऊ नहि ओहू ॥६।६०।६

३ आ० रामचन्द्र गुप्त—गोस्वामी तुलसीदास, पृ० ३

४ डा० रामकुमार वर्मा—हिंदी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास, पृ० ३४६

५ डा० माताप्रसाद गुप्त—तुलसीदास, पृ० २६७ ८८

विमर्जन, जातुगन्धर्व जगन्नाथनाथ राम का जायत का प्रतिनिधि परित भी  
यातना है ।

### विषय शक्ति से अस्तकृत

आचार्यों के मत में महाकाव्य का नामक विषय शक्ति से अस्तकृत होना चाहिये ।  
उत्तम लया शिखर है नि सोच में मांशुक्ति जगद्वरणा या जाण । इस दृष्टि में भी  
तुलसी का नामक बहुत गूढ़ है । ये आचरण, अत्र, अगोचर अतिशयोक्ति, विमर्ष,  
अपठक नामक से अर्थक, मय मय हरण करत बात गुणों के सागर, अत्र  
निगुण विविध, याचा में पर, दरगाया के स्वाधीन, दुष्कर्म में मय, अत्र  
रक्षण अति जा विरत अतिशय शक्ति गुणों से अस्तकृत है । कथा का मित जग  
माही । तथा नामा भीति राम अस्तकृत । म भी यहा अति है । इस शिखर के  
कारण है तुलसी के राम डा० श्यामगुप्त दास के शब्दों में स्पष्ट दिष्ट धम के  
सम्पत्ति सत्वरण है । 'उनके शिखर के अर्थ का अर्थ मय अत्र अत्र पद  
मिथता है, जब ये अति 'साधक' धनुष उठा लेते हैं तब ही बाण में अति का पद करते  
हैं मुष्मत्करण तथा रावण से यादों को जीवन-मुक्त कर देते हैं । तुलसी के राम की  
यह दिव्यता अतिमानवता या अतिशयोक्ति या अति मयल की भावना तथा धम  
सत्प्रापक की मूर्ति में प्रगट है । यहाँ आकर आत्म धम तथा साध धम एव हो गया  
है । उक्त नामक नाम धीरोक्त या शिखर-नाम ही नहीं, धम मूर्ति सन्त है ।  
उनके गुणों में भारतीय आत्मा के विरतन मोक्ष का उभार तथा निरार है । डा०  
राजकुमार पाण्डेय ने तुलसी के राम में दिव्यता तथा मानवीय आत्मा के अद्भुत  
रूप को स्पष्ट करते हुए लिखा है कि 'तुलसी के राम उच्चतम अलौकिक आदर्शों के  
प्रतीक होकर भी मानवीय भूमि पर प्रतिष्ठित हैं और वे मानव मान के हैं ।'<sup>१</sup>  
तुलसी का जीवन बोध इसी कारण अद्भुत है । राम अपनी दिव्यता में बहुत ही  
विराट है । तुलसी ने अपने विषय की सम्मोक्षा को तो निभाया ही है, अपने काव्य  
के नामक को इतना विराट बना लिया है जिसका साध स्वयं का स्पष्ट करता है और  
पाँव धरती में गहराई तक गड़े हुए हैं । यह विराट राम तुलसी का अस्तकृत के ही

१ मानस—६, प्रथम श्लोक

२ मानस—१।३२।५

३ वही—१।३२।६

४ हिंदी साहित्य, पृ० २५८

५ डा० रामकुमारपाण्डेय—रामचरितमानस का काव्य-शास्त्रीय अनुशीलन,  
पृ० ४८६

नहीं, उनकी अन्तरात्मा की अनुभूतियों और विश्वासों के राम हैं।<sup>१</sup> वेदों से लेकर मध्ययुग तक अनेक महान् पुरुषों में अवतारों की कल्पना की जा चुकी थी लेकिन तुलसी ने राम के 'यत्कित्व' में इतनी दिव्यता का समावेश कर दिया कि पूर्ववर्ती तथा परवर्ती कोई भी कवि इनकी बराबरी नहीं कर सका। रामचन्द्रिका के राम 'मानस' के राम के सामने छोटे लगते हैं यहाँ तक कि कृष्ण-वाक्यों के कृष्ण भी राम जितना विराट तथा दिव्य व्यक्तित्व नहीं रखते हैं। इस प्रकार उनका नायक दिव्य तेज का प्रतीक है।

### विचारों की व्यापकता

नायक में विचारों की सकीर्णता या साम्प्रदायिकता नहीं होनी चाहिए। इस दृष्टि से तुलसी राम में विचारों की अपार व्यापकता है। वे प्रेम से दिए गए शिवरी के झूठे बेरों का निस्संशय भाव से ग्रहण करते हैं स्वयं प्रकाश रूप प्रधान होते हुए भी शिव की भक्ति करते हैं तथा शिवद्रोही दास से वे सपने में भा घृणा करने का भाव व्यक्त करते हैं। राज्य में उठ अपना-पराया नहीं दिखाई देता। विचारों की इस व्यापकता के कारण ही वे कैकेयी द्वारा किए गए कठिल कृत्य पर शोध करने के बजाय विधि की दोषी ठहराते हैं। रावण ऐसे अधम को जिसे नरक की नीचा से नीची श्रेणी मिलनी चाहिए थी, को लोक को पास रहा था, उसे भी राम ने मरणोपरान्त कवलय प्रदान किया। वे शत्रु के प्रति शत्रु नहीं सदैव मित्र बन जाते हैं। वे सभी को अपना मानते हैं। 'सबमय प्रिय सब मय उपजाए' का भाव भी व्यक्त करते हैं। विचारों की व्यापकता के कारण ही विभाषण को लका का राज्य देते हैं। वे लका का राज्य लेने की नीति से रावण के साथ युद्ध नहीं ठानते वे तो अघाय तथा लोकीदार के लिए क्षत्रियत्व का तेज 'सर सुखेन कालकिन होई' के साथ प्रगट करते हैं। विचारों की इस व्यापकता का अनुकरण यदि आज का मानव कर सके तो न जाने कितना महान बन सके। डॉ० कपिल देव पाण्डेय में उहे 'भारतीय सस्कृति का सांस्कृतिक पुराण प्रतीक'<sup>२</sup> कहा है। उनके व्यक्तित्व में व्यक्ति, इतिहास, जनश्रुति युग चेतना, सांस्कृतिक एवं जानीय-नाय कलाप, सांस्कृतिक साहित्य साधना, उपासना<sup>३</sup> सभी का रूप समाहित हो गया है।

### कार्यों की उदात्तता

महाकाव्य के नायक में कम सौन्दर्य का अतुल रूप होना चाहिए। संस्कृत के आचार्यों ने पुरुषार्थ-चतुष्टय की चर्चा का आधार नायक को ही बनाया है। उसे धर्म,

१ डॉ० गम्भूनार्षसिंह—हिंदी महाकाव्य का स्वरूप विकास, पृ० ५१६

२ मध्ययुगीन साहित्य में अवतारवाद, पृ० ६८३

३ वही पृ० ६८४



राम व रामचन्द्र का स्वरूप विवात

धर्म, नाम, मोक्ष म से लिया एक की प्राप्ति हानी चाहिए। पारथाय जगत म भरस्त्रु म भी तायक व बाय-व्यापार का महत्त्व दिया है। दश कर्माणि पर रामचरित मानस का तायक अधिप गरा उतरता है। उसका ता जम ही जा-वत्पाण के निमित्त है। यह सामुग्र्यो की राधासो से प्राण देता है। ग्रहिल्या ग्मा ध्यावन महिमाया का अपने पना की धृति से पवित्र करना है। रावण का वध करके मातो व पाप का निवृत्तान कर दो है। अपने उपात बापों के कारण से राम राज्य का अमर ध्यान प्रस्तुत करत है। तादका रूपनगा धानि के प्रति भा इनका दृष्टि बत्पाणमया है। बालि वध भी व व्यक्तिगत स्वार्थ के लिए नहीं लोक का प्रतिष्ठा के लिए करते हैं। रामचरित दृष्टि स व इनके सपस है नि विभाषण का अगत धरणा म अभयदान दन है तथा रावण-वध का पूरा पृत्तान्त उससे जातर रावण का वध करत है। अपने उदात्त-बापों के कारण ही व धादग राजा धादग वनि धान्त पुत्र धादि सभी कुछ था जात है। यही कारण है कि राम के बापों का तुलना भारताय साहित्य के किसी धन नायक से नहीं की जा सकता है। उनका हा उदात्त बापों से धन्य कवियों को अपने नायको म भी प्रख्यात्मा शक्ति उत्पन्न करने की प्रेरणा मिली है।

वाल्मीकि रामायण तथा अध्यात्म रामायण म राम द्वारा उत्तरकाण्ड म सीता निर्वासन की गया है। भवभूति ने उत्तररामचरित म भी इसी कथा की चुना है। पदमपुराण म भी सीता के निष्वासन की कथा है। इस प्रकार तुलसी से पूर्व प्राय सम्पूर्ण काव्यो म सीता के निष्वासन की कथा है। तुलसी ने मानस' म इस कथा का छोड़ दिया है। उनके राम बेवार के लोकापवादो म बिषयात् तही रखते रहे सीता के प्रति कोई सदेह नहीं है। अत तुलसी ने पूर्व प्रचलित इस दुस्तान्त कथा का धुमा हा नहीं है। राम के बाय सीता प्राप्ति के साधन माय नहीं, लोक-जीवन के धादश प्रतिमान हैं। मध्ययुग मे राम जैसे नायक की आवश्यकता तुलसी को प्रतीत हुई थीर उन्होंने ऐस विराट व्यक्त की युग धम व लिए समाज के समक्ष प्रस्तुत किया जिसके महनीय बाय युग युगांतर व मानव को सदैव दिशा देते रहेगे।

कथा के मूल भाव या रस का आधार

राम की कथा इस नायक म आधिकारिक कथा है। इस आधिकारिक कथा का उदात्त युद्ध की ओर है। आय अनाय सत्त्वति वा युद्ध ही इस कथा के मूल मे है। रामावतार का कारण ही यही है कि वे धम की स्थापना करना चाहते हैं। लक्ष्मण हनुमान गुफ्रीव अगद जाम्बवान नग नील आदि सभी पात्रो की कथा राम कथा का ही अंग है। प्रतिनायक रावण दुम्भवरण मदोदरी, मेघनाद

मुलोचना आदि की क्या भी भक्ति से पूरा है। क्या का मूल भाव है अयाय के विरुद्ध तब तक युद्ध करना जब तक उसका पूरा विनाश न हो जाए। राम से बड़ा अयाय के विरुद्ध जीवन्त से युद्ध करने वाला नायक ही दुर्लभ है। राम के घटस्थ उत्साह को देखकर ही विद्वानों ने इस काव्य का रस वीर ठहराया है।

इस काव्य का अंगीरस वीर है या शान्त रस या भक्ति रस इस पर विद्वानों में बड़ा विवाद है। तुलसी के राम भक्तों के राम हैं जन विश्वास में 'यय' के साम्बूतिक प्रतीक हैं अनन्त, अगोचर निगुण, निराकार होने पर भी सन्तो के लिए सगुण साकार हैं। उनके अनुप के बाएँ भक्ता की रक्षा से ही पावन हैं, जन-रक्षक होने के कारण ही राम का वीर-वैद्य भक्तों को प्रिय है। क्या के मध्य में तुलसी ने अनयो प्रसंगा में राम चर्चा की है इस दृष्टि से मानव-भक्ति-मागर है। अलौकिक ब्रह्म की क्या में तुलसी न भक्त का विश्वास रमा दिया है। तुलसी विश्वास का कवि है निर्वेद का नहीं। जीवन के प्रति नकारात्मक दृष्टिकोण 'मानस' में कही नहीं है अतः शान्त रस का राम के साथ कोई सम्बन्ध नहीं है। दूसरी ओर राम-रावण की क्या लौकिक रूप में युद्ध क्या है तथा इस रूप में वह वीर रस प्रधान काव्य है। लेकिन लोकोत्तर धरातल पर जहाँ भक्त और भगवान हैं वहाँ पर 'मानस' में भक्ति का अप्रपञ्च रूप है, भक्ति भी तो एक उदात्त रति का ही रूप है भक्ति आन्दोलन ने पद्महवीं तथा सालहवीं शताब्दी में भक्ति भाव को और प्राणवान बना दिया। वंश, पुराणा जन बौद्ध आदि में राम की स्थापना लौकिक धरातल से ऊपर हो ही चुकी थी अतः भक्ति भाव धीरे धीरे परिपक्व होता रहा। अतः भक्ति भाव धीरे धीरे परिपक्व होता रहा, इस साधना ने भाव को व्यापक धरातल पर प्रस्तुत कर दिया है भाव की परिपक्व दशा का नाम ही रस है।<sup>१</sup> भक्ति की यह रस-दशा शृंगार भाव का भक्ति से घाटी भिन्न रस-दशा है। शृंगारिक लौकिक रति का ही आधार इसमें नहीं है अतः मनोविकार से मुक्त भाव रति की, जिसमें तुलसी ने मानव, पशु पक्षी सभी को एक रास दिखाया है, अपना लिया है। देव विषयक इस रति का उज्ज्वल भाव का परिपक्व रूप भक्ति रस प्राप्त हुआ है। 'मानस' में सभी भाव शान्त, दास्य आदि तथा भयानक, वीर्य, रौद्र आदि रसों को भक्ति रस में ही परिणति मिली है।<sup>२</sup> राम का वीर-वैद्य भी जन रक्षक राम का ही है, अतः इस वीरत्व का भुवाव भी भक्ति की धार ही है। राम उत्तरावाण्ड में कहते हैं नि—

भगत हनु भगवान् प्रभु राम थरेठ तनु भूप।

विए चरित पावन परम, प्राकृत नर अनु रूप ॥<sup>३</sup>

१ रामदहिन मिथ—काव्य-रूप, पृ० २११

२ दि नम्बर भाग रसाङ्ग—पृ० १३०

३ भागवत—७।७२

‘मानस’ के आरम्भ तथा अन्त में भगवान् की भक्त-वत्सलता को अनेक प्रकार से वर्णित किया गया है। तुलसी के भक्ति भाव न उत्तर काण्ड में एक सिद्धान्त अपना लिया है—

राम भ्रमित गुन सागर, पाहूँ कि पावइ कोइ ।

सन्तह सन जस किछु सुनऊ, तुम्हहि सुनावहि सोइ ॥<sup>१</sup>

वियोगी हरि ने ‘मानस’ के भक्ति रस को अपार धार सागर’<sup>२</sup> स्वीकार किया है। राम भक्ति भावों के चिर नायक है। इस दृष्टि से ‘मानस’ का अमीर रस भक्ति रस ही मानना चाहिए। सामान्य धारानल पर ‘मानस’ में खीर रस तथा विद्युद्भ्रज-योग के धरातल पर राम के नायकत्व में भक्ति रस का अखण्ड प्रवाह मिलता है। कथा की एक-एक अर्द्धाली राममय है। रामचरित’ का ‘विशेष रस’ भक्त के आनन्द के लिए अपनी सीला का प्रसार ही है। राम की मूल प्रवृत्ति तथा कथा के कलवर में एक ही गूँज है—राम की भक्त वत्सलता। अतः युगो युगो की वीरपूजा का तुलसी ने (भक्ति पूजा) में मिला लिया—

पावन पञ्च वेद पुराण । राम कथा रुचिराकर नाना ॥

मर्मो सज्जन सुमति कुदारी । ग्यान विराग नयन उगारी ॥

भाव सहित खाजइ जो प्राणी । पाव भगति मनि सब सुख खानी ॥

मोरे मन प्रभु अस बिस्वासा । रामतैं अधिक राम कर दासा ॥<sup>३</sup>

तुलसी ने कथात्मक चमत्कार-मदति की अपेक्षा, राम के अलौकिक व्यक्तित्व को भक्तों के लिए प्रस्तुत किया है। डा० श्रीकृष्णरान के शब्दों में, ‘एक वाक्य में रामचरित मानस राम भक्ति का वाक्य है, रामचरित का वाक्य नहीं राम कथा का वाक्य नहीं।’<sup>४</sup> वाल्मीकि रामायण में राम वीर-जाति के वीर-नेता हैं। लेकिन ‘स’ की स्थिति थोड़ी भिन्न है। तुलसी के राम असाधारण समर विजेता तथा नेक दिव्य शक्तियों में सम्पन्न हैं। वे पृथ्वी पर धर्म की रक्षा के लिए हाथ धारण करते हैं। रावण-वध भी वे अधम या नाश करने के लिए तथा कुलद्रोही विभीषण का साथ भी वे भक्त हृदय होने के कारण ही देने हैं। भाव विश्वव्यापी है वैयक्तिक एकदम नहीं। प्रजापतियों के समय से एक ही वाण बालि का बन करना है, उनका एक ही चाण इन्द्र के

—७/९२

वियोगी हरि कृत टीका की प्रस्तावना

११६।१३, १४, १५, १६

मलाल—मानस दान, पृ० १४१

पुत्र जयन्त वा तीना लोकों में पीछा कर सकता है। मारीच को सौ योजन दूर एक वाण फक सकता है। अतः राम साता के उद्धार के लिए ही युद्ध में प्रवृत्त नहीं हैं वे तो मानव सीमा से भक्ता को ध्यान-प्रदान करने के लिए, लोकोद्धार के लिए, युद्ध में रत हैं। 'वक्रण' नामक भाव का राम ने अद्भुत विस्तार किया है। इस वक्रण के ऊपर ही वीर रौद्र आदि भाव टिके हैं। दूसरे शब्दा में तुलसी में राम के प्रति इतना समर्पण है कि भारतीय साहित्य में इतना बड़ा समर्पण अपने आराध्य के लिए शायद कहीं नहीं मिलता है। राम के चरणों में शत्रु भी (चाहे वह रावण ही क्यों न हो) मस्तक झुकाता है। डा० शम्भूनाथसिंह के शब्दों में, निष्कप यह है कि रामचरित मानस की आधिकारिक कथाओं में वीर रस अग्री रस है, पर अन्त का पयवसान वीर रस में नहीं खल्वि भक्ति रस में हुआ है। प्रथम भोपाल के पूर्वाद्ध में भा भक्तिरस ही प्रधान है और अधिकारिक कथा में भक्ति रस का स्थान वीर रस से प्रथम ही है। अतः समग्र रूप से भक्ति रस की प्रधानता है।<sup>१</sup> इस प्रकार आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, डा० श्रीकृष्णलाल, डा० शम्भूनाथसिंह, डा० उदयभानुसिंह आदि अधिकांश विद्वानों ने मानस' का अग्रीरस वीर न मानकर भक्ति रस ही स्वीकार किया है। तुलसी ने सांस्कृतिक तथा आध्यात्मिक धरातल पर राम को मानव के रूप में नहीं परम गुरु के रूप में प्रस्तुत किया, तुलसी सन्त थे, अतः सन्त के लिए भक्ति-धारा में निमग्न हो जाना स्वाभाविक ही है।

### महाकाव्य के अन्य पात्रों द्वारा उसके महत्त्व की स्वीकृति

मानस' में राम का चरित्र प्रत्येक सन्त तथा असन्त पात्र पर छाया हुआ है। जिन पात्रों का वे वध करते हैं, वे पात्र भी राम की महाता को स्वीकार करने में सकोच नहीं करते। वैसे राम के चरित्र पर निरपराध बालि-वध का दोष लगाया जाता है। वह बालि भी राम द्वारा अपने वध को देखकर बह उठता है कि 'जिस राम के नियम मुनि निरन्तर ध्यान रखते हैं, मानव अपना जन्म-जन्मांतर जिनकी साधना में लगा दता है वही गम मेरे समक्ष खड़े हैं इससे बड़ा मेरा भीरु क्या सौभाग्य हा सकता है। विभीषण राम भक्ति की तमयता में अपने दुराचारी भाई का साथ छोड़ देता है। सुग्रीव तथा अमर राम के गुण प्रचारक सेवक हैं। हनुमान ऐसा अतण्ड बह्मचारी राम के वंश से प्रभावित होकर अपने को उनका दास' कहलाने में हा धन्य समझता है। दशरथ राम की गम्भीरता तथा पितृभक्ति की मराहना करते हुए अपने नहीं हैं। पितृभाना से बन जाने के उपरान्त दशरथ राम राम रहते हुए अपने प्राण होम देने हैं। राम की त्याग-वृत्ति से परिचित होने

के कारण भरा राम का नाम नहीं करते हैं। भरा राम के प्रति दाँते धाम्पराजान  
 है कि राम के विरुद्ध कभी भी कुछ सोच हा नहीं सकते हैं। वना राम का भरा  
 पादुकाया का पूजा हो मुक्ति का अनुभव करता है। भरा मा तिमन चरित्र माग  
 म दूमाता गही है।<sup>१</sup> एका निश्चित चरित्र भी राम के महत्त्व का स्थापना हुआ ना  
 है। सप्तम ए वपरा ग ही राम के प्रति समर्पित है।<sup>२</sup> महत्त्व का स्थापना  
 चरित्र राम म अपने अस्तित्व को इस प्रकार से परिमार्पित किए हुए है कि इसका  
 गढ़ का उगाहरण अपने कहा बढियाई से हा मिलाता है।<sup>३</sup> सप्तम राम का प्रति  
 के प्रति इनने दिखावा है कि ताता के धीरे होने पर मा कहा है कि राम का  
 मुक्ति के मुक्ति हा ताता गढ़ हो गया है।<sup>४</sup> रावण के हा गढ़ तथा हनु  
 मा अंत म राम के महत्त्व को स्थापना करता है। राम मानस म सभा पाता का  
 पाते के अनु रह हा मा मिन, उह के वैयर्थ्य पद सदा ही देन रह है। दयामो  
 ५। उनके वचन तथा प्रीति पर अद्वैत विश्वास है, व उन्हें गुरतामन जनामन,  
 अणुपाल, कहकर माना करते हैं। कबया जसा पापगुण चरित्र भी राम के विरुद्ध  
 स्थापना से प्रभावित होकर मानिमय ना रहना है तथा कबया अपने किए कृत्य पर  
 'कुटिल मारि पछितानी भयानी के रूप म परचाना करता है। इसानिए मनसात से  
 मापित माने पर राम की कृपा के पास न जाकर स्वयंसेवक कबया के पास जान है।<sup>५</sup>  
 ६। होने के कारण उह जन ता के मानस का पूरा ना है तथा कबया के परचा  
 ताता का अति से पवित्र मानकर व मानस देने है। मानस के सभी चरित्रों न उनके  
 विषय गुणों का इस अवसर अवसर पर अनुभव किया है। यही कारण है कि मानस  
 ७। चरित्र राम के महत्त्व को कभी विस्मृत नहीं कर पाते हैं। महत्त्व का इस दृष्टि से  
 ८। उनका मलीविष तेज अद्भुत है, तथा उनके अपराजय अस्तित्व की छाप सब  
 पर दृष्टिगोचर होती है।

१ भराहा कहहि सराहि सराही। राम प्रेम मूरति तनु आही ॥

तात भरत घस काहे न कहह। प्रान समान राम प्रिय अहह

॥मा० २।१८४।४,५

२ बारेहि ते निज हित पतिजानी। लक्ष्मन राम धरन रति मानी ॥

म० १।१८८।३

३ डा० माताप्रसाद गुप्त—तुलसीदास, प० २६२

४ भहुटी विलास सृष्टि लय होई। सपनेह सबट परई कि सोई ॥मा० ३।२८।४

५ प्रभु माने ककेयी लजानी। प्रथम तासु गह गये भयानी ॥ मा० ७।१०।१,

## प्रतिनायक द्वारा नायक के महत्त्व का उद्घाटन

तुलसीदास के इस लीलावतारी नारायण से युद्ध करने वाला प्रतिनायक भी असाधारण जीवट का है। यद्यपि तुलसीदास ने 'वाल्मीकि रामायण' के रावण के विराट रूप का हटाकर 'मानस' में एक ऐसे रावण की सृष्टि की है जो सवथा अयाय का ही पुतला है तथापि रावण के सत पक्ष को उर्होने एकदम छिपा दिया है। डा० माताप्रसाद गुप्त का यह कथन बड़ा ही सायब है कि 'खेद है कि हमारा कवि नायक के प्रति उत्कृष्ट भक्ति के कारण इस खोर चरित्र के साथ पर्याप्त 'पाप नहीं कर सका है। यह ठीक है कि वह मायावी, प्रचण्ड, क्रूर तथा अधर्मी है।<sup>१</sup> 'सीताहरण' उसके छल का स्पष्ट उदाहरण है। वह निशाचर सम्राट अपनी प्रचण्डता में इतना विकराल है कि यद्ध में उसके चलने पर धरती डगमगाती है। शक्तिशाली इतना है कि शिव व सहित बलाश पवन को अपनी भुजाओं पर उठा लेता है दिग्पाली से नीर भरवाना है बाल को कद रखता है। नीति धर्मा इतना है कि दूत के अभद्र वचनों का सुनकर भी प्राण-दण्ड नहीं देता है, साथ ही बलात चुराई हुई सीता को धमकाता ता है लेकिन शारीरिक बलात्कार कभी नहीं करता है। भक्त इतना बड़ा है कि अपने आराध्य शिव के लिए सबस्वदान कर सकता है। क्रोधी इतना है कि क्रोध आने पर अपने सहोदर विभीषण को भी लात मार कर निकाल सकता है। पारिवारिक रूप से इतना शक्तिशाली है कि उसका पुत्र मेघनाद इन्द्र का जीत लेता है। भाई कुम्भकर्ण युद्ध का विकट विकराल योद्धा है। रावण स्वयं भी युद्ध का पारंगत है। उस्ताही इतना है कि मरने दम तक अपने विश्वास को कम नहीं करता है तथा कायरों की भाँति अपने घुटने नहीं टकता है बाक पटु इतना है कि अगद को बाल-वध का दृष्टांत देकर तथा राम को 'प्रिया-विरह में व्यथित' कह कर अगद को मनावज्ञानिक प्रभाव द्वारा अपने पक्ष में करना चाहता है। दम्मी इतना है कि अपनी टक्कर का याद्धा वह विश्व में कोई दूसरा समझता हा नहीं है जाना इतना है कि नारायण के हाथ मरने में भी अपना सीभान्य ही समझता है। इस प्रकार रावण असाधारण जीवट का प्रचण्ड शक्तियो वाला प्रतिनायक है। वह धीमेद्वत से बहुत बड़ा रूप प्रस्तुत करता है। वह पूरा रूप से भीतिकवादी है।<sup>२</sup> यह प्रवृत्तिमूलक चरित्र आदशवादी नहीं वरन् वस्तुवादी है कल्पनावादी नहीं, वरन प्रत्यक्षवादी नहीं, वरन् आशावादी अदृष्टवादी नहीं, वरन सकल्पवादी, सशयवादी नहीं, वरन निश्चयवादी और धार्मिक नहीं वरन् अधार्मिक है।<sup>३</sup> तुलसी के भविन भाव न ऐसे अधार्मिक चरित्र को भी अन्त में भक्त बना

१ तुलसीदास—पृ० २६७

१ डा० उदयभानुसिंह—तुलसी काव्य धोमासा, पृ० ४१६

२ डा० माताप्रसाद गुप्त—तुलसीदास, पृ० २६६

दिया है। शिव भक्त रावण अंत में राम-भक्त बन जाता है। यह तुलसी द्वारा घोषा गया या गढ़ा हुआ रूप है। अधिकांश आलोचकों की स्पष्ट धारणा है कि तुलसी अपने नायक के समक्ष रावण की हीनता ही दिखाते रहे तथा उसकी महानता को वे नकारते रहे हैं। परिणामस्वरूप प्रतिनायक के साथ वे पाप नहीं कर सके हैं, मात्र अपने नायक के गुणों की विश्व-यापी दुःखी मानस में पीटत रहे हैं। प्रति नायक का उन्होंने शक्तिशाली भा इतना नायक की महत्त्व स्थापना के लिए ही रिया दिया है। 'प्रतिनायक की इस महती शक्ति, भयकर साहस प्रतिमानवीय वीरता और लोक विश्वसक प्रवृत्तियों का सामना करने और उसका नाश करने वाला नायक कितना महान व्यक्ति होगा। यही दिखाने के लिए राम क्या भी रावण का यह रूप चित्रित किया गया है।<sup>३</sup> देव मनुज नासकारी इस पापी का वध राम के महत्त्व की बड़ी दिग्ग शक्ति का ही प्रमाण है।

### राम के नायकत्व का निर्धारण

उपयुक्त विवेचन से स्पष्ट है कि 'मानस' के नायक राम 'महाकाव्य' की शास्त्रीय नायक की कसौटी से बहुत ऊपर के नायक हैं। भारतीय आचार्यों ने काव्य शास्त्र में जिस 'धीरोदात्त नायक' की अविवर्धन, समाधान गुणावित कह कर प्रतिष्ठा की है वह भी राम के समक्ष बहुत नगण्य ठहरता है। वे नायकों के नायक हैं, आदर्शों के अक्षय कोष तथा विश्वासों के शाश्वत महारत्न हैं। दशन के ब्रह्म समाज शास्त्र के लोक-नेता, मनोविज्ञान के महामानव आदि सभी मिलकर भी राम की बराबरी नहीं कर पाते हैं वे उन सभी से परे हैं। यह नायक किसी भी परिभाषा की सीमा में आना ही असम्भव है। मानव ने जितने आदर्श गुणों की कल्पना की है उन सभी का अक्षय विश्व कोष राम का चरित्र है। डा० गम्भूनाथ सिंह ने राम के नायकत्व पर विचार करते हुए ठीक ही कहा है कि 'तुलसी ने अपने विषय की गरिमा को तो निभाया ही, अपने काव्य-नायक को इतना विराट बना दिया है कि जिसका शीघ्र स्वयं का स्पष्ट करता है और पाव धरता न गहराई तक बढ़े हुए है। यह विराट राम तुलसी की कल्पना के ही नहीं उनकी अंतरात्मा की अनुवृत्तियों तथा विश्वासों के राम हैं। मध्ययुग में तुलसी ने ऐसे विराट चरित्र को प्रस्तुत किया जिसके समक्ष कोई भी नायक टिकता ही नहीं है। हिंदी के प्रथम महाकाव्य 'पृथ्वीराज रासो' का नायक पृथ्वीराज चौहान उनके सामने कम भर है, पद्मावत का आदर्श प्रेमी नायक भी फीका है। 'भूरसागर' का कृष्ण 'व्रज विलास' तथा 'कृष्ण चरित्र' का मधुर कृष्ण भी जिसकी समानता नहीं कर पाता है। केशव की 'राम चरित्र' के राम तथा वाल्मीकि रामायण के पूण मानव राम भी जिनके समक्ष

आते ही छोटे पड़ जाते हैं। वास्तव में तुलसी के 'राम सांस्कृतिक' आदर्शों के अजर अमर नायक हैं। वे युग-युग की ऋषि-साधना के महान् परिणाम हैं जिनके महान् व्यक्तित्व में सम्पूर्ण भारतीय उदात्त कल्पना का वरदान मिल गया है। तुलसी के नायक से बड़ा चरित्र आधुनिक काल का भी कोई महाकाव्यकार उपस्थित नहीं कर सका है। 'प्रिय प्रवास' के लोक सेवी कृष्ण, कृष्णायन के कृष्ण, सभी उनके सामने झड़ते हैं। 'साकेत' के राम, वदेही बनवास के राम भी समानता नहीं कर पाते। यही कहना उचित है कि आज तक कोई भी महाकवि इतना महान् चरित्र को इतनी उदात्तता के साथ अभा तब प्रस्तुत नहीं कर सका है। अतः तुलसीदास के नायक 'राम' नायक के निर्धारित लक्षणों से भी बहुत ऊँची भूमि पर विद्यमान हैं।

### निरूपण

तुलसी के राम वेदो, पुराणों, उपनिषदों, रामायण महाभारत, बौद्ध तथा जन साहित्य प्राचीन आध्यात्मिक काव्यों, नाटकों तथा भक्ति आन्दोलन की शक्ति से निर्मित अपार सम वय के परिणाम रूप हैं। तुलसीदास ने सांस्कृतिक, धार्मिक नैतिक सामाजिक आदि सभी सनातन आदर्श मूल्यों को राम के चरित्र में समाविष्ट कर दिया है। हिन्दुओं के पतन काल तथा मुगलों के शासन काल में उन्होंने एक ऐसे अपरिचय्य व्यक्तित्व की सृष्टि की, जो समाज को अपने मूल्यों के माध्यम से आधार दे सके। राम के द्वारा प्रतिष्ठित शाश्वत मानदण्ड समस्त आयुष्य के प्रतीक बन गए। सम्पूर्ण भारत ही तुलसीदास ने राममय कर डाला। मर्यादा तथा धर्म का रक्षक इतना विशाल व्यक्तित्व हिन्दू में ही नहीं, सम्पूर्ण भारतीय साधना में नहीं है। इस प्रकार मानस के नायक राम युगा-युगों की साधना का परिणाम हैं उन्हें धर्म, सृष्टि, इतिहास, दर्शन आदि सभी में मिल कर नवीन स्वरूप दे दिया है, जो मानवत्व, ईश्वरत्व दोनों दृष्टियों से भव्य, उदात्त, अद्भुत तथा अपार है।

### रामचन्द्रिका का महाकाव्यत्व

भक्ति काल के श्रेष्ठ प्रवचकाव्यों में 'रामचन्द्रिका' की गणना की जाती है एवं केशव अपने पाण्डित्य प्रदर्शन के लिए जाने माने कवि कहते जाते हैं। पाण्डित्य का यह मोह उनका लगभग सभी कृतियों में तथा रामचन्द्रिका में विशेष रूप से उमड़ा है। केशव ने 'रामचन्द्रिका' में राम की पूव कथा का आधार ग्रहण किया। कथा स्थान-स्थान पर दुबल हो गयी है, सरसता रिक्त हो जान पड़ती है, फिर भी



वेशव रीखातागी करने में खूबे गहरे हैं। छान्ने की पारेखाजी, अतमाग की कृत्रिम बोली तथा सहज-बोध का क्या के कारण ही आचार्य गुलर रामचन्द्रिका के प्रबन्ध पर सन्देह करते हैं। मिथब-पुष्पा ने इस प्रबन्ध-नाय स्वीकार लिया है। उनके मत से इस कृति में कथा की गति में बाधा प्रत्यक्ष पड़ती है किन्तु प्रत्यक्ष की प्रार्थना 'रोचकता' को केशव ने कहा भी स्पष्ट नहीं होने दिया है।<sup>१</sup> हरि कथा की तरफ केशव ने इस कृति में एक भक्त के नहा एक जान माया के भावा का अभिप्राय का है। रामचन्द्रिका को प्रबन्ध काव्य के अतमगत क्या कहना चाहिए इस दृष्टिकोण से महाकाव्य का बसोटा पर इसका निगम करेंगे।

### व्यापक परिधिपुस्तक कथानक

राम की व्यापक परिधि में रामचन्द्रिका की चारुनी सिद्धी है। यह वृत्त मिथ कथानक की कोटि में आयेगा। यह कहना औचित्य से दूर है कि पशव कथल छंद, अलकार आदि का विम्वयकारी प्रयोग करना चाहते थे राम का गुणगान नहीं। हा मुक्त तुलसी के प्रबन्धन की बसावट को रामचन्द्रिका में लोचता ठीक नहीं। जिस काल ने इस कृति को जन्म दिया वह रामदरबार में जगमगता समय था। केशव दरबारी कवि थे तुलसी की तरह सब तब हरि भज भक्त नहीं। अतः केशव की कथा पर उनका दरबारी प्रभाव हावी है। केशव ने राम कथा को नवीन गति नहीं दी, लेकिन तुलसी के समय में ही राम पर महाकाव्य दिखाने का साहस सराहनीय है। इस कथा में केशव नगर वन उपवन सभी जगह विचरे हैं विद्वानों ने अपने ज्ञानबल पर इसे परखा है अतः राम कथा पर आधारित इस कथा की संकुचित परिधि वाला नहीं कहा जा सकता है इस काव्य में सगों का नामकरण पनाश किया है। छंद परिवर्तन से भी कथा की गति भंग हुई है वरन् कथा खण्ड-खण्ड सी हो गयी है। अतः शुक्ल जी के शब्दों में रामचन्द्रिका अनग अलग निसे हुए बरतों का संग्रह तो जान पड़ती है।<sup>२</sup> यह मान सकते हैं कि रामचन्द्रिका की कथा में 'पदमावत' तथा मानस जसी प्रबन्ध क्षमता नहीं। फिर भी विरल कथा सूत्र के होते हुए भी यह एक 'भक्तिपरक प्रबन्धकाव्य' है।<sup>३</sup> जिसकी कथा में महाकाव्य-आत्मक शक्ति है। कवि ने अधिकांश स्थलों पर कथा-व्यापार की सूचना मात्र दी है फिर भी बहुत से स्थल हैं जहाँ कथा का सम्पूर्ण प्रवाह है।<sup>४</sup> उदाहरण के लिए धनुष भन तथा सीता विवाह आदि का विस्तारस वर्णन बड़ा रोचक है। नाटक की श्रिया तथा कायावस्थाओं पर भी यह कथा सफल उतरती है। 'कलागम' में राम

१ मिथब-पु—संज्ञित हिंदी नवरत्न, पृ० १७४

२ आचार्य रामचन्द्र शुक्ल—हिंदी साहित्य का इतिहास, पृ० २१०

३ स० डा० नगेन्द्र—हि० सा० का बहुल इतिहास, पृ० ३०२

४ डा० हीरालाल दीक्षित—आचार्य केशवदास, पृ० १३७

का आदर्श ही मानव की भांति यहाँ भी दृष्टिगोचर होता है। केशव ने वाल्मीकि रामायण, हनुमानाष्टक, प्रमत्तराघव आदि के अनेक स्थला का अनुवाद सा दिया है, लेकिन उनकी मौलिकता में 'परम्परा के स्थान पर वशिष्ठ्य के समावेश का ध्यान अधिक रखा गया है।'<sup>१</sup>

### उदात्त नायक

महाकाव्य प्रधान रूप से नायक की ही अचल कीर्ति का गान है। इस काव्य के नायक धीरोदात्त राम हैं। 'रामचन्द्रिका के राम साक्षात् परम ब्रह्म हैं जो राक्षसों का नाश करने के लिए अवतार धारण करते हैं। तुलसी के राम में जहाँ भय एवं त्याग की असीम शक्ति है वहाँ केशव के राम में उसके स्थान पर उत्पत्ता तथा अमित उत्साह वृत्ति है। राम वनगमन के अवसर पर राम का कौशल्या को गरीबम का उपदेश देना बहुत खटकता है। इन दोषों से नायक की गरिमा को ठेस पहुँची है। दासियों का नव शिख बखन भी केशव ने राम का सुनाया है। अतः यह कहना उचित है कि वाल्मीकि के राम, तुलसी के राम जिस अर्थ में धीरोदात्त हैं, उस अर्थ में केशव के राम नहीं। रामायण काय कलापो का बखन केशव को ले डूबा है। वे राम के जीवन का मधुर पक्ष चंचल चारु दृग्चलनों से प्रस्तुत करते हैं इसी तुलना में तुलसी का 'प्रसिद्धा प्रति चारु चली बस च्यौ' का बखन अधिक मार्मिक है। केशव ने आरम्भ में राम का 'तुम हो अनन्त अनादि सवग सवग सवग'<sup>२</sup> कहा है। अतः 'रामचन्द्रिका' के नायक में कुक्षेय दापो के होते हुए भी महाकाव्य के नायक के गुण हैं। सीता, कौशल्या, मन्दोदी दशरथ आदि का चरित्र भी केशव ने अधिक पटुता से उपस्थित कर दिया। प्रचण्ड प्रतिनायक का नायक दलन करता है।

### रसात्मकता

'रामचन्द्रिका का भाव बखन बहुत समृद्ध है। केशव हास्य या व्यंग्य की कोटि में चाहे हल्के पड़े हों, तबिन उनकी कल्पना के पक्ष कमजोर नहीं हैं। महाकाव्य का भाव निपट है युद्ध, जो वाल्मीकि रामायण से आरम्भ हो गया था। राम का पौरुष इस काव्य का व्याप्ति है। यदि नायक की आधार मानकर उसने अग्री रस का निष्पन्न करें तो राम का उत्साह अडिग है। अतः प्रधान रस 'वीर' कहा जायगा। क्या वे कलेवर में भी इसी उत्साह-भाव की सर्वाधिक व्याप्ति है। 'फलागम' का स्थिति में भी वीर रस ही अग्री कहा जायेगा, क्योंकि वही नायक की पून वृत्ति का प्रतिफलन है। शृगार, शांत, रोद्र भयानक सभी रसों का इसमें मेल है। राम के व्यक्तित्व का शृगारपक्ष वीर भाव का पोषक है। नवकुश रामयुद्ध बखन राम-

१ स० डा० नगेन्द्र—हि० सा० का बृहत् इतिहास, पृ० ३१०

२ रामचन्द्रिका—६।४४

रावण युद्ध से भी अधिक भयानक है। घनुष टूटने के बाद भयानक रस का एव उदाहरण देति—

मत्त दति प्रमत्त हूँ गए देति दति न मज्जही ।

ठोर ठोर सदेश केशव दुदुभा नही चज्जही ॥<sup>१</sup>

सहस्रगुण शक्ति के अवसर पर राम के त्राघ म रौद्र रस का सफल अभ्यंजना है जहाँ वे 'विना सिद्धि सिद्ध सब' की प्रतिज्ञा करते हैं। रामचंद्रिका का इकतीसवा तथा बत्तीसवा 'प्रवाश' शृंगार के श्रेष्ठ स्वस हैं। राव-कुश युद्ध में केशव रक्त की नदियाँ बहा देते हैं। 'जयद गुण्ड भुजग' में बीभत्स रम है। जहाँ मन्दोदरी तथा उसकी सखिया भगद की मूख बनाती हैं वहाँ हास्य की अचछा पुट है। इस प्रकार 'राम चंद्रिका' में भाव बहिष्य तथा नाता वर्णन समता के कारण रस-बहिष्य है।

### उद्देश्य की ज्योति

रामचंद्रिका का उद्देश्य है जीवन के कल्याण पक्ष पर बल देना। केशव का यह कहना कि 'तिनके गुण कहिहैं सत्र मुग नहिहैं पाप पुरातन भागे' में कवि अपने आत्म ताप के द्वारा लोकहित की बात करता है। 'रामचंद्रिका' के उद्देश्य पर आत्ममग्न करते हुए डा० शम्भूनाथ सिंह ने लिखा है कि 'महाकाव्य' में जिस गम्भीर जीवन-दर्शन, लोक कल्याण-अभिव्यक्ति दृष्टिकोण तथा आदर्शोद्भूत महानता की आवश्यकता होती है रामचंद्रिका में उसका अभाव है<sup>२</sup> डा० सिंह के मत में मौलिक भूल है। इसका कारण है कि केशव उस राम का क्या कहना चाहता है जो 'सब सुख लहिहैं पाप पुरातन भागे' तथा पापों की नष्ट कर धारम-तोष तथा आत्म-परिष्कार करने वाले हैं। अतः लोकदृष्टि का अभाव तथा मद्भ्रंश की कमी का दोष केशव पर झूठा है। डा० प्रतिपालसिंह ने ठीक ही कहा है कि 'केशव तुलसी के समान ही धार्मिक सम-व्यवस्था के पोषक थे और केशव की चिरंतन भूमि भी अद्वैतवाद की है और तुलसी की अपेक्षा वह अधिक स्पष्ट है।'<sup>३</sup> अतः रामचंद्रिका का उद्देश्य है कल्याण की सम्भावना।

### अभिव्यंजना में शक्ति

केशव ने 'मापा बोलन जानही जिनके कुल के दास' कह कर भी भाषा में ही रचना की है। उनकी अभिव्यंजना की किम्वदंति कहा जाता है और बहुत समय तक 'केशव का कठिन काव्य का प्रेत' कहकर उनकी अभिव्यंजना पर आत्ममग्न भी होते रहे। केशव ने पाण्डित्य प्रदर्शन के चक्कर में कठिन अप्रचलित, सस्मृतनिष्ठ

१ रामचंद्रिका १७।४९

२ वही, २०।४६

३ डा० शम्भूनाथ सिंह—हिन्दी महाकाव्यों का स्वरूप विकास, पृ० ६७५।

४ केशव और उनका साहित्य, पृ० १२७

शब्दों का प्रयोग करके ही किञ्चित्ना को ज़ाम लिया है। वैसे उनके भाव क्लिष्ट नहीं हैं। भाषा की दुरुहता भी सबन नो यत्न-तन् ही है। उक्ति वचित्रय तथा वाग्वदध्य में केशव को सफलता मिली है। वह अपने पिंगलजान, तथा आलंकारिक प्रयोगों से पाठक को अभिभूत कर लेते हैं। ब्रजा के शब्द और बुटेलखण्डी निपायों से जा बात बनी है, उसमें भाव का मम बँध गया है। कवि की अभिव्यक्ति शक्ति तो समथ है लेकिन 'रामचंद्रिका' में अनुपयुक्त छंदा के धुनने के कारण भी कुछ क्लिष्टता आ गई है। केशव की अभिव्यजना पर डा० श्यामसुंदरदास ने ठीक ही कहा है कि 'जिस प्रकार तुलसी अपनी सरनता और मूर अपनी गम्भीरता के हेतु मराहनीय हैं वैसे ही वरन् उससे भी बड़ कर केशव अपनी भाषा की परिपुष्टता के लिए प्रशमनीय है।'<sup>१</sup> केशव ने अलंकारों का याज्ञना बड़ी 'यापक' की है लेकिन उनमें ऊपरी ठूसठाम अधिन है। वे कभी-कभी तो उत्प्रेक्षा सदेह रूपक आदि की लडा सा बाध देते हैं, जस लका में भाग लगने का दृश्य भरत की सना का वखन आदि अनक स्थल हैं। प० कृष्ण शंकर गुक्ल जी का यह कहना उचित हो है कि कथा कभी ता ऐसा लगता है कि यहा आलंकारिक याज्ञना का नहीं जा सकता, परतु केशव आकाश पाताल को छानकर कुछ ऐसी अप्रस्तुत योजना कर देते हैं कि हमें चकित रह जाना पडता है।<sup>२</sup> भाव की व्यक्त करने के लिए बोलत बोन फूल से ऋर' मुहावरे भी अपनाये हैं। प्रसादगुण पर केशव की आस्था है। केशव में शब्द शयिरूप भी कही-कही मिलता है। अत च्युत मस्कृति दोषों की भरमार है यथा 'विषमय यह गोदावरी' आदि प्रयोग। फिर भी केशव की अभिव्यक्ति में नाटकीय जीवन्तता, साहित्यिक मादव, भावानुकूल गति समादारमक शक्ति तथा उत्कृष्ट कवित्व शक्ति है। केशव के शब्द सागर ने साहित्य की समृद्धि की है। इस अभिव्यजना शिल्प में कितनी ही दुरुहता क्यों न हो, उसकी समथ शिल्प की गरिमा सराहनीय है।

अत रामचंद्रिका को महाकाव्य मानन में कोई बाधा नहीं है। प्रबंध कलाना, सवादो में नाटकीय सजीवता, भाव विध्य, उत्कृष्ट अलंकार-याज्ञना, कथा-वस्तु में परम्परित एवं नवीन प्रयोग, लोकहितकारी योजना, समृद्ध अभिव्यजना शिल्प हमें महाकाव्य ही मानन का विवश कर देते हैं। 'मानस एव विश्वजनीन महाकाव्य की दृष्टि में रखत हुए रामचंद्रिका को सधु पाकर महाकाव्य न मानना केशव के प्रति 'याप' नहीं है।

१ स० डा० श्यामसुंदरदास रामचंद्रिका, मनोरजन पुस्तकमाला, प० ५

२ प० कृष्णशंकर गुक्ल केशव की काव्य-कला, पृ० १०३

## ‘रामचन्द्रिका’ के नायक राम

### पृष्ठभूमि

प्रत्येक नायक अपने युग की परिस्थितियों से प्रभावित होता है। ‘रामचन्द्रिका’ का नायक भी इसका घनत्व नहीं है। नायक निर्माण की दृष्टि में भीतर बाह्य परिस्थितियों का विन्यास हाथ होता है। दूसरा प्रमाण भक्तिवाद का उत्कर्ष प्रदूष, रानिवासी परिस्थितियाँ तथा उम्र काय की साक्षिणी प्रकृतियों के विन्यास से स्पष्ट हो जाता है। तुलसी ने नायक शिरोमणि राम ‘रामचन्द्रिका’ के माधव बनन ही प्रतापी राजा का भीति रत्न गये हैं। राजका व्यवहार की कुतन्ता के साथ राजमी विन्यास का ये विचार हो गये हैं। रीतिवार्ता परवारी प्रभाव उनका राम पर भी पडा है जिसका विवेचन हमले पृष्ठों में प्रस्तुत करेंगे। राम के व्यक्तित्व का साधनभीमिक नायकान्तर तथा साधनान्तर रूप यन्त्र कम उपनय होता है। यह ठीक है कि वेशव ने बाल्मीकि रामायण के राम का हा धरना दृष्टि में रख कर उनका नायकत्व अपनी दृष्टि से उभारा है। ‘रामायण’ के ‘नरचन्द्रिका’ का प्रभाव ‘रामचन्द्रिका’ के राम पर स्पष्ट भगवत्ता है। वेशव का पाणिन्य मही उनका साथ दे गया है। यदि वे राम के साथ बहुत व्याय नहीं कर पाये हैं, तो उसे नीचे गिराने के दोषी भी नहीं ठहराये जा सकते हैं। राम के चरित्र में तुलसी के बाह्य विन्यास की दिशाएँ ही यन्त्र कम रह गई थी। वेशव ने राजा राम के ब्रह्मत्व, महामातृत्व की रक्षित करने का प्रयास ‘रामचन्द्रिका’ में गहरा किया है। यहाँ कारण है कि उनका नायक रीतिवासीन राजाका के विन्यास-व्यय से प्रभावित होता हुआ भी, उनसे बहुत ऊपर उठा हुआ है। राम में भोग प्रवृत्ति का विन्यास प्रस्तुत करके केशव ने उन्हें हमारे और पास ला दिया है। वे मात्र धार्मिकों के पूजोभूत न बनकर जीवन में रमने वाले मानव बन गये हैं।

वेशव के नायक राम की तुलना तुलसी के नायक राम से करने पर, वे छोटे लगते हैं तथा मालोचन वेशव की हृन्महीन भक्तता करता है। ऐसा करने पर हम वेशव के साथ कोई पाय नहीं कर पाते और अपनी दृष्टिवादिता का ही परिचय देते हैं। हम भूलना नहीं चाहिए कि तुलसी ने इनके विराट नायक को प्रस्तुत किया है कि उसका तुलना में हिन्ने सत्कार का प्रत्येक नायक देय प्रनीत होता है। तुलसी ने भक्ति की चरम मजिद पर पहुँच कर राम के दिव्य रूप को देखा है जहाँ सामान्य कवि की पहुँच संभव ही नहीं था। जो ब्रह्म में रम गया, ब्रह्म गया उस तुलसी को पाता सम्भव ही नहीं था। राम के चरित्र का भक्ति तथा कला का दृष्टि से इतना दिव्य तथा भव्य कर दिया था कि उसमें विकास की दिशाएँ कम रह गई थीं। वेशव दरवारी कवि, तुलसी रमता जोयी, विरागी साधक बड़ा अनर

का दोनों के जीवन में, भूल दृष्टि में। वैशव तुलसी के समकालीन ही थे तथा ‘बाल्मीकि रामायण’ से प्रभावित होकर दरबारी वातावरण से ऊब कर पाष पुरातन नष्ट करने के लिए राम के यश वर्णन में लग गये। उन्होंने इसी कारण मानस’ के बाल काण्ड को लगभग छ्वाड़ सा दिया है। केशव न विश्वामित्र आगमन से क्या आरम्भ की है तथा राम के यश प्रताप भोग आदि का भुक्त वर्णन किया है। तुलसी के नायक की तुलना में केशव का नायक फीका है अतः हमारा आश्चर्य उनसे राम के प्रति कम जगता है। मानस’ के राम के प्रति पाठक के भक्त-हृदय में जो श्रद्धा भाव से पूर्ण पारावार उमड़ता है वह ‘रामचंद्रिका’ के राम के प्रति नहीं। हमारे, केशव राम में कोई असाधारण विशेषता उत्पन्न नहीं कर सके हैं राम के भोः दृश्य भी प्रस्तुत करके उन्होंने कोई चमत्कार नहीं किया। तीसरे केशव के राम पर रीतिकानीय राजाभा की प्रतिच्छाया पड़ी है। इस प्रभाव को रीतिकानीय परिस्थितियाँ पर विचार करने से स्पष्ट देख सक्ते हैं।

### सामाजिक परिस्थितियाँ

यदि समाज का अभिन्न अंग है तथा समाज का प्रभाव जाने अनजाने ग्रहण करता ही रहता है। केशव का समय भक्ति तथा धृगार का समय-स्थल है। भक्ति के जीए काल तथा विलासिता के उठान काल में ‘रामचंद्रिका’ हमारे सामने आती है। सत फकीरी की भक्ति धारा तथा सगुण भक्तों की भक्ति धारा का जल मध उबला हो गया था। अकबरी दरबार से ही विलास के भीना बाजार का आरम्भ हो जाता है। राजा प्रजा राग रजन में रम गई नविकता लक्ष्मी से प्रसन्न हो पर बना गई। राजा राज के मुगसाज तथा प्रजा अपने प्रेम-नाम में लगी रही। राजाओं के मन रानियों के विलास में ह्व गये। जमा राजा कर रहे थे, वसा ही चरित्र राम का केशव ने ‘रामचंद्रिका’ के उत्तराद्ध में प्रस्तुत किया है। राजाओं के दरबार में जैसे नृस्य-वान्न हाने थे, वैसे साज केशव ने राम के राजा बन जाने के बाद एक नहीं अनेक प्रस्तुत किए हैं। विलासा राजाओं का भाँति के राग रग में मस्त हैं तथा सामान्य राजाओं की भाँति के प्रमत्त होने पर अपना प्रिया का वर्णन माँगने को विवश करने हैं।<sup>१</sup> केशव न दरबार में राजाओं के रग रास देने थे, अतः उन दृश्यों

१ (क) अद्भुत गति सुदरी विलोकि । विहसति है धू घट पट रोकि ॥३२॥११

रा० च०

(ख) आईं चनि छासा, गुनगन माला, बुधि बल रूपन बाढ़ी ।

गुम जाति धिनिनी, चित्र वेदतें, निकसि भई जनु ठाढ़ी ।

मानो गुन सगनि, यो प्रति अगनि, रूपक रूप विराज ।

बीनानि सजाव, अद्भुत गाय, गिरा रानिनी साज ॥३०॥२ रा० च०

(ग) मुदरि भोगि जी जी मह भावत । मो मन तो निरखे सुख पावत ॥

३३॥२ रा० च०

की ये छाभिजाय मातर राम म प्रतिष्ठा करत रहे है। उतरा दृष्टि म राम का यही भाग प्रसूतिमूर्तर रंग ही भग्य रहा हागा तथा उतरा नंगा किया है। लेकिन या विलास म दृश्य बा म सयमित हा ग्य है तथा अग्रमय रंग तथा सीता विद्यावन म राम की मयांगप्रसूति तथा सात रंगर रति का उभार दिया गया है।

### साहित्यिक स्थिति और नायक

रातिनास का गमला गाहिर्य-नायक नातिनामा की गम-सीमा हाउ भाव, सयोग वियोग शृंगार साज गगनिग-रणा आदि म भरा गया है। गाहिर्य की स्थिति भय दारपारी की भक्ति रान के बलि का भाँति रति। रीरदियो एकाद यनी म राम दृष्टा नाम का धूनि ता अदरम रहा रहा या अदरता बलि राजदरबार म गाविया भू म अंगुगार राजा का मा बहसान कर रोजा बमाना था। बेशव नव, पद्मावर विहारी, घातन आदि सभी चाहे ये रीतिमुक्त बलि हा अथवा रातिवद्ध सभी प्रेमगान गा रह थ। साहित्यिक दृष्टि से रीति-युग क बलिया न याम्नायक जायन म भ्याप्त आशाभा, सालसाभो आवासाभा रण-नृपणा सीदम प्रेम विलास त्याग साहस, सीक आदि का यथातथ्य चित्रण किया है।<sup>१</sup> बलि ‘राधा दृष्टा मुमिरन के बहान’ मनमान डग से नायक-नायिका के प्रेम का निरूपण कर रहा था। राधा नाम मुग्धा, रतिमुग्धा मात्र तथा दृष्टा विहारी रमहारी मात्र रह गय। कुछ गिते धुने बलियो लाल भूपण, सून्न, जोषराज आदि ने ही बार रस की धारा प्रवाहित की है शेष सभी बलि लक्षण-ग्रयो तथा लक्ष्य ग्रन्थ म लगे रहे। इस साहित्यिक प्रवृत्ति का भी बेशव के नायक पर गहरा प्रभाव है ये सामान्य नायक या राजा की भाँति सीता के साथ विलास करते हैं। तुलसी के लीलायन म जो लोकमर्यादा तथा लोक रक्षक का भाव था वह रामचरित के राम म कहाँ? बेशव राजदरबार मे पले, दबे वे उस दरबारी प्रभाव को अपने नायक से क्या भी कसे सकते थे इसी लिए वही राम के चरित्र म राजाभो की भाँति किया-वत्तापो का बेशव ने बरान किया है। शायद बेशव म कभी-कभी तो वे शृंगार आयेष्ट तथा कामिनी म हूबे दिभाये हैं। रीतिवाल के राजाभो की भाँति सभा म विराजमान होकर संगीत-नाज सुनते हैं कभी रानियो की जल श्रीठा का दृश्य देखने म मस्त हैं। इस प्रकार अनक उदाहरणों से सिद्ध है कि राम के ऊपर यह विनासिता का रंग रीतिवाल की सामाजिक परिस्थितिया की ही देन है। डा० हीरालाल दीक्षित ने ठीक ही कहा है ‘राज्याभिषेक’ के बाद तो राम और तत्कालीन मुगल सम्राटों तथा राजा महा राजाभा म तनिक भी अंतर नही रह जाता।<sup>२</sup>

१ डा० भगीरथ मिश्र—हिंदी रीति साहित्य, पृ० १५

२ डा० हीरालाल दीक्षित—आचार्य केशवदास, पृ० १७

अकबरकालीन मुगल समाज प्रतिवधा से मुक्त था, उसमें उत्सव, रीतिरिवाज की छूट थी। सुलत के इस वातावरण में जनता में आचार भ्रष्टता घा चुकी थी। सम्राट विनासा, शराबी तथा मस्तीखोर थे।<sup>१</sup> छाही घरानों में बनावट, सजावट का बालबाला था।<sup>२</sup> "यो ता मुगलवश के ऐश्वर्य और बखव में विलासिता की प्रधानता प्रारम्भ काल से ही चली आ रही थी, फिर भी प्रथम तीन सम्राटों ने विलास की उन्मत्त लहरों में अपने आपको बह नहीं जाने दिया था। पर जहाँगीर के व्यक्तित्व में किलासत्व असंतुलित रूप में प्रकट हुआ और फिर शाहजहाँ की बखव प्रियता और विलासप्रियता का तदुद्युगान सामान्य पर इतना प्रभाव पड़ा कि उनकी कत्तव्य शक्ति का दिन पर दिन ह्रास होता गया।"<sup>३</sup> ऐसे शृंगारिकता के वातावरण से केशव का काय बच नहीं पाया। यही कारण है कि उनके नायक के ऊपर रीति-कालीन शृंगारिकता विलासिता की छाप स्पष्ट है। केशव ने राजा राम में अनेक विलासी गुणों को राजसी महामना दिखाने के लिए ही रखा है, लेकिन उनसे राम के विराट व्यक्तित्व की जो हानि हुई है, उस और उनका ध्यान नहीं गया।

### राजनीतिक स्थिरता, आश्रयदाता तथा केशव की आभिजात्य रुचि

केशव का समय राजनीतिक परिस्थितियों की दृष्टि से राजनीतिक हलचलों का कम स्थिरता का अधिष्ठ है। बाबर, हुमाऊँ के पश्चात् मुगल राज्य का सच्चा सस्थापक अकबर दोन इलाहों के सिद्धान्त तथा अपनी हिंदू मुस्लिम नीति की उदारता के कारण जन्म गया था। उसने समय में साहित्य, कला, शासन प्रणाली सभी पद्धतियों में अभिवृद्धि हुई। अकबर संगीत का प्रेमी कवियों का सम्मान करने वाला, राजपूतों विलंबी शक्ति से धर्म के साथ टक्कर लेने वाला शासक था, जिसने कला तथा कत्तव्य नामक जीवों तगडों के दोनों पक्षों को संतुलित रखा। पिता की यह परम्परा विलामी जहाँगीर को मिली। शराबी शासक जहाँगीर अकबर की तरह योग्य तो न था लेकिन योग्य तथा चौकन्ता शासक था। सोमनाथ से उसे मूरजहा का समीप तथा सहयोग मिला। अतः प्रजा की उन्नति में बाधा नहीं पड़ी। अकबर की तरह जहाँगीर के हरमखाने में भी राजपूतों की बैठिया आश्रय पा रही थी। इस प्रकार जहाँगीर अपनी राजनीतिक सत्ता को समृद्धि रहा।

केशव का समय (सं० १६१८-१६८० वि०) सत्रहवीं सदी अकबर के शासन का काल है। जिस दरबार में कवियों और कलावंतों का जन्मघट था। अकबर

१ विसेण्ट ए स्मिथ—अकबर द ग्रेट मुगल, पृ० ३३६

२ श्री अल्लामा अबुल मुसुफ अली—मध्यकालीन भारत की सामाजिक

अवस्था, पृ० ४३

३ सं० डा० मगद—हिंदी साहित्य का बृहत् इतिहास, षष्ठ भाग, रीतिकाल, पृ० १३



स्वयं ही साहिब का बड़ा बद्रत्नान बादशाह था तथा वह तानमन तथा बारबल के भान तथा व्यंग्यो का भी बायल था। उसने हुमायूँ के अस्थिर साम्राज्य की जड़ों को जमा दिया। हिंदुओं के साथ बवाहिर सम्बंध के द्वारा मित्रता को दृढ़ किया।<sup>१</sup> उसने धार्मिक साहिष्णुता से हिंदुओं के अपार समुदाय को अपने शासन में मुख्यवस्थित रूप से अपना लिया। इतिहास इस तथ्य का साक्ष्य है कि केशव का दिल्ली दरबार से कभी भी सीधा सम्पर्क नहीं रहा। वे औरछा-नरेश के दरबार में काव्य-शास्त्र, वीर नायकों के चरित्र तथा राजदरबार के रंगीन वातावरण में रमते रहे। ये राजपूत राजा आजीवन मुगल दासता के प्रति विद्रोह करते रहे। मधुकर शाह ने बड़े स्वाभिमान से अकबर की विशाल बाहिनी का सामना किया। मधुकर आजीवन अकबर से संध्य करते रहे तथा अपना राज्य अपने पुत्र रामशाह को तथा प्रबंध भार वीरसिंह देव को सौंप गए थे। वीरसिंह देव ने भी अकबर के विरुद्ध विद्रोह किया<sup>२</sup> उसे इंदजीतसिंह का समयन मिला। उसने दतिया के प्रदेश पर अपना कब्जा कर लिया। सलीम के साथ अपना सम्बन्ध स्थापित कर उसने अपनी राजनीतिक सूझ-बूझ का प्रमाण दिया। इस प्रकार केशव वीरनायकों के राजकवि हैं। दरबार की इस राजनीति का प्रभाव केशव के 'वीरसिंहदेवचरित' 'जहाँगीरजसचंद्रिका' तथा 'रामचंद्रिका' तीनों की प्रबंध काव्यों पर पड़ा है।

इस राजनीतिक वातावरण का प्रभाव 'रामचंद्रिका' के नायक पर स्पष्ट दृष्टिपोचर होता है। केशव के 'राम' अपने राज्यपाल में रहस्य तवियत रसिक भावशाह की तरह व्यवहार करते हैं। 'राम' के राज लोक का एक मुगल दरबारी बाही रूप खिण—

बन वन जहाँ तहाँबहुधा तने सुबितान ।  
भालर मुकुतान की भर भूमके बिनमान ।  
चौकठ मनि नील की धटिकान के सुवपाट ।  
देखि देखि सो होत हैं सब देवता अनुपाट ।  
सैत पीत मनीन के परदे रचे रचि लीन ।  
देखि कै तह देखिए जनु लोल लोचन मोन ।  
सुभ हीरत को सुभगन है हिडोरा लाल ।  
सुन्दरी नह भूल ही प्रतिबिम्ब के तह ताल ॥<sup>३</sup>

१ डा० श्री नेत्र पाण्डेय—भारत का बहस इतिहास, पृ० ३६०

२ औरछा गजेन्द्र—भाग ६

३ रामचंद्रिका २६।४२, ४३

'राम' के रंगमहल की गोभा अद्भुत है। उसमें 'चित्रो बहुत चित्रनि'<sup>१</sup> के विलास धाम हैं। सुन्दरियों का नृत्य तथा उनके अंगों की दमक का सौन्दर्य अनुपम है। नगर दरबार के सकेत तथा जनक दरबार के सकेत भी इस राम के रंगमय दरबार से मन खाते हैं। वंशव के राम का श्रेष्ठ भी राजपूत क्षत्रिय का है, जो परशुराम जो क समक्ष प्रकट हो जाता है। नायक चरित्र में क्षणिक उन्नता दिखाना भी तत्कालीन राजाओं का श्रेष्ठ प्रवृत्ति के प्रभाव से प्रभावित लगता है। 'राम' रीतिकालीन राजनैतिक मनोवृत्तियों के अनेक स्थल पर शिखर हो गये हैं तथा उनमें राजसी रीतिना भा समाहित हो गयी है।

### धार्मिक परिस्थितियों का नायक पर प्रभाव

अबदर का उदार धार्मिक नीति के कारण जनता को विशेष धार्मिक तना-तनी का सामना नहीं करना पड़ रहा था। उसने धार्मिक समन्वय का सिद्धान्त 'दीन इलाही, चला दिया था।<sup>२</sup> बचपन से ही उदार सूफीमत के सिद्धांतों ने उसके मन में घर कर लिया था। दिल्ली के शेख ताजुद्दीन का भी इस पर विशेष प्रभाव था। उसने फतहपुर-सीकरी में 'इबादतखाना' बनवाया जिसमें विभिन्न धर्म वालों का धार्मिक शास्त्राध्य होता था, जिसमें हिन्दू, मुस्लिम, जन, पारसी आदि विभिन्न वर्गों के धार्मिक नेता सम्मिलित होते थे। बादशाह स्वयं इन धार्मिक बादविवादों में भाग लेता था। जनाचार्य हरिविजय सूरि, विजयसेन सूर आदि का उस पर विशेष प्रभाव पड़ा था। दीनइलाही की नींव भी रहस्यवाद, अध्यात्मवाद आदि के सम्मिश्रण से बनी थी।<sup>३</sup> सत्ता की धार्मिक पाखण्डता के प्रति उपेक्षा तथा 'सतन कहा सीकरी भी काम, का भी उस पर प्रभाव पड़ा था।

दूसरी ओर मध्ययुग की साहित्य-साधना पर भक्ति आन्दोलन का तीव्र प्रभाव पड़ा। भक्ति प्रसार का कारण ईसाइयत तथा मुसलमानों के अत्याचार का परिणाम न होकर शक्ति के अद्वैत आन्दोलन का प्रभाव था। इस भक्ति आन्दोलन में राम-भक्ति तथा कृष्ण भक्ति शाखा के आचार्य भी सक्रिय भाग ले रहे थे। रीतिकाल का कवि कभी शृंगार के गीत गाकर थकता है तो कृष्ण या राम भक्ति का ही सहारा लेता है। वंशव की 'रामचन्द्रिका' के नायक को भी 'परमब्रह्म' 'अवतार-मणि' 'पतिपावन' 'जगत्पति' आदि अनेक विशेषणों से युक्त पाते हैं। क्षीण भक्ति धारा का प्रवल रूप रामचन्द्रिका में अनेक स्थानों पर देखा जा सकता है। वंशव ने राम को साम्प्रतिक पुनर्जागरण दि य रूप में स्मरण किया है। यथा—

१ रामचन्द्रिका ३०।१

२ डा० ईश्वरीप्रसाद—भारत का इतिहास, भाग २, पृ० ८४

३ बहो, पृ० ८६

पूरन पुरान अरु पृथुष पुरान परिपूरन बताव न बताव और उक्ति को ।  
 दरसन देत जिहें दरसन समुझन नेति कहैं वेद छाडि भेद जुक्ति का ।  
 जानियह वैसोदास अनुनि राम राम रखन रहत न ङ्गुत पुनरुक्ति का ।  
 रूप देहि अनिमाहि गुन देहि गरिमाहि नाम देहि महिमाहि भक्ति दहि  
 मुक्ति का ॥<sup>१</sup>

केशव इस प्रकार भूष से चली आती हुई धार्मिक परम्पराभा से परिचिन थे । डा० प्रतिपालसिंह ने उनपर 'मद्वतवा' तथा रामानुज सम्प्रदाय की भक्ति भावना की गहरी छाप सिद्ध की है ।<sup>२</sup> केशव ने राम को धार्मिक नेता 'पुरातन पापी' से मुक्ति के लिए ही स्वीकारा है ।

जिनको जस हसा, जगत प्रससा, मुनि जन मानस रता ।  
 लोचन अनुरूपनि स्याम स्वरूपनि अजन अजित सता ।  
 फालनय दरसी, निगुण परसी होत बिलम्ब न लाग ।  
 तिनके गुन कहिहों सब सुख सहिहों पाप पुरातन भाये ॥<sup>३</sup>

उपयुक्त विवेचन से सामाजिक साहित्यिक राजनतिक धार्मिक परिस्थितियों का प्रभाव 'रामचंद्रिका' के नायक राम पर स्पष्ट भलकता है । केशव ने अपने 'राम' को मान आध्यात्मिक मूर्ति ही नहीं बनाया । उन्हें मानव की भाँति जीना भी आता है वे राजाओं से शालीन, योद्धाओं से शीघ्रवान सब कुछ हैं । युग की परिस्थितियों के कारण ही तुलसी के 'लीलावतारी राम' तथा केशव के 'अवतारमणि' राम में बड़ा ही अन्तर है । एक ओर केशव का राम में वात्मीक 'रामायण' के राम की भलक अधिक है दूसरी ओर केशव ने अपने नायक में रीतिकालीन विलासी प्रभाव के साथ भी पुरातन तेज कायम रखा है ।

### रामचंद्रिका में राम का नायकत्व

'तुलसी' ने राम का इतना उदात्त तथा व्यापक रूप प्रस्तुत किया था कि उसमें चरित्र विस्तार की दिशाएँ अधिक नहीं रह गयी थी । दूसरे, तुलसी का सन्त भक्ति की चरमभूमि पर पहुँच कर राम के दिव्य रूप का मुक्त दशन कर रहा था । 'केशव' प्रवृत्ति से ही तुलसी से भिन्न है वे तो रीति निरूपक आचार्य हैं, जो अलंकार रस नायिका भेद की चर्चा करते रहते अथवा वे राजदरबार में राजपूत राजाओं के चरित-गान गाते रहें । ऐसा लगता है कि दरबारी वातावरण से केशव

१ रामचंद्रिका १।३

२ केशव और उनका साहित्य, पृ० १०८

३ रामचंद्रिका १।२०

को घणा महसूम हुई थी और उनका मन ब्रह्म की ओर उन्मुख हो गया। राम का भक्त-वत्सल मयादित रूप उन्हें पाप मुक्त' कराने वाला लगा होगा, उन्होंने 'हरि जू हरि है' का भवेत्त इसी हेतु दिया है। विलास से भयभीत उनका मन 'वाल्मीकि' के राम की शरण में गया। 'वाल्मीकि' के राम बहुचर्चित के महामातव हैं। मुनि न स्वप्न में ही 'न रामनेव गाइ हैं न दवलोक पाइ हैं,' का उपदेश दिया है। केशव ने भक्ति भाव से राम के विराट् रूप को समझ अपने को झुका लिया था तथा सोइ परम ब्रह्म श्रीराम है भवतारी भवतारमणि' कहकर उनके गुणगान का निश्चय कर लिया। केशव ने 'भवतारमणि, पुराण पुरुष, नृप सागतन, वेदो में नेति नेति अष्टसिद्ध तथा भक्ति के दाता' परमब्रह्म, अखिल विश्व को अपने आलीशान से आलीशान करने वाले राम का अपनी दृष्टि का आधार बनाया है। उनके राम प्रमल प्रमत्त अनादि हैं तथा वेद उनके विषय में बहुत कुछ बताने में समर्थ नहीं हैं। उन्होंने राक्षसा का (केटक नरकासुर आदि) वध किया<sup>१</sup> दानी बलि से दान लिया, समान दृष्टि वाले, शत्रु मित्र के साथी, भक्तों के कल्याणाय भवतार धारण करते हैं। गीता के ब्रह्म की भाँति व धर्म की स्थापना तथा अधर्म का नाश करने वाले हैं। अपनी इच्छा से पृथ्वी तारहरण हतु<sup>२</sup> आततायी रावण का उन्होंने वध किया है। पृथ्वी का भरण करने के कारण ही वे सीता का अग्नि में अपना शरीर रख कर छाया शरीर रखन की राय देते हैं। राम को 'सूरचन्द्र' नमन करते रहते हैं। वह पूरा ब्रह्म मानव बनकर सब कुछ करते हैं।<sup>३</sup> तुलसी के राम 'सीतावतारी' तथा 'केशव व' राम भवतारमणि' होते हुए भी भवतारवाद की विप्लु परम्परा में आते हैं।<sup>४</sup> इसी भवतारी राम में केशव का मन रम गया है—

१ रामचंद्रिका १।११

२ वही १।१६

३ वही १।१७

४ वही १।३

५ (क) तुम प्रमल प्रमत्त अनादि देव नहि वेद अखानत सकल मेव ।

सबको समान नहीं कर नेह सब भजन कारन धरत देइ ॥ रा० च०

(ख) अनेक अम्हादि न अन्त पायो । अनेकथा वेदन भोरे पायो ।

ति हैं न रामानुज बचु जानी । मुनी मुधी केवल ब्रह्म जानी ॥ रा० च०

६ निमच्छया भूतल देह घारी अथम सहारक धमचारी ।

चले दगाप्रोविहि भारिवे को, तयो वती केवल बारिवे को ॥ रा० च०

७ अम्हादि देव जय विनय कीह । तट क्षीर सिन्धु के परमदीन ।

तुम कह यो देव भवतारहु जाय । सुत हों दसरथ को होब प्राय ॥ रा० च०

८ ३।० कविलदेव पांडेय-मध्ययुगीन साहित्य में भवतारवाद पृ० ५१४

रामचन्द्र पदपथ, वन्द्यावन्दामि बन्दीयम् ।

केशवमति भूतनया लोचन चचरीवायते ॥'

केशव ने भी राम का कल्याणार्थ में अति लोभानात्र के रूप में दिया था है। मानव का मन मानव के गुणों से प्रेरणा प्राप्त कर सके, उनके आदर्शों का अनुसरण कर सके यह मोक्ष कर ही केशव ने राम को मानव रूप में मानकर उनकी 'चन्द्रिका' का रिंगण बलान प्रस्तुत किया है। उम्मा लगता है कि वेदा से लेकर, पुराणा, महान्याय्या नाटकों आदि सभी में राम के नायकत्व को लेकर जो प्रख्यात रचनाएँ की गई थी उनका ज्ञान केशव का था। यहाँ कारण है कि उनके नायक पर बाल्मीकि के राम तथा भवभूति के राम हनुमन्नाटककार के राम, प्रसन्नराधन के राम, भष्मात्म रामायण के राम का प्रभाव विद्वानों ने 'रामचन्द्रिका' के राम पर स्पष्ट स्वीकार किया है।<sup>१</sup> राम पर प्राचीन प्रभावा का निष्पत्त्य करना उद्देश्य नहीं है। इन आचार्यों द्वारा निर्माण मानदण्डों के निष्पत्त्य पर राम के नायकत्व पर विचार करेंगे।

**कथा का सूत्रधार**

इस विशेष में आचार्यों का निर्धारण था कि नायक की कथा का प्राणवान सूत्रधार होना चाहिए। इस दृष्टि से रामचन्द्रिका में समस्त आक्षेपण का केन्द्र राम का ही अर्थ है। समस्त कथा उनके गुणगान पर ही टिकी है। वास्तव में

पर परमज्ञानी वसिष्ठ जी मुनि-तेज का वरुण नरके राजा से अनुमति प्रदान करा देने हैं।<sup>१</sup> यही से राम के पराक्रम का आरम्भ है। व विश्वामित्र की अनुमति से ताड़का का वध करते हैं, मारीच तथा सुबाहु आदि राक्षसों का वध कर वे देव-समुदाय को प्रसन्न करते हैं।<sup>२</sup> विश्वामित्र यत्र पूरा कर शाश्वतता से सीता के धनुष यत्र म राम को ले जाते हैं। ‘केशव ने जनक-बाटिका के राम-सीता मिलन प्रसंग की रमणीयता का आर ध्यान न दवर रावण-बाणामुर विवाद की कल्पना की है। माग म ‘ग्रहिल्या उद्वार’ करते हुए राम धनुष-यत्र म मुनि के साथ जाते हैं, रावण तथा बाणामुर माथा मार कर लौट घूँटे हैं,<sup>३</sup> राम ‘व्रज से कठोर, कलाश स विशाल, काल से भा करान धनुष को ‘फूल मूल जिमि टूक’<sup>४</sup> टूक कर देते हैं—

बांधि बर स्वर्ग की साधि अपवर्ग, धनुष्य को तन्द मयो भेदि ब्रह्मण्ड की ॥<sup>५</sup>

इस प्रकार केशव ने ‘रामायण’ की कथा का आधार ही अधिन ग्रहण किया है तथा राम के काय-व्यापारों में क्षिप्रता दित्तवाई है। परशुराम जी के क्रोध को वे ‘मानस’ के राम की तरह पुष्पाप समय से सहन नहीं है। वे उग्र रूप से परशुराम के क्रोध का विरोध करते हैं। यहाँ केशव ने राम के क्षत्रियत्व का रूप प्रबल दित्ताया है—

भग्न भयो हर धनुष सान तुमको धव साल ।

वृषा हाइ विधि मृष्टि ईश आसन ते चाल ॥

मवन लोव सघर तेष सिर तें घर डार ।

सप्तसिंधु मिलिजाहि होइ सबही तम भार ।

अति अमल ज्योति नारायणी कहि केसव बुझि जाइ बर ।

भगुनन्द सें माइ कूठार मैं किमो सरासन जुवन सरु ॥<sup>६</sup>

राम तथा परशुराम के इस विवाद की स्वय महादेव घाबर मुल्लाते हैं तथा वे तन मन सुख पायो’ कहकर अमर, अनन्त, अनादि देव राम के पराक्रम का परशुराम के धनुष पर प्रत्यक्ष चढ़ा कर प्रकट करवाने हैं। यहाँ पर कथा चक्र राम पर हा आधारित है। कथा म राम वनगमन, वनगमन में पूव माता की उपदेश, मूषनला

१ रामचन्द्रिका २।२४

२ वही २।१०

३ वही २।३६

४ वही २।४१

५ वही २।४३

६ वही ३।४२

प्रसंग, सीताहरण तथा राम विगत सात गाना हुए मुषाय मित्रता, मित्र के लिए वाचिकत्व, हनुमान प्रसंग जगज्जु म गाना का मर्त मपता" कुम्भरुण वष, बिभी पण शरण, राखण वष मर्ति रा सभा पटताम राम क उतर हा घाघारि है। धयोध्या वापमा वष कराना, साता विरगता गन तुन-मुन तथा मर्त म माता स्वाकार का प्रसंग, सभा राम पर निर है। वगव १ कथा म विगवानार नहीं किया है, ही कभी सभा य राजगी वगव न मा; म पट गव है। राम द्वारा उन्नेन निवाने की कला म, राम द्वारा सगाट का भीन विनास नरय निवान म भा व पूर नहीं है। राम-कथा का शास्त्रता से बहुर के वाग्य पाठक व निग रमणीय स्थल वगव नहीं जुटा पाये हैं। तुनता की भक्ति भागा पटतामा क माता जान म वे नहीं पडे हैं। जिस 'धनुष-वज्र के प्रसंग से तुनसी। महान् धारपण प्रदान किया, उगी प्रसंग को वेशव मात्र कथात्मक सवाग के चुटकुता के साथ टाल गये हैं। यही कारण है कि प्रब-पात्मक शक्ति की ध्वजा लगा है।<sup>१</sup> कथा म वम का अभाव धनुषान का अभाव, गति का अभाव, मासिक स्थलों का अभाव आदि अनन्य वटवत वासी स्थितियाँ उत्पन्न हुई हैं। वेशव ने रमणीय दृश्या का उपस्था करके अपनी हृदय हीनता का परिचय तो दिया है। पाठक के मन को भा गगातार अशान्त भी रता है। इन समस्त दोषों के कारण उनका प्रब-परत ता बाधित हुआ है। सचिन कथा म राम का नायकत्व कहीं भी बाधित नहीं हुआ। वेशव का प्रब-परत फीका इसलिए और भी लगता है क्योंकि हम मानस के प्रब धत्व से संस्कारवश तुनना करते हैं। यदि मानस को दृष्टि से हटाकर देखें तो वेशव के कथात्मक सवाद नाटकीय एवं सरस लगेंगे। कथा चाह जसी कहा गई है। नायक का वेशव न संशक्त रूप प्रदान किया है, उसके पराक्रम तथा आत्म विश्वास का विधान भी अद्भुत है। इस प्रकार इस फीका कथा का नायक वेशव न फीका नहीं पडने दिया है। प्रत्येक परिस्थिति में उसका व्यक्तित्व कथा का साथ देता है। वेशव न राम द्वारा माँ को पतिव्रत धर्म का उपदेश राजश्री राजनाति का उपदेश दिलवाकर उसके व्यक्तित्व में पौड़ी कालिमा अवश्य लगा दी है। सचिन पराक्रम की पराकाष्ठा देखकर उन दोषों का भी विस्मरण हो जाता है।

- 
- १ जिस प्रकार वेशव की रागात्मिका वृत्ति कथानक के भावात्मक स्थलों के चित्रण में पूणत लीन नहीं दिखाई देती उसी प्रकार पात्रों के स्वरूप तथा प्रकृति के रमणीय वश्यों एवं वस्तुओं के वर्णन में भी उनकी हृदयहीनता ही परिलक्षित होती है। डा० किरणचन्द्र शर्मा वेशव जीवनी, कला और कवित्व, पृ० १०५

महत्त्वपूर्ण व्यक्तित्व

‘रामचन्द्रिका’ में राम का सम्पूर्ण जीवन लोक हिताय ही अर्पित है, उनका जन्म ही देवताओं तथा मानवों को अभयदान तथा ध्यान २ प्रदान करने के लिए हुआ है। केशव ने आरम्भ में ही राम की बढ़ना में कहा है कि—

जिनको जस हस जगत प्रससा मुनि जन मानस रता  
लोचन अनुरूपनि, स्याम स्वर्णनि, अजन अजित सता ।  
काल त्रय दरसी निगुन परसी होत बिराम्ब न लागे ।  
तिनके गुन कहिहै, सब सुख सहि है, पाप पुराता भाये ॥<sup>१</sup>

विश्वामित्र राम की अपार शक्ति, दिव्य-तन्त्र का जानत है एवं उनसे ताड़का, सुबाहु, भारीच आदि का वध कराते हैं। व भीष्म की पत्नी अहिष्मा का भाग में उद्धार करते हैं—

भीष्म की यह नारि, इन्द्रदोष दुगति भई ।  
दक्षि तुम्है नरकारि परम पतित पावन भई ॥<sup>२</sup>

अपनी अपार शक्ति से वे धनुष को तोड़ देते हैं, परशुराम के गव को नीचा कर देते हैं, पिता के वचन की रक्षा के लिए वनवास स्वीकार करते हैं। लेकिन जब राम भरत के ऊपर राज्य सशय लक्ष्मण से व्यक्त करने हैं तो उनकी महानता को बर्कला लगता है। दूसरी ओर वे ही भरत का गुणगान भी करते नहीं थकते। वे अपार राक्षसी शक्ति से लोहा लेते हैं फिर भी बितामुक्त रहते हैं। वन में लक्ष्मण की मूर्च्छा देखकर उनका पीरूप उबल उठता है—

करि आदित्य अहृष्ट नष्ट जम करौ अष्ट दशु ।  
इन्द्रन वीरि समुद्र करी, गधव सबपशु ।  
बलित ऊबर कुबर, बाली<sup>३</sup> गहि देउ इन्द्र अथ ।  
विद्याधरन अविद्य करौ विन सिद्धि सिद्ध भव ।

निजु होहि दासि दिति का अदिति अनिल अनल मिटि जाउ भल ।  
मुनि सूरज सूरज अवतही करौ अमुर ससार बल ॥<sup>४</sup>

मुद्गरत राम शत्रु-यक्ष से आय हुए विभीषण को शरणदान देते हैं तथा निमय कुम्भकण तथा रावण का वध कराते हैं। प्रचण्ड प्रतिनायक रावण के वध का एक उदाहरण लीजिए—

१ रामचन्द्रिका १।२०

२ वही ५।५

३ वही १७।४६



जैहि सर मधु मद मदि महा सुर मदन कीनो ।  
 मारयो बकस नरबसख इति सखहु सोनो ।  
 निष्कटक सुर बटव करयो बटभ-वपु खड्गो ।  
 खर दूपन त्रिसिरा कबध तरुखण्ड बिहड्यो ।  
 कुम्भकरन जैहि सघस्यो पल न प्रतिगा तें टरी ।  
 तेहि बाग प्राण दसकठ बे कठ दसो राखित करी ।<sup>१</sup>

राम की शक्ति जयभार जसभार राजभार'<sup>२</sup> तीनों को प्राप्त कर ग्रसीम है । उनके धजर, धमर, धनन्त चरित का सुनकर सुर नर सिद्ध अचरज करते हैं ।<sup>३</sup> वे अपने प्रताप से शिला को सुन्दर नारी का रूप प्रदान करते हैं । वे सबधा सवज सवग सबदा रस एक <sup>४</sup> रूप से ससार में एवमात्र रम-ब्रह्म हैं । अतिथि बन जाने पर वे श्वरी के भूठे घेर भी छाने में नहीं हिचकते हैं ।<sup>५</sup> केशव इस शायरन राम को इस प्रकार स्मरण करते हैं—

- (१) होइ भुविन सो जाहि इनका भरत भाव नाम ।<sup>६</sup>  
 (२) रोप सभु स्वयम्भु भाषत नेति निगमन जामु ।  
 ताहि लघुमति बरन बसे सकत केसवदान ॥<sup>७</sup>

केशव को विश्वास है कि इस शायरन महर्ष के ब्रह्म का व्यक्ति आघार ग्रहण कर यमराज के सिर पर पाव रख कर ब्रह्मलोक पहुँच जाता है ।

सासारिक मर्यादा के रक्षण के लिए वे सब कुछ कर सकते हैं । लोकापवाद के भय से वे निर्दोष सीता का भी त्याग कर देते हैं । 'यायी इतन हैं, प्रत्येक जीव के प्रति उनका 'याय समान रहता है छोटे से छोटा तथा बड़े से बड़ा उनके लिए एक सा है । लोक मर्यादा के लिए वे आदश की स्थापना करते हैं । महाकाय का नायक युग-युग तक प्रेरणा देने वाला, सनातन आत्माओं का पुरुष होना चाहिए । इस दृष्टि से केशव का पुरुष सनातन' स्तुत्य है ।<sup>८</sup>

१ रामचन्द्रिका १६।५१

२ वही २७।८

३ वही २७।१०

४ वही २७।१४

५ वही २७।१७

६ वही २७।२०

७ वही २७।२४

८ वही २७।२६

## ब्रह्म आत्म-शक्ति

यदि महाकाव्य के नायक में अपराजेय आत्म शक्ति दलनी है, तो केशव के राम उसके सर्वोत्तम उदाहरण हैं। वे मुनीमतो से इतने ज्यादा परिचित हैं कि कठिनाइयाँ उनकी साथ बन गई हैं। पापिनी ताड़का मुवाहु आदि का वध धनुष भग तथा परशुराम के तेज को विजित करने की शक्ति, एक ही बाण में प्रबल मोट्टा बालि का वध करते हुए वे कभी भी हिचकते नहीं हैं। केशव ने राम को धार्मिक के ‘पुरुष सिंह’ की तरह प्रस्तुत किया है। लक्ष्मण शक्ति लगने पर वे अधीर होकर भी बचवान रहते हैं, वहाँ भी उनका पौरुष अपने बाँध तोड़ देना चाहता है, और वे समस्त सृष्टि को नष्ट कर डालने का सकल कर लेते हैं। प्रचण्ड रावण की मायावी शक्ति तथा अपार शक्ति की तनिक भी चिंता नहीं करत एक बाण में ही बाप के उम पल्लव को चूर चूर कर डालते हैं। अपनी दिव्य प्रवक्तियों के कारण उनका रूप प्रसाधारण है।<sup>१</sup> युद्ध-क्षेत्र में उनका ध्यात्म-तेज लगातार विकास की ही प्राप्ति करता रहता है। उनमें ब्रह्मत्व, पूरा नरत्व दोनों का ही तेज केशव ने मन खोल कर ‘रामचन्द्रिका’ के अनेक प्रसंगों में प्रस्तुत किया है। वास्तव में केशव पौरुष तथा अनीतिक तेज के पुजारी थे। यही कारण है कि ‘रामचन्द्रिका’ की एक ही ध्वनि है—राम को अपराजेय आरम शक्ति का भक्ति के साथ लगातार गुणगान। प्रतिनिधि चरित्र

तुलसी ने राम को आदश की उम उच्च खोटी पर पहुँचा दिया था, जहाँ तक मानव की पहुँच ही नहीं थी। राम मान आदर्शों के भण्डार बनकर रह गये थे। केशव ने राम को ‘मानवत्व’ रूप दिया। उनमें जीवन की जनकन प्रस्तुत की तथा वे आत्माओं के साथ, विशेष सम्राट की भाँति हमारे सामने प्रस्तुत किए गए। केशव ने राम को जीवन का प्रतिनिधि चरित्र बनाने के चक्कर में उनमें उग्रता, शृंगारिकता तथा स्नेहना का भी समावेश कर दिया है। राम के प्रेम का अमर्यादित रूप देख कर पण्डित कृष्ण शंकर गुप्त ने ठीक ही कहा है कि ‘तुलसी के समान मर्यादा की रखा करते हुए मयम रूप से प्रेम का वर्णन करने की शक्ति उनमें न थी। एक आध रूप पर यदि उठाने प्रयत्न भी किया है तो वे सीताराम को छोड़ कर बहुत कुछ राधा कृष्ण की ओर भटक गये हैं।<sup>२</sup> फिर भी मान्य काव्य प्रणेता केशव ने मानव सीला करने वाले में मानव-मुलम वस्तुओं के उतार चढ़ान का खिाते हुए भी उनके ब्रह्म-रूप को प्रक्षुब्ध बनाय रखने का उपक्रम किया है।<sup>३</sup>

१ डा० हीरासाल दीक्षित—आचार्य वेङ्कयदास पृ० १४०

२ केशव की काव्य कला, पृ० २६

राम हमारे जीवन में घोर निकट आ सके इसलिये वैश्व ने राम में अनुभूत अवसर पर उग्रता अनुकूल अवसर पर भोग प्रिलास आदि सब कुछ निग्राह है। वैश्व ने राम को प्रत्यक्ष स्वयं पर बाल्मीकि तथा तुलसीदास राम को गम्भीरता तथा सौम्यता से नीचा निया देना उचित नहीं है। वैश्व ने राम का सहज रूप निया एवं बंधे बंधाय आत्म के प्राचान बटपरे से निरासता तथा नयान मनुष्य का भाति प्राचरण करना हुआ निया है। युद्ध तथा प्रव दाना ही परित्यजित म रमन का प्रवृत्ति के साथ प्रस्तुत किया। इस प्रकार वैश्व ने सभी नायक में प्राप्तिरता, सहजता भी उत्पन्न की तथा उन्हें जीवन के प्रतिनिधि चरित्र के रूप में दाता भी। राम सभी पुरुषों के प्रति चाहें व दशरथ वसिष्ठ शिवामित्र आदि कोई तात्परा मुनि हा नत हैं मर्यादा रक्षा भा उनके व्यक्तित्व का अभिन प्रग है उता मित्र प्रम आत्म है शत्रु-पक्ष के विभापण के प्रति उता बन्धुभाज भा अनुकरणीय है आत्म भाई का भाति व सम्मग भरत शत्रुघ्न सभा को धवन में समाव रहा है। तमा दृष्टिया से उनका चरित्र अनुकरणीय हा है।

दिव्य शक्ति से असहृत

केशव अनेक प्राचीन<sup>१</sup> उदाहरणों को देकर राम की दिव्य शक्ति को प्रदर्शित करते हैं। अपनी दिव्य शक्ति के कारण ही वे शाश्वत विजयी नायक हैं। अपनी दिव्य शक्ति के कारण ही वे पतित-मावन हैं, अपनी दिव्य शक्ति के कारण ही वे शम्भु बहा, विष्णु, मुर, नर, मुनि सभी के गायक हैं। अपनी दिव्यता के कारण ही वे रूप अपार, मदन छवि मदन, जसपति तथा जगपति हैं। वे तो समार म नर सीसा अपनी दिव्य शक्ति का प्रसार करने के लिए ही करते हैं। लेकिन केशव के राम को अपनी शक्ति का गव नहीं है, वे शील निधि और शील समुद्र हैं। हाँ, उद्दाम क्रोध का आवेग, उन्हें कभी कभी विचलित अवश्य कर देता है लेकिन वहाँ भी धम से ही काय करत हैं। उनकी दिव्य शक्ति के कारण ही हनुमान तथा भगद उनके दूत बनन में ही अपना गौरव समझत हैं। इस प्रकार केशव ने राम में दिव्य शक्ति का वलन अनेक प्रकार से जो बाल कर दिया है।

### विचारों की व्यापकता

केशव के राम शम्भु-मित्र के प्रति समदृष्टि रखते हैं। उनके चरित्र में प्रजा-वत्सलता लोकाद्वार की भावना ही प्रबल है। लोकद्वार की इस भावना से प्रेरित होकर ही रावण का बध करते हैं तथा विभीषण का शरण देने हैं। राम भक्त में इतने रम जाते हैं कि परदारागामी वालि का बध करते हैं तथा सुग्रीव के दोषों को भी लगातार क्षमा करते रहते हैं। 'केशव' ने 'राज्यधरी' की निन्दा द्वारा भी राम के विचारों को प्रस्तुत किया है।

१. तुमहीं गुन रूप गुनी तुम ठाए। तुम एक तैं रूप अनेक बनाए।

इक है जो रजोगुण रूप तिहारो। तेहि सखि रची विधि नाम बिहारो ॥

१७ रा० ध०

गुन सत्य धरे तुम रक्षक जाको। अब विष्णु कहे सिंगरो जग ताको।

तुम ही जग द्रु स्वल्प सधारो। कहिये तिन मय तमोगुन मारो ॥ १८

तुमही जग हो जग है तुम ही मे। तुम ही विरचो मरजाद कुनी मे ॥

मरजादहि छोटत जानत जाका। तबही अवतार धरो तुम ताको ॥ १९

तुमही नरसिंह को रूप सवारयो। प्रह्लाद को दोरघ दुख निवारयो ॥

तुम ही बलि बावन वेग छल्यो जू। भगुन-दनह व छिति छत्र दल्यो जू ॥ २१

तुमही यह रावण दुष्ट सधारयो। धरनी मह बूढ़त धम उचारयो।

तुमही पुनि कूज को रूप धरोगे। दत्त दुष्टम को भुवि भार हरोगे ॥ २२

तुम बौध स्वल्प दयाहि धरोगे। पुनि बलि हूच भ्लेच्छ समूह हरोगे ॥

रगहि भाति अनेक स्वरूप तुम्हारे। अपनी मरजाद के काज सवारो ॥ २३

रामचन्द्रिका १६।१७ २३

सामाजिक मर्यादा का आधार नर नारी के मधुर सम्बन्धों पर ही टिका है। केशव के 'राम न ग्रधम अभागो कुटिल कुपति पति तज न नारी'<sup>१</sup> यह सन्देश कौशल्या के सम्मुख देकर अपने व्यक्तित्व की हानि की है। केशव ने राम को अनन्त स्थानों पर उपदेशक बना दिया है। उन स्थलों पर राम का सही रूप छिप सा गया है। नारी-धर्म का पुराण पत्नी उपदेश राम की निश्चय ही शोभा नहीं देता है। केशव के 'राम' भरत व पवित्र चरित्र पर भी सन्देह करते हैं। इस सन्देह वृत्ति से राम के आन्तरिक विचारों की झुद्ध भक्तक मिलती है। फिर भी केशव ने राम का चरित्र निर्दोष ही बनाने का प्रयास किया है। उनके शब्दों में—

अमल चरित तुम चरित मलिन करो साधु कहैं साधु पदार प्रिय प्रति है ।  
एक धन धन मे वसत 'जगजामध्य के सोनास' हो पत् प बहुपत् गति है ॥  
भूपन सकुल जुत सीस घर भूमि भार भूतल फिरत प अमृत भुवपति है ।  
गखी गाइ ब्राह्मणनि, राजसिंह साथ चिर रामचंद्र राज करी अदभुत गति है<sup>२</sup>॥

'राम' शब्दों को अपनाते हैं, वे सभी मशरूफ व्यक्तियों को शरण देते हैं, उनकी राज-दृष्टि भी सङ्कुचित नहीं व्यापक है। जो उनसे साथ की माग करता है, वह उसका कष्ट निवारणाय अपना भरसक प्रयास करते हैं। अपनी परम उत्तरदाता त्यागवृत्ति के ही कारण 'यहैं नरदेव देव दे गति हो'<sup>३</sup> की चर्चा केशव ने 'रामचंद्रिका' के प्रत्येक प्रकाश में की है। केशव ने राम की 'जगत के नाइ'<sup>४</sup> की भाँति चित्रित किया है। उनके राम में राजा की उदारता क्षत्रिय की क्षमा, ब्रह्म की परमाय-दृष्टि के साथ विचारों की उदारता प्राप्त मिलती है।

### कार्यों की उदात्तता

केशव ने 'रामचंद्रिका' में राम के उदात्त कार्यों का आरम्भ से अन्त तक धारण किया है। लवित्त तुलसी का भवन उनके कलाकार से ऊपर उठ गया है। अन्त यद्धा के अनिश्चय भाव न राम के दोष दर्शन का उद्गम प्रवसर ही नहीं दिया। 'केशव ने राम को ब्रह्मनोव' में उतार कर 'राज साव' में देखा है। इसलिए राम के 'मानवत्व' को वे प्रकट कर मक् हैं। यद्यपि उनके पाण्डित्य न कहीं कहीं उद्गम टटका दिया है तथापि केशव राम के उदात्त रूप को बड़े मयत भाव से प्रस्तुत करते हैं। लवित्त यहाँ राम के चरित्र का उदात्त पक्ष केशव ने तुलसी से भिन्न होकर प्रस्तुत

१ रामचंद्रिका ६।१६

२ वही २७।१

३ वही २७।४

४ वही २६।२६

किया है। तुलसी नवागार राम की रामलीला का स्मरण कराते रहते हैं, केशव के राम सांस्कृतिक पुनरोद्धारक की भाँति पाय करते हैं।<sup>१</sup>

बलि बली न बन्धो पर खोरहि क्यो बचि हो तुम आपनी खोरहि ।  
जा लगि छोर समुद्र मध्यो वहि कसे न बाधि है बारिधि थोरहि ।  
श्री रघुनाथ गनो असमरथ न नेनि विना रथ हाथिन धोरहि ।  
तोरयो सरामन सकर को जेहि सो क्या तुब लक न तोरहि ॥<sup>२</sup>

अगद रावण के समक्ष राम के अनेक उदात्त कार्यों का बखान करता है। वे रावण का विनाश कर लोक धर्म की स्थापना करते हैं। पाप बलि में रमने वाले पापियों के लिए धर्म का उपदेश देते हैं। पितृ वचन का पालन वे तन मन से करते हैं। विभीषण जब 'रावण के अग्र ओघ में राघव वृद्ध हो बरही महि बाढी।'<sup>३</sup> यह विलय करता है, वे उसे शरण में लेते हैं, रावण का वध कर उसे राज्याधिपति बना देते हैं। अपने कार्यों की उदात्तता के कारण ही वे महामानव, सर्वशक्तिमान तथा भारतीय आदर्शों के प्रतीक बन गये हैं। किसी भी जाति के भगल के लिए जिन उदात्त गुणों की आवश्यकता हो मंजती है, वे गुण 'तुलसी' ने प्रस्तुत कर दिये थे। केशव ने राम का उतना भव्य रूप तो प्रस्तुत नहीं किया लेकिन काय-व्यापार की उदात्तता को रीतिकाल के घोर शृंगारी वातावरण में भी रक्षित करने का प्रयास किया। रावण, बालि, परशुराम अपने समय के तीन पराक्रमी योद्धाओं का गव वे चूर करते हैं। कार्यों की उदात्तता के अनुसार धमजता, दृढ़ संकल्प असीम आत्म-शक्ति, पूज्यो के प्रति नम्रता, श्रद्धा, सत्यवादिता तथा आचरण की पवित्रता उनमें है। तुलसी के राम की तरह ही 'केशव' के राम आदर्श नायक, आदर्श योद्धा आदर्श शिष्य आदर्श राजनीतिज्ञ आदर्श पुत्र, आदर्श शत्रु मित्र सभी का उदात्त रूप प्रस्तुत करते हैं। वाल्मीकि के धीरे नायक की भाँति केशव के राम धीरे नायकों की ही श्रेणी में आते हैं। केशव के 'राम' पर विद्वानों<sup>४</sup> ने नारी-वध बालि वध, सूपनखा के नाक-

१ डा० सत्येन्द्र—मध्ययुगीन हिंदी साहित्य का शोक—सांस्कृतिक अध्ययन, पृ० ४५१

२ रामचंद्रिका १५।७

३ वही १५।२४

४ (१) 'केशवदास जी राम के इस रामत्व की रक्षा करने में पूरा रूप से सफल नहीं हो सके हैं। केशव के राम के चरित्र में लक्ष्मण के ही समान उपद्रा विताई देती है।'—पृ० १३६

(११) "उपद्रा के प्रतिरिक्त केशव के राम के चरित्र में शृंगारिकता और किसी सोमा तक हृन्नता दृष्टिगोचर होती है।" पृ० १४०—डा० हीरालाल

कान का विच्छेद, कौशल्या को वनवास के भवसर पर नारी धम का उपदेश, सीता के साथ कामी पुरुष का व्यवहार, राज्याभिषेक के पश्चात् बिलासी राजा की भाँति आचरण, शालीनता का अभाव, शीघ्र ही परशुराम से क्रुद्ध होने का अपराध, लक्ष्मण शक्ति पर घोर अहंकार के वचन, भरत के चरित्र पर भी सदेह<sup>१</sup>, निरपराध सीता का त्याग आदि दावों का आरोपित किया है।

विवार करने पर यह आरोप एक साथ को छोड़ कर बाकी सभी निराधार ही सिद्ध होते हैं। बाल्मीकि रामायण, मानस तथा रामचंद्रिका तीनों ही काव्यों में राम पर सीता, ताड़का तथा सूपनखा के प्रति दुय्यवहार का आक्षेप लगाया जाता है। तीनों ही काव्यों में ताड़का वध तपस्वी विश्वामित्र द्वारा औचित्य मिट्ट किए जान पर किया गया है। तीनों ही काव्यों में सूपनखा का निकलाग मजदूरी में किया गया है। सीता निर्वासन की घटना मानस में नहीं है लेकिन रामायण में है। 'लोकापवाद' के पद तथा सीता के चरित्र की पावनता को सिद्ध करने के लिए राम ने ऐसा किया है। केशव ने भरत के द्वारा राम का प्रबल विरोध करवाया है—

यह है असत्य जु, होहिणो अपवाद सत्य सु नाथ ।

प्रभु छाडि सुद सुपानि पीबहु आपने बिष हाथ ॥<sup>२</sup>

राम ने भरत तथा लक्ष्मण को 'भोको हतो बढ़ुरि बात बहो जु केरि'<sup>३</sup> कह कर अपनी निर्दोषता को सिद्ध किया है। साथ ही विद्वानों ने कामी आचरण का दोष भी राम को व्यथ ही लगाया है। जो अपनी पत्नी को इतने त्याग में साथ छोड़ सकता है, वह कामी ही नहीं सकता है। 'रामचंद्रिका' के राम का स्वभाव लक्ष्मण की भाँति उग्र होना भी राजा के लिए औचित्य ही रखता है। भरत तुलसी के राम की तुलना केशव के 'राम' से प्रस्तुत करने पर उन्हें नीचा दिखाना ठीक नहीं है। परिस्थितिबश राम ने अपनी माँ की जो नाराधम का उपदेश दिया है उन्हीं भाँति माँ माँ गुप्ता ने उचित ही ठहराया है।<sup>४</sup>

- १ "ये उस मन्थालु राजा के समान हैं जो राजपाट का परित्याग कर घोर वय के लिए वनगमन के समय भी भरत से भाई के प्रति सगाव हैं।"

—डा० विरणचन्द्र गर्ग—केशव, जीवनी, कला और इतिवृत्त, पृ० १०६

- २ रामचंद्रिका ३३।३३

- ३ वही ३३।३६

- ४ डा० माँगी गुप्ता—रामचंद्रिका का विंगिट अध्ययन, पृ० ३२१

राम के चरित्र में शृंगारिक भावनाओं का प्रदर्शन भी केशव ने उनकी 'मानव सहजता' का दिवाने के लिए किया है। दूसरे राजा राम भौतिक राजा की तरह आचरण करने पर भौतिक विलासों से घेरा करते तो उनका चरित्र विश्वसनीय न होकर घनावटी बन जाता है। राम में 'काम' का प्राधान्य दिखाना, जीवन्त पुरुष का ही लक्षण है। साथ ही राम एक पत्नीव्रत का नियम राजा होते हुए भी लाक मर्यादा के लिए पालन करते हैं। अतः राम की शृंगारी वृत्ति भी उनके चरित्र का दोष नहीं एक गुण ही कहा जाना चाहिए। भरत से साधु चरित्र पर सदेह करना भी मनोवैज्ञानिक दृष्टि से उचित ही है, क्योंकि पुरुष पुरातन की वधू क्यों न चर्चता हाय' समझ कर वे राजलक्ष्मी पर ही सदेह करते हैं। यहाँ उनके चरित्र पर लगाये गये आरोप सबका उचित नहीं हैं। इन सभी आक्षेपों से राम के उदात्त-पक्ष में कोई हानि नहीं हुई है। "वह परब्रह्म का स्वरूप है परंतु मानवी गुण-भ्रवगुणों के कारण अधिकांश अनुकरणीय हैं तथा जीवन को लोक के मध्य रहकर ही उन्नत बनाने की प्रेरणा देते हैं।" इस प्रकार उनके कार्यों की उदात्तता हमारे जीवन का आदर्श है।

सम्पूर्ण 'रामचंद्रिका' में राम के कार्यों की भूमिका ही महत्वपूर्ण है। पाठक की समस्त सहानुभूति उन्हीं को प्राप्त होती है। वे इतने पराक्रमी, साहसी, शक्तिशाली, स्वाभिमानी हैं कि उनका यह गुण ही उन्हें उच्चकोटि का नायक बना देता है। रीतिवालों के शृंगारी वातावरण में पौरुष के प्रताप से प्रदीप्त बीर-योद्धा ही समाज में सम्मान का स्थान पाता होगा, इसीलिए राम में केशव ने अथाह शक्ति का समूह लिपाया है। महान् योद्धा के लिए नतिक मूल्यों का अथ प्रच्छन्न ही था, प्रत्यक्ष नहीं। राम राजा रूप में, यही कारण है कि त्याग तथा भोग दोनों ही पक्षों को प्रस्तुत करते हैं। तुलसी ने मर्यादावश सीता राम के भोग पक्ष की उपेक्षा कर दी थी उसी काय को केशव ने पूरा किया। विलासी नायक की भाँति आचरण करने पर भी युद्ध के मदान में वे कभी पीठ नहीं दिखाने, बड़े-बड़े वरदानों या द्वाया या नि तथा रावण को कुछ नहीं समझने तथा मर्दानगी से उनका मुकाबला करते हैं। इस प्रकार केशव ने राम में अलौकिक तेज तथा सम्राट् के वीरत्व दोनों का मिश्रण पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया है।

१ डा० गार्गो गुप्त—रामचंद्रिका का विशिष्ट अध्ययन, पृ० ३३०

२ 'रामचंद्रिका' के नायक राम के शौर्य की तुलना तो सम्पूर्ण विश्व में ही नहीं है।  
—वही, पृ० ३५३



## कथा के मूल भाव या रस का आधार

किसी भी कृति के नायक निम्न में कथा का मूल भाव या अंगी रस का भी आधारग्रहण आवश्यक होता है। कथा में नायक की मूल वित्तवस्तियों का प्रकाशन ही प्रमुख होता है। अतः नायक को पहिचानने का माध्यम अंगी रस भी है। रामचंद्रिका राम के पराक्रम की गाथा है, युद्ध उसमें प्रधान-स्वर पा गया है। अतः कथा का समस्त नखेवर में वीर रस अंगी के रूप में दिखाई देता है। केशव चाहें सूक्ष्म भावों के वलन में सफल न हुए हों परन्तु राजसी बभ्रव, पराक्रम युद्धादि का वलन में पारंगत हैं। केशव ने जागति जाका ज्योति जग, एक रूप स्वच्छन्द 'बह्वर रामचंद्र की चंद्रिका' का ही धपना आधार बनाया है। उन्होंने ताड़का-वध से लेकर रावण वध तक राम की एक वीर विजेता का रूप में प्रस्तुत किया है।

मुलसी ने 'मानस' में आत्म सताप के लिए, राम का नायकत्व प्रस्तुत किया है। इसके विपरीत केशव ने 'परब्रह्म श्रीराम हैं भवतार भवतारमणि' <sup>२</sup> की 'जग हसा जगन प्रससा, मुनीमानस हसा' <sup>३</sup> बह्वर तिनके गुन कहिहैं सब सुख लहिहैं पाप पुरातन भाग इस विचार से पाप प्रणालनाथ गुणगान का विषय बनाया है। इस प्रकार यह कृति आत्म हिन तथा वीरहित पर आधारित है। राम मुनियों के कल्याणार्थ धन रसा तथा रागस मुवाहु पापिनी ताड़ना का वध करते हैं अहिल्या को इन्द्र वध से मुक्ति दत्त हैं। वह जनक का पुरी में पहुँच कर राजा की प्रतिष्ठा को पूरा करते हैं। परन्तु राम का तन का हतप्रभ कर उनके धनुष पर रस्ती बड़ा दत्त हैं। इस प्रकार उनका चरित्र पराक्रम का धन्य-योग है। इसी कारण से रामचंद्रिका में धन-मूलन वीरत्व मिश्रता है।

ऐतिहासिक में शृंगार का बाजबाला हा भी तथा नायक है गिगार' <sup>४</sup> मानकर भी केशव ने 'रामचंद्रिका का अंगी रस वार ही माना है। विरचनाप ने महाकाव्य में शृंगार वार शांतानामरादगा रस इत्यन' <sup>५</sup> बह्वर शृंगार, वीर या शान्त में स किन्ना एक का प्रधानता पर बल दिया। केशव सस्त्रन भाचार्यों का इन मराणों का वादन में अत उन्होंने भाचार्य-पद्धति में ही रामचंद्रिका का वीर रस

१ रामचंद्रिका १।२१

२ वही १।१७

३ वही १।२०

४ केशव—चंद्रिका १।१०

५ विरचनाप—साहित्य रूपक - महाकाव्य-संगण ।

को प्रधान तथा शृंगार, रौद्र, शांत, भयानक आदि रसों को भग रूप में स्थापन दिया ।

केशव न प्रवृत्ति से ही राम को युद्ध प्रिय दिखाया है । 'रामचंद्रिका' में राम रावण युद्ध तथा लव-कुश युद्ध को केशव ने बड़े विवट घरातल पर प्रस्तुत किया है । वस 'रामचंद्रिका' के समा पात्र वीर कोटि में ही आते हैं । युद्ध दशरथ विश्वामित्र के समान अपना वीरत्व प्रकट करते हैं । बाणामुर तथा रावण अपनी गायी में तलवार लिए खड़े हैं । परशुराम का वीर-येश अद्भुत है हा । केशव के भरत में भी परशुराम द्वारा राम-अपमान देख कर चंदन में घाग निकल ही पड़ती है, ' यह सोचकर काध फूट पड़ता है । लक्ष्मण की शक्ति लगन पर राम उद्दाम आवेग से उद्वल पड़ते हैं । राम रावण युद्ध में वीर धारा का एक उदाहरण देखिय—

सूरज मुसल नील पहिस परिध नल जामवन्त असिहनु तोमर प्रहारे हैं ।  
परसा सुनेन कुत बेसरी गवय सूल विभीषन मदा गज मिदिपाल तारे हैं ।  
मोगरा हिविद तार कटराकुमुद नेजा भगद सिला गबाश विटप बिदारे हैं ।  
अकुस सरम चत्र दधि मुख सेप सक्ति बान तीन रावन श्री रामचंद्र  
मारे हैं ॥ १

इसी प्रकार लव-कुश युद्ध में वीर रस का प्रवाह प्रबल है ।<sup>१</sup> 'केशव' ने रौद्र रस के चित्र भी प्रभावशाली प्रस्तुत किए हैं । राम क्रोध में 'करि आदित्य अष्टम मष्ट, जम करौं अष्टवस'<sup>४</sup> कह कर अपना क्रोध व्यक्त करते हैं । रौद्र ने भी अंगी रस वीर रस का बहुत ही 'रामचंद्रिका' में पोषण किया है । 'परशुराम प्रसंग' में भयानक रस लव-कुश युद्ध में हनुमान तथा जामवन्त जहाँ रक्त मारन की नदी बहते हैं वहाँ पर वीररस रस के चित्र हैं । 'रावण-बाणामुर' को देख कर नर-नारी अद्भुत तथा भयानक रस की उपलब्धि करते हैं । 'सूपनखा प्रसंग' में हास्य-रस

१ रामचंद्रिका ७।२२

२ वही १६।४८

३ रोप करि बान बहु भांति लव छडियो । एक ध्वज, सूतजुग तीन रथ खण्डियो ।

सस्त्र दसरथ सुत अस्त्र कर जो धरे । ताहि सियपुन तिल तूल सम खण्ड २ ॥

वही ३५।१६

४ रामचंद्रिका १७।४६

रामचन्द्रिका के नायक राम

का सफल विधान है। इस प्रकार केशव ने सभी रसों को स्थान दिया है। इस कृति में वीर के साथ शृंगार लगातार चलता रहा है। रावण के प्रासाद-वर्णन सीता की दासियों के वर्णन में शृंगार की प्रभावशाली अभिव्यक्ति है—

सोचन मनहु मनोभव जनि । भुजुग उपर मनोहर मन्त्रनि ।  
मुदर मुगद मु अजन भजित । बान मदन विष सो अनु रजित ॥  
मुषद नासिका जग मोहियो । मुक्ताफलानि जुक्तन साहियो ।  
मान-तलिका मनहु सफूल । अनु सू धि तजत सति सकल फूल ॥ १

इस दृष्टि से राम के जीवन में वीर तथा शृंगार दोनों का अदभुत योग है। 'रामचन्द्रिका' का अंगी रस वीर है और यह वीर नायक की मूल चित्तवृत्तियों का ही प्रतिफलन है। इन दृष्टि से भी राम ही इसके नायक सिद्ध होते हैं। काव्य का अर्थ 'राम स्थायी भाव में है लेकिन आद्य-त कथा में वीर धारा का ही उदगम होगा है।

कथा के अंग पात्रों द्वारा राम के महत्त्व की स्वीकृति

केशव ने अपने राम को इतना यशवान पराक्रमवान तथा क्षत्रियत्व के तेज से मण्डित राजा का रूप दिया है जिनका महत्त्व कथा का प्रत्येक पात्र स्वीकार करता है। राम की त्याग वृत्ति की देखकर भरत उनके सामने नत हैं, वे कभी भी यह नहीं सोचते कि राम की भी कोई लोभ है। भरत सबका निस्वार्थ चरित्र के अपने भाई की बरण-गायुकाएँ लाते हैं उनकी पूजा करते हैं तथा साधु सा जीवन व्यतीत करते हैं। भरत सा निष्कल चरित्र भारतीय साहित्य में कोई दूसरा है ही नहीं। वह चरित्र जब राम के प्रति असीम श्रद्धा तथा विश्वास के साथ नन रहता है तब राम का रूप निखर आता है। राम भी भरत की निष्कपटता से परिचित हैं व व्यवहार के नीति पक्ष को लेकर ही 'रामचन्द्रिका' में उनके चरित्र पर थोड़ी शंका करते हैं जो उचित ही है। इस शंका से राम के आशुय का ही स्पष्टीकरण होता है भरत पर कोई कलक नहीं आता। भरत राम के सभी कार्यों से सहमत हैं लेकिन सबका पवित्र सीता की गर्भिणी अवस्था में 'यायी राम अग्न्याय के साथ त्याग दें यह उन्हें स्वीकार नहीं है।<sup>२</sup> इसीलिए रामचन्द्रिका में वे राम का विरोध करते हैं।

१ रामचन्द्रिका ३।१२, १३

२ प्रिय पावन प्रिय वादिनी पतिव्रता अति शुद्ध ।  
जग को गुद और गुविर्णो छाहत वेद बिद्वद ॥

बर माता वसे पिता तुम सो भया पाद ।  
भरय भए भववाद क भाजन भूतल आद ॥—रामचन्द्रिका ३।३४, ३५

। लक्ष्मण राम के शील तथा पराक्रम के ही कारण राम की सेवा में अपने को धन्य मानते हैं। उन्हें राम से इतना अपनत्व है कि वे माता, पिता राजसुख आदि सब कुछ छोड़ सकते हैं। राम के ऊपर वन में भरतागमन को साथ सहित आक्रमण समझ कर वे शोध से रौद्र रूप हो जाते हैं। वे 'सीताहरण' के बाद भाई के साथ रावण से युद्ध करते हैं। लेकिन जब रावण से पराजित होते हैं तो भाई से ही कहते हैं कि—

अब टर न टारो मर न मारो, हों हठि हारो घरि सायक ।

रावणहि न मारत देव पुकारत है अति धारत जग नायक ॥<sup>१</sup>

राम पर उनका इतना विश्वास है कि प्रत्येक कठिन स्थिति में उन्हें उनका ही सहारा है। इस वीरचरित्र पर भी राम का महत्त्व छाया है। हनुमान, अगद तथा सुग्रीव तो उनके दास बनकर ही धन्य-धन्य हैं। हनुमान उनके सौदम्य एवं शीघ्र के कारण पाद सेवी हैं। अगद राम के गुणा का बखान रावण के दरबार में करते हुए धक्के नहीं। विभीषण प्राप्त हो राम की शरण में अभयदान पाता है तथा दिन-रात उनके गुणा में डूबा है। 'रामचरित्रका' का प्रतिनायक रावण भी राम के महत्त्व को मन ही मन स्वीकारता है, लेकिन उसकी राक्षसी हठ उसे राम के पर नहीं पकड़ने देती। इस प्रकार सभी पुरुष पात्रों के ऊपर उनका प्रभाव है।

ऋषियो, मुनियो, यागियो, तपस्वियो को भी राम के रक्षक रूप का बल है। विश्वामित्र राम की शक्ति को जानते हैं तथा उनसे अभयदान पाते हैं। वे जनक यज्ञ में राम के शीघ्र से मान पाते हैं। परशुराम उनके समक्ष हतप्रभ हैं तथा वे ब्रह्म शक्ति से परिचित होने ही अपना अंगान समाप्त कर देते हैं। देवता, गन्धर्व, तथा राम क्या म स्वयं ब्रह्मा अपने श्रीमुख से राम के यज्ञ का बखान करते हैं—

तुम हो अनन्त अनादि सवग सवदा सवज्ञ ।

अब एक ही कि अनेक ही महिमा न जानत अन ।

अभियो कर जनलोच चौदहु सोम मोह-समुद्र ।

रचना रची तुम ताहि जानि जानत हों न ब्रह्म न रुद्र ॥<sup>२</sup>

दण्डक<sup>३</sup>, दंड<sup>४</sup>, पिता<sup>५</sup>, अग्नि<sup>६</sup> देवगण<sup>७</sup> ऋषिगण<sup>८</sup> विनर यक्ष<sup>९</sup>,

१ रामचरित्रका १६।१०

२ वही २७।१

३ वही २७।२

४ वही २७।३

५ वही २७।४

६ वही २७।५

७ वही २७।७

८ वही २७।८

९ वही २७।१० २६

ग धव सभी उनकी बदना करते है ।

केशव' की सीता, राम के प्रति आदश पत्नी रूप में समर्पित है । राम का कष्ट के एक क्षण नहीं दूर गवती, निरपराध अपन त्याग की भी वे उचित ही मानती है इसमें सीता की उदात्त वृत्ति तो है ही पति के प्रति पत्नी की निष्प निष्ठा का भी प्रमाण मिलता है । मन्दोदरी राम का अपन पति का शत्रु मानकर भी मन में स्मरण करती है । अहिल्या उन्हें ब्रह्मरूप में पूजती है । इस प्रकार 'केशव' के राम का व्यक्तित्व इतना प्रभावशाली है कि प्रत्येक पात्र पर उनकी महानता की छाप पड़ती है और वह उनका भिन्न, भिन्न या दास बन जाता है । उनकी इस महानता तथा पावनता के कारण ही देव तथा मनुष्य उनकी कीर्ति गाता हुआ नहीं थकता । केशव ने राम की इस अतार महानता के लिए ही पाप पुरातन भागे कहकर उनके यश का विराट गुणगान 'चरित्रा' नाम से किया है ।

इस प्रकार केशव ने 'राम के रूप में एक युग युग तक मानव की प्रेरणा देने वाले चरित्र को ही प्रस्तुत किया है । उनका नायक विषमक दष्टिकाएँ रसिकप्रिया' में मिलता है—

अभिमानो त्यागी तरुण, वीर, बलान प्रवान ।

भव्य शमी, सुन्दर, धनी, गुचि रुचि सदा कुलीन ।

य गुण केशव जाहि में माई नायक जान ॥<sup>१</sup>

इस लक्षण के सभा गुण राम के चरित्र में उपररूप हैं ही, साथ ही केशव ने एक ब्रह्म तथा एक महिमा महिम महामानव का नायकत्व रामचरित्रा में वर्णित किया है ।

### प्रतिनायक

प्रबल प्रतिनायक की पराजय ही नायक का महत्त्वपूर्ण बनाती है । इस दृष्टि से केशव ने प्रतिनायक के रूप में रावण का भी कुशलता प्रस्तुत किया है । केशव ने तुलसी की भाँति प्रतिनायक का त्याग की मूर्ति ही नहीं लिखाया, उसमें प्रबल प्रतिनायकों के गुणा का विस्तार किया है । रावण के रावण पर बाल्मीकि के रावण का प्रभाव स्पष्ट झलकता है । बाल्मीकि ने रावण का राम से दूट कर संपर्क करने वाला प्रतिनायक तथा तुलसी ने रावण का मात्र पराजय पानेवाला प्रतिनायक बना दिया है । केशव ने तुलसी का भाँति राम का भक्त बनाकर उसे योग प्राप्त करते नहीं लिखाया है । केशव के रावण में प्रतिद्वन्द्वता की भावना तथा ध्यान बन

पर गव स्पष्ट भलनता है। रावण के ऐश्वर्य का वणन, कुलीनता, वीरता, विद्वता का वणन दुराग्रह मुक्त होकर किया है। केशव ने 'रामचन्द्रिका' में धनुष-यन्त्र के अवसर पर ही रावण-बाणासुर सम्वाद प्रस्तुत किया है। रावण बाणासुर से कहता है—

बच्च को अखण्ड गव गज्यो, जेहि पवतारि जीत्यो है, सुपव सब  
भाजै लल अ गना ।

खण्डित अखण्ड आसु की-हों है जलेस पासु चन्दन सी चन्द्रिका सो  
की-ही चन्द बन्दना ।

दण्ड' मे की-हो बालदण्ड हूँ को मानखण्ड मानो की-ही बाल की  
ही काल खण्ड खण्डना ।

'केशव' कीदड़ विपदण्ड, ऐसो दड़ अन्न मेरे भुजदण्ड की बड़ी है  
विडम्बना ॥<sup>१</sup>

अपने भुजबल के गव में खूर रावण, जिसने इंद्र, वरुण, कुबेर को नीचा दिखाया है, वह शिव धनुष की कमल-नास की भाँति तोड़ने की बात पूरे विश्वास से सभा के मध्य में कहता है। केशव ने वही पर 'रावण बाण महाबली जानत ससार'<sup>२</sup> कहकर सभी को उसके आतंक से आतंकित दिखाया है। रावण स्वयं अपनी प्रशंसा करते चक्का नहीं। अमानक वह अपने प्रिय व्यक्ति की वरुण पुकार सुनकर चला जाता है नहीं तो वह धनुष को तोड़ने में पूरा सक्षम था। केशव ने रावण को यहाँ अपमानित नहीं होने दिया, जसा तुलसी ने उसे धनुष-यन्त्र में राजाओं के मध्य घोर अपमानित किया है।

केशव का कमवशाली रावण भोग विलासी है। मदिरा से मस्त सुदरी किन्नरिया उसके यहाँ नृत्य करती रहती हैं—

पिए एक हाली गुहै एव माला । बनी एक बाला नच चित्र शाला ।  
बहुँ कीकसा कोक की बारिका को । पढावे सुवा ल सुको सारिका  
को ॥<sup>३</sup>

रावण राजनीति, घूटनीति एवं भेदनीति में पटु है। वह अगद को बालि बध का ध्यान दिलाकर मिलाना चाहता है।<sup>४</sup> रावण युद्ध का इतना योद्धा है कि

१ रामचन्द्रिका ४।६

२ वही ४।३

३ वही १३।५१

४ वही १६।१५

उसके बल से धरती कापती है। राम के अतिरिक्त उसका सामना करने की शक्ति किसी और में नहीं है। लेकिन वज्र से बठोर इस रावण की वेशव ने मेघनाद वध होने पर कोमल हृदय व्यक्ति भी दिखाया है। वह प्रतिज्ञा तथा बात का इतना धनी है कि जो कह देता है उस पर घटल रहता है। मन्दोदरी के अनक वार सधि करने तथा सीता वापिस कर देने की विनय करने पर भी रावण अपने मत का नहीं बदलता है। वह हठी शोषी, प्रचण्ड पराक्रमी बली, छली कामी विलासी, घोर दम्भी सभी प्रतिनायक के गुणों से युक्त है। रावण का चरित्र केशव ने बड़ा निष्ठा में उभारा है, एकदम उसके साथ घायाब नहीं किया। केशव के राम अपने शक्ति में प्रदुभुत हैं तो रावण भी कम नहीं है। दोनों ही बेजोड़ योद्धा हैं। ऐसी स्थिति में प्रतिनायक की पराजय तथा नायक की विजय निश्चय ही बड़ी महत्वपूर्ण है। केशव ने प्रबल प्रतिनायक की पराजय से नायक का प्राणवत्ता तथा अटल महत्ता का स्थापना की है।

### राम के नायकत्व का निर्धारण

इस प्रकार 'केशव' का नायक पारश्चात्य तथा भारतीय आचार्यों के लक्षणों से बनायी गयी बसौटी पर परा उत्तरता है। राम-रक्षा के प्राणवान सूत्रधार का भी उदात्तता, जीवन का प्रतिनिधि चरित्र भूल या रस या आघार आदि सभी दृष्टि से महाकाव्य के सफल नायक हैं। संस्कृत आचार्यों से केशव अधिक प्रभावित थे, उनके नायक पर उनका प्रभाव होना भी स्वाभाविक है। भामह बण्डा तथा विश्वनाथ की बसौटी पर वह अविकल्पित क्षमावान धीरादात गुणवित' का चारित्र्य में प्राप्त है। द्रष्ट की प्रजा अनुरक्त दृष्टि विजिगीषु तथा सवगुण समवित नायक बसौटी पर भी 'केशव' के राम आदर्श नायक हैं। पारश्चात्य दृष्टि से भी वह महाकाव्य में महत्तम काय व्यापार करने वाला उन्नत नायक है।

राम ने विलास एवं पीड़ा का मणि-नामन योग केशव ने प्रस्तुत किया जिस कारण ये मानव जीवन का प्रतिनिधित्व करने में समर्थ हैं। राधाभिषेक राजा राम का विनाश उनके चारित्रिक पक्ष का रूप में हाकर मानवीय गुणों का गहजडा का रूप लिए हैं। राजा के राम बलवान व विराट ब्रह्म नहीं हैं जो उन के भाव में नहीं हैं। उनमें गहजडा मनुष्यत्व, शत्रियत्व तथा लोक उदारत्व रूप का ही प्रधानता है। इस प्रकार रामचरित्र का नायक का मर्म बड़ा आकर्षण है उनका प्रबल मानव पक्ष। उनका व्यक्तिगत भागमूलक मधुर पक्ष का भी मुक्तभाव से प्रपनाय है तथा मुक्त के विराट पक्ष का भी। उसमें प्रेम एवं मुक्त मनो का मनुष्यत्व विधान है। 'रामान' के राम का धर्ममानवायता तथा तुलना के राम की ब्रह्म

लीलापरक विस्तारवादिता 'रामचन्द्रिका' के राम में नहीं है। उनमें दिव्य शक्ति के कारण महामानव के महत्तम गुण उपलब्ध हैं तथा भारतीय काव्य शास्त्रियों द्वारा निर्धारित 'धीरोदात्त नायक' की कमीटी पर वे पूर्ण सफल हैं।

### तुलसी तथा केशव के नायक की तुलना

केशव के नायक को आलोचकों ने तुलसी के नायक की तुलना में लगातार हेय कहा है। सत्य तो यह है कि तुलसीदास ने एक ऐसे अपराजेय व्यक्तित्व को प्रस्तुत किया है कि ऐसे चरित्र विश्व-साहित्य में कम ही होंगे। जितने महान से महान गुणों की आदर्श रूप में कल्पना मानव-मस्तिष्क अभी भी कर सकता है उससे भी बड़ी ब्रह्म तथा मानव-लीला की शाश्वत-नायक भूमि को तुलसी ने प्रस्तुत किया है। नायक कल्पना में उनके समस्त हिंदी-साहित्य मसार का कोई भी नायक उनकी पट्टे तक पहुँच ही नहीं सकता है। इसलिये तुलसी की तुलनात्मक परीक्षा से केशव के नायक को दुबल पाकर चौकना नहीं चाहिए। प्रत्येक कलाकार की अपनी सीमाएँ होती हैं। 'केशव' की परिस्थितियाँ को ध्यान में रखकर तथा मानव के अपराजेय तथा अनुनयीय नायक की अपनी दृष्टि में मुक्त कर केशव के नायक राम पर विचार किया गया होता, तो ऐसी भूल नहीं होती तथा केशव के साथ हम अधिक से अधिक 'पाय' कर सकते थे।

दूसरे दोनों के नायक निरूपण की तुलनात्मक दृष्टि से देखने के पूर्व यह भी देयना आवश्यक है कि दोनों की भूल दृष्टि में भेद है। तुलसी भक्ति में रमा समर्पित भक्त है जो लोक में सिंघाराम की त्रिप-लीला के अतिरिक्त और कुछ देखना हा नहीं, देखना भी नहीं चाहता। भक्ति का उस दिव्य भूमिका पर तुलसी ने अपने दिव्य-नायक राम के रूप की भाँती का गूँथ दिया है। वही सामान्य कवि या कलाकार अभी भा पहुँच हा नहीं सकता। जो पूणत ब्रह्म में डूब गया, रम गया उस तुलसी के नायक-निरूपण की पाना असम्भव सा हा है। साथ ही तुलसी ने राम के चरित्र को बना तथा भक्ति की दृष्टि से इतना मधुर, दिव्य और भव्य विस्तार द दिया था कि उसमें विकास की मोलाएँ भी कम रह गयी थी। दूसरी ओर वंशव दारवारी कवि थे। राजा, राजाघ्रा के काय-कापो ता उन पर प्रभाव था। उन पर वात्माकि 'रामायण' के राम का भी प्रभाव है। 'स्वप्न' के माध्यम से केशव ने यह अल अलना कृति के अन्तर्गत हा कहा हा है। वात्माकि के राम महामानव है तथा वे राजा की भाँति ही उत्तमगुण में आधिगम करत हैं। लेकिन गुणों के अपार बाण हैं, वे समार से सम्भार, हिमालय में अचल, यमुना से पयगाली अनेक गुणों से युक्त हैं। परन्तु केशव के राम उभर कम पाए हैं। केशव ने उन्हें ब्रह्म कोटि का मानव गिाया है ता राजाघ्रा का भाँति वंशव का मुख भी भोगते हैं तथा प्रजा की प्रमन रगने के लिए अराज पला का ना त्याग कर सकत



हैं। इस प्रकार केशव के राम सांस्कृतिक पुनरोद्धारक हैं। उनमें मानव का पक्ष प्रधान है। अतः तुलसी तथा केशव के नायक का अन्तर दोनों की मूल दृष्टि का ही परिणाम है। वैसे केशव के राम भी तुलसी के राम की तरह 'पुराण-पुरुष', अनादि, अनन्त, पुरुषोत्तम, पतित-पावन, ब्रह्म, लोक रक्षण आदि सभी हैं। फिर भी मूल दृष्टि के अन्तर से दोनों में बड़ा अन्तर पड़ गया है।

## चतुर्थ अध्याय

# कृष्ण के नायकत्व का स्वरूप-विकास

### पृष्ठभूमि

समस्त भारतीय साहित्य में कृष्ण सर्वाधिक प्रिय नायक हैं। उनके नायकत्व के समक्ष अन्य कोई नायक टिकता ही नहीं है। भारतीय मनोपा की अपार-शक्ति से यह नायक भूषण बन गया है। इस नायक पर कवियों ने जितना मन खोल कर लिखा है उतना किसी भी अन्य नायक पर नहीं। कृष्ण को आधार बनाकर हिन्दी का मध्ययुगीन साहित्य उनके लौकिक, सांकोत्तर तथा अलौकिक छटाओं में धुंधला हो गया है। प्रेम और सौंदर्य का यह नायक भारतीय जन-मानस के बहुत निकट रहा है। उन पर मुग्ध होकर विदग्ध मन से कवियों ने रीति-बोझ 'योद्धावर किए हैं। हिन्दी के मध्यकाल में मुक्तक पद्यों का अपार भण्डार है। गीत ही आत्मा साक्षात्कार के क्षणों में प्रबल अंतमन की आत्माभिव्यक्ति का समर्थ साधन हैं। मन के राग रजित स्निग्ध उद्बेलन को उसमें ही सहज मिठास एवं मसृणता से प्रस्तुत किया जा सकता है। यही कारण है कि कृष्ण पर मन तरंग के साथ मुक्तक पद लिखे गये हैं, विधापति एवं सूर के पद इस मत को प्रकट करते हैं। मीरा अपने गीतों में प्रेम हीरानी हाकर 'गगन मण्डन का मेज' सजाती है और रसखान मनुष्य, लंग, पादुन तथा पशु बनने पर भी उन्हीं का साहचर्य चाहते हैं। इन कृष्ण गीतों की अंतरंग दिव्यता और बहिरंग रम्यता ने जनता का सहजो धर्मों तक मोह रखा है।

मध्ययुग में ही धनुषधारा मर्यादापुरुषोत्तम राम का नायकत्व आदर्शों से जकड़ गया था। भारतीय जीवन के समस्त उदात्त भाव गुण आदर्श उनमें पूजीभूत कर दिए गए। परिणामस्वरूप उनका पुरुषात्तमत्व और ब्रह्मत्व कवि के लिए कठिन पड़ा। साथ ही तुलसी ने अपने राम में आकाश पाताल के कुलांबें मिलाकर कवियों के लिए सम्भावना भी कम ही रखी थी। आगे चलकर राम पर लिखने का साहस ही बहुत कम हो पाया। राम के मर्यादित रूप में कवि-कल्पना के खिलवाड़ को जगह नहीं थी। उनमें कृष्ण भक्त भक्ति के सम्बन्ध में बढ़कर रह गया। दूसरी ओर कृष्ण का व्यक्तित्व बहुत उन्मुक्त मिला उसका रसिकेश्वर लीला बिहारी रूप ऐसा था जिन पर सामान्य और ममय दोनों ही कवि अपनी अपनी उड़ानें भरते रहे। उनके व्यक्तित्व का लचीलापन और 'फलाव, मसीम एवं असीम

के संयोग से भी कवियों के लिए आवरण का कारण रहा है। रीतिवालों का कवि तो उनके स्मरण के बहाने ही रमता रहा। एक आश्चर्यप्रद घटना यह भी हो गई कि 'नेति नेति' ब्रह्म विष्णु, वासुदेव एवं कृष्ण हो गया। उसमें ठोस सौंदर्य एवं आध्यात्मिक रूप अनेक युगों में प्रतायास मिल गया। उसमें नैतिक, भवदिक, प्रायः अनाय सभी कुछ मिलकर मधुर ही होता गया। इस मधुरता का विकास इतना हुआ कि विष्णु भी कृष्ण से पीछे पड़ गये। वेदों का सवशक्तिमान इ॥ इनमें गोवर्द्धन पर्वत की घटना में मात खा गया और उसके व्यक्तित्व को भी कृष्ण ने जीत लिया। इस प्रकार साहित्य का यह अपराजित, असीम सम्भावनाओं से युक्त नायक लगातार वेदों से लेकर आधुनिक काल तक विकासामुक्त रहा है। यह आभीर जाति का बाल देवता हा या कोई ऐतिहासिक महामानव विष्णु परिवर्तित रूप हो या अमीरस का शिव, पुराणों का दिव्य सीतावतारी देव हो या पाश्चात्य का क्रिस्ट छत्र प्रभाव पुत्र अथवा कल्पना का कविकल्पवृक्ष हो कुछ भी हो इस नायक ने अपनी रम्य चार से साहित्य में जीवनी शक्ति को अंतर्लित कर दिया है।

कृष्ण को नाना पुराणों का जयगान मिला। भारतीय साधना के अनेक सम्प्रदायों का उपास्यदेव पद मिला। साथ ही शृंगार एवं भक्ति का परम-पद भी दिया गया। उसे अमर लोक, गोलोक तथा ब्रजलोक मिला। सीला देव प्रानंद बिभोर हो कवियों की वाणी में सावन घन बन गया और प्रेम की हरीतिमा धरती पर बिखेरने लगा। ब्रजभाषा काव्य की समस्त सौंदर्य मधुरता कोमलता भाव, भाषा बला शक्ति इस महान नायक में पूजीभूत हो गई। इस प्रकार इस नायक का मधुर एवं विराट रूप साहित्य में अजेय हो गया। अतः कृष्ण के अपार नायकत्व का विकास असे-असे होता रहा है इस जगत् का प्रस्तुत करने का प्रयास करेंगे। इसमें उनके नायकत्व के रूप का क्रमिक विकास भा उद्घाटित होगा तथा युगीन ह्रास या सम्यक् दन भी प्रक्रिया का भी स्पष्ट बोध सम्भव हो सकेगा कि हिन्दू के मध्ययुगीन रूप से पहिले उनका कला रूप था। मध्ययुगीन कवियों की आधार भूमि के प्रेरणा स्रोत तीन से रहे हैं इस तथ्य का भी स्पष्टता मिलती।

### नायक श्रीकृष्ण का ऐतिहासिक स्वरूप विकास

प्राचीन साहित्य से लेकर आधुनिक काल तक कृष्ण का व्यक्तित्व अनेक रूपों में परिवर्तित होता रहा है। वेनों उपनिषदों में विद्यमान धारणाओं का स्फुटन, वृद्धि, परिवर्तन युगीन परिस्थितियों के अनुकूल परिवर्तित होता रहा है। भारतीय साहित्य में उनकी मधुर और विराट सत्ता का दर्शक विद्वान उह आग्नाय साहित्य का सर्वाधिक प्रशस्त व्यक्तित्व मानते हैं। उनमें प्रायः अनाय, भारतीय अमरतीय

अनेक तत्त्व घुलमिल कर एकाबार हाते रह हैं, साथ ही भक्ति भावना की आध्यात्मिक धारा में उनका रूप एक अव्यक्त भाव-मत्ता ग्रहण कर लेता है। इस व्यापक भावना के अनन प्रसार को देखते हुए अनेक आलोचकों को उनकी ऐतिहासिकता पर मदेह हुआ है तथा वे उन्हें शुद्ध कल्पना का पुष्प मानते हैं। पाश्चात्य विद्वान उह इसी भाव सना में कल्पना का रूप ठहराते रहे हैं। किंतु भारतीय विद्वानों की खोज ने सिद्ध कर दिया है कि कृष्ण ऐतिहासिक पुष्प हैं, जो लगातार परिवर्तित-परिवर्द्धित होने रहे हैं।<sup>१</sup> वैदिक काल में मागवत-काल तक अनेक कृष्णों के उल्लेख मिलते हैं वे सब 'कृष्णमय' होकर कसे समाविष्ट हो गये, यह प्रश्न आज भी विचारणीय है। जैसे महाकाव्य विक्सनशील महाकाव्य का रूप बदलता रहता है फिर स्थिर होता है। ऐसे ही विक्सनशील नायक भी अनेक युगों की सजना से बनता है। ऋषियों की मेधा, तपस्वियों का तप, योगियों की साधना, भक्तों का भक्ति तथा साहित्यिकों की कल्पना से ही ऐसा नायक उदित होता है। कृष्ण ऐसा ही प्रवहमान विक्सनशील चरित्र है, जो हर युग में नया जन्म लेता रहा है तथा प्रत्येक युग में अपना नाम पुराना रखते हुए भी नवीन दृष्टि-बाध, भाव-बोध, नाम-बाध तथा युग-बोध को ग्रहण करता रहा है।<sup>२</sup> उनके चरित्र की निरन्तरता ही शाश्वत दृढ़ता की प्रतीक है। इस नायक के नाम, विकास क्रम को स्पष्ट करने के लिए ही ममीचीन है कि वेदा से उसकी छानबीन आरम्भ की जाये तथा वेदोत्तर युगों में उसके नायकत्व के रूप पर विचार किया जाये।

## वेदों में कृष्ण

कृष्ण का प्राचीन उल्लेख ऋग्वेद में उपलब्ध होता है। ऋषि कृष्ण ही ऋग्वेद में मध्यम तथा दशम मण्डल के रचयिता हैं। ऋग्वेद के प्रथम मण्डल में भी कृष्ण का उल्लेख है। यहाँ इन्द्र द्वारा मारे गये एक कृष्णामुर की चर्चा है।<sup>३</sup> इसी वेद में दूसरे तथा अष्टम मण्डल में भी इन्द्र तथा कृष्णामुर के सघप की चर्चा है।<sup>४</sup> प्रसिद्ध दशम वेत्ता डा० राधाकृष्णन ने इस कृष्ण को उस सेना का दवीहन परम वीर पुष्प स्वाकार किया है।<sup>५</sup> विष्णु पुराण तथा भागवत पुराण में इन्द्र-

१—Shri Bipin Chandra Pal — Shri Vishnu p 2

२ बनिमध्व चट्टोपाध्याय—कृष्ण चरित्र, पृ० ४७, अनु० जगन्नाथप्रसाद चतुर्वेदी

३ ऋ०—१ १३०, ८

४ (१) २, २०, ७

(११) ८, २५, १३

५ इन्डियन फिलासफी जि० १, पृ० ८७

युद्ध विरोध देगवर पाषचाय विद्वान् इतिथट ने उसे वन्धि कृष्ण का रूप हो माना है ।<sup>१</sup>

'शृग्वेद' में ही उन्हें कृषि भा कहा गया है और वर्तमान रूप में कृष्ण अगीरस ऋषि का नाम भी दिया गया है ।<sup>२</sup> य गामवान के लिए अश्विनी कुमारों को आह्वान देते हैं । यसे अपत्यवाचक रूप में कृष्णशब्द शब्द का प्रयोग भी एक, दो ऋचाओं में मिलता है ।<sup>३</sup> वीपीनकी बाह्यरा' में भी कृष्ण अगीरस की ख्याति है ।<sup>४</sup> 'ऐतरेय ब्राह्मण' में कृष्ण हारीत' नामक एक गुरु का उल्लेख है ।<sup>५</sup> दूसरी ओर 'छांदोग्योपनिषद्' में कृष्ण देवरी के पुत्र और अगीरस का शिष्य बहते गये हैं ।<sup>६</sup> डा० भण्डारकर ने 'पाणिनि अष्टाध्यायी' में प्रयुक्त कृष्ण तथा 'गण' शब्दों के आधार पर इसका सम्बन्ध 'कृष्णायन गोध' से जोड़ दिया है ।<sup>७</sup>

डा० कपिलदेव शास्त्री ने शब्द नाम्य के आधार पर 'शृग्वेद' में कृष्ण तथा अश्विन<sup>८</sup> तथा 'अथर्ववेद' में राम और कृष्ण के उल्लेख को जोड़ा है किन्तु उनका मत है कि इनकी ऐतिहासिकता पर सम्भवतः अथर्ववेद में होने के कारण विद्वानों ने विचार नहीं किया ।<sup>९</sup> पीछे स विद्वान् जे० गाद ने कृष्ण अश्विन का तात्पर्य 'रात एवं दिन' से स्वीकार किया है ।<sup>१०</sup>

शृग्वेद में एक स्थल पर 'कृष्ण' की ख्याति असुरराज के रूप में भी है । इन्द्र ने देवता बहुस्पति की महायज्ञ से उन परछाड़ दिया था ।<sup>११</sup> वहीं-वहीं इन्द्र की कृष्णासुर की गममती स्त्रियों का वध करने वाला कहा गया है ।<sup>१२</sup>

इस प्रकार उपर्युक्त तथ्यों के आधार पर कृष्ण नाम का ऐतिहासिकता तथा कृष्ण नामक व्यक्ति का अस्तित्व निश्चय ही सिद्ध होता है । तीन प्रकार से कृष्ण सामने आते हैं—

१ हि ब्रह्मण तया बुद्धिजम्—प० १५५ (१६५५)

२ (१) डा० भण्डारकर—बालेकट्टे वसन्त में सङ्कलित व० न० ५० १५

(११) ऋ०—८, ८५, ६८ ८७

३ (१) १, ११६, २३

(११) ७३, ११७ ७

४ ३० ६

५ ३, २, ३

६ ३, १७, ६

७ ५४, १, ६८

८ व० न०—प० १५

९ ६, ६, १

१० १, २३ १

११ मध्ययुगीन साहित्य में अथर्ववेद, प० ५२१

१२ जे० गाद—ऐस्वेकट्स आफ़ अर्ली वेदनाविज्जम्, प० १५८ (त० १६५५)

१३ ऋ० ८—९६, १३-१५

१४ १ १०१, १

(१) मन्त्रों के रचयिता अगीरम कृष्ण ।

(२) आर्वेतर मन्त्राति सं सम्बद्ध कृष्णासुर कृष्ण ।

(३) अजुन के सहचर के कृष्ण । वाद म॥ जिनका सम्बन्ध 'महाभारत' के अजुन कण्व से भी माना जा सकता है । 'छादोग्य' का प्रभाव गीता' पर बहुत है, इस दृष्टि से कण्व अगीरस का सम्बन्ध गीता कण्व से भी स्थापित किया जा सकता है । इसी धारणा को गाँव, ग्रियसन मजूमदार, राय चौधरी, दान थापडर आदि खोजी विद्वानों ने स्वीकार किया है ।<sup>१</sup> लाकमाय वाल गगाधर तिलक इस धारणा से सहमत नहीं हैं ।<sup>२</sup> उनके मत से 'छादोग्य' तथा गीता का भाव साम्य मूल आधार (गीता) से सम्बद्ध नहीं है । डा० हरिवंश लाल शर्मा ने ब्रह्म कण्व को अवतार गौर देवता न मानकर भी भागवत का कण्व माना है ।<sup>३</sup>

ब्रह्म कृष्ण का पुराणा के कृष्ण से एकीकरण जनश्रुतियाँ तथा लाक विश्वासों को लेकर हुआ होगा । लेकिन तीन कृष्णा में से कौन सा कृष्ण पुराण-कृष्ण हो गया, प्रमाणा के अभाव में कुछ भी कहना सम्भव नहीं है । डा० केलकर ने ऋग्वेद के चार विष्णुपरम मन्त्रों के आधार पर विष्णु तथा कृष्ण को एक ही माना है । वहीं से विष्णु का गायो से सम्बन्ध देखकर उस पशुपालक देवता विष्णु को सूर्य वशा मानकर उस पीछे के काल में कृष्ण मान लिया है । वेदों के बाद वे विष्णु तथा कृष्ण का मेल पुराणों में मान लेते हैं ।<sup>४</sup> रामधारीसिंह दिनकर ने 'कृष्ण' नाम की प्राचीनता तथा ऐतिहासिकता को वेदों से ही स्थापित किया है तथा उनका मत मान्य भी लगता है ।<sup>५</sup>

१ (I) इनसाइक्लोपीडिया ब्राय रिक्लिजन एण्ड ऐथिक्स, पृ० ५३५, भाग २

(II) कल्चरल हेरिटेज ब्राय इण्डिया—पृ० ११ १२, भाग ३

(III) अर्ली हिस्ट्री ब्राय वल्लव सेक्सट, पृ० ७८

(IV) ब्रह्म इण्डेक्स, पृ० १८४, भाग १

२ गीता रहस्य, पृ० ५३८

३ मूर और उनका साहित्य, पृ० ११८

४ मराठी हिन्दी कृष्ण काव्य का तुलनात्मक अध्ययन, पृ० ४५

५ "कृष्ण नाम के साथ गाय, चरपाहा, खेती और किसानों की क्याएँ देख पर तथा यह देख कर कि उनके भाई बलराम हल लेकर चलते हैं, पशुवम के विद्वानों ने यह अनुमान लगाया था कि पहिले कृष्ण कल तथा वनस्पति के देवता रहे होंगे । मगर, भारतीय पण्डित इस अनुमान को नहीं मानते । कृष्ण नाम बहुत प्राचीन है ।"

— सस्कृति के चार अध्याय, पृ० ६१

## पुराणों में कृष्ण

वदिव कृष्ण तथा पौराणिक कृष्ण एक ही व्यक्ति हैं अथवा अलग अलग इस मत पर बहुत विवाद है। पुराणों के कृष्ण सात्वत कुल में उत्पन्न यदुवंशी हैं। उन्हें चद्रवंशी कहा गया है।<sup>१</sup> कुछ पुराणों में उन्हें सूर्यवंशी कहा गया है जहाँ उनकी माँ का नाम देवकी तथा पिता का नाम वसुदेव है तथा ग्रन्था विष्णु को वसुदेव के घर में अवतरित होने की सलाह देते हैं।<sup>२</sup> इतना निश्चित है कि उपनिषद् से लेकर पुराणों तक कृष्ण का व्यक्तित्व बहुत विस्तृत हुआ है। पुराणों में कृष्ण को निश्चित आयाम मिलते हैं। कृष्ण के इस प्राचीन व्यक्तित्व में बल्लभ भक्ति का नैकट्य बहुत है। अतः कृष्ण के नायकत्व के विकास में बल्लभभक्ति का बहुत योग है।

## महाभारत में कृष्ण

महाभारत भारतीय जनजीवन को सम्पूर्ण रूप से प्रतिनिधित्व करने वाला विकसनशील महाकाव्य माना जाता है। इसके साथ व्यास का नाम विशेष रूप से सम्बद्ध होने पर भी यह एक कवि या सीमित काल का रचना नहीं है। प्रसिद्ध विद्वान विष्णुशर्मा ने ठीक ही कहा है कि महाभारत अपने आप में सम्पूर्ण तथा समग्र साहित्य (होत लिटरेचर) है। ज्ञान ज्ञान क्यों तब भूत कहानी में अनेक आभ्यास मिलते रहें तथा भूत कहानी को पहचानना आज कठिन है। महाभारत युग की ऐतिहासिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक सामाजिक कथाओं का विशाल कोष है।

'महाभारत के नायक कृष्ण का व्यक्तित्व बहुत अदभुत है। पाण्डवों की ओर में युद्ध के सूत्रधार के ही रहे। फिर भी महाभारत में वे भगवान के अवतार हैं, और उनके द्वारा अनुप्रेरित अर्जुनाचारण को भी महाभारत में उनका अलौकिक चरित्र बताया गया है। महाभारत का अर्थ पात्र युद्ध और राजनीति की भाग में जल रहे हैं। समके समय एक तूफान में से होकर गुजरे। अपना रास्ता उन्होंने स्वयं बनाया है और अपनी रची हुई विपत्ति की चिन्ता में वे हसते हसते बूढ़ गए हैं।<sup>३</sup> चरित्रों का यह विराट महासागर इतिहास, पुराण धर्म ग्रन्थ महाकाव्य आदि सभी कुछ है। महाभारत के नायक कृष्ण महान योगी वेदाङ्ग राजनीतिज्ञ तथा साक्षात् ब्रह्म के अवतार हैं। यहाँ पर कृष्ण का रूप मधुर नहीं सम्पूर्ण रूप से विराट रूप ही मिलता है। महाभारत का सम्पूर्ण युद्ध उनके मन्त्र पर ही घूम रहा है। कृष्ण का यह रूप पुराणों के कृष्ण से भिन्न है अतः गोपालकृष्ण तथा महाभारत कृष्ण दो भिन्न भिन्न दृष्टियों के प्रतीक हैं। इस दृष्टि का भिन्नता के कारण ही महाभारत

१ पॉजिटिव एनसेट इण्डियन हिस्टोरिकल ट्रेडिशन, पृ० १०२, १७ १४४

२ हरिवंश पुराण का सामूहिक विवेचन-श्रीणा पाणि पाण्डेय, पृ० १५

३ हिस्ट्री ऑफ इण्डियन लिटरेचर, भाग १, पृ० ३१७

कृष्ण के नायकत्व का स्वरूप विनास

के कृष्ण गोपाल कृष्ण से कभी मिलाये नहीं जा सके। मध्य युग में महाभारत के कृष्ण का नहीं, पुराणों के कृष्ण का बोलबाला रहा है, इसका कारण है कि मध्ययुग पौराणिकता के प्रभाव में अधिक दबा है।

### कृष्ण तथा विष्णु

वैदिक विष्णु इन्द्र से बहुत छोटे देवता हैं। ब्राह्मण काल में यज्ञ का प्राध्याय था, अतः वे यज्ञ रूप विष्णु बन गये। ऐतरेय ब्राह्मण में विष्णु 'परम-देव' स्वीकार किए गये।<sup>१</sup> शतपथ ब्राह्मण में विष्णु के वामन रूप की चर्चा है,<sup>२</sup> साथ ही वे यज्ञ-सम्बन्धी विग्रहों में विजयी होकर देवताओं में महत्त्वपूर्ण बन जाते हैं। उन्हीं की प्रत्यक्षा से उनका कटा सिर विष्णु बन जाना है। फिर वे विष्णु आदित्यों में सर्वशक्तिमान हैं।<sup>३</sup> महाभारत के विष्णु को बारह अवतारों में सर्वाधिक तेजस्वी कहा गया है।<sup>४</sup> उनके रूप धारण तथा सर्वशक्तिमान की कल्पना ने उन्हें चार आयुष (शत्रु, चक्र, गदा पदम) से अलङ्कृत कर मानव से अधिक बलवान् दिखा दिया। इस प्रकार जावन-भरण के दुखों का नाशकर्ता श्वेता विष्णु उदित हुमा तथा इन्द्र का तज उसके सामने पीछे पड़ गया। 'सूयलोक' के साथ 'गोलोक' में भी उसका निवास हो गया।<sup>५</sup> विष्णु की चार भुजाओं का संज्ञ इतना बड़ा कि अथर्व वैदिक देवता, उनके सामने टिक नहीं सके, लोग उन्हें भूलने लगे। सभी क्याएँ विष्णु में मिलकर 'त्रिविधम विश्ववस्तु', 'राधानोपति' तथा 'भुवनस्य राजा' में समाहित पा गयी 'सूयलोक' के परे 'गोलोक' के ब्रजमण्डल में भी 'गोमण्डली' समझी जाने लगी।

तत्तरीय आरण्यक में विष्णु का एक प्राचीन ऋषि नारायण में समाविष्ट हो गये।<sup>६</sup> पाश्चात्त धर्म में उपासना-परम्परा चल पड़ी। बाद में ये सभी भावनाएँ वासुदेव कृष्ण में मिल गयी। तत्तरीय आरण्यक में एक स्थान पर वासुदेव, विष्णु तथा नारायण की समता का उल्लेख है।<sup>७</sup> के० एम० मुशी ने पाणिनि के (ई० पू० समय ५०० शताब्दी) आधार पर जनसाधारण में विष्णु-भुजा की स्वीकार किया

१ आ० हजारिप्रसाद द्विवेदी—हिंदी साहित्य की भूमिका, पृ० १४३

२ ऐतरेय ब्राह्मण, १, ३०

३ शतपथ ब्राह्मण १, २, ५

४ गीता—दसवा अध्याय श्लोक २१

५ महाभारत-१, ६५ १६ (कलकत्ता संस्करण, १९०९)

६ शतपथ ब्राह्मण १, ५, ३, १४।

७ पोद्दार अभिनन्दन ग्रन्थ पृ० २५५

८ अथर्व वेद, पृ० २१



## पुराणों में कृष्ण

वदिव कृष्ण तथा पौराणिक कृष्ण एक ही व्यक्ति है अथवा अलग अलग इस मत पर बहुत विवाद है। पुराणों में कृष्ण सात्वत कुल में उत्पन्न यदुवशी हैं। उन्हें चद्रवशी कहा गया है।<sup>१</sup> कुछ पुराणों में उन्हें सूर्यवशी कहा गया है जहाँ उनकी माँ का नाम देवकी तथा पिता का नाम वसुदेव है तथा ब्रह्मा विष्णु की वसुदेव के घर में अवतरित होने की सलाह देने हैं।<sup>२</sup> इतना निश्चित है कि उपनिषद् से लेकर पुराणों तक कृष्ण का चरित्र बड़ा विचित्र हुआ है। पुराणों में कृष्ण को निश्चित आश्रम मिलते हैं। कृष्ण के इस प्राचीन चरित्र में कृष्ण भक्ति का नैकट्य बहुत है। अतः कृष्ण के नायकत्व के विकास में कृष्णभक्ति का बहुत योग है।

## महाभारत में कृष्ण

महाभारत भारतीय जनजीवन की सम्पूर्ण रूप से प्रतिनिधित्व करने वाला विश्वसनीय महाकाव्य माना जाता है। इसके साथ व्यास का नाम विशेष रूप से सम्बद्ध होने पर भी यह एक कवि या सीमित काल का रचना नहीं है। प्रसिद्ध विद्वान विण्टरनिट्ज ने ठीक ही कहा है कि महाभारत अपने आप में सम्पूर्ण तथा समग्र साहित्य (होत सिलरेचर) है। अतः अठारह सौ तक मूल कहानी में अनन्त आप्त्तान मिलते रहते तथा मूल कहानी का पहिचानना आना कठिन है। महाभारत युग की ऐतिहासिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक सामाजिक कथाओं का विशाल कोष है।

‘महाभारत के नायक कृष्ण का व्यक्तित्व अत्यन्त अद्भुत है। पाण्डवा की ओर से युद्ध के सूत्रधार के ही रहे। फिर भी महाभारत में वे भगवान के अवतार हैं, और उनके द्वारा अनुप्रेरित आश्रमाचरण की भी महाभारत में उनका प्रतीक चरित्र बताया गया है। महाभारत के अथवा पात्र युद्ध और राजनीति की भाग में जल रहे हैं। सबके सन एक तूफान में सँहायर गुजरे हैं। अपना सम्मान उन्होंने स्वयं बनाया है और अपनी रची हुई विपत्ति की चिन्ता में वे हँसते हँसते कूद गये हैं।<sup>३</sup> चरित्रों का यह विराट महाभाग्य दृष्टिमान, पुराण धर्म ग्रन्थ, महाकाव्य आदि सभी कुछ है। महाभारत के नायक कृष्ण महान योगी धेजोड राजनीति तथा साक्षात् ब्रह्म के अवतार हैं। यहाँ पर कृष्ण का रूप अमूर्त नहीं सम्पूर्ण रूप से विराट रूप ही मिलता है। महाभारत का सम्पूर्ण युद्ध उनके सकेत पर ही घूम रहा है। कृष्ण का यह रूप पुराणों के कृष्ण से भिन्न है अतः गाण्ड्यकृष्ण तथा महाभारत कृष्ण दो भिन्न भिन्न दृष्टियों के प्राक् हैं। इस दृष्टि का भिन्नता के कारण ही महाभारत

१ पात्रिम्बर एनमेष्ट इण्डियन हिस्टोरिकल ट्रिडिगन, पृ० १०२, १७ १४४

२ हरिवंश पुराण का सांस्कृतिक विवेचन-योगी पाणि पाण्डेय, पृ० १५

३ हिस्ट्री ऑफ इण्डियन लिटरेचर, भाग १, पृ० ३१७

कृष्ण के नामवत्त्व का स्वरूप विनाश

वे कृष्ण गोपाल कृष्ण से कभी मिलाये नहीं जा सके। मध्य युग में महाभारत के कृष्ण का नहीं, पुराणों के कृष्ण का बोलबाला रहा है, इसका कारण है कि मध्ययुग पौराणिकता के प्रभाव में अधिक दबा है।

### कृष्ण तथा विष्णु

वदिक विष्णु इन्द्र से बहुत छोटे देवता हैं। ब्राह्मण काल में यज्ञ का प्राधान्य था, अतः वे यज्ञ रूप विष्णु बन गये। ऐतरेय ब्राह्मण में विष्णु 'परम-देव' स्वीकार किए गये।<sup>१</sup> शतपथ ब्राह्मण में विष्णु के वामन रूप की चर्चा है,<sup>२</sup> साथ ही वे यज्ञ सम्बन्धी विग्रहों में विजयी होकर देवताओं में महत्त्वपूर्ण बन जाते हैं। उन्हीं की प्रत्यक्षा से उनका मटा सिर विष्णु बन जाता है। फिर वे विष्णु आदित्यों में सर्वशक्तिमान हैं।<sup>३</sup> महाभारत के विष्णु का द्यारह अवतारों में सर्वाधिक तेजस्वाकार कहा गया है।<sup>४</sup> उनके रूप धारण तथा सर्वशक्तिमान की कल्पना में उन्हें चार आयुष (शत, चक्र, गदा पदम) से अलङ्कृत कर मानव से अधिक बलवान् दिखा दिया। इस प्रकार जीवन मरण के दुःखों का प्राणकता देवता विष्णु उदित हुआ तथा इन्द्र का तेज उसके सामने पीछे पड़ गया। 'सूयसोक' के साथ 'गोलोक' में भी उसका निवास हो गया।<sup>५</sup> विष्णु की चार भुजाओं का तेज इतना बढ़ा कि अथ वदिक देवता, उनके सामने टिक नहीं सके, लोग उन्हें भूलने लगे। सभी कथाएँ विष्णु में मिलकर 'त्रिविज्रम विश्ववसु', 'राधानोपति' तथा भुवनस्वराजा' में समाहित पा गयी 'सूयसोक' के परे 'गोलोक' के वज्रमण्डल में भी 'गोमण्डली' समझी जाने लगी।

तत्तरीय आरण्यक में विष्णु का एक प्राचीन ऋषि नारायण में समाविष्ट हो गये।<sup>६</sup> पाचरात्र धर्म में उपासना परम्परा चल पड़ी। बाद में ये सभी भावनाएँ वासुदेव कृष्ण में मिल गयी। तत्तरीय आरण्यक में एक स्थान पर वासुदेव, विष्णु तथा नारायण का समता का उल्लेख है।<sup>७</sup> वे० एम० मुशी ने पाणिनि के (ई० पू० समय ५०० शताब्दी) आधार पर जनसाधारण में विष्णु-पूजा को स्वीकार किया

१ आ० हनारीप्रसाद द्विवेदी—हिन्दी साहित्य की भूमिका, पृ० १४३

२ ऐतरेय ब्राह्मण, १, ३०

३ शतपथ ब्राह्मण १, २, ५

४ गीता—दसवा अध्याय श्लोक २१

५ महाभारत—१, ६५, १६ (कल्कत्ता संस्करण, १९०९)

६ शतपथ ब्राह्मण - १ ५, ३, १४।

७ पौद्वार अभिनन्दन ग्रन्थ पृ० २५५

८ वाणव धर्म, पृ० २१

## पुराणों में कृष्ण

वैदिक कृष्ण तथा पौराणिक कृष्ण एक ही व्यक्ति हैं अथवा अलग अलग इस मत पर बहुत विवाद है। पुराणों के कृष्ण सात्वत कुन में उत्पन्न मनुवशी हैं। उन्हें चन्द्रवशी कहा गया है।<sup>१</sup> कुछ पुराणों में उन्हें सूर्यवशी कहा गया है जहाँ उनकी माँ का नाम देवकी तथा पिता का नाम वसुदेव है तथा ब्रह्मा रिष्यु को वसुदेव के घर में अवतरित होने की सलाह देने हैं।<sup>२</sup> इनका निश्चित है कि उपनिषद् में लेकर पुराणों तक कृष्ण का "रक्ति" बहुत विस्तृत हुआ है। पुराणों में कृष्ण को निश्चित आर्याम मिनन हैं। कृष्ण के इस प्राचीन व्यक्तित्व में वष्णव भक्ति का तैकट्य बहुत है। अतः कृष्ण के नायकत्व के विवात में वष्णवभक्ति का बहुत योग है।

## महाभारत में कृष्ण

महाभारत भारतीय जनजावन को सम्पूर्ण रूप से प्रतिनिधित्व करने वाला विक्सतशील महाकाव्य माना जाता है। इसके साथ व्यास का नाम विशेष रूप से सम्बद्ध होने पर भी यह एक कवि या सीमित काल का रचना नहीं है। प्रसिद्ध विद्वान विण्टरनिट्ज ने ठीक ही कहा है कि महाभारत अपनी आप में सम्पूर्ण तथा समग्र साहित्य (होल लिटरेचर) है। यानि अतः यहाँ तक मूल कहानी में अनेक भारतीय मिलते हैं तथा मूल कहानी का पहिचानना आता बठिन है। महाभारत युग की ऐतिहासिक, सामूहिक राजनीति सामाजिक क्यामो का विशाल गेप है।

महाभारत का नायक कृष्ण का व्यक्तित्व बहुत अद्भुत है। पाण्डवों की ओर में युद्ध के मूलधार वही रहें। फिर भी महाभारत में वे भयानक भयानक हैं और उनके द्वारा अनुप्राणित आकाशकणों का भी महाभारत में उनका असीमित चरित्र बताया गया है। महाभारत के अन्त में युद्ध और राजनीति की भाग में जा रहे हैं। सबसे मगर एक क्षण में ही द्वार गुजरते हैं। अपना रास्ता उन्होंने स्वयं बनाया है और अपनी रची हुई विपत्ति की चिन्ता में न रूकते हुए कृष्ण गए हैं।<sup>३</sup> परिणाम यह कि महाभारत में नायक कृष्ण मन्त्राचार्य वज्राड राजनीति तथा सामाजिक मित्रता है। महाभारत का सम्पूर्ण युद्ध उनके मार्ग पर ही घूम रहा है। कृष्ण का यह रूप पुराणों में कृष्ण में मिलता है अतः सामाजिक तथा महाभारत कृष्ण को भिन्न भिन्न दृष्टि में आता है। इस दृष्टि का मित्रता का कारण है महाभारत

१ वासिष्ठ एतन्मन्त्र इतिहास हिन्दुविश्व दृष्टिमान पृ० १०२, १७ १४४

२ हरिवंश पुराण का सामूहिक विवेचन-बीमा पाणि पाण्डव पृ० ११

३ हिन्दु आर्थ इतिहास लिटरेचर, भाग १, पृ० ३१३

के कृष्ण गोपाल कृष्ण से कभी मिलाये नहीं जा सके। मध्य युग में महाभारत के कृष्ण का नहीं, पुराणों के कृष्ण का बोलबाला रहा है, इसका कारण है कि मध्ययुग पौराणिकता के प्रभाव में अधिक दबा है।

### कृष्ण तथा विष्णु

वैदिक विष्णु इन्द्र से बहुत छोटे देवता हैं। ब्राह्मण काल में यज्ञ का प्राधान्य था, अतः वे यज्ञ रूप विष्णु बन गये। ऐतरेय ब्राह्मण में विष्णु 'परम देव' स्वीकार किए गये।<sup>२</sup> शतपथ ब्राह्मण में विष्णु के वामन रूप की चर्चा है,<sup>३</sup> साथ ही वे यज्ञ सम्बन्धी विग्रहा में विजयी होकर देवताओं में महत्त्वपूर्ण बन जाते हैं। उन्हीं की प्रत्यक्षा से उनका कटा सिर विष्णु धन जाता है। फिर वे विष्णु आदित्यों में सर्वशक्तिमान हैं।<sup>४</sup> महाभारत के विष्णु को बारह अवतारों में सर्वाधिक तेजस्साकार कहा गया है।<sup>५</sup> उनके रूप धारण तथा सर्वशक्तिमान की कल्पना ने उन्हें चार आयुष (शत्रु, चक्र, गदा, पदम) से अलङ्कृत कर मानव से अधिक बलवान् दिखा दिया। इस प्रकार जीवन मरण के दुखों का त्राणकर्ता देवता विष्णु उदित हुआ तथा इन्द्र का तेज उसके सामने पीछे पड़ गया। 'सूयलोक' के साथ 'गोलोक' में भी उसका निवास हो गया।<sup>६</sup> विष्णु की चार भुजाओं का तेज इतना बढ़ा कि अथर्वदेव देवता, उनके सामने टिक नहीं सके, लोग उन्हें भूलने लगे। सभी कथाएँ विष्णु में मिलकर 'त्रिविधम विश्ववसु', 'राधानोपति' तथा 'भुवनस्वराज' में समाहित हो गयी। सूयलोक के परे 'गोलोक' के ब्रजमण्डल में भी 'गोमण्डली' समझी जाने लगी।

तत्तरीय आरण्यक में विष्णु का एक प्राचीन ऋषि नारायण में समाविष्ट हो गये।<sup>७</sup> पाचरात्र धर्म में उपासना-परम्परा चल पड़ी। बाद में ये सभी भावनाएँ वासुदेव कृष्ण में मिल गयीं। तत्तरीय आरण्यक में एक स्थान पर वासुदेव, विष्णु तथा नारायण की समता का उल्लेख है।<sup>८</sup> के० एम० मुशी ने पाणिनि के (ई० पू० समय ५०० शताब्दी) आधार पर जनसाधारण में विष्णु-भूजा को स्वीकार किया

१ भा० हतारीप्रसाद द्विवेदी—हिन्दी साहित्य की भूमिका, पृ० १४३

२ ऐतरेय ब्राह्मण, १, ३०

३ शतपथ ब्राह्मण १, २, ५

४ गीता—दशम अध्याय श्लोक २१

५ महाभारत—१, ६५, १६ (कलकत्ता संस्करण, १९०९)

६ शतपथ ब्राह्मण - १, ५, ३, १४।

७ पोद्दार अभिनन्दन ग्रन्थ पृ० २५५

८ दशम अध्याय, पृ० २१

है।<sup>१</sup> अतः पतञ्जलि के समय से पूर्व ही विष्णु का भावना वासुदेव वृष्ण में मिल गई होगी।<sup>२</sup> वासुदेव के साथ वृष्ण के संयोग की या सम्भावनाएँ ही सत्य हैं। 'पहिले तो यह कि वृष्ण एक वदिव' अपि थे जिन्होंने अश्वत्थ के अष्टम अण्डल का रचना की। छान्दोग्य में वृष्ण देवकी के पुत्र के रूप में प्राप्त हैं। अश्वत्थ के समय से छान्दोग्य उपनिषद् के समय तक कोई जनश्रुति (वृष्ण-सम्बन्धी) चली आया होगी। इसी के आधार पर प्राचीन काल का समय वासुदेव का जन्म हुआ होगा जब वे देवत्व के पद पर अधिष्ठित हुए होंगे।<sup>३</sup> इसका मत डा० रामकृष्ण वर्मा का है कि जातनों की कथा के भाष्यकार के अनुसार (कृष्णायन) वृष्ण एक गोत्र है, जिसकी वर्णा डा० अण्णारकर ने भी की है। वासुदेव इसी गोत्र के धर्मिय थे, इसीलिए वे वासुदेव वृष्ण कहलाये।<sup>४</sup>

### वासुदेव कथन

विद्वान्मा न महाभारत के नायक वासुदेव वृष्ण के वासुदेव संस्मरण का अनुमान, देवकी पुत्र कथन से किया है।<sup>५</sup> डा० अण्णारकर न जातक के कथनानुसार गोत्र की प्रमाण गाथा में स्पष्ट उद्धाटित किया कि वे गोत्र के कारण मात्र वृष्ण भी कहे जा सकते थे।<sup>६</sup> जो भा हो पर माता में वृष्ण न अपने की वदियाँ में 'वासुदेव कहा है।<sup>७</sup> महाभारत में विष्णु या नारायण के अवतार बनकर वृष्ण पर्याय बन गये हैं।

ऊपर हम कह चुके हैं कि पतञ्जलि पूर्व ही वासुदेव वृष्ण के साथ विष्णु नारायण भी कल्पना हो गई थी। आचार्य हजाराप्रसाद द्विवेदी के मत से 'इसा से कम से कम चार सौ वर्ष पूर्व वासुदेव की पूजा चल पड़ी थी। धीरे धीरे वासुदेव और नारायण को एक ही समझ जाने लगा।<sup>८</sup> बीड़ों के घट जातक' में देवग

१ गुजरात एण्ड इन्ड लिटरेचर प० १२६, १२७

२ इण्डियन एंटीक्वेरी, ३ १६, जरात गाव रामल एग्जिप्टिक सोसायटी

पृ० १७२, स० १६०८

३ पौद्गल प्रमिन्ननग्रन्थ प० २६६

४ हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास, प० ५६८

५ छान्दोग्य — २, १७, ६

६ यजुर्वेदम वेदिक प० १६

७ गीता १० ३७

८ मूर-साहित्य, पृ० १

तथा उपसागर के दो पुत्रों का नाम वामुदेव तथा बलदेव है।<sup>१</sup> जनियो ने वाइसर्वे तीय-  
कर 'नेमिनाय' के साथ कृष्ण का चर्चा की है।<sup>२</sup> फिर भी उनके आधार स्पष्ट नहीं  
हैं। राय चौधरी ने अनेक प्रमाण देने हुए कहा है कि सातवीं शती ई० पू० से लेकर  
ई० पू० तक जिस कृष्ण और उनके धर्म का प्रचार हो चुका था, वे महाभारत के  
नेता वामुदेव कृष्ण ही हैं।<sup>३</sup> अतः विष्टरनिस्त का यह मत निराधार सिद्ध होता है  
कि पाण्डवों के सलाहकार कृष्ण, पौराणिक कृष्ण, गीता के उपदेशक कृष्ण तथा  
गोपाल कृष्ण विभिन्न व्यक्ति रहे हैं।<sup>४</sup> भारतीय विचार धारा पाश्चात्य विद्वानों  
की इस विचारधारा को अमूल्य मानती है। क्योंकि कृष्ण के विभिन्न रूपों का  
समन्वय ही पूर्णवितार कृष्ण को जन्म देता है। 'फिर भी वैदिक कृष्ण, उपनिषद्-  
कृष्ण, महाभारत-कृष्ण, द्वारका-कृष्ण, गीता-कृष्ण और गोकुल-कृष्ण के ऐक्य,  
की समस्या एक स्वतंत्र अन्वेषण की अपेक्षा रखती है।'<sup>५</sup> कृष्ण को अनेक रूपों  
का व्यापक समन्वय मानना ही उचित लगता है। पुराणों में कृष्ण-कथा का भण्डार  
है पर उसमें भी 'रूपनात्मक', 'प्रतीकात्मक', 'रूपवात्मक' और धार्मिक आवरण की  
जड़ बड़ी है। अतः सर्वाधिक प्राचीन हरिवंश पुराण के वामुदेव-कृष्ण ही प्रागे  
विकसित होते रहे। 'हरिवंश का कृष्ण चरित्र ही अनेक पुराणों के कृष्ण चरित्र'  
की पृष्ठभूमि है। यही से उनके 'नायवत्त्व' के ठोस आधार अकुरित होने लगते हैं।

### वामुदेव कृष्ण तथा गोपाल कृष्ण

डा० पुसलकर ने पौराणिक कथाओं की अनेक रूपों में व्याख्या करते हुए  
वामुदेव कृष्ण तथा गोपाल कृष्ण दोनों को एक ही ठहराया है।<sup>६</sup> वामुदेव कृष्ण  
तथा गोपाल कृष्ण का प्राचीन सम्बन्धों के अभाव को देखकर डा० भण्डारकर दोनों  
को एक नहीं मानते हैं।<sup>७</sup> श्री राय चौधरी ने 'जमिनीय ब्राह्मण'<sup>८</sup> में 'गोपाल-  
वाष्णोय' का उल्लेख किया है। उन्होंने गोपाल, गोपेन्द्र, गोविन्द के सम्बन्ध विकास  
का अनुमान 'विष्णुरूपेण' से किया है। विष्णु का अन्तिम पद उस स्थान पर

१ भण्डारकर-कलेक्टेड वर्क्स, पृ० ४

२ पौर्व्वार अभिनन्दन ग्रन्थ पृ० ७०७

३ हिन्दो भाव इन्डियन लिटरेचर-पृ० ४५६-५७, भाग १

४ डा० कपिलदेव मध्ययुगीन साहित्य में अवतारवाद, पृ० १२४

५ डा० बीणापाणि पाण्डे हरिवंश पुराण का सांस्कृतिक विवेचना, पृ० ७०

६ बी ग्लोरी बट वाज मुजर देश, पृ० १२२, भाग १

७ कोल्लिट्ट वक पृ० ४६, भाग ४

८ यही १, ६, १

निवास करता है जहाँ दीडने वाली, सींगो वाली गायें रहती हैं।<sup>१</sup> महाभारत में भी वामुदेव अपने को गोविन्द कहते हैं।<sup>२</sup> गीता में भी गोविन्द शब्द मिलता है।<sup>३</sup>

नारायण पौराणिक ब्राह्मण काल में ही परम देवत्व को प्राप्त हो गये थे। महाभारत काल में सात्वतों ने वामुदेव को परम उपास्य स्वीकार किया। वामुदेव और नारायण इस काल में एक हो गये और उन्हें एक ही देवता माना जाने लगा। आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी का कहना है कि 'यहाँ तक आकर वामुदेव कृष्ण विष्णु और नारायण एक हो चुके थे। पर गोपाल कृष्ण का अर्थ तक इनमें कोई सम्बन्ध नहीं था। इस प्रकार कोई भी देवता का नाम न तो महाभारत के नारायणीय मत में आता है और न पातजल महाभाष्य में। नारायणीय वामुदेव के अवतार का उल्लेख है। इसमें कस वध की भी चर्चा है। पर उसमें गोपाल कृष्ण का नाम नहीं है। गोपाल कृष्ण द्वारा मारे गये राक्षसों का भी कोई उल्लेख नहीं मिलता।'<sup>४</sup>

ऊपर कह चुके हैं कि महाभारत काल तक वामुदेव कृष्ण सासुरत तथा भागवत धर्म में परमदेव स्वीकार कर लिए गए थे। यह वामुदेव मम्भदाय ई० पू० द्वितीय शताब्दी तक स्वतन्त्र अस्तित्व ग्रहण कर चुका था। उत्तरा पथ में ब्राह्मण धर्म के कम काण्ड का बोलवाला था तथा दक्षिण पश्चिम में वामुदेव भक्ति का प्रचार था। अतः उत्तरा पथ में बौद्ध एवं जन धर्मों का प्रचार अधिक था। बौद्ध एवं जन धर्म की बढ़ती हुई ताकतों के समक्ष ब्राह्मण धर्म दुबल पड़ गया था। अतः उसमें नवीनता लाने का प्रयत्न आवश्यक हो गया था। इसी प्रयत्न के कारण गुप्त-काल तक वामुदेव कृष्ण का एक ही माना गया। एक बौद्ध जातक के अनुसार भी वामुदेव का नाम 'कृष्ण' कहा गया है।<sup>५</sup> वैसे गुप्त-काल में 'भागवत धर्म' की प्रतिष्ठा बढ़ गई तथा शकटि राजा चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य और उसके सभी उत्तराधिकारी अपने को 'परम भागवत' कहने में गौरव समझते रहे।<sup>६</sup> इस प्रकार गुप्त काल में विष्णु देवाधिदेव और कृष्ण उनके पूजावतार रूप में ग्रहण किये गये।<sup>७</sup> विद्वान् इसी काल का पुराणों की रचना का काल मानते हैं। पुराणकारी

१ ऋग्वेद १, १५४, ६

२ महाभारत—१७, ३४२, ७०

३ गीता १, ३२ तथा २, ९

४ मूल-साहित्य, पृ० ४

५ वापेस जातक, पृ० १० १४

६ अ-वेङ्कट-कृष्ण-स भाष्य दी गुप्ता एम्पायर।

७ श्री परशुराम चतुर्वेदी—धर्मधर्म, पृ० ४८

द्वारा कृष्ण को विष्णु का पूर्णावतार तथा राम को अष्टावतार मानना तत्कालीन समाज में वासुदेव कृष्ण की श्रेष्ठता ही सिद्ध करता है।<sup>१</sup> वासुदेव एवं कृष्ण के इस एकीकरण के बाद उन्हें विष्णु का आठवाँ अवतार मान लिया गया तथा विष्णु के साथ लक्ष्मी की कल्पना के अनुसार ही कृष्ण के साथ राधा की कल्पना भी करनी पड़ी। राधा की कल्पना पर भी वष्णुवध घम का ही हाथ मानना चाहिए। यही से राधा की कल्पना ने भक्ति मता में अपार रूप ले लिया।

कृष्ण तथा विष्णु की एकता के बीज विष्णु पुराण की 'गोवधन कथा' में भी मिलते हैं। यहाँ कृष्ण गोप जनता में 'इन्द्र-पूजा' महोत्सव का विरोध करते हैं तथा गोवधन पूजा करवाते हैं। गोवधन ही गाँवा की जीविका का साधन था इन्द्र पूजा नहीं। साथ ही इन्द्र का पशु चराकर जीवन-यापन करने वाले गोपों से काँह सम्बन्ध नहीं था। 'निश्चय ही कथा में अन्तर्निहित सरण कृष्ण द्वारा गोवधन पवत का उठाया जाना न होकर कृष्ण द्वारा आभीर जाति में प्रचलित विश्वासों का खण्डन एवं उनके वास्तविक घम का निरूपण है। कृष्ण इन्द्र युद्ध तथा उसमें इन्द्र का पराजित होकर कृष्ण की 'उपेन्द्र' की उपाधि से विभूषित करना, दो विभिन्न सत्त्वनियों के अस्तित्व एवं सधि का प्रभाव है। गत गोवधन की कथा से स्पष्ट प्रतीत होता है कि कृष्ण प्राचीन आभीर जन के नेता थे, जिनकी जीविका गोपालन पर निर्भर थी। ये जन घरो अथवा नगरो में न रहकर गाँवा के साथ जगती एवं मण्डनों में भ्रमण किया करते थे। कृष्ण का ब्रजवासी रूप जो सभी प्राचीन मूर्तियों में अंकित है, इसी तथ्य का समयन करता है। वहीं देवताओं में गोपा की आस्था सूचित करती है कि ये जन भारत के आदिवासियों में से थे।<sup>२</sup>

आभीर जाति के सम्बन्ध पर भी विद्वानों में विवाद है। कुछ विद्वान् आभीरों को विदेशी मानते हैं।<sup>३</sup> डा० भण्डारकर ने भारत में आभीरों का प्रवेश ईसा की प्रथम शती स्वीकार किया है।<sup>४</sup> आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी ने उनके मत का खण्डन करते हुए आभीरों का विदेशी होना नहीं स्वीकार किया है, साथ ही 'गोपाल कृष्ण सम्बन्धी कथाओं का हरिवंश और वायुपुराण में उपलब्ध' होना भी माना है। उन्होंने भागवत पुराण में कस-वध भूतना तथा अथ राक्षसों के वधों की भी बात उठायी है। उनके मत से उनमें कसादि कृष्ण एवं गोपाल

१ डा० २० श० केलकर—मराठी हिंदी कृष्ण काव्य का तुलनात्मक

अध्ययन, पृ० ४६

२ ए० पी० करमरकर—दि रिलीग्यस ग्राव इण्डिया, पृ० १७२

३ यही, पृ० १७२

४ डा० भण्डारकर—वष्णुविजय शक्ति, पृ० ३६



कृष्ण को एक ही समझा गया है। इन ग्रन्थों के बनते समय गोपाल कृष्ण की कथा खूब प्रचलित हो गयी होगी।<sup>१</sup> अतः डा० भण्डारकर का मत निराधार प्रतीत होता है। 'महाभारत' में आभीरा द्वारा कृष्ण-सहित अर्जुन पर आक्रमण का उल्लेख प्राप्त होता है।<sup>२</sup> 'ब्रह्मसूत्र' में आभीरा को दक्षिणवासी कहा गया है।<sup>३</sup> 'पद्मपुराण' में विष्णु आभीरा को मथुरा में अपना आठवाँ अवतार धारण करने के लिए स्वयं अपने मुख से कहते हैं।<sup>४</sup> हरिवंश विष्णु-पुराण आदि उक्त 'यदुवशीय' मानते हैं।

साथ ही ऐसा लगता है कि कृष्ण के अनेक स्वरूपों का समावेश एक कृष्ण में हुआ। प्रारम्भिक पुराणों का अभावतः उत्तर पुराणों में पूर्णवितार हो गया। उपनिषद् महाभारत गीता का कृष्ण गोपाल कृष्ण में मिल गया। हरिवंश तथा पुराणों में प्रारम्भ में गोपाल कृष्ण का स्वरूप दिखलाई देता है। दार्शनिक तथा सलाहकार कृष्ण का व्यक्तित्व इसी 'यदुवशीय' के साथ समन्वित होता गया।<sup>५</sup>

डा० भण्डारकर ने बाल कृष्ण की भक्ति को विदेशों देव कहा है। उनके मत से सर्वप्रथम पश्चिम की भ्रमणशील जातियाँ इस सृष्टि को अपने साथ उत्तर-पश्चिम भारत में लायीं। डा० भण्डारकर के अनुसार यह आभीर जाति ही अपने साथ ब्राह्मण देवता को अपने साथ लायी जिसे भारतीयों ने अपनी भाषा-प्रवृत्ति से कृष्ण बना लिया।<sup>६</sup> आज इस मत पर बड़ा विचार है जिसका निष्कर्ष 'म' बा' में करेंगे। पण्डित हम 'आभीर जाति के विचार खूब ही अपनायेंगे।

भारतीय विद्वानों ने इन सब तथ्यों का निष्कर्ष दिया है कि आभीर विदेशी नहीं थे। मेगस्थनीज ने (सन् ४८० पू०) मथुरा में आभीरों का राज्य का उल्लेख किया है तथा बामुत्तन एवं कृष्ण का चर्चा का है। ये मत भी आभीरों की प्राधान्यता कृष्ण को सात्वत श्रुतियों का व्यापकता होना सिद्ध करता है तथा बामुत्तन कृष्ण तथा बामुत्तन कृष्ण दार्शनिक धर्मिता सांख्यिक और गामाजिन धरान्त पर एक हो गए। अतः दोनों का एक मानना ही भारतीय साहित्य का एकता का आधार बन गया है।

१ डा० हजारीप्रसाद द्विवेदी—मूल साहित्य पृ० ४

२ महाभारत—अध्याय ७

३ ब्रह्मसूत्र—१४।११।१८

४ पद्मपुराण—सर्ग १३।१८

५ धामनी का गाना पद्य—हरिवंश पुराण का मातृनिर्ग

६ डा० भण्डारकर—वैयर्थ्य निश्चय पृ० ३३।३८

## कृष्ण और क्राइस्ट का विवाद व्यूह

कुछ विद्वानों ने जो भी इस देश में मिश्रता है उसके प्रेरणा स्रोत पाश्चात्य में रोजना ही अपना ध्येय बना लिया है तथा वे अनेक अनुमानों को संगठित करने के पश्चात् देशों देवता उस्तु या सत्कृति को विदेशी मानने में ही अपना गौरव समझते हैं। ऐसे ही विद्वानों ने कृष्ण कथा का ईसासमीह की कथा का रूपांतर माना तथा 'कृष्ण' को 'क्राइस्ट' सिद्ध करने की वांछिश की है। इन विद्वानों में मण्णारकर<sup>१</sup> केनेडी<sup>२</sup> ग्रियसन तथा बेवर के नाम उल्लेख्य हैं। उन्होंने सीरिया के ईसाइयों की कथा का 'चाइल्ड गाड विद एन अनोन फादर' अपना आधार बनाया है। जैसे कस देवकी की सन्तान का वध कर देता था वसी हा कथाओं का साम्य खोजा है। लेकिन भारतवर्ष में ईसाई धर्म के आगमन से पूर्व ही बाल कृष्ण की कथा प्रचलित थी, इसके ठोस प्रमाण मिलते हैं। मदीर की शिल्पकला से कृष्ण-लीला का सकेत मिलता है। सीरिया का प्रसिद्ध 'नलक जैन' मानना है कि आर्मीनिया देश में ईसा पूर्व तीसरी शताब्दी में कृष्ण कथा प्रचलित थी, मंदिर मूर्तियाँ थी, जो ईसाइयों ने बाद में तोड़ डाली हैं। अतः क्राइस्ट पर कृष्ण का प्रभाव ही पड़ा होगा यही मानना चाहिए।

एम० एस० रामस्वामी अय्यर का मत है कि फिलिस्तीन को भारतीयों ने बसाया, बनाया। उन्होंने एक बहुत आतिथ्यकारी मत दुनिया के सामने रखा है कि ईसासमीह तमिल के निवासी हैं।<sup>३</sup> दूसरी ओर कुमार स्वामी 'आभीर' शब्द को द्रविड़ कहते हैं तथा उनका अर्थ 'गोपाल' घोषित करते हैं। पर केनेडी ने सत्य को भुलाने के लिए इन्हें 'मीथियन' कहा है। इस मत का खण्डन आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी से प्रबलता से किया है। 'कारण यह है कि साग का सारा अनुमान एकमात्र आभीर शब्द पर अवलम्बित है जिसे किसी एक विद्वान ने द्रविड़ शब्द बताया है। मगर यह बात भी हो, तो भी यह कैसे माना जा सकता है कि कृष्ण क्राइस्ट के रूप हैं। यह तो मानी हुई बात है कि ईसा का जन्म एशिया के देश और जाति में हुआ था। क्या यह बात सम्भव नहीं कि ईसा की जन्म कथा इन्हीं सीथियन आभीरों के बाल देवता की जन्म कथा का अनुकरण हो? क्या ससार की ये जातियों की धर्म

१ कृष्णविजय शक्ति, पृ० ३८ ३८

२ ज० रा० ए० सोसायटी—'कृष्ण, क्राइस्ट और गूजर' (सन १९०७)

३ ज० रा० ए० सोसायटी—'कृष्णजमाष्टमी', सेल जि० ३४

४ गिरीश कुमार मिश्र—दि विजय आथ इण्डिया, प० १७४

५ एम० एस० रामस्वामी अय्यर—एथासल जास कृष्णव नानम—लीटर—३-२  
१९४१ ईसाहावाद।

कथाओं का प्रभाव भारतवर्ष की धार्मिक कथाओं पर ही पड़ता है ईसाइयों पर नहीं ? क्या ईसायत के जन्म के पूर्व ये आभीर और इनके बाल देवता थे ही नहीं ? क्या सामान्य भूल से ईसा तथा कृष्ण के विकास की पर्याप्त बात सोची ही नहीं जा सकता ? अतः कृष्ण की त्राइस्ट का रूप मानना आज निराधार सिद्ध हो गया है।

बाल कल्याण के साथ माता देवकी का उनके जन्मोत्सव पर पूजा भी त्राइस्ट का प्रभाव घोषित की गई है। वेबर ने इसाई धर्म की कल्पना मडोना एण्ड दि चाइल्ड को देवकी स्तन-पान कल्पना में मिसाना चाहा है।<sup>२</sup> वेबर का मत सवथा दूषित है भारतीय साहित्य में मा की गोद में खेलते, दूध पीते शिशु की कल्पना के अनेक उदाहरण मिलते हैं जो बहुत प्राचीन हैं। राम ही रामायण में माँ की गोद में लेटे हुए हैं।<sup>३</sup> 'छादोग्य' में देवकी पुत्र' तथा पुराणों में इसके अनगिनत उदाहरण मिलते हैं, जिनके गिनान की आवश्यकता प्रतीत नहीं होती। इस प्रकार कल्याण-सम्बन्धी कल्पनाएँ भारतीय आधार पर ही टिकी हैं किसी भी पारश्चात्य विचार पर नहीं। वासुदेव कल्याण, नारायण, विष्णु की कल्पनाएँ ही गोपाल-कल्याण तथा परवर्ती काल में राधा कल्याण में विवर्धित हुईं तथा भारतीय सम्प्रदायों ने उनमें बहुत अधिक विस्तार और विकास किया।

### विष्णु की कथाओं का कल्याण पर प्रभाव

विष्णु की वेदों में इन्द्र का सहायक पद मिलते हुए भी उन्हें परम तेजस्वी तथा आदित्य रूप में ग्रहण किया गया है। उपनिषद् काल में विष्णु का महत्त्व बहुत बढ़ गया तथा वे इन्द्र से भी महान होकर परमधाम के अधिपति घोषित किए तथा जगत नियन्ता के रूप में उनकी कल्पना की गई।<sup>४</sup> इन्द्र के समस्त विशेषण पाँछे से विष्णु के साथ जोड़ दिए गए।<sup>५</sup> वष्णव धर्म में विष्णु की अपराजयता का शयनाल किया तथा सभी देवता विष्णु के भण्डे की नीचे एकत्र हो गए। इही विष्णु में 'नारायण' मिल गया। महाभारत में उस प्राचीन देवता कहा गया है। इन्द्र परम्परा विजया विष्णु ब्रह्म परम्परा में सर्वोत्तम अग्रता पर का प्राप्त हुए। परवर्ती काल में विष्णु तथा नारायण मिला गया जिसका विवर्धन हम पाँछे की पंछा में कर चुके हैं।

१ मूल साहित्य—पृ११

२ इण्डियन एन्थ्रोपॉलॉजी पृ० २१

३ मैकडून—साहित्यिक लिटरेचर पृ० ३०७

४ डा० दि आर्य समाज—राधा-वत्सल सम्प्रदाय सिद्धांत और साहित्य, पृ० ६

५ बी० ए० गोस्वामी—महिन त्रोट इन एनेष्ट इण्डिया पृ० १०१

‘विष्णु’ के इस विस्तार में ‘शिव’ भी समाप्त आते हैं। बहुत बड़े परिवर्तनों के बाद ‘शिव-युद्ध’ पर ‘विष्णु’ आती है। शिव-पूजक अधिकतर असुर ही हैं तथा शिव के साथ अपार भयानक कल्पनाओं का बोझ मिलता है, दूसरी ओर विष्णु के साथ कोमल से कोमल मधुर कल्पना को स्थान मिला। अतः अनाय (शिव) देवता तथा आय (विष्णु) देवता का दीर्घातीत ऐतिहासिक संघर्ष मिलता है। रावण का समस्त देवताओं पर आतंक ‘शिव विजय’ का प्रतीक है। शिव तथा विष्णु के मध्य भयंकर युद्ध हुआ तथा ब्रह्मा ने मध्यस्थता की तथा दोनों को समान मानकर उनका समन्वय कराया। शिव भक्त परगुणम तथा रावण का विरोध भी ऐसा ही है। शक्र अजुन युद्ध भी यही सबैत करता है। इस प्रकार शिव तथा विष्णु का भी युद्ध बहुत बला तथा वे पिछड़ गये और ‘विष्णु’ का प्राधान्य रहा। इस प्रकार ‘ब्रह्मा, विष्णु, महेश त्रिदेव’ का समन्वय भी भारतीय समझौतावादी दृष्टि का ही परिणाम है।

‘विष्णु’ नारायण रूप में मिलकर वासुदेव कृष्ण तथा गोपाल कृष्ण में कैसे रूपांतरित होते गये इसे स्पष्ट करने के लिए प्राचीन साहित्य पर पुन विचार करना पड़ेगा। क्योंकि यह परिवर्तन हजारों वर्षों में हुए हैं तथा उनके पीछे सामाजिक आर्थिक, राजनीतिक तथा सांस्कृतिक कारण भी दिये हुए हैं। डा० सत्येन्द्र ने इन कारणों की छानबीन करने के उपरान्त अपना मत ‘शिव भागवत’ की बर्चा के बाद स्थिर किया है कि ‘नारायण, सात्यत, और शवा के संगम से नारायण हरि, वासुदेव, भगवद् पर्यायवाची हो गये और इनसे अभिप्रत या विष्णु। किन्तु वासुदेव सकल का ब्रह्म तो मानव समूह का ब्रह्म था, जो नागवण, हरि, विष्णु की भाँति देवता मात्र नहीं थे मनुष्या की भाँति शरीरधारी थे। इधर भारत में आभीरा अथवा अहीरो का प्राधान्य हो उठा। ये आभीर उत्तर से पश्चिम और पूर्व से पश्चिम तक फैले हुए हैं।

इनका नाम तमिल भाषा में आभीर है जिसमें ‘आ’ का अर्थ गाय है। आभीर अथवा अहीर तमिल शब्द आभीर में गोप खाला का पर्याय है। अहीर को ब्रज में खाला भी कहा जाता है। ये गोप खाल आदि कृष्ण के पूजक हैं। कृष्ण इनका नेता या इसी प्रकार कृष्ण के साथ गाय और गापी का घनिष्ठ सम्बन्ध है। आभीरी के प्राबल्य के समय और बर्दिक कमकाण्ड अथवा यम विधान के अस्तित्व के समय, उस व्यवस्था के विरोधी मत उन्नत हुए और क्योंकि उनकी भूमि प्रायः समान थी, अतः वे परस्पर मिल गये। इस प्रकार वासुदेव ही कृष्ण हो गये।<sup>१</sup>

१ डा० सत्येन्द्र—मध्ययुगीन हिंदी साहित्य का लोक साहित्यिक अध्ययन



का मधुर रूप ही मध्ययुगीन साहित्य में प्रधान तथा वीर रूप भी रूप से ही मिलता है।

कृष्ण में प्रेम की काम रूपासक्ति भी विष्णु से ही प्रभावित लगती है। विष्णु तथा कृष्ण के एकीकरण के पन्थस्वरूप विष्णु की काम लीलाओं का कृष्ण पर आरोपण किया गया सा प्रतीत होता है।<sup>१</sup> बल्कि साहित्य में विष्णु के काम परक उल्लेखों का अभाव नहीं है। बंदो का 'शिपिविष्ट'<sup>२</sup> शब्द भाषा विज्ञान की दृष्टि से 'गुरु के परिवर्तनशील शिष्य' का अर्थ देता है। यह लिंग विकसित तथा सकृषित हाता रहता है।<sup>३</sup> इसी प्रकार आठ त्रिया में अगुणारोपण त्रिया की भी विद्वानों ने लिंग का ही प्रतीक स्वीकार किया है।<sup>४</sup> तत्तरीय की एक कथा में विष्णु भूमाता में प्रवेश करते हैं।<sup>५</sup> यह प्रवेश त्रिया भी काम का सकेत मानी जा सकती है। इसी संहिता में विष्णु की काम क्रीड़ा वाली अर्थ शब्द भी मिलते हैं।<sup>६</sup> भार० एन० वाणिकर के मत में अथर्ववेद में वर्णित स्तुत नितम्बिनी देवी से विष्णु का काम सम्बन्ध बहुत स्पष्ट है।<sup>७</sup> 'शांखायन-महा-भूत' के अनुसार 'विष्णु मोनिकल्पयतु' मन्त्र की ध्वनि से भी वे गर्भ रक्षण देवता हैं। अथर्ववेद में उन्हें वीर-रक्षण मानकर उनका सम्बन्ध काम त्रियाओं से जोड़ा गया है।<sup>८</sup> 'विष्णु सहस्रनाम' में विष्णु पौरुषहीन इन्द्र को वीर-वर्द्धनकारी औपधि देते हैं जिससे इन्द्र पुनः वीरत्व को प्राप्त होते हैं।<sup>९</sup> 'पद्मपुराण' में विष्णु का व्याभिचारी रूप भी मिलता है, जहाँ वे तपस्वी रूप धारण कर जल घर की पत्नी व दत्ता का सतीत्व हरण करते हैं।<sup>१०</sup> 'देवी भागवत' की कथा में विष्णु शलचूड़ का रूप धारण करते हैं तथा उसकी पत्नी तुलसी के पातिव्रत धर्म का नष्ट करते हैं।<sup>११</sup> इस प्रकार विष्णु की इन विशेषताओं को कृष्ण पर आरोपित कर उनका 'रमिया' रूप का बीज डाला गया प्रतीत होता है।

१ डा० र० डा० केलकर—मराठी—हिंदी कृष्ण-काव्य का तुलनात्मक अध्ययन पृ० ५२

२ ऋग्वेद ८ ११ ७

३ भार० एन० वाणिकर—विष्णु इन वेदाज, पृ० १०८

४ वही, पृ० १०८

५ तत्तरीय संहिता ६ २४, २

६ वही—६, २४ २

७ विष्णु इन वेदाज पृ० १०८

८ वही, पृ० १०६

९ वही।

१० पद्मपुराण

११ देवी भागवत स० ८, अ० २४

उपास्य हुआ।<sup>१</sup> यही भाव दश लोक-नायक के रूप में साहित्य में प्रतिष्ठित हो गया।

### अवतारवाद

इस कल्पना ने भगवान को लीलावतारी रूप में प्रतिष्ठित किया। प्रत्येक युग में लोक धर्म की स्थापना के लिए अग्नि शक्ति अवतार धारण करता रहता है। वृष्ण का अवतारी रूप लीला विभू इसी पर आधारित है। ऐतिहासिक वृष्ण अपनी लीला के लिए ही सभी चण्डारी सभी राजनीतिक सभी रसिकेश्वर आदि रूपों को ग्रहण करते रहे हैं। पुराणों ने अवतारवाद को जिनमें विष्णु, हरिवंश तथा भागवत-पुराण प्रमुख हैं विशेष महत्त्व से प्रस्तुत किया है। रामायण तथा महाभारत अथवा महाकाव्य नायकों के अवतारी विकास में ही कम क्षेत्र का सौंदर्य का अन्त एव दिव्य प्रसार उदघाटित किया है। महान पुरुष अथवा महामानव में दिव्यत्व, लोकोत्तरत्व तथा क्षत्रियत्व की भावना के योग में लीला ब्रह्म का चिन्मय शक्ति का द्वार खोल दिया। महामानव में शील, शक्ति एवं सौन्दर्य ने एक तवीन मूर्ति को जन्म दिया जिसे भागवत लीला कहा गया। भागवत काल में अवतारवाद का सिद्धांत का भी अधिक व्यापक, वैज्ञानिक और शास्त्रीय बनाने की प्रवृत्ति लक्षित होती है।<sup>२</sup> मानवीकरण के विकास क्रम में पूरे पुरुष की कल्पना की गई, जिसका शरीर में अखिल सृष्टि को समाहित किया गया। इस प्रकार कालांतर में एक ऐसे विराट पुरुष (ऐथोपोसेंट्रिक मन) की सज्जना की गई जो ईश्वर की स्थूल अभिव्यक्ति का प्रतीक बना। विराट ब्रह्म, गीता में आदिदेव पुरातन पुरुष कहा गया है।<sup>३</sup> सारथ्य दशन ने प्रकृति पुरुष का उद्भव, विकास विलसात हुए उसे युगल रूप में ब्रह्माण्ड नियन्ता बना दिया। भागवत के अनुसार ब्रह्म में सृष्टि इच्छा उत्पन्न हुई तथा उसने महात्तम रूप पुरुष रूप ले लिया। यही कारण कि है मध्ययुग में विष्णु, नागयण, यामुदेव, गोपाल वृष्ण परमब्रह्म हो गए। भागवत की यही परम्परा मध्ययुग के साहित्य में प्राप्त होती है। वृष्ण संप्रदायो ने कृष्ण के नायकत्व का विकास अनेक रूपों में किया। विकासक्रम में यही पुराण पुरुष—पुराण प्रतीक बनकर पूर्णवितार बन गया। इसी में अश्व बना, लीला न्यूह गुण, रस अग्नि रूप बन गए। वृष्ण का साक्षात् नायक, युगल नायक तथा रस-नायक के रूप में मध्ययुगीन साहित्य में अत्यन्त विरासत हुआ है।

१ डा० हजारीप्रसाद द्विवेदी—सुर साहित्य पृ० २१

२ डा० पतिलदेव शास्त्री—मध्ययुगीन साहित्य में अवतारवाद, पृ० ३१६

३ गीता—१० १२

सांस्कृतिक नायक कृष्ण की सबसे बड़ी विशेषता रही है कि उनमें व्यक्ति-चेतना, समाज-चेतना, इतिहास, जनश्रुति, जातीय, धार्मिक, सांस्कृतिक चेतना युगानुक्रम रूप चेतना, साधना, उपासना सामाज्य नायक-नायिका चेतना आदि सब कुछ मिलता रहा तथा वे माध्यम रूप में विस्तार ही प्राप्त करते गये हैं। इसी कारण से कृष्ण में भारतीय गाहस्थ, कृषि देवता तथा सांस्कृतिक जीवन की चरम परिणति है। राम में व्यक्तिगत गाहस्थ तथा भर्यादा का रूप खिला तथा कृष्ण में समष्टि रजनकारी स्वकीया परकीया के प्रेम का अवाध, असीम विस्तार हुआ। साथ ही प्रतिनिध्या स्वरूप, कृष्ण में ब्रह्म पौरुहित्य भोगवाद की चरम-सीमा पर, युगानुक्रम पहुँच गया जिसका रूप जयदेव, विद्यापति तथा सूरदास में स्पष्ट भक्त उठा है। कृष्ण ऐसे ही अवतार प्रतीक हैं जो युगांतरकारी परिवर्तन, परिवर्द्धन की भावना से सम्बद्ध हैं। साथ ही वे सांस्कृतिक खीर ही नहीं प्रतिमान पुरुषोत्तम भी बना दिए गए।

दशरथ तथा अवतार के अद्भुत रहस्य में कृष्ण 'पूर्णवितार' है। 'कृष्णस्तु भगवान् स्वयम्' में भी उनसे साक्षात् ग्रहण होने की ध्वनि है। भगवद्गीता के 'अज्ञेय' पुरुष में कलाओं का पूर्ण विकास है। उनका अवतारी रूप धरा पर प्रेम के माध्यम से मानवत्व का प्रतिष्ठा के लिए हुआ था। 'अवतः सौम्यं प्रपन्नः सवस्वः समभक्तरः, धार्मिकः क्षामः धर्मरक्षकः समभक्तरः दाशनिः' गीता के प्रवक्ता समभक्तर, राजनैतिक नीति के पारंगत समभक्तर, ऐतिहासिक देशोद्धारक समभक्तर और गोपेक्षक गोपाल समभक्तर समय-समय पर आपका स्मरण करते हैं।<sup>१</sup> तथा वे परिस्थिति के अनुकूल अवतार धारण करते रहते हैं। साथ ही कृष्ण के माध्य 'अवतारवाद' ने अत्यधिक दिव्यता तथा भक्तिवाद का जन्म लिया।

भारत ऐसे धर्मप्राण देश में कृष्णवर्धन धर्म अपनी विशेषताओं के लिए प्रख्यात है। यह धर्म समाज्य सामाज्य के साथ एक विराट् उदारता का प्रतीक है। इस धर्म का उपजीव्य ग्रन्थ—श्रीमद्भगवद्गीता—आज भी भारतीय साहित्य में जीवन्त शक्ति का सदेव दं रहता है। ललित कलाओं पर इस धर्म का प्रभाव गुप्तकाल से ही दृष्टा जा सकता है। ज्ञेयशास्त्री विष्णु की मूर्तियाँ उसका प्रमाण हैं। मध्ययुगीन

१ डा० बलदेव उपाध्याय—भारतीय दर्शन पृ० ३२६

२ भागवत पुराण—१३

३ पोद्दार अभिनन्दन ग्रन्थ—श्रीकृष्णवितार पर धार्मिक दृष्टि, पृ० ६३०, ३१



चित्रकला पर कृष्ण का एकछत्र राज्य है। उनके बिना मूर्तिवार का कला माना सोदय की अभिव्यक्ति में अधूरी रह जाती है। अतः यहाँ वह सतित कला का नायकत्व करते हैं। अनुभूत तथा अभिव्यक्ति के सभी चमत्कार उनमें रस रूप में व्याप्त हैं। आचार्य बलदेव उपाध्याय ने कृष्णवध में विजय राधा पर देशी विदेशी प्रभावों का वर्णन विस्तार से किया है।<sup>१</sup> अतः उनकी पुनरावृत्ति यहाँ अपेक्षित नहीं प्रतीत होती।

कृष्ण के सोवरज्य रूप का इस धर्म में अवाध विस्तार किया गया है। मानव की कोमल रागात्मिका वृत्तियाँ की अभिव्यक्ति में कृष्ण की सखी राधा वतनाम तथा समथ हाता है। कृष्णवध में उत्कृष्ट प्रभाव से भारतीय साहित्य सौन्दर्य तथा माधुर्य का उत्स है, जीवन का कामल तथा सतित भावनामा का अक्षय स्रोत है, जीवन सतिता को सरस भाग पर प्रवाहित करने वाला मानवरोर है।<sup>२</sup> भगवत धर्म का उपास्य वासुदेव कृष्ण पाञ्चरात्र या सात्त्विक सम्प्रदाय के मेन स अधिन समझ हा गया। पुराणों ने भगवान के प्रति पूरा समर्पण होने का आह्वान किया तथा वह भक्तिपारा में सम्पूर्ण रूप से स्वाकार कर लिया गया।

वर्णव देवता कृष्ण का नवीन उत्थान दक्षिण भारत के धातवार भक्तों गायत्री आचार्यों तथा महन्तों ने किया। प्रसिद्ध है कि शारङ्ग धातवार भक्ता ने नवीन जीवन् की दृष्टि का हा अपनाया जिसमें परम्परा की बल मिला तथा सिद्धान्त का पुष्ट पोषण भा हुआ।<sup>३</sup> न भक्ता में नवगत तथा जनता के बीच गिट समान स्थापित हा का प्रथम प्रयास हुआ और परवर्ती बान मेध हा प्रयास कृष्ण के नायकत्व से सम्बन्धित भक्ति-सम्प्रदाय का साहित्य में प्रकट हुए। रामधारी मित्र दिनकर ने 'गाता और नागन तथा गाता और रामानुज के बीच का बड़ा' धातवार भक्ता का गाता है तथा भक्ति प्रवक्तृ के अर्थ भागवत पुराण ने मातार 'तमि

- १ अगरीर आचार्यवध धर्म की संज्ञा की मूर्ती बनाने का है। यह सागर का नायकत्व बना सम्पूर्ण धर्मों में अगरीर विनिष्ट रूपान्तर है।  
यति में धर्म हिन्दू धर्मागों की उपासना प्रवर्तित है जिनमें भगवान् विष्णु की भक्ति विधि मूर्तव रगती है।—आ० धर्म उपाध्याय, भाष्य सम्प्रदाय पृ० ३१८

- २ आ० धर्म उपाध्याय—भाष्य सम्प्रदाय पृ० ३१

- ३ दे० रामधारी मित्र दिनकर—सम्बन्धित का बार आचार्य (सोमना अध्याय),

प्रबन्धम 'स्वीकार किया है। लेकिन इस मत का दाव यह है कि भागवत पुराण को प्रसिद्ध परम्परा के प्रति खेपक न सजगता नहीं ध्यक्न की है। अतः भागवत पुराण को ही कृष्ण भक्ति आन्दोलन का मूल उत्स मानना चाहिए। साथ ही समस्त वैष्णव सम्प्रदायों के परमभूषण कृष्ण ही विशेष सद्गो म मिलते हैं। रामानुजाचार्य की वष्णव-दृष्टि का विस्तार हुआ तथा चार सम्प्रदायों में कृष्ण का स्वरूप भिन्न भिन्न रूप से प्रतिष्ठित हुआ।

### भागवत सम्प्रदाय का योग

इस सम्प्रदाय में समन्वय, समपण प्रधान हो गया। कृष्ण के नायकत्व में इस सम्प्रदाय का अपार योगदान है। वेदों का विष्णु, पुराणों का कृष्ण। इस धर्म में एकाकार हो गया। विष्णु नारायण वासुदेव कृष्ण गोपाल कृष्ण का उपासक भागवत धर्म लीलावतारी ब्रह्म में पूर्णत्व खोजने लगा। अथ धर्मों का प्रभाव अपने में समेट कर विष्णु का भक्तिपरक रूप इसमें बहुत व्यापक हो गया। भागवत-सम्प्रदाय के समुल्लेख (नायक) को उस समय बहुत धक्का लगा, जब शंकराचार्य का निगुण सिद्धान्त मायावाद के रूप में जीव तथा ब्रह्म के अद्वैत का लेकर उपस्थित हुआ। समुल्लेख के स्थान पर निगुण, निराकार का योग, ज्ञान, तपस्या तथा चिन्तन का वृत्ता मिल गया। कृष्ण का अवतारी रूप छिपने लगा तथा निगुण ब्रह्म का प्रभाव बढ़ने लगा। ज्ञान योग से भक्ति योग की पराजय हुई। लेकिन शंकर का निगुण ब्रह्म चिन्तनात्मक धरातल पर प्रतिष्ठित हान के कारण जन धरातल को स्पष्ट न कर सका। उसमें लीलात्व की कमी होने से जीवन का सारस्य एवं सौन्दर्य नहीं था। रूप-हीन ब्रह्म, रूप-लोभी मानव को आकृष्ट नहीं कर सका। साथ ही लीला-हीन होने पर उसकी सामाजिक तथा व्यक्तिगत उपयोगिता भी समाप्त होने लगी। ऐसे में दक्षिण भारत के कृष्ण भक्ति आन्दोलन ने महत्त्वपूर्ण भाग यह किया कि कृष्ण के मधुर तथा मोहनरूप की पुनः प्रतिष्ठा ने जन मानव को आकृष्ट कर लिया। अलवार भक्तों के साथ कृष्ण का रूप मुखर हो गया तथा सामाजिक एवं सांस्कृतिक धरातल पर उनकी उत्तरोत्तर बढ़ने लगी। दार्शनिक सिद्धांतवाद न ग्यारहवीं सदी में उन्हें नया रूप मिला। वष्णव-नायक कृष्ण के माधव चतुःसम्प्रदाय की दृष्टि का समावेश हो गया। इन चतुःसम्प्रदायों में उनका ब्रह्मत्व स्थापित किया गया। डा० विजयेन्द्र स्नातक के मत से आधुनिक युग में जो चार सम्प्रदाय प्रचलित हैं उन के प्रवक्ता श्री, ब्रह्म, रुद्र और सनकादि चार देवता माने जाते हैं। ये चारों देवता सम्प्रदाय सत्स्थापन के निमित्त सभी धराधाम पर अवतीर्ण हुए और उन्होंने अपने किसी विशिष्ट सिद्धान्त का प्रतिपादन कर अपने नाम से सम्प्रदाय प्रवर्तित किया। ऐसा कोई प्रमाण न होने पर भी धार्मिक विश्वास में परम्परानुमादित यह बात चली आ रही है अतः इसे पुराण

कोटि म स्थान मिली सगा है।<sup>१</sup> दा चार सम्प्रदायों में कृष्ण का प्रति विशेष दृष्टिकोण पाया है। भा. उक्त सतिष्ण चर्चा यहाँ समाप्त है।

श्री सम्प्रदाय—इस सम्प्रदाय के प्रतिष्ठाया रामानुजाचार्य हैं। प्रायः रामानुजाचार्य को भी इसी में समाविष्ट किया जाता है। डा० गिरधर स्नातक जी ने रामानुजाचार्य के सिद्धान्त तथा रामानुजाचार्य सम्प्रदाय में पावन व सरेत दिए हैं। प्रायः ही दोनों का सम्मेलन 'रामानुजाचार्य' से स्थापित किया है।<sup>२</sup> साथ ही दोनों सम्प्रदायों में 'विशिष्टाद्वैत' सिद्धान्त ही मान्य है। जो ब्रह्म समार व मूल में है, वह चित्त अव्यक्त का समन्वित रूप है।<sup>३</sup> इसका ही जगत का कारण भा है तथा वाय भा। वामुन के पाँच रूप इसमें द्रष्टव्य हैं। (१) परम ब्रह्म नारायण (२) चतुर्भुज जिसमें वामाशुदेव, शङ्खपण प्रचुम्न और अनिरुद्ध के रूप में प्रकट होता है (३) विभर—जिसमें अवतारों के रूप में प्रकट होते हैं, (४) धर्मार्थमिनि इसमें गरुड हृदय में निवास करत है तथा योगियों द्वारा दत्ते जा सकते हैं (५) प्रतिभा (अवतार) रामानुज के अनुसार भक्ति, उपनिषद् में वर्णित उपासना का रूप है।<sup>४</sup> इस सम्प्रदाय में राम की उपासना का जयनाद है। यहाँ कृष्ण एक अवतार मान लियाई दते हैं।

माध्य तथा गौडीय सम्प्रदाय—गौडीय ब्रह्मण समाज में कृष्ण का स्थान परम उपास्य के रूप में है। वे विष्णु या ब्रह्म के अवतार न होकर स्वयं भगवान हैं—

स्वयं भगवान् कृष्ण कृष्ण परतत्त्व ।

पूणजान पूरणन्द परम महत्त्व ॥<sup>५</sup>

वे अनन्त वस्तुओं के अनन्त अवतारों के शीर अनन्त ब्रह्माण्डों के आधार हैं। यही प्रजेन्द्र प्रजनन हैं। सर्वशक्तिमान् सबरस पूण, सर्वेश्वरशाली तथा सच्चिदानन्द हैं। ये प्रजेन्द्रकुमार वज्र में गोलोक सहित निवास करते हैं। ये कृष्ण ज्ञान-योग, भक्तियोग तथा कम योग से वश में हो जाते हैं। चतुर्भुज परमात्मा को

१ रामावतलम् सम्प्रदाय सिद्धान्त और साहित्य, पृ० ३७

२ यही, पृ० ४२

३ भा० बलदेव उपाध्याय—भागवत धर्म, पृ० २६१

४ डा० सरोजिनी कुलधेठ—हिन्दी साहित्य में कृष्ण, पृ० ३६

५ धर्मय चर्चा० आदिसौता, परि० २, पृ० ११

## कृष्ण के नायकत्व का स्वरूप विवास

भी कृष्ण का एक अंश मानते हैं।<sup>१</sup> कृष्ण की अनंत शक्तियाँ हैं। इनमें चिच्छक्ति, मायाशक्ति और जीव शक्ति तीन प्रधान हैं। इन्हें ही अंतरंग, बहिरंग तथा तटस्थ शक्ति भी कहा जाता है। स्वयंप्रकाश कृष्ण द्वार में प्रकट होते हैं। कृष्ण के प्रभाव विलास सक्थण, वासुदेव प्रद्युम्न और अनिरुद्ध हैं। सृजन के लिए पुरुषावतार होता है। गुणावतार ब्रह्मा, विष्णु एवं शिव तीन हैं। साक्षात् रसमय भगवान की सभी लीलाया में नरलीला सर्वश्रेष्ठ है। वे चारा युगों में गुप्त, रक्त, कृष्ण और पीतवर्ण धारण कर अवतार लेते हैं।

मध्वाचार्य का द्वैतवाद ब्रह्म को सगुण तथा सविशेष मानता है। जब जीव सूक्ष्म तथा परमात्मा का सेवन है। विष्णु स्वतन्त्र तत्त्व है तथा जीव और जगत् अस्वतन्त्र हैं। भेद को सत्य मानकर मायावाद का नकार दिया। ध्यानयोग के बिना कुछ भी सम्भव नहीं है।

इस प्रकार दोनों सम्प्रदायों में पाथक्य बहुत है। हा, गौडिय सम्प्रदाय ने कृष्ण के रसेश्वर रूप का विस्तार किया जिसका कृष्ण भक्ति काय पर बहुत प्रभाव पड़ा है।

वैष्णव सम्प्रदाय—इसी सम्प्रदाय में विष्णुस्वामी-सम्प्रदाय को स्थान दिया जाता है। डा० दीनदयाल गुप्त ने महाराष्ट्र का भागवत धर्म, जो पीछे ॥ बारकरी सम्प्रदाय के नाम से प्रसिद्ध हुआ, विष्णुस्वामी के मत का ही रूपांतर स्वीकार किया है।<sup>२</sup> डा० गुप्त ने एक जनश्रुति के आधार पर यह निष्कर्ष दिया कि इन्होंने कृष्ण के बाल रूप की मूर्ति की स्थापना की। नवी ज्ञानि में आविर्भूत यह सम्प्रदाय तरङ्गवा सदी में सत गौरीश्वर द्वारा स्वरूप को प्राप्त होता है। कृष्ण ही उपास्य नायक हैं किन्तु राधा के स्थान पर रुक्मिणी का महत्त्व है।<sup>३</sup> वष्णुव सहजिया भी इसमें योगदान करते रहें हैं।

विष्णुस्वामी सम्प्रदाय में ईश्वर का प्रधान अवतार नरसिंह है। इन का कोई विशिष्ट दशन नहीं है। उसका दार्शनिक आधार भी वल्लभाचार्य के शुद्धाद्वैतवाद पर आधारित है। अतः वल्लभ सम्प्रदाय में इस पर विस्तार से विचार करेंगे।

शुद्धाद्वैतवाद तथा वल्लभाचार्य—इन्होंने विजयनगर के राजा कृष्णदेव राय की सभा में नास्तिकों को परास्त किया तथा शंकर के मायावाद का खण्डन किया। अपने सिद्धान्त के निर्माण में इन्होंने सगुणवाद की प्रतिष्ठा की है। 'अणु भाष्य'

१ डा० रत्नकुमारी—१६वीं शती के हिंदी और बंगाली वष्णु कवि, पृ० १६०

२ अष्टछाप और वल्लभ सम्प्रदाय, पृ० ४२

३ एस० बी० दाण्डेकर—बारकरी सम्प्रदाय का इतिहास, पृ० २१

पूर्व मीमांसा भाष्य, तत्त्वदीप तिब्बत, भुवोधिनी पाण्ड्यप्रतन आदि ग्रन्थों के द्वारा अपने मत की पुष्टि की है। इन्होंने शबर के 'अद्वैत' से अपने सिद्धान्त की भिन्नता दिग्गम के लिए ही 'अद्वैत' से पूर्व 'गुह्य' शब्द का प्रयोग किया है। अद्वैत में माया से युक्त ब्रह्म जगत् का कारण है किन्तु गुह्यब्रह्म में ब्रह्म माया से रहित जगत् का कारण है।

सच्चिदानन्दमय शरीरधारी कृष्ण ही पूरा परम ब्रह्म है। अनन्त शक्तियों से सब की आत्मा में रमण करते हैं, अतः वे आत्माराम हैं।<sup>१</sup> पुरुषोत्तम रूप में वे अणुतानन्द तथा परमानन्द रूप हैं। अनन्त शक्तियों से अलङ्कृत के 'बहुश्रुत' में भक्तों के हिताय ताव लीला करते हैं। लीला के लिए उनकी ममता परिवार तथा लीला मेवन अवतीर्य हाते हैं। त्रिगुण सच्चिदानन्द ब्रह्म ही अविकृत भाव से जगत् रूप में परिणत हो जाता है। इसे ही 'अविकृत परिणामवाद' का नाम दिया गया है। इन्होंने जगत् को सत्य तथा मर्यादा ससार को असत्य माना है। आचार्य ने पुष्टि-भाग, प्रवाह भाग तथा मर्यादा भाग की चर्चा की है जिसमें भक्ति भाग के लिए पुष्टि-भाग ही सर्वश्रेष्ठ है। लीला पुरण अपनी सीता के हेतु इस सृष्टि का सज्जन करता है। 'भनुग्रह' भी उनकी लीला का रूप ही है। सभी को पूरा निष्ठा के साथ कृष्ण का भजन करना चाहिए।

सबदा सबभावन भजनीयो ब्रजाधिप

स्वस्याममेव धर्मो ही नाय क्वापि वदाचन ॥२॥

भक्तों को तनुजा, वित्तजा तथा मानसी सेवा का विधान है। प्रेम की तीन अवस्था—मह, आसक्ति तथा म्यसन को हस्ता के लिए महत्व दिया है।

इन्होंने 'बालगीपात कृष्ण' की पूजा को अधुण्य भाव से अपनाया तथा अपने शिष्यों में उसका प्रसार किया। पाछे से विठ्ठलनाथ जी ने युगत किशोर उपासना का विधान भी चला दिया। नवधा भक्ति के सभी तत्त्व कृष्ण को लेकर प्रतिष्ठित किए गए। इस प्रकार उस सिद्धान्त ने कृष्ण का लीला पुरण या लीला नायक के रूप में धमक कर दिया। साहित्य में इसी रूप का बोलवाला रहा है। नायक कृष्ण में 'बाल कृष्ण' की प्रतिष्ठा हुई तथा श्रीमती का जान देखा यहा पर रूप-परिवर्तन के साथ 'बाल कृष्ण' के रूप में उपास्य बन गया। अष्टादश के कवियों ने तथा विशेष रूप से सूरदास ने बाल रूप के लालित्य का शायरान रूप प्रदान कर दिया।

१ भा० बलदेव उपाध्याय—भागवत सम्प्रदाय, पृ० ३७८

२ धनु इतोकी—इतोक १ (भागवत सम्प्रदाय से उद्धृत), पृ० ३८६

धीरे धीरे कृष्ण का दासनिष्ठ रूप विलुप्त हो गया तथा लीलाधर रूप ही प्रधान हो गया। अतः बल्लभाचार्य न ही लीला नायक के रूप में कृष्ण की सच्ची प्रतिष्ठा की है। कृष्ण के इस रूप में लोक हृदय डूब गया अतः वे परम आराध्य रसिकों का रसेश्वर, सामाजिकों का सौन्दर्य देव तथा गोपियों का लीला-ब्रह्म सब कुछ इनमें प्राप्त हो गया।

**निम्बार्क-सम्प्रदाय**—इस सम्प्रदाय का संस्थापक निम्बार्काचार्य हैं। उनके समय के विषय में विद्वान् कुछ भी निश्चय नहीं कर सके हैं। निम्बार्क जीव तथा ब्रह्म के सम्बन्ध को लेकर द्वैताद्वैत के प्रतिपादक हैं। इनके मत से परमात्मा एक भी है तथा भक्त भी, लेकिन ब्रह्म रूप में एक है। इन्होंने सगुण सत्त्व, साकार ब्रह्म की कल्पना की है। वह प्राकृत दोषों से पूर्ण उन्मुक्त तथा कल्याण-गुणों का अक्षय कोश है। परमात्मा की ही परब्रह्म, नारायण पुरुषोत्तम, पूर्ण पुरुष तथा भगवान् कृष्ण आदि सजाएँ हैं। भक्तों के लिए भगवान् के पदार्गविदा की भजना के अतिरिक्त कोई साधन ही नहीं है। कृष्ण ही पूर्णब्रह्म है, जिनका ब्रह्मना ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव करते हैं। उनकी अपरम्पार शक्तियाँ हैं। भक्ति से ही कृष्ण प्राप्त होते हैं—जिनमें शांत, सत्य, दास्य, वात्सल्य तथा उज्ज्वल रूपा का विधान है। सर्वेश्वर कृष्ण हैं तथा राधा उनकी आह्लादिनी शक्ति है। उनका स्वरूप कृष्ण के अनुकूल ही है। विष्णु तथा सत्त्व की कल्पना ही इस सम्प्रदाय में कृष्ण तथा राधा की कल्पना के रूप में प्राप्त होती है। यह सिद्धान्त पूर्ण प्रेम पर आधारित अनुरागात्मिका परा भक्ति का सर्वश्रेष्ठ रूप है।

**अन्य सम्प्रदाय**—इसके अतिरिक्त अन्य सम्प्रदायों में भी कृष्ण को स्थान मिला है। सत्त्व सम्प्रदाय हरिदासी सम्प्रदाय आदि। राधा-वल्लभ सम्प्रदाय में राधा का प्राधान्य है लेकिन कृष्ण का प्रेम रूप वहाँ भी विद्यमान है। यहाँ कृष्ण के अन्य सम्प्रदायों को इतना ही विवेचन समीचीन लगा अतः अन्य सम्प्रदायों का संकेत मात्र दिया गया है। इस प्रकार कृष्ण के सम्प्रदाय-वाद की दृष्टि से चार रूप स्पष्ट हैं—

- (१) कृष्ण के पूर्ण ब्रह्मत्व की स्थापना तथा भक्ति रूप में असीम अभिव्यक्ति।
- (२) कृष्ण का लीला विहारी रसिनेश्वर रूप की स्थापना।
- (३) धर्म रक्षण की स्थापना तथा लीलाओं में वार धर्म नायक का रूप।
- (४) कृष्ण के साथ राधा की अटूट कल्पना—निम्बार्क मत का प्रभाव। यहाँ कृष्ण का रस-रूप राधा के बिना फीका है।

## सम्प्रदाय-वाद में कृष्ण का स्वरूप विकास

कृष्ण ने सम्बोधित मूल सम्प्रदायों के संक्षिप्त परिचय के पश्चात् उनका सम्प्रदायों में स्वस्थ विकास दर्शाना यहाँ निता न अपेक्षित है। श्रुतियों का परम तत्त्व बल्लभ सम्प्रदाय में परब्रह्म माना गया है। बकु ठीवामी होने पर वे पुरुषोत्तम तथा लोक के प्रकट रूप में श्रीकृष्ण हैं। पुराणा का परमात्मा यही पुष्टिमात्र का स्वरूप कृष्ण है। इस प्रकार आनन्द रूप कृष्ण का यहाँ सत्ता है। कुहनेत्र में प्रेरणा देने वाले, दुष्टों का नाश करने वाले कृष्ण यहाँ धर्मवीर-नायक हैं तथा बाल रूप में फीका करने वाले अवतारी नन्द यशोदा के लाडले मासुन चोर, भाले गोपी बल्लभ रसिया कृष्ण यहाँ पूरा रसावतार नायक हैं। इस नायक की आत्मादिनी शक्ति ही राधा है।

निम्बाव-सम्प्रदाय में भी रस रूप कृष्ण ही का रूप है। वासुदेव, सत्पण, प्रद्युम्न तथा अनिरुद्ध उहाँ के स्वस्थ अर्थ रूप हैं। उनकी भवधा-भक्ति का यहाँ प्रसार अधिक है। कृष्ण की अष्टयामी मानसी सेवा को यहाँ प्रधानता मिली है। चैतन्य तथा गौडीय सम्प्रदायों में भी कृष्ण सर्वश्रेष्ठ तथा सर्वेश्वर हैं। वे समस्त मायताओं के प्राण बल्लभ हैं। राधा पूरा शक्ति तथा कृष्ण पूरा शक्तिमान। यहाँ प्रकृति-पुरुष उनकी राधा कृष्ण में साय दशन से युक्त बल्लभता प्रधान है। कृष्ण का चरम प्रेमी रूप परमेश्वर भाव में व्यक्त है तथा कृष्ण ही अन्तिम साधना के पूरा तत्व हैं। हरिदासा सम्प्रदाय के कृष्ण माधव व गवध के माधुर्य भाव में विभोर हैं तथा उन्हें बाललाला न मधुरा तथा दारिका से काँदी प्रयोजन नहीं है।

राधा-बल्लभ-सम्प्रदाय में कृष्ण राधा के कारण स्मरणीय हैं। राधा, सम्प्रदाय की इष्ट हैं। ये कृष्ण प्रमस्वरूपा राधा में इतने निमग्न हैं कि विगुह प्रेम दर्श का स्वरूप उपासक की नॉनि तजर रह गये हैं। बिहारा कृष्ण राधा को मानने में मत्त रहता है तथा काम-भाग्य उनका रति का धर्मधाम है। धर्म धामा सम्प्रदाय, बशी आदि के ललित सम्प्रदाय तथा मारा-सम्प्रदाय में कृष्ण की चर्चा भी डा० सराजिनो कुन्धल ने उनका स्वरूप के लिए अपेक्षित मानी है।<sup>१</sup> किन्तु यह कृष्ण का स्वरूप भी परम्परा का पुनरावर्ति है जम कृष्ण भी नया नया जोग गया है। वल्लभ-सम्प्रदाय के परब्रह्म कृष्ण का रूप कृष्ण, शक्ति के आलम्बन कृष्ण, गोपी बल्लभ कृष्ण ही अनुकरण में पुनरावर्ति पाते रहते हैं। निम्बाव के गोपा-कृष्ण तथा राधा-वल्लभ कृष्ण के अन्तारा स्वरूप का गान है तथा कृष्ण का रसात्मक

स्वरूप यहाँ पूर्णता से अभिव्यक्त हुआ है। रामेश्वर कृष्ण की कल्पना भी आनन्द के परमदेव का ही रूप मान है। नित्य विहारी, भक्त कामनापूरक, सर्वेश्वर कृष्ण ही यहाँ सत्ता है। पुराण पुरस्कृत कृष्ण का दार्शनिक ब्रह्मत्व, यहाँ लीला रूप में यवन है।

### भारतीय ललित कलाओं में कृष्ण

मध्ययुग से पूर्व ही भारतीय ललित-कलाओं में कृष्ण का अवन उनके लोक व्यापक नायकत्व का प्रमाण देता है। डा० वासुदेव शरण अग्रवाल का मत है कि ईसा की पहली-दूसरी शताब्दियों में शक और कुषाणवंशी राजाओं का राज्य मथुरा में स्थापित हुआ, पर उससे भारतीय कला अभिभूत होने के स्थान पर और भी अधिक तजस्वी बनकर प्रकट हुई। भारतीय कला के इस प्रभावशाली अस्तित्व के कारण ही आगतुक शय यवन सस्कृति और कला की गुणमयी विशेषताएँ उसमें पच गयीं। ईरानी यूनानी भारतीय—इन तीनों सस्कृतियों और कलाओं के मिलन की पहली निवेणी मथुरा की समन्वय प्रधान भूमि में प्रकट हुई।<sup>१</sup> साथ ही ब्राह्मण-धर्म, बौद्ध धर्म तथा जैन धर्म का भी समन्वय प्रधान रूप वहाँ पनपता रहा। प्रथम अथवा दूसरी सदी के एक मूर्तिफलक में वासुदेव कृष्ण को सूप में रस कर यमुना पार करते हुए चित्रित है। ग्वालियर के विन्ध्यवासिनी देवी के मन्दिर में भी कृष्ण जीवन के आरम्भिक भाग चित्रित है।<sup>२</sup> भाण्डीर नामक स्थान में प्राप्त चित्रों में कालिय मदन, गोत्रधन धारण तथा धेनुवन्ध के चित्र मिले हैं। खजुराहो स्थित मन्दिर में कृष्ण कथा के अनेक चित्र अंकित हैं।<sup>३</sup> ग्यारहवीं बारहवीं शताब्दी में बने कम्बोडियों का प्रसिद्ध वशाख मन्दिर ओकारावद में महाभारत युद्ध के वीर-नृत्ता कृष्ण के अनेक लीला दृश्य अंकित हैं। इस प्रकार चित्रकला तथा मूर्तिकला में इनका प्राचीन लावण्यापी प्रसार मिलता है।

भारतीय संगीतकला में भी कृष्ण का अपार योग है। उनके इस नायक प्रभाव के कारण ही गवया यदि रागों का अभ्यास करता है तो कृष्ण ही उसकी वाणी में आता है। शायद ही कोई अभंगा गायक होगा जिसने कृष्ण के पद न गाय हों। हाली के गीता में वे अमर रसिया हैं। स्त्रियों की जीभ पर गीत आता ही उनका नाम आता है। आलवार गायक भक्तों की परम्परा के साथ देखें या जयदेव का 'गीत गाविन्द परम्परा में विद्यापति के पद हों अथवा अष्टछाप के कवियों के

१ पोद्दार अभिनन्दन ग्रन्थ, पृ० ७८३

२ आकलाजिक्ल सर्वे रिपोर्ट—१९३१, पृ० १०३४

३ ललित कला, संख्या ७, पृ० ८२



पद, गीरा न तमय गा हा या रससा के सर्वथा कृष्ण वहाँ मधुर से मधुर हैं।

काव्य-कला में कृष्ण

नायक ललित-नलाभा। ता सर्वाधिक सूक्ष्म रूप प्रस्तुत करता है। काव्य में कृष्ण के रूप अपार हैं। ससृजत प्राकृत तथा अप्रगण भाषामा न साहित्य में उन पर पर्याप्त साहित्य उपलब्ध है। ससृजत न कृष्ण तथा वा नाटका, महाकाव्या तथा मुक्तक श्लोको के माध्यम से बहुत मधुर रूप दिया। प्राकृत कथामा न उनके रम-नायक रूप का जम कर प्रसार किया। अप्रगण में उनका रूप जन-मुलभ हाता हुआ भी प्रादेशिकता में चला गया। तेरहवीं तथा चौदहवीं शताब्दी तक उन पर बहुत लिखा जा चुका था। मराठी, गुजराती, बंगला, ब्रजबुलि में वे सभी कविमा के परम गान बन गये थे। हेमचन्द्र, जयवल्लभ तथा जयदेव न नवीन साहित्य प्रदान किया तथा कृष्ण का 'सप्तशती' रूप भी नवीन जीवन बोध में ढल गया। उनके नायकत्व में जीवन का माधुर्य पक्ष समाहित हो गया तथा लोक-परम्परा का इतना उदात्त प्रेम नामक कोर भी भारतीय साहित्य में बसा दृष्टिगोचर नहीं हुआ।

सबप्रथम अश्वघोष ने प्रथम शताब्दी ई० में 'बुद्धचरित' नामक अपने काव्य में कृष्ण-लीला पर संकेत दिए हैं। तब में उनकी गाथाएँ प्रचलित रही होगी और वे प्रेमी-नायक के रूप में लोक-व्याप्ति प्राप्त कर चुके होंगे। प्रथम शताब्दी ई० में मुक्तक गाथाकारों ने अपनी दृष्टि इधर भी लोक-श्रुतियाँ पर केंद्रित की तथा हालसातवाहन ने गाहासप्तसई नाम से प्राकृत गाथाओं को संप्रहीत किया। इन मुक्तक गाथाओं में शृगार का बभ्रवमुक्त रूप भी मिलता है। गोपियों के समक्ष यगोधरा के कहने पर कि कृष्ण अब भी बालक हैं, गोपियाँ 'यग्यपरक' हास्य में मग्न होती हैं।<sup>१</sup> महा कृष्ण की उन्नत प्रेमकला के शत शत सदाभ प्राप्त हैं। इनमें वे पूर्ण शृगारी नामक के रूप में दृष्टिगोचर होते हैं। यहाँ उनके साथ भक्ति या आध्यात्मिकता की चर्चा नहीं है। बुद्ध पार्थिव धरातल पर रासलीला का विधान है।

दूसरी ओर आलमार भक्तों में कृष्ण का नायकत्व शृगार की पार्थिव भूमि पर न होकर दिव्यत्व की अपार्थिव भूमि पर किया है। इन भक्तों का समय

१ पोद्दार अभिनन्दन ग्रंथ पृ० ७६६

२ बुद्ध चरित—१५

३ गाहासप्तसई—२-१२



## जयदेव का गीत गोविन्द—कृष्ण शृ गारी नायक

बारहवीं शताब्दी में निम्बार्क के शिष्य पीयूषवर्णी जयदेव ने अपने हृदय में उद्गम शृ गार का कृष्ण राधा के माध्यम से ध्यान किया। इन्होंने कृष्ण का स्वरूप ही वर्णित किया। भागवत का धर्मीय कृष्ण 'गीत गोविन्द' में लीला नायक बन गया। जयदेव का शृ गारी दृष्टिकोण कृष्ण का रसेश्वर तथा रमिया बना देता है। हाल की गाथा सज्जन में राधा कृष्ण का प्रेम मिलता है। गापी कृष्ण तथा शिव-मावती के मियुन अभिधान पर भी यही यम-सत्र मिलता है। वृष्णवध में स्त्रीत्व को महत्त्व मिला है तथा एक घाठ पाचरात्र महिलाओं में तात्त्विक प्रभाव भरपूरने लगा था। धीरे धीरे कृष्ण का नीला-मुरूप रूप बन गया। माध ही प्रेम कहानियाँ भी गापिया के नाम से जोड़ी गई। सातवीं तथा नवीं सदी में विरचित भागवत पुराण में कृष्ण का भक्तिपरक रूप प्रतिपादित है। कृष्ण तथा गापियों के आधार पर कृष्णव सम्प्रदाय में देवदासी प्रथा चल पड़ी तथा ग्यारहवीं बारहवीं शताब्दी में यह शृ गार लीला का रूप प्रबल बन गया। 'धोयी' ने अपने 'पञ्चदूत' में कृष्ण मन्दिर की देवदासियों का वर्णन इसी आधार पर किया है। समसामयिक लेखों, शिलालेखों में भी सफ़ा देवदासियों के शारीरिक सौन्दर्य का मुक्त वर्णन है।<sup>१</sup> उनके मत से भी यह देवदासी प्रथा तात्त्विक प्रभाव का सुला प्रकाश है। यह युग राजनयिक तथा सांस्कृतिक विघटन का युग था। धार्मिकता में काम भोग घुम गया था तथा वामाचार का प्रभाव बहुत था। तत्त्वकारी नारी के भोग को उच्छल रूप से अपनाते लगे थे। ऐसे समय में रामानुज मन्वाचार्य तथा निम्बार्क ने भक्ति भाव का महत्त्व स्थापित किया। इस परिस्थितियों में भक्ति तथा शृ गार का मेल अपेक्षित ही था। जयदेव में इसी परिस्थितियों के कारण कृष्ण में शृ गारी रूप पदान तथा भक्ति रूप ग्रहण बन गया है। उन्होंने हरि स्मरण के साथ विलास कथा का कौतूहल से सुनने की चर्चा अपने श्लोक में की है—

यदि हरि स्मरणे सरस मनो यदि विलास विलास कुतूहलम् ।

मधुरवात पदावली शृ शु तदा जयदेव सरस्वताम् ।<sup>२</sup>

इस प्रकार भक्ति तथा शृ गार का कृष्ण में योग समसामयिक परिघेष्ट का परिणाम था। उन्होंने कृष्ण को भगवदलीला गान की परम्परा में भी अपना लिया

१ धी हरिदत्त वेदालकार—भारत का सांस्कृतिक इतिहास, पृ० १००

२ एन० सी० मजूमदार—इतिहास आफ़ बंगाल, पृ० ३५

३ गीत-गोविन्द १३

तथा अपने युगानुकूल शृंगार परम्परा में भी रंग दिया। गोपाल कृष्ण में सम्बोधित कथाओं की चर्चा हम 'हरिवंश पुराण' के सन्दर्भ में कर चुके हैं। यह पुराण भी अपार सौन्दर्य से युक्त तथा कृष्ण तथा गोपिका से सम्बोधित है। इस में पूतना-वध तथा शकटामुरख में उनका दिव्यत्व प्रकट है। कृष्ण में बाल लीला का समावेश आभीरो के दयता का दान रूप है। भागवत में महाभारत में पुराण काल तक के सभी रूप रक्षित हो गये और व पूर्णवितार मान नियम—

एतच्चाथा बला पुंस कृष्णस्तु भगवान् स्वयम् ।<sup>१</sup>

भागवत के रास-ध्वज तत्त्व जयदेव में प्रकट हुए हैं। श्रीमद्भागवत का रास शब्द राम है तथा गीत गोविन्द में 'विहरति हरिर्हि सरस वसन्त'<sup>२</sup> के आधार पर वसन्त रास है। कृष्ण की वस्तु से राग रजित गोपिका को पानिजल धम का उपदेश भागवत में है फिर भी, लेकिन यहाँ कृष्ण रमण बन में तल्लीन हैं, धम की चर्चा भी नहीं करने हैं। गीत गोविन्द का रासासवन कृष्ण अभिसारी कृष्ण रतिगमन करने के पश्चात् भी राधा से पुनः प्रार्थना करता है। भागवत की नामरहित निशिष्ट गोपा ही यहाँ शायद राधा बन गई है। भागवत के रास में सभी गोपिका भाग लेती हैं, लेकिन गीत-गोविन्द के कृष्ण एकांत में राधा के ही साथ प्रेमाभिमार रत हैं। जयदेव नाम स्मरण के बहाने कृष्ण को अलौकिक तत्त्व देने अवश्य रहें हैं किन्तु उद्दाम, अपार मुरत की श्रोत्राया की कल्लोल उन्हें कामी, भोगी, शृंगारी नायक बना देती है। योगेश्वर महा पूण भागेश्वर बन गया है। इस प्रकार भागवत का नियम लीला पुरुष यहाँ पूण विलासी नायक बन पर लौकिक धरातल पर स्थापित है तथा वे लौकिक प्रेमी नायक हैं।

### विद्यापति के कृष्ण

गीत-गोविन्द के शृंगारी नायक कृष्ण का पूण प्रभाव विद्यापति के कृष्ण पर है। जयदेव की यह रचना मध्याशानीन मनावति के इतनी अनुकूल जची कि वह न केवल कृष्णव भक्त वरिया के लिए अनितु शुद्ध शृंगार की दृष्टि से काव्य रचना में प्रवृत्त होन वाला के लिए भी आदर्श बन गई।<sup>३</sup> विद्यापति दरबारी कवि थे, राजा रानी का मनोविनाद करना उनका प्रधान ध्येय था। डा० रामकुमार वर्मा ने विद्यापति के समस्त काव्य का मथन करत हुए यह स्पष्ट घोषणा की है कि उनका भक्त रूप उनकी वासनात्मक कल्पना में छिप गया है। उन के राधा-कृष्ण साधारण स्त्री-पुरुष हैं, उनमें शारीरिक भूय उद्दाम रूप से है। विद्यापति के इस बाह्य ससार में भागवत भजन वहाँ इस वय-मयि में ईश्वर से सधि वहाँ, सद्य

१ श्रीमद्भागवत—१ ३ २८।

२ गीत गोविन्द—१

३ डा० निवासिंह—विद्यापति ठाकुर पृ० १६

स्नाता में ईश्वर से नाता नहीं, और अभितार में भक्ति का सार नहीं। विद्यापति का गसार ही दूसरा है। वहाँ मदय को बिनाए ही बूझन करता है, फूल मिला करने हैं, पर उनमें बाटे नहीं होत। राधा रान भर जाया करती हैं। उनके नया में ही रात समा जानी है। शरीर में मोदय के सिवाय कुछ भी नहीं है। पय हैं, उसमें भी गुलाब है, शया है, उसमें भी गुलाब है, शरीर है, उसमें भी गुलाब। सारा गसार ही गुलाबमय है। उनके ससार में फूल फूलने हैं, बाटो का अस्तित्व ही नहीं है। यौवन शरीर के आनन्द ही उनके आनन्द हैं।<sup>१</sup> हम सौन्दर्य लोक में रहने के कारण ही उन्हें ब्रह्म भण्णर तथा अभिनवजयन्तर भा कहा जाता है। उन्होंने अपनी भावबुना को साहित्यशास्त्र के ढांचे में ढाल कर राधा-कृष्ण के चरित्र को नायक-नायिका भेद का अनुकरणयोग्य जाल बना दिया। विद्यापति के राधा कृष्ण अर्चना के राधा और कृष्ण न रहकर वामशास्त्र के निपुण नायिका और नायक हो गये।<sup>२</sup> हम प्रकार कृष्ण मूर्तिमान यौवन तथा राधा मूर्तिवती वासना युक्त नायिका है। डा० शिवप्रसाद ने हम कृष्ण को 'महाप्राणवान कृष्ण' कहा है।<sup>३</sup> चरणा की अपल गति सद्य स्नात, यौवनोत्तम राधा को प्ले कर कृष्ण अधीर हो जाते हैं। उनके प्राचीन सभी रूप वहाँ सुप्त हो गये हैं तथा व दरवारी राजाओं की भाँति घोर विलासी, काशी तथा रम लातुप हैं। उनमें महत्त्व नहीं कामत्व ही कामत्व है। विद्यापति ने कृष्ण को एकांगी रूप लिया, उनका पौन्यत्व इनके कृष्ण में नहीं है। भारतीय साधना ने शील, शक्ति एवं सौन्दर्य तीनों की समाप्ति दृष्टि को नायक में पान का सदैव प्रयास किया है। लेकिन इस दृष्टि से हम विद्यापति के कृष्ण हताश हो करते हैं, उनमें केवल 'सौन्दर्य' का अति विस्तार है शेष रूप नहीं मिलते हैं।

### सूर के कृष्ण

सूर के कृष्ण, एक अत्यन्त समृद्ध भक्ति धारा के परिणाम है। उन पर उपनिषद्, पुराणों तथा लोक प्रचलित पद्धतियों की छाप अत्यधिक है। उनके काम में महाभारत के कृष्ण वामुदेव कृष्ण, गोपाल कृष्ण, हरि नारायण विष्णु, राम सभी कुछ मिल कर कृष्णमय हो गया है। बलभावाय भक्ति-परम्परा के गण्यमाय नता ये। उन्होंने कृष्ण की उपासना का विधान भक्तों में प्रचारित किया तथा 'दृष्टि

१ डा० रामकुमार वर्मा—हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास पृ० ५०६

२ पोटार अभिनन्दन ग्रन्थ, पृ० २७०

३ डा० शिवप्रसाद सिंह—विद्यापति, पृ० ८६

माय के द्वारा उसका प्रचार किया। सूर ने इस सम्प्रदाय की दृष्टि विशेष को भी अपने कृष्ण में पराजित किया है। वित्त के पदों में वह बल्लभ मत से थोड़े मुक्त रह, वहीं उनका आत्म निवृत्त शक्ति न दास रंग से कृष्ण की आराधना को अपनाया है। जैसे भागवतकार ने कृष्ण के परम पुरुषत्व नारायणत्व तथा ब्रह्मत्व का प्रतिपादन किया है वैसे ही सूर ने उन्हें परम पुरुष, अनन्त अखण्ड, अविनाशी, लीला विहारी रसिकेश्वर, दीनदयाल मुरनायक जनसुखदायक, घटघटवासा, अज अद्वैत, अतयासी, सबसोदयशाली, परम उद्धारक, विष्णु, राम, हरि आदि सब कुछ माना है। वे यशादा की गोदी में बालक, गान्धिनो में मायन चोर, चित्त चोर, रास लीला में रसिक शिरोमणि, राधा तथा अय गोपियों में रति नायक तथा आनन्द विहारी, कुजविहारा हैं। पुष्टि माय के अनुकूल वे नित्य विहारी परमपुरुष हैं। सूर ने जयदेव तथा विद्यापति का भाति कृष्ण का शृंगारी नायक नहीं बनाया, उन्हें लोक-लाला पुरुष का रूप दिया है।

### लोक लीलापुरुष-जननायक

सूर के कृष्ण अवतारी लीलावपुधारा, भक्तउद्धारक असुरमहारक तथा लोक-नेता हैं। वे गोवद्ध न उठाकर इन्द्र को पराजित करते हैं, चक्र सुदशन से सभी का वध करते हैं पापिया का प्राणदण्ड देत हुए अघाते नहीं हैं। फिर भी पूरा पुरुष बाल देव मापाल कृष्ण ही उनके सबस्व हैं। वे अनेक प्रकार के बणन करते हैं भक्त का प्रलाप भलापने हैं, लेकिन अपने इष्टदेव का विराट तथा मधुर दिव्यता को कभी भी दृष्टि से शोभल नहा होन देने हैं। सूर के लीला धाम म-गोलोक में कृष्ण के प्रतिरिक्त अय पुरुष का अस्तित्व हा नहीं है। सूर के कृष्ण सम्प्रदायो के उपास्य इष्ट हैं प्रेम के अपार सागर तथा सौन्दर्य के सबस्व हैं। सूर ने कृष्ण को पूरा मानव तथा पूर-अह दानो ही रूपा में देखा है।

गो. हरदशालाल शर्मा ने ठीक कहा है कि 'परन्तु सूरदास जी का मुख्य उद्देश्य भागवतकार की भांति कृष्ण के चरित्र की अलौकिकता चित्रित करना नहीं है। उन्होंने तो कृष्ण के मानव रूप को ही प्रधानता दी है। यही कारण है कि सूर के चित्रण में कृष्ण के अनि प्राकृत और लाकृतीन तथा मानवीय रूप की दो घाराएँ समानान्तर रूप से बहती हुई चलती हैं'। कृष्ण में शृंगार, भक्ति तथा माधुर्य की घनिष्टता है तथा वे हजारों नायिकाओं से एक एक रात विहार करने के कारण जार-नायक की ओर भी झुके हैं। फिर सूर का काव्य या नायक भागवत का अनुवाद या नवल

नहीं है। सूर ने उत्तम कथोचित्य का ध्यान में रखकर परिवर्तन करा लिए हैं। अपने गोपियों से उनका प्रेम होना भी उनके प्रेम का सामानांतरण ही है। कोई भी भक्त जब कभी उन्हें हृदय से पुरारता है, वे प्रवट हात हैं तथा उद्धारक रूप में आते हैं। सूर ने कृष्ण के बाल रूप को बाल-सौन्दर्य की दिव्यता गोरी भाव के प्रेम की अपार रम्यता तथा रक्षक रूप को भामासुर सखटामुर-तजस्विता से युक्त किया है। 'जो कृष्ण एक दिन बोली-बन्द तोड़त हैं, वही दूसरे दिन धम का धम भी करते हैं। अपने समय के सबसे बड़े पराक्रमी और नृशम नपति का नाश क्या साधारण काम था? यही नहीं जो कृष्ण आज गाविया के साथ बिनोत्पूल श्रीदाए कर रहे हैं वे ही दल वहाँ चल जायेंगे जहाँ स निवट होन हुए भी वे उनके पास कभी नहीं आयेंगे।' सूर के कृष्ण का जन्म दिव्य आचरण भलीकरी अवतरित होने पर मायापति हैं, पर भक्तों का माया से मुक्त करते हैं। सूर का प्रतिभा कृष्ण के चरित्र को अनुकरणीय बनाने की नहीं थी उनकी सच्ची प्रतिभा तो निगुण ब्रह्म के निरवसम्भ रूप को छोड़ कर समुल साकार के प्रति पूरा समर्पित होने की थी। श्रीकृष्ण न केवल वाक्य के प्रधान नायक हैं, वरन् कवि के इष्टदेव भी। उनके स्वभाव की यह विशेषता है कि उन्हें जो जिस भाव से भजता है, उसे वे उसी भाव से प्राप्त होते हैं। पलत भक्ति भाव की विविधता के अनुरूप उनका व्यक्तित्व भी उनके रूपों में प्रकट हुआ है। अपने कवि ने इष्टदेव के प्रति दास्य, सख्य, वात्सल्य और माधुर्य भाव की व्यञ्जना की है।<sup>१</sup> अस्तु कवि का कल्पना ने कृष्ण को सौन्दर्य-सागर राधा-वल्लभ गापी वल्लभ भ्रज वल्लभ भक्त वल्लभ बनाकर संवजनवल्लभ जननायक बना दिया है। उनके गुराँ के समस्त संस्कृत भाषायों का नायक 'धीरोत्त गुणावित' बहुत कम है। सूर ने उनके ब्रह्मत्व की लोकव्यापी प्रतिष्ठा की है जिससे वे पूरा अवतारी तथा लोक-नायक बन गये हैं।

सूर ने पौराणिक तथा धार्मिक परम्परा का रूप भी अपने नायक में असंख्य भाव से ग्रहण किया है तथा जयदेव एवं विद्यापति का रति-नायक दृष्टि को भी अपनाया है। उन्होंने राधा-कृष्ण को सामान्य नायिका-नायक का रूप भी दिया तथा प्रकृति-मुरूप सम्बन्ध में दिव्य रूप भी दिया। सूर ने कृष्ण के सर्वांगण रूप का सकेत धारण दिया किन्तु प्रधानता भक्ति प्रधान माधुर्य को हाँ दी है। 'तो इन सारी बातों के पीछे एक व्याकुल उत्सुकता चीत्कार कर उठती है—'छबलें

१ भा० नन्ददुलारे वाजपेयी महाकवि सूरदास, पृ० १२७

२ भा० अजयवर वर्मा-सूरदास, पृ० ३४३

मुरली नकु बजाई' । राविना के बनरस म, गापियो की तगातनी म, पनघट की छेच्छाड मे, दान लोला के मवाल-जवाब म, एक् अनि भीनी भनकार उठा करती है— छबीले मुरली नकु बजाई' । रामनीला की यह आनंद केलि जिसकी तुलना ससार म नहा है, केवल एक् मेरुण्ड के चारा छोर चक्कर लगा रही है । 'छबीले मुरली नकु बजाई' १ इस प्रकार सूर ने सौंदर्य विहारी कृष्ण को सबजन बल्लभ जननायक का रूप दिया है ।

### अष्टछाप में कृष्ण

अष्टछाप के कवियों म सूरदास की जगह हम ऊपर कर चुके हैं । सूरदास ने कृष्ण के समस्त चरित्र को प्रभुत्व किया है । उनका कथाक्रम 'सूरसागर' म मुक्तक प्रवृत्ति का रहा है । प्रबलत्व के साधे मे नायक को रूप मिल सकता था सूरदास की अनिशय माधुर्य पूर्ण दृष्टि ने वसा नहीं किया । अष्टछाप के सभी कवि परमानन्ददास, कृष्णदाम, चतुर्भुजदास, क्षोतम्बामा, गाविन्दस्वामी, कुम्भनदास, नन्ददास आदि सभी का दृष्टिकोण रागात्मक रहा है । अधिकांश कवि उनके माधुर्य रूप की ही भक्ति भाव से अभिप्रेत करते रहे हैं । कृष्ण के प्रेमी तथा प्रेमी-वरसल रूप की सभी ने चर्चा की लेकिन उनका वीतरागव तथा भनासक्ति का रूप जिस आध्यात्मिकता तक पहुँचा, उसे सूर के अनिरिक्त अर्थ कोई भी कवि स्पष्ट न कर सका । सूर ने कृष्ण के अमुर-महारव रूप को अवित्सार दिया, अर्थ कवि केवल एकांगी बने रहे । कृष्ण की राधा उनकी दृष्टि म परमपुरुष तथा परमप्रकृतिरूपा ही बन पाई हैं । नन्ददास के रास पञ्चाध्यायी, गोवधनलीला, सुदामाचरित्र, रत्नमणि मंगल आदि मात्र कृष्णकाव्य के रूप म हैं । अधिकांश म भक्त कवियों का रागात्मक जनगीतो म हा आत्माभिव्यक्ति पा सका है ।

कृष्ण का चरित्र महाकाव्य की समस्त विशेषताओं से युक्त था । वे धीरोत्तम धारनतिष्ठ आदि किसी भी प्रकार के नायक सत्त्व ही हो सकते थे । सांस्कृतिक गौरव के समस्तपक्ष उनम उभारे जा सकते थे । किंतु उन्होंने ऐसा नहा किया तथा आत्मराग का पूर्ण स्वच्छन्द होकर तरंग के क्षण मे पदरूप में दिया है ।

अमर्य कृष्ण—कृष्ण पर मध्ययुग म पत्रिका काव्य वेत्तिवाक्य (चापाहित-वदावनदाम) अष्टछाप, वारहमासा, वारहपडा काव्य, सध्यावाची काव्य लिखा है २ लेकिन सभी म अविश्वस्य प्रेम ही कृष्ण के प्रति है । उनका कोई अर्थ रूप नहीं उभरा गया है ।

१ आ० हजारिप्रसाद द्विवेदी—सूर साहित्य, पृ० १२६

२ हिंदी साहित्य कोश, भाग २, पृ० ९६



**अनुवाद—**भक्तों ने श्रीमद्भागवत, महाभारत तथा गीता के अनुवाद भा लिए। लालचदाम का 'हरिचरित्र' श्रीमद्भागवत का अनुवाद ही है। सबलसिंह चौहान ने 'सम्पूर्ण महाभारत का अनुवाद किया।

इन सभी ने मगल काव्य, अमरगीत वगैरह काव्य अष्टछाप के द्वारा कृष्ण को रस-नायक या शृंगारी नायक के रूप में ही लिया है। कृष्ण से सम्बन्धित सभी सम्प्रदायों में जिनकी चर्चा यहाँ अपेक्षित नहीं है उनके विषय में यही कहा जा सकता है कि उनको सीला माधुय का रूप तथा रसिकेश्वर का रूप ही प्राधान्य जाता रहा है।

मध्ययुग के कृष्ण चित्रकला, मूर्तिकला वास्तुकला संगीतकला तथा काव्यकला सभी ललित कलाओं में अद्भुत रूप से प्राप्त होते हैं। समस्त मध्ययुगीन साहित्य कृष्णमय दिखाई देता है। शास्त्रीय संगीत के नायक रूप में उनका प्रतिष्ठा इतनी रही कि उनको आधार बनाकर राग-रामिनियों का कोश तयार हो गया।

### मुसलमान कवियों के कृष्ण

मुसलमान अपने धर्म में घोर कट्टर होते हुए भी कृष्ण के समक्ष अपनी धर्मा-यता छोड़ बैठे हैं। इस्लाम का नारा 'प्रेम ही ईश्वर है', कृष्ण में पूरा होता है। कबीर तथा जायसी ने राम-रहीम को लेकर यह खार्ई पाटनी चाही थी किन्तु 'कबीर का राम' मुसलमान अपना नहीं सके और जायसी का रहीम हिन्दू नहीं अपना पाये थे। प्रेम-तपित मुसलमान कृष्ण के अपार प्रेम सागर में सहज भाव से डूब गया। अपने मन का समस्त घन इन कवियों ने मुक्त होकर दिया। रसवान ता पथर, पथु सब कुछ उनके प्रेम में दीवाने बन कर ही बनने को तयार हो गये। उनका प्रेम समपूर्ण सम्पूर्ण यत्नित्व का समपूर्ण है। अकबर ऐसा महान सम्राट कृष्ण के माधुय में काव्य सजन करता रहा। जहांगीर ने गोप-कृष्ण का 'अद्भुत गोप रूप बरना' हो जाय कहकर अपना मत उडेल दिया। शाहजहाँ ने अजभाषा में काव्य लिखकर 'पिया तुम बहु नायक' कह प्रेम व्यक्त किया। गायक तानसेन की तान कृष्ण पर हा टिक सकी। रहीम खानखाना कृष्ण रूपी चंद्रमा के चकोर बन कर प्रगट हुए।

प्रेमी कवि रसखान इतने रसमय होते रह कि कृष्ण की लकुटी पर तीनों लोक, पाठ सिद्धि या नवा निधियाँ त्यागन में गव का अनुभव करत रहे। उन्होंने 'छद्मिया भर छाद्य पर नाचने वाले कृष्ण की अपना सब कुछ द दिया, वे इतने तमय हो गये कि कृष्णमय हो गये। भावना का इतना विस्मरण बहुत कम कृष्ण भक्तों में उपलब्ध है। मध्ययुग में ताज कवि, तानतरंग कवि छालम बाधा शेष न भा

कृष्ण पर काव्य सज्जन किया। वल्लभ-सम्प्रदाय के अनेक कवि, कृष्ण पर काव्य मुमलमान होत हुए भी लगातार लिखते रहे हैं।<sup>१</sup>

### निर्गुण धारा में कृष्ण

भारतीय धर्म तथा सौंदर्य भावना का यह नायक कबीर पन्थी तथा जायसी पंथा दोनों ही कवियों में मिलता है। भक्तिकाल के प्रत्येक काव्य पर उनकी छाप नहीं न कही अवश्य मिलती है। कबीर ने कहा 'विष्णु सोई जाको विस्तारा। सोई कृष्ण जिनि कियो ससारा ॥'<sup>२</sup> रैदास, पीपा, घना भी 'हरि' में रमे रहे। सन्त कवि, गुरु गोविंद सिंह ने 'कृष्णवतार' नामक युद्ध-काव्य लिखा, जिसमें उनके वीर नायक-त्व का महत्वपूर्ण प्रतिष्ठा की है।

भारतीय सत्ता के अतिरिक्त विदेशी प्रभाव से फारसी प्रभाव के सूफी कवि इस लावनायक का स्मरण करते रहें हैं। जायसी ने कृष्ण-कथा को बहुत स्मरण किया है।<sup>३</sup>

### रामभक्ति शाखा में कृष्ण

मया पुरुषोत्तम के उपासक कवि तुलसीदास ने 'कृष्णगीतावली' में उनका लोक रजन माधुर्य पक्ष अपना कर अपना राग समर्पित किया है। माखनचोरी, गोपी विरह तथा बालरूप प्रियभाव से सिकन हैं। कृष्ण का नन्दनन्दन तथा गोपाल रूप उन्हें भाया है। तुलसी की गोपिया मर्यादावादी हैं तथा उद्धव की खिल्ली नहीं उड़ाती, मात्र अपना आत्मनिबधन करती हैं।

### लोक गीत तथा कृष्ण

भजन के समस्त लोक-गीतों में कृष्ण ही हैं। उनका लोक-नायक रूप वहाँ ही मधुरतम हो गया है। लोक धुन में कृष्ण लोक-सम बन गया। इन अपार लोकगीतों में भी कृष्ण का 'रसिया रूप' ही प्रमुख रहा।<sup>४</sup> हिंदी का रास-काव्य इसका प्रमाण रूप ही है।<sup>५</sup>

इस प्रकार मध्ययुग का कृष्ण ब्रजलीला, द्वारिकालीला तथा मथुरा लीला का महालीला नायक है। रासलीला का सहारक, मुरलीवादन, राधाप्रेमी, गोपी-वल्लभ,

१ गोदर अभिनन्दन ग्रन्थ

२ सत कबीर, पृ० १५४

३ सेइया कृष्णाहि गरुड अलोभी। कठिन विद्योह जियहि किमि गोपी ॥

जायसी ग्रन्थावली, नाममती खण्ड, दो० १

४ हरिवंश पुराण-नील कंठ टीका, पृ० १९०-९८ (श्री कृष्णदत्त पालीवाल)

५ गोदर अभिनन्दन ग्रन्थ, पृ० ८८१

भास्वनचोर, चित्तचोर, चारचोर, तदनन्दन, राधा कृष्ण विवाह रासलीला अकूर के साथ मथुरा में कृष्ण कुब्जा तथा सुदामा के कृष्ण, वसन्तता गोपी विरह के प्रताप कृष्ण यहाँ मिलते हैं। द्वारिका लीला में रुक्मिणी हरण उद्धारक महारक तथा महाभारत के कृष्ण का रूप भी आया है। कृष्ण चरित्र में मैं इसी ग्रहण मुहूर्त की भूलक हूँ। सौ-सौ विरह जन्म उठाकर द्वारिकाधाम में विश्व जीवन के समुद्र बट पर लोच धम का जयनाद बिया। कृष्ण ने आस मिचीली खेल कर वनला दिया कि देखो, खिलाड़ी ऐसे खेलने हैं, प्रेम में व मोहासका हैं कल कल में निमोही हैं। व निमम ममतालु हैं, वे प्रेम-जोगी हैं।”<sup>१</sup> इस प्रकार कृष्ण समस्त साहित्य का भाव सत्ता के नायक है। कृष्ण काव्य मानवजीवन का भाव योग है, जिसे नित्य योग के कारण दिव्य-नायक या मोक्ष-नायक हो रहता चाहिए।

### ऐतिहासिक कालीन काव्य में कृष्ण सौक्य श्रुतारी नायक

भक्तिकाल, आध्यात्मिक विकास की दृष्टि से धर्म युग है। कृष्ण का जो स्वरूप बर्णन उपनिषद् महावाक्य युग बौद्ध युग शंकर युग में विकसित होता रहा था, उसका पूर्ण विकास पूर्णवितार रूप में भक्तिकाल में हुआ। आरम्भ में ही कृष्ण-भक्ति धारा ने बराबर को दाद नहीं दी प्रणिय मयाना में अपने की बढ़ नहीं दिया। निवृत्ति में प्रवृत्ति या अनस्तति में प्राप्तिकी का दबावरण लेकर कृष्ण का नायकत्व विकसित हुआ। जीवन का सघनपत्रक कठारता से उठा हुआ मन राम की ओर न जाकर कृष्ण की ओर अधिक भुव गया क्योंकि उनमें रागात्मक भाव सत्ता की अपार मानवाय शक्ति रहित था। सन्तो ने समाज में आध्यात्मिकता को जमाने का काम भक्तिवाला में कृष्ण द्वारा पूरा किया। भक्ति आन्दोलन ने मन देह, प्राण धर्म की कृष्ण की चिमन लीला दृष्टि में लगा दिया। निराकारा ग्रह साकारा हो कर मानव रूप धारण कर जा-मातात्कार करने लगा तथा जन तत्काय के धातुर सहारक-भावद नधारक तथा सस्वनि उद्धारक बना। उहाँ मन, देह धर्म प्राण की सभी प्रक्रियाओं की आकषण में बाँध लिया तथा मानव होकर भी नित्य पुरुष पुरुषात्तम बने रह। कृष्ण पर सम्पूर्ण प्रधान आध्यात्मिकता का जो तोर कर रण थड़ाया गया। तबिन साधना का कृष्ण पूजा गजना में टहर नहीं सारा भाव की अन्तर्दृष्टि का दृष्ट पथा नहीं, उसकी बगियाँ रण हा गया और उमन मध्या पर लोचिकता का रण थड़ा दिया।<sup>२</sup>

१ श्री दार्शनिक विवेकी—सचारिली, पृ० १२१३

२ डा० मोरा श्रीदानव—मध्ययुगीन हिंदी कृष्ण भक्तिधारा और

भक्तिकाल में वना कृष्ण का लालित्य मधुराश्रित हो गया तथा मधुराधिपति जीवन की मूल-कामना रति (लिविडो) का प्रतीक हो गया। भक्तिकाल का अपाधिपति प्रेम रीतिकाल में पाधिपति वासना बन गया। रीतिकाल के कवि की भाव, भाषा, शक्ति सब कुछ नायक-नायिका के परिरम्भण चुम्बन, आँख मिचौली, विहार, अभिसार मान, मदन, कटाक्ष आदि में लिपट गयी। सूर का कृष्ण छिपने लगा, विद्यापति का कृष्ण रूप बदल कर रीतिकालीन नायिकाओं में घुस पड़ा। कृष्ण का यह स्वरूप जो अभी तक आध्यात्मिक साधना का पाक था, ताक पर रख दिया गया। यहाँ मानव की पाधिपति रति ने अपाधिपति रति को करारी मात दी। कृष्ण राजा तथा 'रसिया' हो गया। साथ ही राजाओं की समस्त विलासी चेष्टाओं का उन पर आरोपन किया गया। कृष्ण के रूप में रीतिकालीन राजा की मनोवृत्तियाँ आज हम स्पष्ट समझ सकते हैं।<sup>१</sup> कृष्ण का पराजित अध्यात्म, भौतिक शरीर धारण कर दुर्दिल हो उठा, वे बामी, व्यभिचारी, छिछोरे, लम्पट, अवभोगी तथा रति-भोगी हो गये।

नायक सदय युग की सामाजिक, राजनतिक, धार्मिक और साहित्यिक चेतना का प्रतिनिधि रूप होता है। इस दृष्टि से युग की परिस्थितियों का प्रभाव उस पर पड़ना सहज ही है। राजनतिक दृष्टि से १७०० से लेकर १९०० तक का यह काल विहार तथा विलास का काल है। व्यक्तिवादी निरकुश राजतंत्र का यह समय राजा की युग चेतना का नियामक मानकर ही जमा है।<sup>२</sup> फारसी इश्क में रंगा राजा और त्रवार का ममानुपुरी की भनकार से झूमता था। स्फटिक शिलाओं से निर्मित इन महलों का बभ्रव चादनी रात में दूध के फेन की भाँति उबेलित हो उठता है। शीशमहल में लगे हुए अगणित मूल्यवान् द्रव्यों का क्या कहना। उन द्रव्यों में पड़ते हुए राजाओं के प्रतिविम्ब ऐसे दीप्तिमान होते थे मानो कामदेव ने समस्त

- 
- १ बभ्रव तथा विलास का सहज सम्बन्ध है। अतिशय बभ्रव का यह युग अतिशय विलास का भी युग था। मुगल अतः पुरों में हजारों स्त्रियाँ रहती थीं। शिक्षा प्रायः आंगिकाना गजलों, फारसी की अदलील प्रेम-कहानियों आदि की होती थी। 'अमीरों तथा राजाओं के महलों में शृंगारिकता का नग्न नृत्य हो रहा था। सनिक शिबिरों में भी वेश्याओं का जमाव था—मुगल सेना की सहायता के लिए काम देव की बृहत् सेना चला करती थी।

—डा० नगेन्द्र, रीतिकाल की भूमिका, पृ० १२

२ डा० नगेन्द्र रीतिकाल—हिंदी साहित्य का बृहत् इतिहास, पृ० ३

ससार को जीतने के लिए काम-यूह बनाया हा।<sup>१</sup> नतिव दृष्टि से पतित इस काल में शृंगार शारीरिक घरातल पर उतर आया था जिसे डा० नगेन्द्र ने आध्यात्मिक या धर्माचरण के रूप से दूर 'महज आकृष्ट स्त्रापुरण का ऐंद्रियपर' उचित हा माना है।<sup>२</sup> धार्मिकता का पतन हुआ, धर्म की यह विकृति राधा काट सुमिरन का वहानो' भाव बन गई। प्रत्येक स्त्री अपने को राधा तथा प्रत्येक पुरुष अपने को कृष्ण समझने लगा। भगवान का आश्रय लेकर मुक्त भाग चले पड़ा। विहारो, देव, भतिराम घनानंद सभी रीतिमुक्त तथा रीतिसिद्ध कवियों में नायक-नायिकाका का जन्मघट है। लाल तथा गायक नाचाय का शृंगारी साहित्य, फारसी काव्य धारा की इशरामजाजी, वात्स्यायन का काम-सूत्र, विद्यपाति का विलास, समयानुबूल हो नायक-नायिका रस में आ गया। राधा-कृष्ण के चरित्र से पवित्रता जाती रही। झूठो नकाब भक्ति की डाल दी गई।<sup>३</sup> कविता में प्रेम का स्थान वासना ने ले लिया। सभी कवि प्रेमी नहीं रसिक हा थे। वंशज की भा मृगनोचना द्वारा 'बाबा' कहने का कष्ट था तथा बिहारी का जोभा के भार में सुख पैर न धर पाने' की पीड़ा बना रही। राजदरबार का पत्र बिच पदमाकार के जगनविनोद से दल्लिए—

गुलगुली गिलन गलीचा हैं, गुनीजन हैं चान्नी है, चिन है, चिरागा का माला है।  
 कहैं 'पदमाकर' त्यो भजक भिजा है सजी, सेज है सुराज है सुरा है और प्याला है।  
 शिखर के पाला को न यापत बसाला तिहैं जिनके प्रधान ऐतउदित मशाला हैं  
 तान तुक ताला हैं विनोद के रसाला है मुबाला हैं, दुशाला हैं विशाला  
 चिनशाला हैं।

१ डा० बच्चनसिंह—रीतिशालीन कवियों की प्रेम व्यंजना, पृ० १०

२ डा० नगेन्द्र—देव और उनकी कविता।

३ वास्तव में यह भक्ति भी उनकी गंभीरता का ही एक प्रग थी। जीवन की अतिमय रसिरता हो जब में लोग धबरा उठो होंगे तो रामा-कृष्ण का यही अनुराग उनके धर्म और मन को आवासा देता होगा। इस प्रकार रीतिशालीन भक्ति एवं और सामाजिक बच और दूसरी और मानसिक कारण भूमि के रूप में इनकी रसा परती थी। तभी तो यह किसी न किसी तरह उसका प्रचल पकड़े थे। रीतिकाल का कोई कवि भक्ति भावना से हीन नहीं है, हो ही नहीं सकता था, क्योंकि भक्ति उनका लिए एक मनोवैज्ञानिक आनंद्यता थी। भौतिक रस को उपहासा करते हुए भी, उनसे मिलना जरूर मन में इतना नतिव शक्त नहीं था कि भक्ति रस में घनास्था प्रकट करते, या उसका सद्भातिव निषेध करते।

डा० नगेन्द्र—रतिराव्य तो भूषिता, पृ० १८०

इस प्रकार अपार विवास की गूज इस साहित्य में है। ऐसे युग में कृष्ण की दिव्यता नष्ट हो गई वे मानव मात्र रह गये। मानव नामी निकृष्ट, व्यभिचारी रूप देह दिया गया। भर भुवना में वे नयनास वाम क्रीडा की बातें करने लगे। पलक पीक, अजन अघर की रति चोरी में पकड़ जान लगे। बल्लभाचाय का नीला-विहारा दिया कृष्ण यहाँ मनी गना में नायिका विहारी हो गया। कृष्ण के इस नायकत्व में समसामयिक बोध जुड़ा हुआ है। इस प्रकार रीतिवाल में उनकी लौकिक विलासी नायक के रूप में प्रतिष्ठा हुई, उनका पराक्रमी रूप भुला दिया गया। इसे कृष्ण का लौकिक रति-नायक रूप भी कह सकते हैं।

### आधुनिक चेतना तथा कृष्ण का नायकत्व

आधुनिक बाल का आरम्भ जागरण के शस्त्र-नाद से होता है। उनसवीं शताब्दी विश्व इतिहास में सर्वाधिक महत्वपूर्ण है क्योंकि इस युग में राजनीतिक चेतना का स्वरूप बदल गया, धर्म दर्शन में नया परिवर्तन आया। विज्ञान ने बुद्धिवाद की प्रतिष्ठा की। प्राचीन रूढ़ियाँ को ढहाने का प्रयास किया गया। परम्परा से लिपटकर जीने का माह्र मग हुआ और वाक्य में मानव तथा प्रकृति को नवीन रूप में ग्रहण किया गया। भारतवर्ष में आधुनिक काल विदेशी सामन से युद्ध की उद्घाषणा करता हुआ आता है। असफल मुगलों की राज्य-यवस्था से विलासिता का अन्त हो गया। साहित्य शृंगार की कम सुधार की चर्चा अधिक करने लगा। भारत-दु के समय में प्रणत अंग्रेजों का आधिपत्य था। १८५७ की क्रान्ति असफल अवश्य हो गई थी किन्तु भारतीय चेतना में इस पराजय का आक्रोश समाप्त नहीं था। ईसाई धर्म प्रचारक सक्रिय थे जिनसे बचाने का प्रयत्न ग्रहण समाज, आर्य समाज तथा रामकृष्ण मिशन आदि के सुधारक प्रबलता से कर रहे थे।<sup>१</sup> अंग्रेजों के प्रभुत्व का रोकन की राजनीतिक चेतना ने कांग्रेस आन्दोलन का सूत्रपात किया। राष्ट्र एवं राष्ट्रीयता के माध्यम से मानव-मूल्यों में पराधीनता से मुक्त जीवन की चका हा उठी।<sup>२</sup> भारतवर्ष की आत्मा में रमे बाल्मीकि, व्यास, कृष्ण, गीतम, महावीर बगिल, बणादि, तुनसी भूर कवीर मृतप्राय नहीं हुए थे। भारतीय जनता को संश्लेष देने के लिए उनके पास अपार शक्ति थी। पाश्चात्य विचारों का प्रभाव, शासक की विजयी भाषा का प्रभाव पड़ रहा था, उधर लोकनायक कृष्ण

१ डा० रामधारीसिंह दिनकर—संस्कृति के चार अध्याय, पृ० ५८०

२ डा० लक्ष्मीसागर वाष्णव—आधुनिक हिन्दी साहित्य, पृ० ११

रीतिकालीन कवियों की वासना से आशक्त हो गया था। इन सांस्कृतिक नायकों के स्वरूप को नवनिर्मित करने प्रश्न था। जाति को आदश नायक के माध्यम से उबारने का प्रश्न था। सांस्कृतिक नायक ही किसी भी जाति की चेनना के आधार स्तम्भ होते हैं। उनके उदात्त नाय ही जागरण लाते हैं।<sup>१</sup> इसी दृष्टि से राम तथा कृष्ण को पुन साहित्य में रूप बदल कर लाया गया। कृष्ण पर लगा बलक हटाना आवश्यक था। अतः उनका रूप परिवर्तन भी आवश्यक था। भक्तियुगीन अवतारवाद में बुद्धिजीवी अविश्वासी हो गया था। 'आय समाज अवतारवाद' के विरुद्ध झुंडा उठाया हुए था। इनका फल साहित्य पर भी पड़ा और भयोद्यासिंह उपाध्याय और रामचरित उपाध्याय ने कृष्ण तथा राम को यथासम्भव मानव चरित्र के रूप में चित्रित किया।<sup>२</sup> इस प्रकार कृष्ण से रीतिकालीन शृंगारिकता का बलक हटाया गया और उन्हें लाकसुधारक के रूप में प्राण प्रतिष्ठा दी गई।

भक्ति-काव्य के काव्य-व्यूह में सम्प्रदायवाद तथा संकुचित कमकाण्ड घुम पड़ा था, परिणाम स्वरूप शृंगार के विलासपरक परिवेश में भागवत धर्म का कृष्ण सामान्य नायक के रूप में दृष्टिगत हुआ। आधुनिक श्रजी के कवियों ने मुक्तक परम्परा में कृष्ण के 'रसिया' रूप को बलभ सम्प्रदाय का नाम लेकर जीवित रखा है लेकिन जगन्नाथदास रत्नाकर ने कृष्ण को अश्लील शृंगारिकता से निवाल कर पुन भक्ति भावना में ढाल दिया। कृष्ण यहाँ हल्के प्रेमाश्रय नहीं उदात्तभाव के प्रेमी हैं। वियोगी हरि ने ना कृष्ण की भक्तिपरक ब्रह्म भवन प्रेम शतरंज में प्रस्तुत की। हरिप्रिय जी ने युग की आवश्यकता का पहिचान कर कृष्ण का रूप बदल दिया। उन्हें आदश जननायक के रूप में चित्रित किया। 'प्रियप्रवास' के कृष्ण भक्तिवादी श्रीकृष्ण की भाँति ब्रीडा को पुनः प्रिय अतीतिव सालामारी अतीतिव पुरुष ही हैं, उनका चरित्र एक आदर्श जन-नायक का चरित्र है। इन्द्र का दमन कर, अमुरा का सहार कर तथा अपनी अपौरुषेय शक्ति से नहीं बल्कि अपनी बुद्धिमत्ता और नीतिबुद्धालता ॥ सोन जीवन के युग टाँ घनर बल्याणवारा नाय कर के अपने युग प्रबलक और नाक नेरन नरा का रूप प्रमाणित करने हैं।<sup>३</sup> गति काल के कृष्ण को यहाँ पौरुष गौरव-मरिमा नाक मयाग प्रमाण कर उन्हें आधुनिकता में नया नायक-वोध मित गया।

१ डा० श्रीकृष्णलाल—आधुनिक हिन्दी साहित्य का विकास, पृ० ४६

२ यही, पृ० ४६

३ स० डा० पीरेड बमा—हिन्दी साहित्य कोष, पृ० ९६, भाग २

द्वारिकाप्रसाद मिश्र ने 'कृष्णायन' में कृष्ण को नवीन युग के सन्दर्भ में राजनीतिक नेता बना दिया। अटूट जीवट के कृष्ण वीर राजनीति के योद्धा बन गए। यह कृष्ण का रूप गीता के कृष्ण का आधुनिक अवतारी संस्करण ही है। कृष्ण महा स्वतंत्रता संग्राम की राजनीतिक से प्रभावित हैं। मिश्र जी स्वयं स्वतंत्रता-संग्राम के राजनीतिक-योद्धा हैं, अतः उन्होंने कृष्ण को सच्चे अर्थों में लोकनायक बना कर प्रस्तुत किया है। कृष्ण पर प्रियप्रवाम तथा 'कृष्णायन' के रूप में प्रबोध-परम्परा चल पड़ी तथा महाकाव्य के धीरोदात्त नायक का आसन उन्हें राम की कोटि में लाने लगा। मणिलाशरण गुप्त जी ने 'द्वार' 'जयद्रथवध', विरहिणा बजाटना (अनुवाद) नामक काव्या की रचना की लेकिन कोई नवीन उदभावना के कृष्ण के नायकत्व में नहीं कर सके। रामचरित उपाध्याय ने 'देव-द्रोपदी' में कृष्ण का उत्तर रूप सममाम-मिकता के अनुकूल ग्रहण किया।

छायावादी काव्य भवारीरी तथा रोमानी काव्य था। उसने कृष्ण का विस्मरण कर दिया। कभी-कभी अनजाने उनका नाम गीता में आता रहा लेकिन उस पर कुछ भी गम्भीर नहीं लिखा गया। दिनकरजी का ध्यान कृष्ण के चिरन्तर तथा चिरन्तर नायकत्व पर गया और रश्मिरथी ने गीता का कृष्ण बाल उठा है। कृष्ण के माध्यम से महा युग-बोल पड़ा, जाति का प्रेरणात्मक नायक जैसे जागरण नाद कर उठा। नये प्रयोगों के काव्य में जीवन को पुनः तलाशा-तराशा गया। क्या, कहानियाँ तथा नाटक परले गए और धमवीर भारती ने 'अधायुग' नामक गीति नाट्य (प्रोपेरा) में कृष्ण का नवीन मायताओं तथा खोप मानव मूल्यों की प्रतिष्ठित करने वाला युग-मुद्र के रूप में प्रस्तुत किया। अनुश्रिया का प्रणवी कृष्ण भा आत्मा के आदीनन का युगीन परिणाम ही है। इसमें इन पर नवीन-काव्य में अनक सिद्ध प्रयोग हो रहे हैं तथा कृष्ण का चक्र नवान चेतना के जागरण चक्र का प्रतीक बन कर प्रतिष्ठित हो गया।

इस प्रकार वेदों से लेकर आधुनिक काल तक कृष्ण का नायकत्व अनेक रूपों में विकसित हुआ है। युगानुरूप परिवर्तित स्थितियों की अपार दिशा, दशा सम्भावनाएं आती रहीं। शाश्वत प्रेम, चिरन्तनसत्य, चिरसौंदर्य को अपना कर अपार साहित्य लिखा गया। अतः लोक-जावन का इतना महान लोक-नायक भारतीय जीवन में कोई भी दूसरा दिखलाई ही नहीं देता। उनके नायकत्व के विकास में सम्पूर्ण भारतीय-सांस्कृतिक के विनाश को अखण्ड भावसत्ता के रूप में देखा जा सकता है।



## मध्ययुगीन कृष्ण-काव्य

पूर्व मध्यकाल का कृष्णकाव्य धार्मिकता तथा भक्ति भावना से समन्वित  
 राग्य है। आधुनिक आध्यात्म में पंद्रहवीं शताब्दी तक कृष्ण काव्य के उदाहरण  
 प्राप्त नहीं हैं। पंद्रहवीं शताब्दी में कृष्ण लीलाओं को काव्य का विषय बनाया  
 गया तथा विद्यापति बंगला में चण्डीदास गुजराती में भीम तथा भक्ताने कृष्ण  
 पर काव्य सजना आरम्भ की। मध्ययुग का धर्म प्रेरित कृष्ण भक्ति साहित्य साम्प्र  
 दायिक भक्ति का निरूपण तथा सिद्धांतों के प्रचार प्रसार के लिए लिखा जाता  
 रहा है। कवियों ने सिद्धान्त के व्यावहारिक पक्ष को अपनाकर काव्य सजना किया है।  
 भागवत के आधार पर अनेक रचनाएं लिखी जाने लगी तथा कृष्ण भक्ति आन्दोलन  
 आचार्यों तथा कवियों के द्वारा पोषित होने लगा। अष्टछाप के कवियों में साम्प्रदा  
 यिक छाप स्पष्ट रही तथा अन्य कवि भी जाने अनजाने इस छाप में आ  
 गए हैं।

कृष्ण का लीला बिहारी नटनागर जनमनरजन रसिक राधाय नागर  
 तथा माधुर्य रूप का ही अधिक प्राधान्य रहा। यह माधुर्य रूप काव्य प्रबन्ध काव्य के  
 लिए उपयुक्त नहीं था। कृष्ण-काव्य का स्वतन्त्र प्रवर्धन रचनाओं में कृष्ण क  
 लीला बिहारी माधुर्य रूप का अपना ऐश्वर्य रूप ही प्राधान्य पाता रहा। भारतीय  
 प्रत्यक्ष काव्य के नायक न आभिजात्य-वर्ग का उदात्त चरित्र ही स्वीकार किया है  
 उस में जीवन का प्रतिनिधित्व तथा जातीय गौरव की पूर्ण रसात्मक शक्ति होती  
 चाहिए। कृष्ण की मधुर लीलाओं में यह शक्ति कम थी हृदय की रमान की शक्ति  
 अधिक रही। अतः उन पर गान या पद्यों का सम्मान अधिक सिद्धांतों का। मधुरता  
 न किया भी ऐसा हुआ तथा उन पर स्वतन्त्र पद्य या गीत संवदा लिखे हैं। मुरदास  
 नामा महान कवि न प्रबन्ध-क्षेत्र में अग्रगण्य रहा तथा मुरमागर सागर हान हुए भा  
 रत का एकत्रित कोश की बन गया उस महानाव्य न बनाया जा सका। आचार्य  
 हजाराप्रसाद द्विवेदी न मुरमागर को गानात्मक मन्त्रकाव्य कहा है लेकिन धर्म  
 गभी विद्वान् आचार्य न मरुत स अमहमनि व्यक्त करन हैं। वास्तव में यह प्रबन्ध  
 काव्य कहा न न न करता। अतः अनुसृत गायन के मुक्त-रस का हा गयावन  
 है जिसमें महाराज्य का कथाविवरण का अभाव है।

प्रायः कृष्ण न काव्य में परम्परागत प्रवचन को नहीं अपनाया है। नन्ददास का स्वमिणी मगन एक अपवाद है, उनका गवर गीत, रास पाचाध्यायी, 'स्याम सगाई' आदि लघु प्रबन्धात्मक रचनाएँ हैं, लेकिन प्रबन्धत्व का पूरा चारित्र्य उनमें भी नहीं है। 'रूप मञ्जरी' नामक काल्पनिक कथा प्रबन्ध कृष्ण भक्ति के महात्म्य के लिए ही लिखा प्रतीत होता है।<sup>१</sup> अन्य कृष्ण भक्त कवियों में घुवदास नागरीदास, हित वत्सलदास, नरोत्तमदास आदि न छोटे-बड़े बहुत कथा प्रबन्ध लिखे हैं लेकिन काव्यत्व की दृष्टि से ये रचनाएँ विशेष महत्त्व की नहीं बन पाई हैं। राधा-वल्लभी हित वत्सलदास के 'लाड सागर' तथा 'श्रजप्रेमानन्दसागर' में कृष्ण की कुछेक लीलाओं का प्रसंगगत वर्णन मात्र है। इनकी दृष्टि कृष्ण की आनन्द लीला के मधुर पक्ष तक ही सीमित रही। इन कवियों ने कृष्ण को इतना विहारी तथा रसिक रूप दिया कि कृष्ण काव्य सूरदास तथा नन्ददास के बाद इहलौकिकता से आकाश ही बन आध्यात्मिकता से गूँथ होना गया। कृष्ण की रसिक लीलाओं ने परवर्ती कवियों के लिए अनजाने ही एक द्वार खोल दिया, जिसमें विलासी राजाओं, सामन्तों तथा धनवानों का मन बहनाव का साधन उपलब्ध हो गया। सूरदास ने गीत पद्धति के द्वारा प्रबन्ध की यादी नीब डाली थी, परवर्ती कवि उस पद्धति को भी भला प्रकार नहीं निभा सके। कवियों की कल्पना कृष्ण से सम्बन्धित छोटे छोटे प्रेम प्रसंगों में ही रम कर रह गई। परमानन्ददास ने 'परमानन्दसागर' में कृष्ण-लीला के अगणित मुक्त पदों को म्याँ दिया, कुम्भनदास भी स्वतन्त्र पद लिखते रहे कृष्णदास अधिकारी अपने पदों को मूर की होड़ में ही लिपित रहे। चतुर्भुजदास गाविस्वामी तथा छान्दोग्यदास भी पदा में रमे रहे। रसखान मोरा भी प्रेम में उमल मुस्त भावा का प्रकाशन स्फुट गीता में ही ढाल कर करते रहे हैं। इस पद परम्परा में कृष्ण चन्द गोस्वामी, रामादरदास, सहचरि मुख, कल्याण पुजारी, रसिकदास, हित अनूप कल्याणदास भावक हित रूपलाल गोस्वामी प्रेमदास लाडिलीदास आनन्दीबाई प्रियादास आदि अनन्त भक्ति-पद रचयिताओं के नाम हैं लेकिन प्रबन्धत्व इसमें एकत्र नहीं है।

निम्बाक मतावलम्बी श्रीभट्टी, हरियाम रूप रसिकदत्त तथा तत्त्व वेदाश्व ने भी कृष्ण काव्य को आध्यात्मिकता में डुबा दिया लेकिन काव्यत्व इन कृतियों में बहुत अल्प है।

रामभक्त गोस्वामी तुलसादास ने कृष्ण गीतावली लिख कर 'कृष्ण भक्ति' को मात्र प्रादर दिया उन पर थोड़ा प्रबन्ध-काव्य की रचना नहीं की। तुलसी ने

प्रबंधत्व की आधार शक्ति थी, लेकिन कृष्ण के नायकत्व पर प्रबंध काय्य लिखने में वह भी मौन ही रहे।

रातिवाल के सामंतीय वानावरण में कृष्ण के साथ रामदेव की सेनाएं चल पड़ीं तथा भक्ति नायक कृष्ण घोर शृंगारिकता में डूब गया। फिर भी इस काल में भुवनेश्वर कृष्ण काव्य का बोलवाला होते हुए भी 'कृष्णचरित' पर छोटे प्रबंधकाव्य लिखे जाने लगे। आचार्य चित्तामणि ने 'कृष्णचरित' नामक लघु प्रबंध काव्य लिखा जो भागवत पर आधारित है। 'महाभारत' के कथानक में भी कृष्ण का महत्वपूर्ण योग रहा तथा उनका राजनीतिक व्यक्तित्व वहाँ बहुत विराट रूप में है। 'महाभारत' को आधार बनाकर भी कृष्ण पर रचनाएँ लिखी जाने लगी, घमदाम का 'महाभारत' (सं० १७११) एसी ही प्रथम रचना है।<sup>१</sup> सबलसिंह चौहान ने 'महाभारत' (सं० १७१८) का अनुवाद किया, यह पद्यबद्ध अनुवाद यदि पौष्टिक मूल्य होता तो महाकाव्य बन गयता या परंतु कवि ने इसमें मौलिकता का स्थान नहीं दिया, परिणामस्वरूप यह मात्र अनुवाद बनकर रह गया। श्रीपति नामक कवि ने 'कृष्ण-नव' (सं० १७१८) नामक लघु कथा प्रबंध लिखा।<sup>२</sup> कुलपति मिश्र ने 'सप्तम सार' (सं० १७३७) में 'महाभारत' के द्वाण-पत्र पर एक सप्त-काव्य रच डाला। बेशवराम मिश्र ने 'पाण्डव योद्धा चरित्र' (सं० १७६०) नामक एक गुप्तर सप्त-काव्य लिखा, महाभारत का आधार बनाकर छत्रसिंह नायक ने विजय गुजरावती<sup>३</sup> नामक छोटा निन्तु गुप्तर प्रबंध काव्य लिखा है। हस्तराज ने महाभारत तथा शिवाजी कवि ने 'भारत विनास' में कवित्व हानता का परिचय दिया।<sup>४</sup> मुरलीधर मिश्र ने सोनह बिधासा में नलीमारनान<sup>५</sup> (सं० १८१४) नामक सप्त काव्य को जन्म दिया।

इस काल में शिवदास ने महाभारत प्रनयन में कथुवाहन किया, लगातार न महाभारत चरित्र<sup>६</sup> कवि ने महाभारत नागयणसिंह ने पाण्डवाश्रम<sup>७</sup> तथा दुर्गाधर ने महाभारत का रचना का। इन कवियों में काव्यरस का धार

१ नागरी प्रचारिणी सौत्र विवरण, पृ० ३३, १६१७

२ वही, पृ० ४४१ १६२०

३ हिन्दा साहित्य का इतिहास, पृ० २२८

४ नागरी प्रचारिणी सौत्र विवरण, पृ० ३० १६०३

५ वही, पृ० १४८ १६१८

६ वही पृ० १६० १६१० १६

प्रभाव तथा इतिवत्त मात्र मिनता है। स्वरूपगत न 'पाण्डव यशोदु चन्द्रिका'<sup>१</sup> (स० १८६२) का मृजन किया। राम कवि न 'नलापाख्यान को' आधार बनाकर बाइस सगों की 'नल चरित'<sup>२</sup> (स० १८६८) नामक कवित्वहीन विशाल रचना को जन्म दिया। प्रबन्धकाव्य होती हुई भी यह रचना बणना के अम्बार में, महाकाव्य नहीं बन सकी है। नरोत्तमदास के अनुकरण पर बलीराम ने 'सुदामा चरित' (वि० १७३१) लिखा। देवीदास कवि ने अनूप कृष्ण-चन्द्रिका में कृष्ण लीलाओं का गान किया, लेकिन यह काव्य भी बहुत पीका है। कृष्णगड नरेश राजसिंह ने 'बाहुविलास', क्षेमकरण मिश्र ने 'कृष्ण चरितामत', रामप्रसाद ने 'कृष्णचन्द्रिका', सूरतमिश्र ने 'कृष्ण चरित' खण्डन कायस्थ ने 'सुदामा चरित्र', मेदिनी मल्ल ने 'कृष्ण-प्रवास' नामक गण्ड काव्या को जन्म दिया। कवि जगदीश न माध के महा काव्य 'शिशुपाल-वध' का मधुर अनुवाद किया।<sup>३</sup>

उनीसवीं शताब्दी में कृष्ण पर छोटे-उठे प्रबन्धकाव्य लिखे जाते रहे। कद्दास<sup>४</sup> ने 'कृष्ण विनोद' (१८०७ वि०) साहसिंह ने 'कृष्णविलास', मण्डन मिश्र ने 'कृष्णायन'<sup>५</sup> देवदत्त ने 'वीरविलास' नामक लघु काव्य लिखे हैं। इसी समय ब्रजवासी दास ने 'ब्रजविलास' (स० १८०७) नामक एक अदभुत काव्य लिखा, जिसमें प्रबन्धत्व की पूर्ण रक्षा हुई। कवि ने कृष्ण-कथा को 'मानस' की दोहा औपाई शली में सूरदास के अनुकरण पर लिखा है। इसका कवित्व संशकन तथा माहक है। उसे महाकाव्य मानने में आज कोई आपत्ति नहीं है, क्योंकि यह महा काव्य की सभा अनिवार्य शर्तों को लगभग पूरा करता है।

गुप्ता नामक कवि ने 'कृष्ण चन्द्रिका' नामक एक विशाल प्रबन्ध-काव्य उत्कृष्ट शली में लिखा। यह (१६) प्रपञ्चाशा (सगों) में लिखी हुई रचना है। कथानक भागवत के दसमस्कन्ध पर आधारित है तथा कवि परीक्षित के सप्तदश के शाप पर पाप मुक्ति हेतु दस कथा को पद्य बद्ध सुनाया है। इसके नायक श्रीकृष्ण सदैवशोभन गुणांकित क्षत्रिय हैं, साथ ही पूरे ब्रह्म के अवतार भी। इस ग्रन्थ में शास्त्रीय महाकाव्य के लक्षण पर्याप्त माना में उपलब्ध हैं। डा० इन्द्रपालसिंह ने

१ नागरी प्रचारिणी सत्र विवरण प० १४५६-१६२६

२ वही, प० १७२-१६११

३ राजस्थान में हिन्दी हस्तलिखित ग्रन्थों की खोज—प्रथम भाग, पृ० ५

४ नागरी प्रचारिणी सत्र विवरण, प० ८७, १६०६

५ नागरी प्रचारिणी पत्रिका, भाग १६, प० ३७८, स० १६६२

इसे निम्नान्त शब्दों में 'महाकाव्य' स्वीकार किया है।<sup>१</sup>

इन प्रयोगों के अतिरिक्त जगन्नाथ का कृष्णायन राधा-कृष्ण की 'कृष्ण चन्द्रिका', गोपाल राम का 'सुलमाचरित' अमरसिंह का 'सुलमा चरित', महाराज जयसिंह की 'कृष्ण-तरंगिणी' रघुवरदास का 'कृष्ण चरितामृत' गीता कवि गंग का सुदामा चरित्र विशेष उल्लेखनीय हैं।<sup>२</sup> इस प्रकार इन सभी कवियों ने कृष्ण का काव्य का नायक बनाया है तथा लघु काव्य उन पर प्रस्तुत किये हैं।

मध्ययुगीन कृष्ण-काव्य पर लिखे गये प्रयोगों की इस विशाल परम्परा में दो काव्य-ग्रंथ ही विशिष्ट स्थान के अधिकारों ठहराये जा सकते हैं—ब्रजवासी दास का 'ब्रजविलास' तथा गुमानमिश्र की 'कृष्ण चन्द्रिका'। इन विशाल प्रयोग-काव्यों में महाकाव्यत्व की पूर्ण शक्ति मिलती है। अतः अगल पृष्ठों में पूर्व निर्धारित महाकाव्य के मानदण्डों के आधार पर इनके महाकाव्यत्व की परीक्षा करते हुए इनके नायकत्व पर विचार करेंगे।

### ब्रजविलास

कृष्ण चरित्र पर मुक्तक-काव्य का एक अपार भण्डार मध्ययुगीन साहित्य में उपलब्ध होता है। सूरदास का सूर सागर भी मुक्त पदों में रचित गीति सागर ही है। साथ ही प्रबंधत्व का अभाव उसमें है। कृष्ण चरित्र पर एक श्रेष्ठ प्रबंध काव्य लिखने का श्रेष्ठ ब्रजवासीदास का ही है। उन्होंने कृष्ण कथा के लोक विश्रुत पौराणिक आख्याना की चुनकर, उनकी पूर्वापर प्रसंगों के आधार पर क्रम बद्ध योजना की है। कथावृत्ति को रखने के कारण कथा सूत्र कायात्मक पद्धति से प्रवाहित रही है और कथा की निरंतरता भंग नहीं होनी पायी है। कथा की पुनरावृत्ति से भी यही काव्य मुक्त है। कथा का आयाम विस्तृत संकुचित अवश्य होता रहा है लेकिन अंतरंग कथा बंध कहीं भी खण्डित नहीं हुआ है। आचार्य रामचंद्र शुक्लजी ने इसे तुलसीदास जी के अनुकरण पर बनाया हुआ प्रबंध काव्य उद्धोषित किया है।

आचार्य शुक्लजी ने इस सरस-काव्य को महाकाव्य शब्द से सम्बोधित नहीं किया लेकिन स्पष्ट लिखा इस ग्रंथ में कथा भी सूरसागर के क्रम में ली गई है और बहुत से स्थानों पर सूर के शब्द और भाव भी चौपाइयों में भर के रख दिये

१ रीतिकाल के प्रमुख प्रबंध-काव्य, पृ० ४१७

२ नागरी प्रचारिणी सोज विवरण, पृ० १०६, १९००

गये हैं। 'ब्रजविलास' में कृष्ण की भिन्न भिन्न लीलाओं का जन्म से लेकर मथुरा गमन तक का वर्णन किया है। भाषा सीधी सादी सुव्यवस्थित और चलती हुई है। व्यंग्य के शब्दों की भरती न होने से उसमें सफाई है।<sup>१</sup> इससे स्पष्ट है कि वे इस कवि से अत्यधिक प्रभावित हुए हैं। उन्होंने रामचरितमानस की तुलना में इस ग्रंथ को अग्रगण्य ही कहा है, यह ठीक भी है। तुलसी का उदात्त प्रतिभा ने समस्त भारतीयता को आत्मसात कर लिया था। उनकी तुलना में यदि कोई कवि छोटा पड़े तो आश्चर्य क्या। उनकी टक्कर का कवि हिंदी में ही नहीं समस्त भारतीय साहित्य के मध्ययुग में नहीं हुआ। फिर 'मानस' महाकाव्य से भाऊ ऊपर की कोटि की अद्भुत उपलब्धि है।<sup>२</sup> शुक्ल जी के मत का परवर्ती आलोचकों ने गलत ग्रंथ लगाया तथा कृति से प्रथम तो वे उदासीन ही रहे और यदि देता भी तो अलसताय मन से उसे ध्यान नहीं दिया। शुक्ल जी का मत है कि यह सब होने पर भी इसमें वह बात नहीं है जिसके बल से गास्वामी जी के रामचरितमानस का इतना देशपापी प्रचार हुआ। जीवन की परिस्थितियों की वह अनेकरूपता, गम्भीरता और ममस्मृतिता इसमें कहीं जो रामचरित और तुलसी की वाणी में है। इसमें तो अधिकतर ग्रीष्मामय जीवन का ही चित्रण है।<sup>३</sup> आचार्य शुक्ल का मत पर विचार करने से पहले दोनों कवियों के दृष्टिकोणों को समझ लेना अनिवार्य है। दोनों ही भक्त हैं। एक भक्तिमार्ग के परम प्रकाश में मूजबूत रहा और दूसरा शृंगार परक पतित परम्परा के रीतिकाल में जीवित रहा। परिवेश का प्रभाव भी कृतियों पर पड़ा ही है। दूसरे तुलसी ने राम के 'घादश' का भरती से आसमान तक विस्तार कर दिया, उनकी दृष्टि बहुत व्यापक और पनी रही। दूसरी ओर ब्रजवामीदाम में तुलसी की दृष्टि और पनापन नहीं था। इसलिए तुलसीदास ऐसे अद्भुत कवि से प्रथम तो उनकी तुलना ही अनुचित है दूसरे तुलना करने पर पीका लगना स्वाभाविक भी है। साथ ही इस तुलना में 'ब्रजविलास' का मोहक निरूपण ही नहीं पाता। कृतिवार ने सूरदास तथा तुलसीदास का अनुकरण किया, नज़ल नहीं। अनुकरण को अस्तु जीवन की मूल प्रवृत्ति मानता है।<sup>४</sup> साथ ही छोटे मोटे की गहिए नामक लाक पान से भी यह अनुकरण सराहनीय ही है। दोनों कृतियों का प्रभाव ग्रहण करने के कारण कवि में साधारण पाठक के लिए अद्भुत मुविधा हा गई है। न तो तुलसी के ज्ञान परक जटिल स्थल इसमें हैं और न पुनोती देने वाली दृष्टिकूट की मरहियाँ। यह तो कथा का सहज वर्णन है।

१ आ० रामचन्द्र शुक्ल—हिंदी साहित्य का इतिहास, पृ० ३६६

२ वही पृ० ३६७

३ डा० नगेन्द्र—अस्तु का काव्य शास्त्र।

खोटी बोली काव्य के प्रथम महाकाव्यकार हरिऔध जी न इस काव्य का महाकाव्य माना है 'उन्होंने स्थान स्थान पर कथाका को संगठित रूप में इस सरलता के साथ कहा है कि उसमें विशेष मधुरता आ गई है। यह उनकी भावमयी तथा मरस प्रकृति का ही परिणाम है। उन्होंने गोस्वामी जी का अनुकरण किया लेकिन उनकी भाषा साहित्यिक ब्रजभाषा है, जिसमें सरसता टपकी पड़ती है। उनके श्रय का शब्द विन्यास इतना कोमल है और उसमें कुछ ऐसा भावपूर्ण है कि स्वभवतः सहृदयों को अपनी ओर खींच लेता है। उनके इस श्रय का प्रचार भी अधिक है।<sup>१</sup> आज भी यह श्रय कृष्ण भक्तों की वजयती बना हुआ है। यह प्रेमेश्वर की शाश्वत महत्ता के कारण अपनी जीवनी शक्ति अक्षुण्ण रहे है। साथ ही 'राम तुम्हारा चरित स्वय ही काव्य है' का भाँति 'कृष्ण तुम्हारा चरित स्वय ही काव्य है'<sup>२</sup> बनकर महाकवियों का प्रिय विषय बना। पीछे चल कर ब्रजवासीदास की इसी प्रबन्ध परम्परा की 'प्रिय प्रवास' तथा 'कृष्णायन' में नया रूप मिला। भक्त उद्धारक नायक का लोक-नायकत्व समयानुकूल प्रतिष्ठित किया गया। इस प्रकार इस प्रबन्ध-काव्य की हिन्दी में कृष्ण चरित्र पर प्रथम महाकाव्य मानना चाहिए। कृष्ण-कथा की व्यवस्थित रूप से कवि ने प्रथम बार प्रस्तुत करने का सफल प्रयास किया है, जो स्तुत्य है।<sup>३</sup> इस दृष्टि को अधिक पृष्ठ रूप में प्रस्तुत करने के लिए पूरे निर्धारित महाकाव्य की कसौटी से उसके महाकाव्यत्व पर विचार अपेक्षित है।

### व्यापक परिधिपुक्त सुगठित कथानक

सम्पूर्ण कथायान कृष्ण की प्रख्यात कथा पर आधारित है। भगवान की लीलाओं के 'मानस' की भाँति स्थान-स्थान पर आध्यात्मिक सकेत हैं। कथा ॥

१ धर्मोप्यासिह उपाध्याय 'हरिऔध'—हिन्दी भाषा और साहित्य का विकास,

पृ० ३४६

२ मधिलीशरण गुप्त साकेत।

३ 'ब्रजविलास' अपने दग का अनूठा काव्य श्रय है। इसका सजन समन्वय की उत्कट प्रेरणा का परिणाम है। श्रय रचना स० १८०६ वि० में प्रारम्भ हुई। इस समय तक काव्य के क्षेत्र में रीति और भक्ति काव्यों का समन्वय पूर्णतः प्रतिष्ठित हो चुका था। प्रबन्ध के अन्तगत कवि ने कथा प्रसंग को लीलाओं में विभक्त किया है। काण्डों और सर्गों में नहीं। अस्तु, फारसी की मसनवी गली का प्रभाव नहीं है। भगवान कृष्ण की लगभग अस्सी लीलाओं की कवि ने भागवत की भाँति पूर्वाद्ध तथा उत्तराद्ध में संकलित किया है।'

—बोहार अभिनन्दन ग्रन्थ, पृ० ३४६

लौकिक दष्टि का अप्राप्त्य है। यह कथानक ममत्त्व साधना का सुपरिणाम है। इसमें पुराण, भागवत, मानस, सूरसागर तथा नन्दाम के भवयोगीन तथा रामपचाध्यायी का भी सम्मेलन है। कवि ने काव्य का आधार सूरसागर के दशमस्कन्ध का पूर्वार्द्ध लिया है —

श्री गुणैव बहो हरि सीता । सुनी परीक्षित सब गुणशीला ॥  
सूरदास सोई हरि सागर गाया । गृह विधि परम उजागर ॥  
विविध प्रकार चरित हरि केरे । तामहि वरणे सूर घनरे ॥  
सा वह प्रीति रीति सुखदाई । मेर मन अतिशय करि भाई ॥  
ताम ब्रज विनास सुखदाई । सो कुछ कहिहों करि चौपाई ॥<sup>१</sup>

कृष्ण की कथा तो अपार है उमका वरणन कवि अकेला कर भी कैसे सकता था। व्यक्ति की भी एक सीमा होती है, इस सीमा में कवि ने उनकी कथा का लोकशक्ति के अनुकूल पाकर वर्णित किया है।

कथा में निरन्तरता, सरसता तथा सहज-बोध है। लम्बे लम्बे उक्ता देने वाले वरणन इसमें नहीं हैं। कवि भक्त था और कथा के मार्मिक स्वभाव को ही उसने चुना है। कथा का 'प्रबन्ध' मानकर लिखते हैं —

ताने निज मन की रुचि जानी । इहि विधि करौं प्रबन्ध सुवानी ॥<sup>२</sup>

यह प्रबन्ध अपने क्रम का श्रीमद्भागवत के आधारक्रम पर रखता है। सूरसागर तथा ब्रजविनास के कथाक्रम को तुलनात्मक समीक्षा करते हुए डा० इन्द्र पाल सिंह लिखते हैं "जा कुछ भी हो नागरी प्रचारिणी सभा के सूरसागर के सङ्ग्रहण और ब्रज विनास की घटनाओं के क्रम में पर्याप्त अंतर है, जो ऊपर





## उदात्त नायक पुरुष-पुरातन

परमब्रह्म, आदि, अनादि, सनातन, विष्णु, नारायण, वामुदेव, हरि-श्रीकृष्ण 'ब्रजविलास' के नायक हैं। वे घराघाम पर आनन्द झीड़ा तथा भक्त-उद्धारक रूप धारण कर अवतार लेते हैं। कवि न उनकी लीलाओं के अभाधारणत्व को कविता में ढाला है। य कृष्ण ब्रह्मत्व तथा मानवत्व के अपूर्व योग से बने हैं। निगुण होते हुए सगुण अवतार धर धरणी पर लीला-गुरूप हैं—

अलख अगाधर अज अविनाशी । पुरुष पुरातन विश्वनिवासी ॥

जाको भेद न शिव मुनि जाने । ब्रह्मा पढ़ि-पढ़ि वेद बखाने ॥<sup>१</sup>

य कृष्ण गोपीवत्सन है। इन्द्र का गव खूर करने हैं, पर्वत उठाते हैं, पूतना पक्षाडित है और राक्षसों का नाश करत हैं। प्रेम-सीला करते हुए अघाते नहीं, प्रेम वश विश्व रमिया हैं। 'ब्रजविलास' के कृष्ण में व्यक्ति-रव के मधुर तथा विराट प्रेम और युद्ध सभा की चरमसीमा है। गापिया को रिझाते रोमते हैं, नाचते नचाते हैं। मुरली धर मुरली का माया में सबका बाध लेते हैं, रूप में कामदेव तुल्यतर हैं। यादव कुल भूषण तथा विश्व विलाचन धोर हैं। कोटि उपमाएँ उनके समस्त फीकी हैं, वे गुणसागर, रूपसागर आनन्द-सागर हैं। उनमें शील, शक्ति एवं सौन्दर्य का समजित रूप मिलता है जिसका विस्तार से विवेचन आगे करेंगे। समस्त 'ब्रजविलास' नामक काव्य का एक ही ध्वनि है कृष्ण के निर्व्यक्त का मुक्त गान। कवि ने कृष्ण की दिव्यता को घटनाओं की भन्यता से उदारता प्रदान की है। 'धीरोदात्त गुणवित' से भी अपार रूप में वे गुणों के भण्डार हैं। अतः इस काव्य में वे मात्र महाकाव्य के अनुकूल धीरोदात्त नायक ही नहीं, उससे भी महतीय कोटि के नायक बने जा सकते हैं। वे 'नोक', 'नाकोत्तर', असीमिक तीना के सवमाय त्रैय नेता हैं।

## रसात्मकता

### भाव-या रस

इस काव्य में भक्ति भाव का प्रसार है। भगवद्भक्ति का प्राधान्य होने के कारण इस काव्य का गौरव भक्ति-रस स्वीकार करना चाहिए। ब्रज-वन-वन कृष्ण उसके नायक हैं। वरुणव आचार्यों ने भक्ति को भाव न मानकर रस स्वीकार किया तथा उसे अय रमा से ऊँचा माना है। भक्ति की दृष्टि से रूप गोस्वामी ने 'भक्ति

रसामृतं सिद्धु मे' उसको रस मानकर उमकी व्याख्या की। इनके मत का समर्थन धनूत हुमा तथा शृंगार को भक्ति में समाविष्ट कर लिया गया। शृंगार का स्थायी भाव रति भक्ति में भगवद्भक्ति नामक स्थायी भाव मान लिया गया। इस प्रकार वष्णव आचार्यों ने भक्ति रस की न केवल प्रतिष्ठा ही की बरन् उस ही पूरे रस घोषित किया।<sup>१</sup> वैसे दण्डी ने भक्ति रस का अनजान हा संकेत किया था<sup>२</sup> भक्तिमात्र समाराध्य मुप्रीतवश्चतनो हरि ॥<sup>३</sup> बाद में परम्परापूजित नवरत्नो के प्रतिरिक्त प्रियम्-वात्सल्य, भक्ति, स्नेह, श्रद्धा, लोभ, मृगया, शय्यभसन, दुःख, सुख, उदात्त, उद्वेग, स्वतन्त्र, घामण्ड, श्रीजनक, कापण्य, माया आदि रसों की भी चर्चा हुई<sup>४</sup> लेकिन रसों में भक्ति रस को विशिष्ट पोषण तथा प्रतिष्ठा प्राप्त हुई। भक्ति रसामृतं सिद्धु मे अथैव भवतारो का धारण करने वाले होने का कारण कृष्ण का 'भवतारावली धोज कहा है।<sup>५</sup>

कृष्णस्य पूणतमता व्यक्ता मूदु-शोकुत्तातरे ।

पूणापूणतिरता द्वारता मयुराऽदिषु ॥७८॥

स पुनश्चतुर्विध स्यादधी-दात्तश्च धीरनलितश्च ।

धीरप्रशान्तनामा तथा धाराद्वत ववित ॥ ७९ ॥

'वष्णव भक्ति-पद्धति में मूल स्थायी भाव वह अनुभूति है जो कृष्ण को आत्मस्वरूप में स्वीकार करती है अर्थात् श्रीकृष्ण विषयक रति ही स्थायी है। साहित्य शास्त्र का भी स्थायी भाव का श्रीकृष्ण विषयक रति के आधार पर ही माना जाता है।<sup>६</sup> कृष्ण में धारोन्मत्त तापत्र का मन्त्र गुणा का बलताया गया है।

रस के आत्मस्वरूप, नायक चूडामणि कृष्ण, रति के विषय हैं वे व्रज में पूणतर मयुर में पूणतम तथा द्वारिका में पूण हैं। स्वकीया, परकीया गोपियाँ कृष्ण-वल्लभा हैं, कृष्ण भा जनन-वध तथा पूर्णवन्दार रूप में रसशर आनन्द-प्रमथन हैं। अजकितास में सब कृष्ण-गता का सूर-गायन का भीति प्रसार है।

१ डा० नगत्र—रस सिद्धांत, पृ० २६२

२ डा० आनन्दप्रकाश दीक्षित—रस सिद्धांत-परिचय विनियोग, पृ० २६८

३ वल्ली—वाष्पादय २।३३

४ डा० उदयमानुजिह—तुलसीदास भोमंगत पृ० ३७८

५ डा० डा० नगत्र—हिन्दी भक्ति रसामृत सिद्धु पृ० १५९

६ वही पृ० १६४

७ वही पृ० २१ (भूमिका डा० विद्येश्वर स्नातक)।

सम्पूर्ण काव्य भक्ति-सागर से हिल्लोलित है। कवि ने 'विघ्न विनाशक', 'दुष्टघासक', कृष्ण की अनेक श्रमण किया है—

बहत सुनत समुमन्न मन भाई । ध्यान रूप मय क्या सुहाई ॥  
कम, घम, नहि नीति बखानी । केवल भक्ति प्रेम सुखदानी ॥  
जानि कृष्ण के चरित पुनीता । कहि हैं सुनि हैं सन्त सुप्रीता ॥

+ + +

विघ्न विनाशन गुमकरन, हरनताप त्रय मूल ।  
भक्ति ललित नन्दन के, सकल सुखन को मूल ॥  
चरण कमल उर धार, श्री राधा नन्दलाल के ।  
सुंदर रस भागार, ब्रजविलास अब बरणि हैं ॥<sup>१</sup>

कृष्णचरित्र के मंगलकरण, भवभयहरण, प्रजापालक, जनतारक, परम उदारक तथा असुर संहारक रूप के कारण सम्पूर्ण काव्य में भक्ति रस अग्री कृष्ण में मिलता है। अग रमो के रूप में शृंगार, वात्सल्य, भयानक, रौद्र, अद्भुत आदि सभी रसों की योजना भी कवि ने प्रसंगानुकूल की है। वात्सल्य का प्रबल वेग शिशु मन मोहन के वर्णन में अनेक स्थान पर मिलता है—

लगे चलन धुटखन भागन । लगे मात सा माखन भागन ॥  
खेलत मणिमय भागन माही । देखि रहत लखि निज परछाई ।  
कबहुँ तात कहि पकरन धावै । जनु पाणि विचरत छवि पाव ॥  
कबहुँ किलकि अनत उठि भाजै । गिरत परत धुटवन छवि छार्जै ॥<sup>२</sup>

कृष्ण द्वारा राससो के वध तथा मानवेतर सीलामो में अद्भुत रस का परिपाक है। पूतना वध, वानासुर वध, मुक्क में ब्रह्माण्ड दिखाने वाली अनेक घटनाओं की इस काव्य में भरमार है। माटी खाते कृष्ण की माता रोक्ती है तथा कृष्ण मुह खोल देते हैं जिसमें सृष्टि बसी है।

दीनो बदन उधारि, नयन मु दि मात निकट ।

देखि चकित नद नारि, तन की सुरति रही नही ॥<sup>३</sup>

दंद्र काप में रौद्र दावानल वर्णन में भयानक, उद्धव-उपदेश में शान्त तथा राधा-कृष्ण प्रसंग में शृंगार रस मिलता है। फिर भी कवि का मन भक्ति की ओर

१, ब्रजविलास, पृ० १२, १३

२ वही पृ० ४७

३ वही, पृ० ६३

प्रवक्ष्ये है और उताते 'रामचरित माता' के राम की भाँति कृष्ण का भक्ति भाव रूप से गुना बखान किया है।

### उद्देश्य की ज्योति

ब्रज-विलास का उद्देश्य है पतिता का उद्धार करना। सांसारिक प्राणियों के चित्त को कृष्ण में लीन करना तथा उन्हें आनन्द-साधना की धार प्रवक्ष्य करना। यह वाक्य रीतिवाला भक्तिया गया जिस समय घोर श्रु गारिवता का प्राधान्य था तथा राधा एक कृष्ण गलियाँ भ, राजदरबार में, छेदछाद में व्यस्त सामान्य नायक तथा नायिका रह गये थे। कवि ने इस घोर पन्न के युग में भी कृष्ण के पावन चरित्र का गान किया तथा जनता को सम्बन्धित की ओर प्रवक्ष्य किया है। उसने राधाकाह सुमिरन के बहाने क्या न कहकर, लोकहितार्थ क्या को प्रस्तुत किया है। कृष्ण धेनु धरती, मानव तथा लोक धर्म की प्रतिष्ठा के लिए अवतारी रूप में वहाँ भी वर्णित हैं।<sup>१</sup> कवि का उद्देश्य मानसहार की भाँति अपनी कविता का जनप्रिय बनाकर एक महत्चरित्र की दिव्य घटनाओं का गान है। तुलसी के 'मानस' के अपार तथा बढ़ते हुए प्रभाव को देखकर ही कवि के मन में कृष्ण को भी वसा ही चित्रित करने की प्रेरणा ने जन्म लिया। राम की समस्त विशेषताएँ उहाने कृष्ण में प्रारोपित की हैं अतः इस सम्पूर्ण कृति में कवि ने भक्ति की प्रबलता भक्ति रस की निरन्तरता तथा लोक भगल की साधना को प्रधानता दी है। कृष्ण को सम्पद या द्विधोरा की तरह चित्रित नहीं किया जसा रीतिवाला भ हुआ है उन्होंने कृष्ण को धर्मपालक आदर्श लोक नायक के रूप में प्रतिष्ठित किया है।

### अभिव्यजना शिल्प

कवि ने सवजनमुलभता को सबन अपनाया है। भाषा में शब्द अर्थ छन्द, अलंकार का बोरा धमत्वार नहीं है, झूठा रीतिवालीन वाग्बदध्य तथा उत्ति-धचिद्रूप की कलाकारी नहीं है। इस शिल्प में स्वच्छता सरसता तथा सरलता का प्राधान्य है। सूर की भाँति यह भी 'ब्रजभाषा' का वाक्य सागर है। सूर की कोमल विमल मधुर रस सानी<sup>२</sup>, बानी का कवि पर बुरी तरह प्रभाव छाया है। उसने अपनी शिल्प के लिए कहा भी है—

ताते निज मन की रुचि जानी । इहि विधि करी प्रबध सुवानी ।  
द्वादस चौपाई प्रति दोहा । तह पुनि एक सोरठा सोहा ॥  
बहू बहू सुभ छन्द सुहाई । भाषा सरलन अथ दुहाई ॥<sup>१</sup>

१ ब्रजविलास पृ० १६

२ वही, पृ० १२

कवि ने स्वयं भाषा की सरलता तथा श्रय की प्रसाद गुण शक्ति की उद्घोषणा की है। मिथवधुओं ने 'ब्रजविलास' की भाषा में 'वैसवाडी का प्राधाय' कह दिया था, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल जी ने मिथवधुओं के मत का प्रबल खण्डन किया। उनके मत से 'भाषा' शुद्ध ब्रजभाषा है। इसमें वही श्रवणी का या वैसवाडी का नाम तक नहीं है। जिनकी भाषा की पहिचान तक नहीं, जो वीर रस वगण की परिपाटी के अनुसार किसी पद में वणों का महत्त्व देखकर उसे प्राकृत भाषा कहते हैं, वे चाहे जो कहें—भाषा सीधी सादी, सुव्यवस्थित और चतुर्ती हुई है। व्यर्थ शब्दों की भरती न होने से उसमें सफाई है।<sup>१</sup> इसमें ग्रामीण तथा तद्भव शब्दों की भरमार तथा विदेशी शब्द खसम, सजाई आदि कम हैं। भाषा लोकोक्ति तथा मुहावरों से मधुर बन गई है। सक्टाप्रसाद सिंह ने ठीक कहा है, 'सम्पूर्ण काव्य में कवि का उद्देश्य उपमा तथा रूपकों के काव्य को अतुरजित करना न होकर वस्तु को ही वास्तविक तथा प्रमखिप्पण रूप से उपस्थित करना है। यही कारण है कि कवि ने रूप-मीमांसा की तीव्रता और प्रभावोत्पादकता के लिए अलंकारों की विशेष भाजना पर ध्यान नहीं दिया।'<sup>२</sup> अलंकारों की लादी यहाँ नहीं है। पौराणिक शली में सत्र कुछ स्पष्टता से कहा गया है। कवि ने अपने शिल्प की जनप्रियता के आधार पर प्रस्तुत किया है, यही कारण है कि 'ब्रजविलास' आज भी कृष्ण भक्त सत्ता के ठठ का द्वार बना हुआ है।

उपयुक्त विवेचन के आधार पर 'ब्रजविलास' का महाकाव्य न मानना कवि के प्रति अपाय हुआ। इसका क्याफलक कृष्ण जन्म से मथुरागमन तथा उद्धव उपदेश से मथुरा आन तक का आख्यान है। इसका क्याफलक विस्तार में महाकाव्य का है नायक वृष्णभक्त कृष्ण हैं जो पारोदात्त से भी ऊपर की काटि में होते हैं। रसत्व, प्रभावत्व तथा शली का चारुत्व इसे पौराणिक पद्धति का सकल महाकाव्य सिद्ध करता है। प्रवधात्मकता इसमें सराहना योग्य है। अतः इसे 'भक्ति प्रधान खण्डकाव्य' अथवा 'प्रवधात्मक एकाध काव्य' न मानकर भक्तिपरक पौराणिक महाकाव्य ही मानना उचित प्रतीत होता है।

१ ब्रजविलास पृ० १२

२ मिथवधु दिनोद, भाग ३, पृ० ३२७

३ आ० रामचन्द्र शुक्ल—हिंदी साहित्य का इतिहास, पृ० ३६७

४ पोद्दार अभिनंदन ग्रंथ, पृ० ३२४

५ डा० शकुंतला दुबे—काव्य रूपों के मूल स्रोत और उनका विकास,

पृ० १३०

६ डा० इन्द्रपालसिंह—ऐतिहासिक के प्रमुख प्रवच काव्य, पृ० ३८१



व्यक्तित्व जब शक्ति येशा वाली जातिथो की सामूहिक सम्पत्ति बन जाता है तो उसके साथ-साथ नवीन घटनाएँ तथा कथाएँ बनती, मिटती रहती हैं। उस चरित्र का मूल रूप इतना परिवर्तित तथा परिवर्द्धित हो जाता है कि उसे पहिचानना कठिन हो जाता है। कृष्ण ऐसा ही चरित्र है, जिसमें विक्सनशील चरित्र की सम्पूर्ण विशेषताएँ मिलती हैं। डा० सत्येन्द्र ने कृष्ण कथा पर विस्तार में विचारोपरान्त अपना निष्पत्ति दिया है कि 'कृष्ण कथा का यह रूप सिद्ध करता है कि यह कथा लोक-कथा के रूप में प्रचलित थी और इसके कई रूपान्तर समय समय पर हुए, जिनमें से जो रूपान्तर जिसे मिला उसका उपयोग उसने अपनी दृष्टि से किया।'<sup>१</sup>

### नायक कृष्ण

इस महाकाव्य की सम्पूर्ण कथा के आधार स्तम्भ भवती के लीला विहारा कृष्ण हैं। ये कृष्ण गुणों की खान हैं, सर्वेश्वर, वासुदेव भगवन्त हरि हैं। जिस ऐसा प्रबल प्रतिनायक भी उनके समक्ष एकदम फीका है। राक्षसा का वध करने में उन्हें अपार शक्ति मिलती है, उनका जन्म आनन्द का प्रसार तथा पापी दानवों के विनाश के लिए हुआ है।<sup>२</sup> वे अलख अमोचर, अज, अविनाशी, पुराण-पुरुष हैं,<sup>३</sup> परन्तु भूमि पर आनन्द का दान करने के लिए गीता में कहे गए अपने कथन की पालन करते हैं तथा अवतार धारण करते हैं। 'ब्रजविलास' के कृष्ण प्राचीन परम्परा से बने आते हुए शत शत गुणों से अलबन नायक हैं। उनकी लीला लोकप्रियता में अद्भुत है।

सम्पूर्ण 'ब्रज विलास' में 'मानव' तथा 'सूरसत्वर' की भाँति भक्ति रस का अलख प्रवाह है। भक्ति के आलबन कृष्ण का व्यक्तित्व आन्तरिक तथा बाह्य रूप में अत्यन्त दिव्य है। वे अनेकानन्दन सच्चिदानन्द रूप सर्वेश्वराली पूर्ण भगवान तथा पूर्णवितार हैं। वे अनन्त ब्रह्माण्ड के आधार हात हुए भी यशोदानन्दन हैं। व्यक्तित्व का परस्पर के लिए आश्रय रामचन्द्र शुक्ल जी द्वारा निर्धारित 'शील, शक्ति तथा सीदम'<sup>४</sup> तीन महागुणों की कसौटी विद्वानों में सबमान्य हो गई है। कृष्ण के व्यक्तित्व में इन तीनों का मेल किस सीमा तक मिलता है इस पर अनेक पन्थों में प्रवाह झलके।

### शील तथा शक्ति तत्त्व

कृष्ण का चरित्र मयाश्रमा से नियन्त्रित नहीं, पूर्ण मुक्तत्व पुरुष का चरित्र

१ डा० सत्येन्द्र—मध्ययुगीन हिन्दी साहित्य का लोक तात्त्विक अध्ययन, पृ० ८०७

२ ब्रजविलास, पृ० १

३ वही, पृ० ३१

४ भा० रामचन्द्र शुक्ल—चितामणि, प्रथम भाग, पृ० २१८



है। 'शील-नट्य' की दृष्टि से राम तथा कृष्ण दो भिन्न भिन्न प्रतीक हैं। राम के चरित्र में अपार मर्यादा है। कृष्ण का चरित्र में मुक्त भागवाद। एक मर्यादा का प्रतीक है, दूसरा शील की गहजता का प्रतीक है। कृष्ण का चरित्र एक सार्वभौम चरित्र है, अतः समस्त सब रंगों में भरा पड़ा है, उस किसी भी सांगित कोण से नहीं तापा जा सकता है। अजबिलास का कृष्ण मर्यादाभूत नित्य मूर्तियों की प्रवहेनता अधिन नहीं है, फिर अनेक गापियाँ का साथ बिहार का बहुरंगीण पर्याप्त मिलता है—यवर्द्ध भयरा मेलन 'ताता' राधा जू के प्रथम भिन्न का लाना<sup>१</sup>, पनघट सीता<sup>२</sup>, सीरहरण सीता<sup>३</sup>, गापियाँ के प्रेम की उमल अयम्बा सीता<sup>४</sup> स्नानसीता<sup>५</sup>, घाट में भिन्न की लाना<sup>६</sup> लारी के घर भिन्न की सीता<sup>७</sup>, गग लाला<sup>८</sup> भ्रात्रि अनेक सीताभो का विस्तार ही उनके पूरा शोभा का उद्घाटन करता है। सीता स्थल की दृष्टि से कृष्ण सीता तीन म्याना पर—अजनीला, मधुरा सीता तथा द्वारिका सीता का सम्मिश्रण है। अजनीला की दो भागा में विभाजित किया जा सकता है, जिनमें लौकिक तथा अलौकिक दोनों प्रकार का चरित्र दृष्टिगत होता है। कृष्ण के चरित्र में शीलशक्ति दोनों ही इतने मिल गये हैं कि उनके सीतात्मक चरित्र से उनको अलग नहीं किया जा सकता है। उनको अलग करने से दोनों का रूप उभर भी नहीं पाता, अतः इस दृष्टि को ध्यान में रखकर ही शील तथा शक्ति तत्त्व का साथ साथ निरूपण किया गया है। इस शील तथा शक्ति-तत्त्व का स्पष्ट करने का लिए 'अजनीलास' में निरूपित सीताभो का सर्वोद्धारमक रूप प्रस्तुत किया गया है।

### गोकुल में घटित अलौकिक सीता

अज्ञानीदास<sup>१</sup> ने कृष्ण सीताभो का पूर्णवितार का अलौकिक सीताभो के रूप में मान लिया है। यथा—

जनरजन भजन बलुष, राधा न द कुमार ।

गुप्त प्रगट लीला करत, अज मे युगत बिहार ॥<sup>१\*</sup>

पापी से सत्कार का भार उतारने के लिए भगवान को अवतार धारण करना है। विघटन कालीन परिस्थितियाँ में पापित कृष्ण तथा भारत की संस्कृतियों का उज्ज्वल प्रतीक है। कृष्ण ने अपने पहले पापी प्रतिपादक रस का प्रदर्शित करने

१ अजनीलास, पृ० ११६

२ वही, पृ० १२२

३ वही, पृ० १८६

४ वही, पृ० २०४

५ वही, पृ० २०२

६ वही पृ० ३१६

७ वही, पृ० ३३६

८ वही, पृ० ३५२

९ वही, पृ० ३६६

१० वही, पृ० १२७

से पूर्व उसके सहायकों का वध किया एवं अपनी अपार दबो शक्ति का परिचय दिया ।

### पूतनावध

भागवत पुराण में पूतना को 'कसेन प्रहिता घोरा पूतना बालघातिनी' बताया गया है । पुराण ब्रह्म वक्ता<sup>१</sup> में उसे बस की 'भगिनी' कहा गया है ।<sup>२</sup> सुन्दर कपटकारी कामिनी वेश तथा उरोजो में विपलेपन का वणन सभी ने किया है । बस कृष्ण-वध के लिए पूतना को भेजता है—

इहाँ पूतना ब्रज में आई । रूप मोहनी प्रकट बनाई ॥  
गरल बाटि कुबसा लपटायो । ऊपर सुभग शृंगार बनायो ॥  
अति ही कपट छबीली मोहै । जो देख ताको मन मोहै ॥<sup>३</sup>

पूतना विषयुक्त स्तन द्वाकपट से कृष्ण के मुख में दती है और कृष्ण पयपान करते हुए उसके प्राणों को हर लेते हैं ।<sup>४</sup> भूरदास ने पूतना-वध के बाद 'सिद्धर ग्राहण के वध की चर्चा की है ।<sup>५</sup> किंतु ब्रजवासीदास ने इस घटना को छोड़ दिया है ।

### बाणासुर वध

भागवत में बाणासुर कथा नहीं है, किंतु ब्रह्मपुराण तथा विष्णुपुराण में इसके वणन हैं । सूरदास ने इस घटना को विस्तार दिया ।<sup>६</sup> नन्ददास मीन रहे । ब्रजवासीदास ने इसका वणन किया है । बाकरामधारी इस असुर को कृष्ण पालना में लट लेटे ही चाच पकड़ कर फेंक देने हैं और वह बहाल होकर बस के पास जाकर गिरता है ।<sup>७</sup>

### तृणावर्त्त वध

भागवत में इस विशाल दह्य के रूप की चर्चा है ।<sup>८</sup> सूर<sup>९</sup> तथा नन्ददास के

१ भा० १० ६ २

२ ब्रह्म वक्ता पुराण, अ० १०

३ ब्रजविलास, प० ३५

४ वही, प० ३६

५ भू० सा०, प० १३५

६ वही, प० १६५

७ ब्रजविलास, प० ३६

८ भागवत, १० ७ २०

९ (क) भू० सा०, प० १३८ (ख) नन्ददास प० २१६

अनुसरण पर 'ब्रजविनास' में भी यह घटना मिलती है। वस द्वारा भेजा गया तृणावत कण की लेकर आकाश में चला गया। वहाँ तृणावत की—

तृणावत की हरियौ की-हो । शीघ्र लिपट तिहि नीचे ली-हो ॥  
कठिन शिला पर ताहि गिराया । ताके ऊपर आपुन आयो ॥  
चूर चूर करि ताके याता । की-ह मुक्ति मुक्ति के दाता ॥<sup>१</sup>

### गोकुल में घटित लौकिक सीला

नामकरण तथा अन्नप्राशन—नामकरण सीला में भागवत का आधार है। इसमें जानी गयी मुनि आते हैं। मूरसागर में भी दो पद इसी प्रसंग के हैं।<sup>१५</sup> गण बलराम तथा कृष्ण का नामकरण करते हैं तथा कृष्ण के लिए कहते हैं—

रूप रेश जाके नही, अनग भनादि अनूप ।  
सो भक्तन हित भवतरया निज इच्छा अनुरूप ॥  
इनते बड़ा न कोप, ये बर्मा सब जगत के ।  
जो य करें सो होय, तुम सा हम साँची कहें ॥<sup>१६</sup>

अन्नप्राशन का आधार भागवत न हाकर ब्रह्मवत्त है।<sup>१७</sup> ब्रजविलास में उसका विस्तार से वर्णन है।<sup>१८</sup> कण की बाल छवि यहाँ अद्वितीय है—

कर चूरा पग पजनी तन रजित रज पीत ।  
उर हरिनस कटि किशोरी मुख मण्डित नवनीत ॥<sup>१</sup>

इसके साथ साथ वरस गाठ सीला<sup>२</sup> ब्राह्मण-भोजन सीला, चंद्र प्रस्ताव सीला वण टेंदन माटी खान सीला, बुढ़ावन सीला का भी वर्णन चरित की शोभा है। इनमें चंद्र प्रस्ताव सीला तथा माधन चारी अत्यन्त प्रभावशाली हैं।

### बुढ़ावन में घटित अलौकिक सीला

बुढ़ावन विहारी की ये सीलाएँ अपार शक्ति का उद्घाटन करती हैं। भागवत की कथा का आधार यहाँ है तथा वे बजापुर, बरसापुर तथा अजामुर का वध करने

१ ब्रजविलास पृ० ४३

२ मूरसागर, पृ० १३६, १४०

३ ब्रजविलास, पृ० ५०

४ वही, पृ० १३, ४७

५ वही पृ० ४५

६ ब्रजविलास पृ० ५७

७ वही पृ० ५३, ५५, ५७, ५८, ६०, ६६

८ वही, पृ० ११६, ११०, १३३

हैं।<sup>३</sup> वेनुकासुर वध भी यही आता है।<sup>४</sup> पुलम्बासुर-वध भी उनकी अपार शक्ति का प्रतीक है।<sup>५</sup>

### कालीदह लीला

यह कृष्ण से सम्बन्धित बहुत लोक प्रसिद्ध घटना है। इसका वर्णन भागवत, ब्रह्म विष्णु पदुप ब्रह्मवत्स तथा हरिवंश पुराण में मिलना है। किन्तु इस प्रसंग को कम से सम्बन्धित करते हुए सूर ने इसे पुराणों से भिन्न रूप दिया।<sup>६</sup> 'ब्रजविलास' में सूर सागर का ही पूरी तरह से अनुकरण है।<sup>७</sup> वे कालीदह में डूब कर कस द्वारा प्रेरित इस नाग को बध में करते हैं। नाग भी कृष्ण के परो में गिर कर बिनती करता है।

### दावानल पान

भागवत में कृष्ण द्वारा दावानल पान का वर्णन है,<sup>१</sup> पर यहाँ दावानल पान का कारण स्पष्ट नहीं है। सूर ने अपनी मौलिकता से इस घटना को कस से सम्बन्धित कर दिया। 'ब्रजविलास' में भी यह घटना कस से प्रेरित है—

दावानल सुन तप की बानी । चली रिसाय गव उर आनी ॥

करी भम्म इन पल मह जाई । सहित गोद नद मुचन कहाई ॥<sup>२</sup>

ऐसे प्रबल दावानल के शक्ति रूप का वे पान कर जाते हैं तथा सब को रक्षा करते हैं।

### गोवद्धन लीला

इस लीला के द्वारा कृष्ण इन्द्र का मद घूर घूर कर देने हैं तथा अपनी अपरिमेय शक्ति का परिचय दते हैं। यह प्रसंग भी पुराणों की घटना पर आधारित है। नन्दराज ने इस घटना पर 'गोवद्धन लीला' नामक स्वतंत्र रचना की। 'ब्रजविलास' में इन्द्र पूजा की चर्चा है। सभी ब्रजवासी मुरपति इन्द्र की सदा पूजा करते रहे हैं। ब्रज में इन्द्र का आतंक देखकर कृष्ण अपनी मा से उनकी पूजा का कारण पूछते हैं तथा इन्द्र-पूजा का घोर विरोध करते हुए गोवद्धन, जो सबकी जीविका का माध्यम था, उस पवत की पूजा का महारम्य बतलाते हैं। इन्द्र घोर वर्षा करते

१ ब्रजविलास पं० १५७

२ बही, पृ० १८७

३ सूरसागर, २६६

४ ब्रजविलास, पृ० १६३

५ भा०—१०, १७ २५, १० १६ १२

६ ब्रजविलास, पं० १८२

७ बही,

है—जब वह गुप्तगता कन्या निरन्तर उन्हा ली है।<sup>१</sup> इस उन्हा कन्या का मोटा मानकर कहा है—

कन्या वारता शरः शुभं गतिं प्राप्नुयः क्षणाय प्रभूः ।

सिं मुञ्चति मन्त्रात् ज्ञानात् इव मन्त्रात् तातां ॥<sup>२</sup>

**सूत्राय १ मे पठिता सीक्वि-सीता**

वाराता ॥ मन्त्रादिना सीतायाः स साधारणः पीरद्वारा प्राप्तिः का विधिः  
महात्मा है। कन्या के साथ साथ करवा गया पीर विमाता की कथाएँ तथा यह  
साधारण कि उन्हा माई वनवास हुए भस्वर बताते हैं पवित्रम क विद्वानों ने यह अनुमान  
साधाया था कि कन्या कथन पीर बाग्यानि के दवाएँ र हूँ।<sup>३</sup> भारतीय  
पवित्र य विद्वानों की माता, पवित्र कथन के साथ साथ साथ एवं विविध  
प्रीतिप्रोवा का प्रमाण शर जुड़ा है। अन्य असीक्वि सीताया की गाराएँ के साथ  
जाह निया गया। कथन के पवित्र म 'सद्भुत-जरा' का पूरा समावेश इन लातामा  
म है। ब्रजभाषा के सभी विविध न इस बाध्य विधि पर विस्तार से निता है।  
गुरुदास ने इस सीता म प्रसार संपन्नता प्राप्त की है।<sup>४</sup> ब्रजविलास म 'म सीता  
का वलन रही है। कवि ने गोरोहा सीता प्राप्ति म इसका संकेत दिया है। माग्यन  
तथा ब्रह्मवत्स' की पीरद्वारा सीता का गुरुता ने रजरा से रग दिया। ब्रजवि  
साता म सातह सहस्र बालाएँ कथन के साथ प्रेमाधिक्य प्रकट करते हुए तप करती  
हैं। गोविदां मित्र पूजा के द्वारा कथन का पति रूप म पाएँगे है।<sup>५</sup> मन्त्रायामी कथन  
प्रदान हो जाते हैं—

दण नमः सह प्रसमय गाविन की गोपाल ।

भय प्रसन कपाल चित जनहित दीन दयाल ॥<sup>६</sup>

कथन स्नान करता गोविदा की पीठ मलते हैं, निरसन गाविनी चह लज्जित  
हो धिक्कारती हैं। कथन पीर-हार चुराते दियाते हैं। गाविनी कथन की यह शिवा  
यन यशोरा से करने की झूठी धमकी देती हैं तथा यशोरा से कहती भी हैं पर यशोरा  
'बिना भीति नहि चित्त लहेरी कहकर उनकी बात मानती नहीं हैं।<sup>७</sup> पुन कथन-

१ ब्रजविलास पं० २४५ २४६ २४७ २४८ २४९

२ वही, पं० २५१

३ राममारीसिंह दिनकर—संस्कृति के चार अध्याय, पृ० ७८

४ सूरसागर, पं० ५२६ ५३४, ५४३, ५४४, ५४५, ५४६

५ ब्रजविलास, पं० २०५

६ वही, पृ० २०५

७ वही, पृ० २०७

दशन की लालसा गोपियों में जागृत रहती है। दूसरा बार स्नान की जाती हैं तथा वस्त्र घाट पर रख कर यमुना में केलि करती हैं। 'कामातुर कुमारियाँ कण्ठ का ध्यान धरती हैं, अतयामी प्रकट हो जाने हैं तथा वस्त्र लेकर 'नीम' पर लटका देने हैं। अतः म गोपिया की अनुनय विनय पर भक्त-वत्सल प्रसन्न हो जाते हैं।

कृष्ण का चरित्र मर्यादाओं को ललकारने वाला चरित्र है। प्रेम के शाश्वतमूल्य की स्थापना के लिए लोक-वेद मर्यादा को तोड़ना उन्हीं आवश्यक समझा। जहाँ राम शील तथा शक्ति का मर्यादाओं में बध कर विकसित होत हैं वहाँ कृष्ण जीवन में सहजता, स्वच्छ-दत्ता अपना कर प्रकटित दिखाई देते हैं। फिर भी वे अपनी शक्ति तथा शील के आचरण में दिव्य लीला नायक हैं। 'जहाँ प्राकृतिक पराप्राकृतिक, मानवीय प्रतिमानवीय विराटी शक्तियाँ इस सम्पूर्ण मनुष्य की गति को बाधित करती, वही कृष्ण की लोकांतर शक्तियाँ उन्ति होकर उनको निस्तेज कर देती हैं—चाहे वे इन्द्र के रूप में आयें, चाहे ब्रह्मा के रूप में, चाहे यज्ञ के रूप में ही, चाहे शास्त्रीय आदश के रूप में। उनका मर्यादाभंग जीवन के नवीन आयामों और गति की नवीन संभावनाओं के अन्वेषण और उनकी स्थापना की भूमिका बनाता है।<sup>१</sup> अतः कृष्ण के चरित्र में 'शाल' रूप अर्थ नायकों से भिन्न मिल तो आश्चर्य नहीं होना चाहिए। उनकी प्रेमा-मृत तथा रमात्म की लीला पूर्ण पुरुषोत्तम की दिव्य लीला उन्हीं पूर्ण पुरुषोत्तम का दिव्य लीलाधर भूमिका में उपस्थित करती है। स्रष्टा भी विगुद्ध लीला के उदात्त रूप में महान है। प्रो० जगदीश पाण्डेय ने निबन्ध श्रु खला में उदात्त के सैद्धांतिक पक्ष को सामने रखते हुए कहा है कि "जो आत्मध्वन हमारे चित्त को मात्र आकर्षित कर उसका उन्नयन या उत्कर्षण करता है—वह उदात्त कहलाता है।" यह मा यता कृष्ण पर धरी उतरती है, वे अपनी लौकिक तथा अलौकिक लीलाओं से केवल आकर्षित ही नहीं करते, अपितु चित्त का उन्नयन करते हैं।

### कृष्ण तथा सौन्दर्य तत्त्व

कृष्ण का जन्म प्रेम रस का प्रसार करने तथा प्रेम की शाश्वत प्रतिष्ठा के लिए हुआ है। सौन्दर्य के प्रति प्रबल आसक्तिमय उनके समान हिन्दी ससार में दूसरा नायक नहीं है। उनके सम्पूर्ण चरित्र में सौन्दर्य की एकान्त तथा शाश्वत प्रतिष्ठा है। आर्यों की सौन्दर्यवादी तथा आनन्दवादी जीवन दृष्टि ने कृष्ण में दिव्य, अन्त्य तथा दिव्यादिव्य सौन्दर्य को साकार करने का प्रयास किया है। यही कारण है कि वह कला में अपरानेय सौन्दर्य के नायक हैं। ललित कलाएँ तो मानो कृष्ण के कारण ही

१ सूर साहित्य एवं मूल्यांकन पृ० १३४, डा० चन्द्रमान रावत

२ 'साहित्य' पत्रिका, पृ० १५

जीवित रही। भगवान् तथा सौम्य का यह माधुर्यपूर्ण तात्पर्य भाग्यवतुग में प्रथम बार हुआ। मधुरी भारतीय सौम्यता परम्परा का मुद्रा-मार्ग कृष्ण ५ प्रेम में प्रगट हुआ। धा तारावर्ण, विष्णु इत्यादि सब पूर्ण भगवान् में स्थित हो गया है।<sup>१</sup> कृष्णावतार का मुख्य रूप प्रेम रस का आविर्भाव करता है तथा माधुर्यगता हनु मधुरता का सहार करता है। राधा भाव या माता भाव भावा मधुरिमा ही इन सौम्य में प्राण पूर्व स्थित है। कृष्ण व मायाहृत्, मायाग, रमित्र गिरामणि रतिमा दितिमा विहारी रतितागर, राधा-वत्सल मायो-वत्सल माया रस का धनि जन्म कर हुआ है, गोप का वरणा वन-वन प्रमग-वश कृष्ण-वशा में धा गया है।<sup>२</sup>

'सौन्दर्य' की वार्द्धिक परिभाषा विद्वान् ध्यात कर नहीं कर सके हैं। वसे वला, सौन्दर्य का ही पर्याय है। परम सौम्य ईश्वर में ही निहित है।<sup>३</sup> वही सौम्य परमात्मा द्वारा सो में अभिव्यक्त होता है। सौन्दर्य म रमणावतर विस्मय, आवादा प्रतिदाल, उचीनत्व का भाव निहित रहता है। सौम्य शास्त्र व आचार्यों ने सौन्दर्य (वाण्ट, हीगल ओषे आदि) के अन्तरगत एय बहिरंग पयो पर विचार करत हुए उसे जीवा-चोप स्वीकार किया है।

'कृष्ण' पूर्ण रूप से सौन्दर्य प्रेम और वला के नायक हैं। उनके व्यक्तित्व का बहिरंग और आंतरिक सौन्दर्य लोक-सौन्दर्य के अन्तर्गत भारतीय आचार्य मानते रहे हैं। कृष्ण म दिव्य और मानवाय सौन्दर्य सीतामा व माध्यम स हम मिलता है। कृष्ण म दशन तथा वला दाता का सौन्दर्य बोल पडा। 'दशन अपना सम्पूर्ण दायित्व वला को सौंप कर निश्चित हो गया। काव्य शास्त्र की एक अभूतपूर्व 'रस' मिला। 'वाम-वला को आध्यात्मिक सद्बन्ध मिला। ये ही सब कारण हैं कि कृष्ण की सीतामा के अभिप्राय सभी ललित वलायो के सस्यानो म अनिवार्य हो उठे। भारत का कविकठ वातावरण की अनुकृतियों से भर गया।<sup>४</sup> कृष्ण प्रस्तरों खण्डहरो वशी की ध्वनि, गायक की तान राधा गोपी मान सब मे व्यक्त हुआ।

कृष्ण व साथ प्रेम-वशाया की भरमार ने उह जीवन की मूल चेतना रति से सम्बद्ध कर दिया। कृष्ण की मध्यकालीन आचार्यों ने प्रेम ग्रन्थ के रूप में ग्रहण किया। यग देश में चीनय तथा उत्तरी भारत में वल्लभाचार्य ने परम भाव की उस

१ डा० रत्नकुमारी—१६ वीं शती के हिन्दी और बंगाली कृष्णकवि, पृ० १८२

२ डा० र० श० केलकर—मराठी और हिन्दी कृष्ण-काव्य का तुलनात्मक अध्ययन पृ० १५८

३ ओसे एस्पेक्टिक्स, प० २६३

४ डा० चन्द्रभान रावत, सूर साहित्य नव मूल्यांकन, पृ० १५०

आनन्द विनायनी कला का दर्शन जनना का कराया जिम प्रेम' कहत हैं ।<sup>१</sup> ब्रजभूमि रस भूमि या लाला भूमि वा गयी । भक्ता व भगवान न वहा अवतार से लिया, पराजिन जाति की निराशा नष्ट होने लगी । आचार्यों तथा समुल्लेख भक्त कवियों ने माधुय भक्ति का हार खान दिया । 'उन्होंने भगवान का प्रेममय रूप ही लिया, इससे हृदय की कामल वस्तियों के ही आशय और आलवन खड़े हुए । आगे जो इनके अनुयायी वृष्ण भक्त हुए, वे भी उही वस्तियों में सान रहे । मनुष्यता के सौन्दर्यपूर्ण और माधुयपूर्ण पक्ष को दिखाकर इन वृष्णीपासक वृष्णव कवियों ने जीवन के प्रति अनुराग जगाया, या कम से कम जीने की चाह बनी रहन दी ।'<sup>२</sup> आचार्य गुल जो का यह मत बहुत महत्वपूर्ण है और कृष्ण के साथ ऐसा ही हुआ ।

ब्रजवासीदास न सूर्याम के कृष्ण का सौन्दर्य-वर्णन में पूरी तरह से अनुकरण किया । यही पर यह भा कहा जा सकता है कि सूर के कृष्ण का सौन्दर्य ही ब्रजवासीदास के कृष्ण का सौन्दर्य है ।

याम कटुक बुद्धि नहि मेरी । उक्ति शक्ति सब सूरहि केरी ॥

कियो सर रस सिंघु अपारा । ताम प्रेम तरंग अपारा ॥<sup>३</sup>

सूर द्वारा कही गयी मुक्त कथा की कवि ने प्रवच कथा में 'मानस की शलो पर प्रस्तुत किया है । कृष्ण जन्म से 'मोहन' है । उनके सौन्दर्य का देखकर सब रीभते हैं । डाक। छवि सागर रति नागर तथा कामदेव से अधिक कहा गया है, व काटि-काटि कामदेव को अपने सौन्दर्य में पाछे छोड़ते हैं । अरुण कमलदल नन, पाताम्बर, वसुधर धारी हैं—

शीश मुकुट जल कुण्डल वानन । शरद मयक सरल शुभ धानन ॥

चार चरण पवज दल लोचन । चितवनि सुखद ताप नय मोचन ॥

कुटिल मल्ल भू मेचक ताई । जनमन हरण परम सुखदाई ॥

पीतवसन तन श्याम तमाला । उर थी वरस चारु मणि माला ॥

भुजा विनाल मनोहर धारी । शल चक्र गद अम्बुज धारी ॥

अग अग सब मूषण नाके । परम विचित्र भावते जीके ॥

चरण सरोन उदित नख जोनी । कमल दसन राखे जनु मोती ॥

परम प्रताप सुभग शिशु वेला । अद्भुत रूप दवकी देवा ॥

१ आ० रामचन्द्र शुक्ल—अमर गीत सार की भूमिका, पृ० १

२ वही, पृ० १

३ ब्रजविलास, पृ० १२



देखि अमित छवि चकित मति, प्रतिदिग लिये बुलाय ।

दम्पति परमानन्द मन परे हृषि सुत पाय ॥<sup>१</sup>

उनके अघर अरुणारे, बच धुधर वाले हैं । अपनी छवि म वे अद्वितीय हैं—

तनक कपोल अघर अरुणारे । तनक तनक बच धुधर वारे ॥

कुटिल भूकुटि की रेख सुहाई । मसि विदुक् तापर सुखदाई ॥

नयन नासिका भाल विशाला । कलवल बोलन परम रसाला ॥

अल्प दशन चिबुकदर ग्रीवा । तन घनश्याम भृदुल छवि सावा ॥<sup>२</sup>

उनकी शोभा विचित्र है, उनकी बाल छवि देखकर देवताओं का मन मोहित होता है । सभा स्त्रियां उन्हें देखकर मोह लेन का तरसती हैं । उनकी वेशभूषा भी बहुत आकर्षक है—

नील जलज तन सुन्दर श्यामा । सुभग घग सब छवि के ध्यामा ॥

अरुणतपण नख ज्योति सहाई । कोमल कमल चरण सुखदाई ॥

रुक्मनु वज्रि पायन बाजै । मनसिज यत्र सुनत उर लाज ॥

कटि किंकिणी जटित रक्वारी । पीत भगु लिया सुभग सवारी ॥

+

+

+

अरण अघर मधि दशन छुति प्रकट हसन मे होति ।

मानहु सुन्दरता सदन हपरत्न की ज्योति ॥<sup>३</sup>

चंद्रमा के लिए मचलते कृष्ण का सौंदर्य अदभुत है । उन्हें देखकर कामदेव सज्जित हैं ।<sup>४</sup> राधा उन्हें देखकर ठगी सी रह जाती है । गोपियाँ रात दिन उन्हें देखना चाहती हैं । सुर, नर, मुनि उनके दशन से धन्य हो जाते हैं । दानव भी उनके सौंदर्य को देखकर नत सिर होते हैं । उनके सौंदर्य के समक्ष ससार की सभी उपमाएं झूठी हैं । मुरली के साथ उनकी त्रिमूर्ती छवि विस्मयकारी है । ससार का समस्त सौंदर्य उनके मोर मुकुट से भूषित है । इस प्रकार कृष्ण का सौंदर्य सभी प्रकार से अलौकिक है ।

ब्रजवासीदास ने कृष्ण में शील शक्ति एवं सौंदर्य को 'बहुजनहिताय' प्रदर्शित किया है । जनम प्रधानता सौंदर्य की है, परंतु उनका 'यत्किञ्च, शील तथा

२ ब्रजविज्ञास, पृ० २१

१ वही, पृ० ४६

२ वही, पृ० ४८

३ वही, पृ० ५१

शक्ति से भी रहित नहीं। सूर के कृष्ण की भाँति ब्रजवासीदास के कृष्ण भी प्रेम-सौंदर्य के अक्षय भण्डार हैं। उनका सीला विहारी रूप ही प्रमुख है, भवसर पड़ने पर, जन कल्याणाय वे असुरों का सहार करते हैं। इस प्रकार उनका सौंदर्य, एव शील एव शक्ति से भास्वर है।

## अवतारी कृष्ण

‘ब्रजविलास’ के कृष्ण, पूरा ब्रह्म प्रकट भविनाशी तथा पूर्णावतार हैं। आनन्दघन मनमोहन हैं। वैसे भी कृष्ण मध्यकालीन साहित्य में दो रूपों में मिलते हैं। प्रथम में वे पुरुष, नारायण तथा विष्णु के अवतार हैं, तथा द्वितीय में हरि या उपास्य, ब्रह्म के अवतार हैं। उपास्य ब्रह्म का अवतार भू भार हरण के लिए होता है। पृथ्वी गाय का रूप धारण कर भगवान् के पास जाती है और दुःशा का वध करती है।<sup>१</sup> कृष्ण उसे अवतार लेने का वचन देते हैं।<sup>२</sup> उनकी समस्त सीलाओं का प्रयोजन जन कल्याणाय ही है। श्रयतापमोचन, अमित फलदाता, जगत्कलभ, कल्याणसागर, दीनदयाल आदि शब्दों का कृष्ण के साथ ब्रजवासीदास ने अनेक बार प्रयोग किया है। भक्त कवि ने ‘अखिल लोकपति जनसुखदायक’<sup>३</sup> रूप में अपनी भावना का प्रकाशन अनवरत किया है। यथा—

ज कृपाल आनन्द वरुणा । बदन चरण सकल सुरभूया ॥

जगुरपारम्य अमित अनूपा । महापुरुष सचराचर भूपा ॥<sup>४</sup>

‘ब्रजविलास’ के ये अवतारी कृष्ण महाभारत के वासुदेव कृष्ण तथा पुराणों के गोपाल कृष्ण से मिल जाते हैं। श्रीमद्भागवत से कृष्ण का अवतारीवादी रूप बहुत प्रसिद्ध हो चुका था।<sup>५</sup> अवतारवाद में कृष्ण एक ओर तो विष्णु के अशावतार

१ ब्रजविलास, पृ० १६

२ वही, पृ० १०

३ वही, पृ० ७१

४ वही, पृ० २०

५ ‘कृष्ण प्राक्लेम’ शीपक निबन्ध में ‘ब्रह्म’, ‘विष्णु’, ‘पद्म’, ‘हरिवंश’, ‘ब्रह्मवक्त्र’, ‘भागवत’ ‘वायु’, ‘देवी भागवत’ अग्नि, और ‘लिंग पुराण’ के आधार पर कृष्ण के अवतारों की व्यापक चर्चा है।

के रूप में प्रतिष्ठित हुए और दूसरा और उच्च भगवान और ब्रह्म से भी अभिन्न किया गया।<sup>१</sup> उक्त में से हमारा मध्यकालीन सम्प्रदाय एक साहित्य पर राधा-कृष्ण के साथ गायान कृष्ण का प्रभाव पड़ा है।<sup>२</sup> डा० दीनदयाल गुप्त दृष्टावतार में मधुसूदनतम तथा रसात्मक कृष्ण के दोनों रूपों का एकीकरण स्वीकारते हैं।<sup>३</sup> अष्टछाप के सभी कवियों ने कृष्णवतार के सर्वोच्च स्वरूप से चित्रित हैं। ब्रजविलास मधुसूदनतम तथा रसात्मक कृष्ण के दोनों रूपों का बतलाते हैं मुरारिनाम्ना भक्ता के हित यज्ञ में मनुज अवतार धारण करना है।<sup>४</sup> कृष्ण का जन्म पर कवि ने मानस के कवि की भाँति भय प्रकट कराने का प्रयास किया है। मुरारिनाम्ना मुनि, सामान्य मानव इस आकाशमय के अवतार से घबराया हुआ था। यज्ञ जिस नेति नेति कहते हैं, वही यज्ञात्मा की गोद में गलने लगा।<sup>५</sup> भक्तवती कृष्ण भक्त काय व्यापारों की दिव्यता से लीकित सारोत्तर तथा अलीकित है। इस प्रकार 'ब्रज विलास' में कृष्ण के पूर्णवतार रूप में उपनिषद् पुराणा तथा मध्ययुगीन साहित्य के रूपों का अधिष्ठान प्रभाव मानना चाहिए। सभी में वासुदेव तथा देवी-मुनि के अवतार की चर्चा है।<sup>६</sup> इस प्रकार 'ब्रजविलास' में कृष्णवतार के हेतु मनन हैं—

- (१) भक्तों को नष्ट करने के लिए अवतार धारण करना।
- (२) मधुसूदन तथा देवी को मुक्ति देना।
- (३) धार पापी बस से पीड़ित जनता को नष्ट जीवन देना तथा उसका मद भूल करना।
- (४) लीलावतार रास लीला आदि में।
- (५) इन्द्र के प्रताप को नष्ट करना तथा गावर्द्धन-पूजा की प्रतिष्ठा करना।
- (६) भक्तों की मनोवामनाओं का पूरण करना।

१ डा० कपिलदेव पाण्डेय—मध्यकालीन साहित्य में अवतारवाद, पृ० ५२६

२ वही, पृ० ५२७

३ डा० दीनदयाल गुप्त—अष्टछाप तथा बल्लभ सम्प्रदाय, पृ० ४०४ भाग २

४ दो० ब्रज को सुख की कहि सक सुख भी बढ़ी अपार।

सुखाने ध्याय भगवान जह, लियो मनुज अवतार ॥

सो० प्रगटे गोकुलचन्द सत कुमुद बन मोदवर।

तमकुल भ्रमुरनिकट, ब्रजजनचारु चकोरहित ॥ ब्र० वि०, पृ० ३१

५ रामचरित मानस, पृ० ३७

६ योगी जेहि ध्याव ध्यान न पाव करि करि योग विरागा।

जो वेद न जान नेति बखान सो सुत हव उर लागे ॥ ब्र० वि०, पृ० २७

७ यद्यपि हरि यमुदेव कुमार। उदर देवकी के अवतार ॥ ब्र० वि०, पृ० ५७७

कृष्ण पूरा लीलावतारी तय असुर-सहारक सगुण ब्रह्म हैं। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने कृष्णावतार के दो रूप ही मुख्य माने हैं—‘थीकृष्णावतार के दो मुख्य रूप हैं। एक में वे यदुकुल के श्रेष्ठ रत्न हैं, वीर हैं, राजा हैं, कसारि हैं। दूसरे में वे गोपाल हैं, गोपीजन बल्लभ हैं, राधाधारमुषायान शान्ति-वनमालि हैं।’<sup>१</sup>

## नायक निर्धारण

कृष्ण का चरित्र युगो-युगो से प्राप्त परम्परित विनयनशील चरित्र है, ऐसा हम ऊपर कह चुके हैं। वेदों से लेकर मध्यकालीन साहित्य तक उन प्रत्येक युग अपना प्रभाव डालता है। भारतीय सांस्कृतिक घरातल पर कृष्ण का व्यापकत्व इतना बढ़ा कि तब मात्र, प्रेम मण्डनियां में, आध्यात्मिक परिपदों में, योगियों जानियों की माना में, सत्ता के सगुण सरस उपदेश में भक्ति आंदोलन में उनका रूप निखर उठा। प्रेम का जीवन में अनन्त विस्तार है, वह ही जीवन का मूल है अतः प्रेम कथाओं की कृष्ण के साथ साधनासिद्ध तथा आचार, अष्ट भक्त दोनों में अत्यधिक मनोहर ढंग में सम्बद्ध कर दिया है। ‘ब्रजविलास’ में उनकी अनेक कथाओं का जमघट दृष्टिगोचर होता है। प्रबंध-रूप में कृष्ण-कथा को भक्त ने विस्तार के साथ लिखा है तथा दिव्य लीला के दर्शन किए हैं। कृष्ण के नायकत्व का ‘ब्रजविलास’ में खनने के लिए हम पूर्व निर्धारित मानदण्डों से विचार करते हैं।

## कथा का सूत्रधार

नायक कथा में रीढ़ की हड्डी का काम करता है। उसका काय-व्यापार ही कथा है, उन काय-व्यापारों में ही जीवन भनक उठता है। प्राच्य एवं पाश्चात्य दोनों देशों के आचार्यों ने नायक का कथा का प्राणवान सूत्रधार माना है। कृष्ण रसिक-शिरोमणि रसधर तथा सौन्दर्य के अक्षय भण्डार हैं, कवि ने उनकी कथा को भक्ति-माग में ढाल लिया है। कथा का रूप अक्षर अक्षर अस्मिन्मय विश्वाम तथा आत्मात्मय है। ‘ब्रजविलास’ में कवि ने पुराणों की कथा की सूरदास के माध्यम से मीठा ग्रहण किया है। यह कथा पूरी-पूरी सूरदास की अनुकृति है।<sup>२</sup> कवि ने इस

१ मध्यकालीन धर्म साधना, पृ० १२८

- २ (क) कहि सखल चरित विस्तारी । अत्र भय भजन मंगलकारी ॥  
सो द्वारिका चरित्र सुहाये । प्रकट पुरानन में सब पाये ॥ ग्रं० वि० ११
- (ग) यामें कछु बुद्धि नहि मेरी । उक्ति युक्ति सब सूरहि मेरी ॥  
कियो सूर रस सिंधु उधारा । तामे प्रेम-तरण अपारा ॥  
हरि के चरित रत्न विधि नाना । ब्रजविलास सो सुधा समाना ॥  
पद रचना करि सूर बसायो । कोमल विमल मधुर रस सायो ॥

कथा का उद्देश्य कम, धम या नीति न मानकर सुखदानी भक्ति माना है।<sup>१</sup> 'सूर सागर' की घटनाओं के क्रम में यहाँ कवि ने प्रवचानुकूल परिवर्तन कर लिए हैं। घटना-क्रम 'सूरसागर' के आधार पर होत हुए भी भागवत पुराण की ओर अधिक है। डा० मु. शीराम शर्मा ने अनेक तर्कों से यह सिद्ध किया है कि 'सूरसागर' भागवत का अविकल अनुवाद नहीं है। वह एक स्वतन्त्र रचना है। बालिका राधा, बालक कृष्ण राधा के साथ खेलने के प्रसंग और अमरगीत की व्यंग्यमयी उक्तियाँ भागवत में ढूँढ़ने पर भी नहीं मिलेंगी। भागवत में उद्धव कथा आती है, पर उनसे पहुँचने पर गोपियाँ उन्हें चिढ़ाती नहीं। 'सूरसागर' में वल्लभ के दशन की भी छाया है, इसका पूर्ण प्रतिबिम्ब नहीं।<sup>२</sup> उन पर अथ आचार्यों की भी छाप है। सूर किसी का अनुयायी नहीं, आतिथर्शी भक्त कवि है। तरंग पर तरंग लीला पर लीला की दिव्यता ही 'सागर' की महानता है, कवि की महानता है। ऐस पुष्टि-माग के जहाज तथा भक्ति के समुद्र सूर का ब्रजविलास में अनुकरण हिलकर ही सिद्ध हुआ। 'छोटे मोटे की महिये' नामक बहावत ही यहाँ चरिताथ होती है। 'सूरसागर' के दशम स्कन्द का पूर्वाङ्ग ही ब्रजविलास है। वसे भी सूर के कविरव की कोमलता, कमनीयता और कला भागवत भक्ति भावुकता और भाव्यता, बलक्षण्य, विलास व्यंग्य और विदग्धता सब का स्त्रोत यही तो है जहाँ से ये भिन्न भिन्न भाव धाराएँ फूट कर सागर में समाविष्ट होनी हैं एवं उसके नाम को चरिताथ करती हैं।<sup>३</sup>

'ब्रजविलास' की कथा का कृष्ण प्रेममयी साधना की चरम सीमा है। दिव्यता उनके प्रागे समाप्त हो जाती है। भक्त जनों के सच्चे आनन्द हैं विधामधाम

१ समें सम के राग सुहाये । अति विस्तार भाव मन भाये ॥

ताको स्वाद कह्यो नहि जाई । कहत सुनत अवनन सुखदाई ॥

अतिगय करि मोहत मनहि, गद्य गुणन के राग ॥

कहते जन ताम नहीं, कम सो कथा प्रसंग ॥

मेरे मन अभिलाष प्रभु प्रेरित ऐमो भयो

कहि हों यह रस भाष कम सों कथा प्रसंग सय ॥ अ० वि० १२

२ कहत सुनत समुशन मन भाई । ध्यान रूप भय कथा सुहाई ॥

कम धम नहि नीति बलानी । केवल भक्ति प्रेम सुखदानी ॥ अ० वि० १२

३ सूर सोरभ, प० १०७

४ वही, प० १३३

हैं। अतएव, अरूप होते हुए समुण भाकार हैं।<sup>१</sup> असुरा वा सहार करने वाले, यमुना की उपवन-श्रेणियाँ म विहार करने वाले, ब्रजनागर, गोपायनाग्रो म भासवन रहने वाले, वन्दावन के इन्द्र, श्वातिनिया के साथ प्राणनायक, कामधेवर यमुना के नाविक, गोपी रूपी समुद्र म विहार करने वाले, गधा के अवरोध करने म रत ब्रज स्त्रियों के निरन्तर प्रिय गोपिया के नेत्रों के तारे, घानन्द के रसिक, अलक्षित कुजकुटीर म रहने वाले राधा के सख्य सम्पुट, अत्यन्त गूढ रस के पण्डित, गोपिया के चित्र को घानन्दित करने म चन्द्रमा के तुल्य श्रीढा ताण्डय के पण्डित, कदप कोटि लाज्य नवीन मधुर स्नेह वाले, राधिका रति सम्पट तथा राम के उल्लास म मदोन्मत्त श्री कृष्ण उनके इष्ट देव हैं।<sup>२</sup> यह सकल कथावर कृष्ण ही 'ब्रजविलास' की कथा के मेरुण्ड हैं। क्या भक्ति रस या मधुर रस से ओत प्रोत हो गयी है। परम पुत्पोत्तम शास्त्रों का सार उपासना का अमन साधना का फल, सच्चिदानन्द-मय, रमय, मुरलीधारी लोव छलिया ही ससार की सुन्दरता का विकास है एक सौन्दर्य, प्रेम एक साधना का अन्वय भण्डार है।<sup>३</sup> पुराण पुरुष कृष्ण अपनी आत्मान्ति शक्ति राधा तथा अन्य शक्ति रूपा गोपियों के साथ विहार करने के लिए ही आता है। सम्पूर्ण कथा का भुजाव कवि ने आनन्द-बला के प्रसार की ओर ही किया है।

कथा-नायक ने राक्षसों का वध किया। पूतना वध स्तनपान म किया। तणावित का पटन कर मार डाला। यशोदा को मुह खोल कर सम्पूर्ण विश्व दर्शन दिया। बकामुर मधामुर बल्मासुर आदि का हनन किया। कालिया की फूत्कार पर शक्ति प्रकट की तथा मदन किया। धेनुकासुर प्रलम्बामुर, अरिष्ट ध्योम तथा केश का भी दृढता से वध किया। गोकुल का प्रतिष्ठापिक 'इन्द्रोत्पव' बन्द करके कृष्ण न वहाँ गोवद्ध न उत्सव कराया। मत्स्यविद्या की कीर्ति सुनकर वस

१ अलाप अरूप अनीह अज, प्रभु अद्वैत अनादि।

गभवात सो देवको, कौतुक निधि सर्वादि ॥ अ० वि०, प० २०

२ अ० श्यामनारायण पाण्डेय—हिंदी कृष्ण काव्य मे माधुर्योपासना,  
प० ६३

३

सत्युण्डरीवनमने मेधाम वद्युताम्बरम्  
द्विभुज ज्ञानमुद्रादय वन भालिनमोश्वरम् ॥ १०  
गोपयोपो वातीत सुरद्रुम तलाधितम् ।  
दिव्यालकरणोपेत रत्न पक्व मध्यमम् ॥ १०  
कात्तिदी जल वल्लोलसगि भासव सेवितम् ।  
चितयश्चेतसा कृष्णा मुक्तो भति संसृते ॥ १२

—गोपापूवतापनीयोपनिषद्—५२, ५३ श्लोक



वन गया । 'राधा बाहु सुमिरत को बहानो' इसी पतिन परम्परा का नारा है ।

कृष्ण भारतीय परम्परा में सर्वाधिक व्यापक नाम हैं । साहित्य में वे धरती से आसमान तक फैले हैं । उनका अनन्य मुखी विलक्षण 'यकित्व' निरन्तर कवियों को प्रेरणा देता रहा है । यह हम ऊपर विस्तार से विचार के साथ कह चुके हैं । डा० ब्रजेश्वर वर्मा ने ठीक कहा है कि 'उममें प्रत्येक युग के अनुरूप परिवर्तन की अमीम सम्भावनाएँ प्रकट हुई हैं । फिर भी भक्त कवियों ने इसमें जिस शाश्वत प्रेम चित्र 'तर आनन्द, अमीम सौन्दर्य और अलौकिक' रसवत्ता का समावेश किया था, वह किसी-न किसी रूप में निरन्तर वर्तमान रही है । वस्तुतः कृष्ण प्रेम तथा आनन्द के प्रतीक बन गये हैं ।' अतः 'ब्रजविलास' के कृष्ण प्रेम प्रतीक ही हैं ।

'ब्रजविलास' कृष्ण कथा का प्रेम मागर है । लीलाग्रो में लीला-पुरुष की स्थिति फूट पड़ी है । लीला विस्तार के पीछे उनकी स्वेच्छा ही है । भगवान की प्रकट अप्रकट लीला ही ब्रज लीला है । प्रेम की रास लीला जीवन जाला का वरदान है । इक्ष्वा म भक्ति का उद्देलन तथा मानव के महामानवत्व का विस्तार है । रस काय का प्राण तत्व है साहित्य का शाश्वत धर्म है, वह रस भी कृष्ण का दान ही है वह स्वयं रस रूप ही है । उनका अवतार भी लोक मंगल के लिए हुआ है । कृष्ण जो करते हैं, उसमें अभिमान का गन्ध नहीं । उनमें अपनी 'कथनी-करनी' को सबसे कहन की तुल्यता नहीं । गम्भीरता, शालीनता, उदारता तथा क्षीरोचित धर्मिता है । काराग्रह में ले लिया जन्म, सब को बंधन मुक्त बना दिया । अलौकिक आनन्द लीला में रस का मागर उमड़ पड़ा । कवि ने स्थान-स्थान पर उनकी मानवीय लीलाग्रो की सहजता तथा चास्ता दिखाते हुए महानता का उन्धोप किया है । अतः राम का भाति ही कृष्ण शाश्वत महत्त्व के 'यकित्व' हैं । राम शीत के प्रतीक हैं और कृष्ण अक्षय मौन्य विस्तार के प्रतीक हैं ।

### हृद आत्म शक्ति

चक्रवर्ती अमुरसहारक, वेद भर्षा की उपेक्षा करने वाले भक्त वत्सल, राधा मामोहन, गोपीवत्सल तथा पीताम्बरधारी कृष्ण में अद्भुत अपरिमेय तथा दिव्य-शक्ति का अपराजय आत्मशक्ति है । जयदेव तथा विद्यापति के कृष्ण शृंगार की लीला में जमे रहें, रंग भरा समार ही उनका ससार है । मुरदास तथा अष्ट छाप के कवियों ने कृष्ण के मधुर तथा विराट दोनों ही रूपों की चर्चा की है वे वान लाला तथा राम लीला भी करते हैं तथा अवसर पड़ने पर पूतनादि का वध और



गोवद्ध न भी उठा लेते हैं। लेकिन इन सभी के बाव्या में भी उनके मधुर पक्ष की ही प्रधानता है। ब्रजवागीश ने कृष्ण को थोड़ा गतिशील रूप देना चाहा है। वे राम की भाँति साव मंगल की प्रतिष्ठा हेतु अवतार धारण करते हैं, गौ ब्राह्मण, गरीय से दानवीय चरना के रक्षक हैं। सत्य समाज में प्राचीन मूल्या को हटा कर नवीन मूल्य सामने लाने हैं जैसे इन्द्र पूजा के स्थान पर गोवद्ध न पूजा का आरम्भ कराना, यद्यपि इन्द्र की अपेक्षा व्यावहारिक रूप में गोवद्ध न ही गोपों के जीवन में अधिक निकट तथा हितकर था। अतः बड़ा परिवर्तनकारी रूप वहाँ मिलता है। कृष्ण का चरित्र कवियों का गाम्प्रदायिक रूप से दृष्ट रहा, सभी माधुय-साधना के साधक उन्हें माधुय स्थायी ही मानते रहे। नायक के प्रत्यास रूप में महाकाव्य का नायक बनने योग्य सभी गुण विद्यमान हैं पर इन कवियों ने उसे आदर्श-नायक बनाने की कल्पना भी नहीं की। वे उनके मधुर मानव रूप के प्रति ही अपनी भावनाओं के उन्मूलन में लग रहें।<sup>१</sup> यह मन अपना स्पष्टता में आदर्श नायक की कमी कृष्ण में पाता है।

### आदर्श नायक

भक्तिकाल या रीतिकाल में कृष्ण आदर्श नायक नहीं चित्रित किये गये, इस तथ्य के पीछे सामाजिक तथा धार्मिक दृष्टि भी है। कृष्ण को प्रत्येक सम्प्रदाय ने अपने अनुकूल रूप देना चाहा। भक्तों ने अपने अनुकूल ढालना चाहा। भक्तिकाल तक राम का आदर्शवादी रूप इतना जम गया कि भक्तों की मन विराम के लिए कोई नायक चाहिए था और वह कृष्ण ही हो सकता था। उनके प्रतिपाद्य का स्वरूप ही सौन्दर्यपरक है। इसलिए कृष्ण में भुवत आत्माभिव्यक्ति का अवसर मिला। तब तथा मन से दूर कर रम्य-सौक्य में भक्तों ने कृष्ण नाम के साथ विहार किया। जीवन का मुक्त भोग तथा उद्दाम आनन्द भावना कृष्ण लीला दिग्ग प्रेम प्रसंग में प्रस्फुटित हुई। कृष्ण के एक ही रूप को द्रोपदी का चौर बनाया गया, शेष रूप या तो नकार दिए या कभी-कभी चर्चा में धूस पठ गये। रीतिकाल के कवि ने उन्हें अपना अस्त्र बनाया। पतिन होनी जाति ने कृष्ण तथा राधा को माधुय बना कर खूब मन बहलाया है। आवश्यक है कि राति काल में होत हुए भी ब्रजवासीदास के कृष्ण रीतिकाल के अपार विलासी कृष्ण से एकदम भिन्न हैं तथा भागवत और महाभारत की परम्परा के समद रूप हैं। प्रत्येक विपत्ति को भेदते हैं तथा रणभूमि के खेल को खेलते कभी घिन नहीं होते उसमें नायक की स्थिरता का गुण अत्यधिक है। आधुनिक काल के कवियों ने जिनमें हरिऔध जी तथा द्वारिका प्रसाद जी मिथ प्रियप्रवाम तथा 'कृष्णायन' के लेखक प्रमुख हैं कृष्ण को लोक नायक बनाकर

१ डा० सावित्री सिहा—ब्रजभाषा में कृष्ण भक्ति-काव्य में अभिव्यक्तता शिल्प

आदश चरित्र बना दिया है। यह सकेत कि कृष्ण का आदश नायक चित्रित करना चाहिए, शायद उह 'व्रजविलास' से ही मिला हो। क्योंकि 'व्रजविलास' के कृष्ण 'हल्के' जीव नहीं अपार जीवट के आदश चरित्र हैं।

इन सभी गुणों के पीछे उनकी अपार आत्म शक्ति की तजस्विता ही है। कभी भी किसी भी दानव से भी बनराते नहीं, नाग कथा में भी वे बही घबराय चित्रित नहीं हैं। माय लोग बहुत घबराये हैं पर कृष्ण सदब निश्चित दीख पड़े हैं। कस ऐसा भयंकर, दुष्ट तथा मायावी प्रतिनायक भी उह डरा धमका नहीं सका है। इसके पीछे उनकी अपार आत्म शक्ति ही है।

### प्रतिनिधि चरित्र

'व्रजविलास' के कृष्ण को 'आदश चरित्र' सभी हम स्वीकार कर चुके हैं। आदश' सबहितकारी प्रेरणा शक्ति है। महाकाव्य के नायक में भारतीय आचार्यों ने अनेक गुणों की कल्पना की है। यह उहाने सवमाय सिद्धान्त बना दिया है कि यह महान या महत्तम होना ही चाहिए। वह दिव्य हो या निव्यादिव्य चरित्र आत्मा हो तथा जातीय आदर्शों का रक्षक पर प्रेरणा देने वाला होना चाहिए। इस प्रकार 'आदश चरित्र' ही महाकाव्य का नायक हो सकता है। लेकिन आदश चरित्र की सीमा पाश्चात्य जगत के नायका में नहीं है। वियोवूल्फ तथा पराडाइज लान्ट' के नायक आदश चरित्र नहीं हैं तथा न ही उह भारतीय कसौटी से 'वीरोदात्त गुणाविवत' कहा जा सकता है फिर भी वे महाकाव्य के नायक हैं। लेकिन महान उद्देश्य के लिए बलिदान त्याग तथा सेवा की भावना उनमें है। कृष्ण शास्त्रीय महाकाव्यों के ढग का आदश चरित्र वाला नायक नहीं हैं, लेकिन उनमें चारित्रिक वशिष्ट्य सबन्न है। अदभ्य त्याग, अमीम साहम तथा अपार प्रेम में यह वशिष्ट्य दखा जा सकता है।

इस प्रेम में निश्चल उमुक्तता है। आरोपित मर्यादा कृष्ण में नहीं है, वधी हुई लोक वाली मर्यादा का तोडना ही उनका चरित्र की विशेषता है। मर्यादाभा के ब घन में जकट कर जीना, उस दिव्य लीला पुरुष न सोखा हा नहीं, सिपाया भी नहीं। जीवन की प्रेमपरक सहजता तथा सरल मानवीय मूल्यों में उह आस्था है, मर्यादाओं के आटम्बर में नहीं। उनका चरित्र जीवन का प्रतिनिधि चरित्र इसीलिए है कि सम्पूर्ण मनुष्य उनका दृष्टि से ओमल नहीं हुआ, पूरा मनुष्यत्व की प्रतिष्ठा लोक प्रेम के प्रसार से हाता है और कृष्ण ने यही किया। जीवन का मुक्त होकर जीने का भोगपरक सन्देश दिया। मर्यादा आवरण बनकर भूल मन की रोकती है पर भूल मन रह नहीं पाता, अपनी अभिव्यक्ति करता है। और लीला हरण का प्रसंग इगवा प्रमाण है। परजीया प्रेम एक पलीव्रत के आदश का अवहलना करता

हुमा वितता ऊचा हा गया । प्रेम म मनुष्य तथा पूण जगत बध गया है । 'जहाँ प्राक्त्विक पराश्रावत्विक', मानवीय प्रतिमानवीय विरोधा शक्तिया इस सम्पूर्ण मनुष्य की गति को बाधित करती, वही कृष्ण की लावोत्तर शक्तियाँ उद्भूति हो कर उनको निस्तब्ध कर देती हैं—चाह वे इन्द्र के रूप में धाय चाह ब्रह्मा के रूप में, चाह यम के रूप में, शास्त्रीय आदर्श के रूप में<sup>१</sup> उनका मर्यादाभंग जीवा का मधीन गति तथा सम्भावना है । जानेच्छा का उत्पट प्रमाण है । 'इस रसात्मक नवीन पद्धति में चोत्थ विह्वल हा उठे । चण्डीदास के स्वरो में रस उमड़ पड़ा । सूर ने इस प्रमत्त को लोक सुलभ बनाया । इन्ही मूल्यों के सहारे कृष्ण का व्यक्तित्व हमारा बहिष्कृत चेतना के इनना निकट हो जाता है । उन्होंने 'सनेदना तथा अनुभव को नसर्गिक रूप में ग्रहण किया ।<sup>२</sup> कृष्ण इसी कारण भरतार पुरप प्रतीक, लीला पुरप प्रतीक आध्यात्मिक प्रतीक रासलीला में कामोन्मयन के प्रतीक बन गये हैं । इन सभी में उनको जीवन का प्रतिनिधि चरित्र बना दिया है । यहाँ उनके इन रूपों पर भी सक्षिप्प प्रवाण डालेंगे ।

### अवतार प्रतीक

स्वातंत्र्य का उद्घोषक कारागार में अवतरित हुआ । कारागार तथा रात्रि की कालिमा दाता ही अत्याचार की प्रतीक हैं । अत्याचारों से मुक्ति हेतु ही वे अवतरित हुए । ब्रजविलास के कृष्ण का लीलाधार भी लोक पीडा की मुक्ति हेतु ही है । कृष्ण का अवतार प्रतीक भी उनके काय व्यापारों का 'दिव्यत्व' उजागर करता है ।

### लीला नायक का प्रतीक

दिव्यभावधर लीलामय है तथा लीला का विस्तार दिव्यता का ही विस्तार है । उनकी लीला अनेक जगत् के असीम फला के पुण्य रूप में देखने की मिलती है । पुराणों में लाला के श्रवण से ही मोक्ष प्राप्त होता है, इस प्रकार की अनेक बार घापणा है । यह लीला विस्तार लोक मग्न के लिए ही है । सूर के कृष्ण की भाँति ब्रजविलास के कृष्ण भी लीला विहारों तथा विलासी हैं । भक्त हृदय में रस प्लावनहेतु 'स्वेच्छा' से यन् लीलावतार होता है । ब्रजवासीदास कहते हैं कि घटघट घासी चिर अविनाशो सनातन आत्मा ब्रह्म जो आगम तथा निगम के परे हैं, वह भक्तों के हेतु यथोक्त की गोम में खेलते हैं ।<sup>३</sup> निगाकार साकार होकर घर घर में गोरस घुगता है चार वनता है रमिक रसिया, छलिया वनता है ।<sup>४</sup> ब्रजविलास'

१ डा० चंद्रमान रावत—सूर साहित्य नव मूल्यांकन, पृ० १३४

२ वही पृ० १३४

३ ब्रजविलास पृ० १६ २८ ८०

४ वही, पृ० २६५

मे तो कवि ने प्रत्येक कथा को 'लीला' कहा है तथा पंचाम सासाया का विस्तार से गान किया है। सभी लीलाएँ भक्ता को परमानन्द की छान हैं। स्पष्ट रूप में ब्रजवासीदास १ लीलावतारी कृष्ण का ही भक्तों के लिए गान किया है। यह लीला प्रतीक ही जीवन का प्रेम-लीला का प्रतीक है।

## रास लीला का प्रतीक

कृष्ण का व्यक्तित्व इतना गतिशील तथा लोभ के लिए आकर्षक है कि उसे किसी भी फाँस से नहीं देखा जा सकता है। उनकी रासलीला पर विचार करते हुए विद्वान् प्राध्यात्मिक तथा मनावानात्मिक पद्धति से विचार करते रहें हैं। कृष्ण किसी एक परम्परा के साचें ठले व्यक्ति नहीं, अपनक परम्पराओं के मिश्रित रूप हैं। इस दृष्टि से उन्हें भाभात्मिक सत्कृति की उपज कह सकते हैं। अपन सौंदर्य का विस्तार व रामलीला के द्वारा करते हैं। ब्रज भूमि रासलीला भूमि है जिसमें नारी नर तथा प्रकृति-मुख्य से सम्बन्धित यह महापर्व भगवान् द्वारा मनाया जाता है।

‘ब्रजविलास’ में ‘रासलीला’ का वर्णन करते हुए कवि ने श्री रास राशि नायिकांनयक<sup>१</sup> कहकर राधा कृष्ण की वन्दना सर्वप्रथम की है तथा राधा जी को ‘रसरसविलासी’ कहा है।<sup>२</sup> ब्रजधाम की शोभा का निर्माण स्वयं कामदेव ने किया है। जमुना, कूलवन्दार, मञ्जुभग कात्तिमय रेती, विपुल रगी वनन से यह धाम रमरूप धाम है।<sup>३</sup> महा वेदा में नेति नति अति अदभुत लावण्यनिधि रसिक नरल नन्द नन्द, पूण ग्रह हरि, पूणावतार कृष्ण, रसरसपति रूप में अवतार लेता है।<sup>४</sup> कृष्ण कहा मान द की कथा मुरली बजाकर करते हैं तथा त्रिभुवन मन मोह लेते हैं। गोपियाँ मुरली की तान पर सुध बुध सा देती हैं।<sup>५</sup> रसखान न दूधदुही पद में जसा वर्णन किया है, वसा यहाँ वर्णन है।<sup>६</sup> कृष्ण गोपियों की वद-पद के आण के

१ ब्रजविलास पृ० ३६६

२ वही पृ० ३६६

३ वही, पृ० ४००

४ वही पृ० ४१०

५ सुनतहि धोरीसी भई दिसरीं सब सयान ।

लगीं ठगोरी सी मनहु मुरली को धुनि कान ॥

रह्यो न उर मे धीर बानी बाजी कहि उठीं ।

आकुल विकल गरीर, सुनि मुरली बज की तरणि ॥ अ० वि०, पृ० ४०३

६ पददश सहस गोपिका गोरी । मुरली नत भई सब भारी ॥

रहि न सबी धुनि मुरली सुनि अकुलाई । जो जसे तसेई ध्याई ॥ अ० वि०,

वारण पातिव्रत धर्म का उपदेश देने हैं<sup>१</sup> तथा अतर्धान हो जाते हैं। गोपियाँ विरह विह्वल होकर दक्कन लगती हैं कृष्ण प्रकट होते हैं तथा रास-लीला करते हैं।<sup>२</sup> गोपियों के इस सौभाग्य को देवता मराहते हैं।<sup>३</sup>

इस रास में 'मह' की मुक्ति तथा आनन्द का विस्तार है। भावुक भक्त तो इस लीला को तरसना है तथा वेदात्ता भी इसे रहस्यमय आनन्द मानते हैं। बल्लभा नायक न तो ब्रह्मानन्द के लिए उच्चतर रूप रास ही माना है,<sup>४</sup> सरस दह का नहीं मन का अनुभव है। बल्लभ न अनुकरणारम्भ रास नित्यरास तथा अवतरित रास रास का तीन रूप माने हैं। नित्य वृन्दावन में नित्य रास आनन्द प्रसारिणी शक्ति के साथ होता रहता है। रास-लीला में दो दृष्टियाँ हैं। अन्तरंग दृष्टि से यह परमानन्द है तथा बहिरंग से यह 'काम विजय' है। कृष्ण आनन्द विहारी हैं अभिचारी नहीं। नायक योगीश्वर तथा कामजयी है, गोपियाँ मह विसर्जित उत्तमगमयी हैं। इस कथा का कामानयन की लीला विद्वान मन खुले हैं।<sup>५</sup>

### आध्यात्मिक प्रतीक

सम्पूर्ण ब्रजविलास में कृष्ण आध्यात्मिक प्रतीक के रूप में दृष्टिगत होते हैं। वे पूरे ब्रह्म हैं, वेदों पुराणों उपनिषदों का वे हा सार हैं। कम योग तथा नान योग भक्ति-योग तीनों का समाहार उनमें बिना गया है। कृष्ण लीला भी प्रतीक योजना का समझ भण्डार है। कस कलियुग या घोर पापी तथा आततायी का प्रतीक है। गोपीया आत्मा की वस्तु आश्रिता, चौरहरण आदि सभी प्रतीक हैं। उपनिषदों का आनन्दवाद भक्तिवाद में इन प्रतीकों ने ही बाँध दिया है। भाव प्रतीकों में बाल लीला ब्रज लीला निबुज लीला गोमाह्न लीला आदि प्रमुख हैं। शक्ति प्रतीकों में राक्षसों का वध तथा कालिय दमन लीला प्रमुख हैं। कृष्ण स्वयं पुराण प्रतीक या सांस्कृतिक प्रतीक हैं।<sup>६</sup>

१ ब्रजविलास पृ० ४०५

२ हसत करत बहुरस चरित, युवति बृन्द लिये सग ।

गये जमन तट न्याम तब श्रीदत्त कीटि अनग ॥ वही पृ० ४०७

३ वही पृ० ४०६

४ ब्रह्मानन्दसमुदधत्त भजनानन्द योजयेत् ।

लीला या रुज्यते सम्यक् सातुर्वैविनिरुप्यते ॥ आ० व० सुबोधिनी ।

५ आ० बलदेव प्रसाद मिश्र—रासलीला का आध्यात्मिक तत्त्व कल्याण,  
वय ६ (अगस्त १९३१)

६ सांस्कृतिक प्रतीकों में ध्याति, ईतिहास जन धृति युग चेतना सांस्कृतिक एवं जातीय काय-कृताय सांस्कृतिक साहित्य साधना उपासना प्राय सभी का अन्तर्भाव होकर समष्टिगत भाव की अवस्था का ज्ञापक भाव समाहित हो जाता है।—डा० कपिलदेव—मध्यकालीन साहित्य में अवतारवाद, पृ० ६८४

## पुराण प्रतीक या सांस्कृतिक प्रतीक

इतिहास की दृष्टि से ( वंश म कृष्ण, पुराणो म कृष्ण महाभारत मे कृष्ण वामुदेव कृष्ण गोपाल कृष्ण द्वारका कृष्ण, राधा के कृष्ण) आदि प्रमुख हैं। कृष्ण पुराण प्रतीक शली म त्रिशिष्ट युग तथा सांस्कृति रूप के प्रतीक हैं। पुराण प्रतीक किसी विचारक या आनी के मन म आते हैं तथा विनाल परम्परा या उनके अनुयायी उनका प्रचार करते हैं। प्रसार तथा परिवर्द्धन होने के साथ साथ पुराण प्रतीक के मूल रूप म परिवर्तन आ जाता है। कृष्ण का चरित्र इसका उदाहरण है। कृष्ण म प्रसगोद्भावकत्व बहु धारयानकता आदि अनेक वशिष्ट इसी कारण उत्पन्न हुए है। कृष्ण धीरे धीरे सांस्कृतिक प्रतीक बन गए तथा 'ब्रज विलास' तथा 'दमने पूर्व कृष्ण-भक्ति' के कवियों ने उनका सांस्कृतिक उपासना के प्रतीक रूप म गान किया।

कृष्ण ऐतिहासिक घटनाओं से सम्पन्न व्यक्तित्व हैं। महाभारत पुराण आदि म उनके कथन युग बीव को मानने मान हैं। श्रीमद्भागवत गीता मे उनका उपासनापरक हवा ही युग की देन है। इन्द्र पूजा के स्थान पर गोवर्द्धन पूजा भा उसी क घतगत आती है। कृष्ण भारतीय साधना के परिवर्तन ह्रास प्रगति के इतिहास म निमित्त है। राम की भाति वे ही श्रेष्ठ सांस्कृतिक प्रतीक हैं।

कृष्ण का जीवन के अनेक क्षेत्रों मे अग्रणी पाकर उनको जीवन का प्रतिनिधि चरित्र मानना चाहिए। कृष्ण जीवन के प्रतिनिधि चरित्र ही नहीं, हमारी संस्कृति के बहुत बड़े नेता हैं।

## दिव्य शक्ति से प्रलब्ध

भक्त कवियों ने कृष्ण का निर्व्य-व्यक्तित्व के रूप मे ही प्रस्तुत किया है। उनके मभा काय व्यापार निर्व्यता से घोल प्रोन हैं। वे पूणावतार तथा पूरा ब्रह्म हैं, यह ससार उनका इच्छा का विस्तार तथा लाला क्षेत्र है। सूरदास ने दम निर्व्य की कृपा से 'बहुरा मुन भूगों का बोलना रक का राजा होना आदि अनेक रूपों से विनय की है। माटी खाते कृष्ण के मुख में तीनो लोको का दिखाई देना भागवत प्रष्टछाप क कवियों तथा 'ब्रजवासीदास' सभी मे है।<sup>१</sup> आग्य भूद कर खेलत कृष्ण माता का मुह खालकर भीचका कर देत हैं।<sup>२</sup> उसमे नभ शशि रवि, साभर गिरिकानन सुर, सुरनायक शिव, चतुरानन, सकल लोक नायक यम पूरा सट्टि जाल दिखाई देता है।<sup>३</sup> पूतना का वध तथा राक्षसा का वध दम दियना का

१ ब्रजविलास, प० ६२

२ वटो, प० ६१

३ ब्रजविलास, पृ० ६३

उत्पादन है। वाणिज्य तथा शिल्पों का धारण भी हिन्दी का धर्म है। यह प्रजा प्रतिपन्न रूप को मानता है। यह बड़े बड़े योद्धाओं को मान-गुण में परागाय करता है। कृष्ण पूर्ण शिष्य मान है। समस्त विश्व शक्ति को उनके हाथ पर है। विचारों की व्यापकता

महाकाव्य का मान जातीय जीवों का प्रतिनिधि धरित्र होता है इन उनके धार्मिक युग युग के माधव का प्रणाम प्रदान करने का धर्म होने चाहिये। उनके विचारों में सीमा प्रतिबद्धता का स्थापना नहीं है। कृष्ण का धर्मधारि हो लेता है कि उक्त युग-युग की भवता का प्रतिबन्ध रूप मिलता। अर्थात् ने कृष्ण में प्रतीत सम्भावनाओं का पावन ही धनवन्त गाथा है। राधा तथा कृष्ण प्रतिमान होने के हुए भा पूर्ण मान है।<sup>१</sup> ब्रजवासान्नाम न भक्ति के धर्मध्वन को सतीतता से ग्रहण नहीं किया। मान-नया नाम तथा वार-नया तथा में उक्त जावन के पक्षों को ग्रहण किया है। डा० सत्यजि ने अनेक प्रमाणों से कृष्ण को साध मानस की श्रेष्ठ उपज स्थापित किया है।<sup>२</sup> कृष्ण पूर्णतः भक्ति सागर है। वे दीन-हीन गरीब तथा धर्मात्मा तथा वा एव गमान मानत हैं। उनके विचार सभी के प्रति एक समान हैं। वे सब को प्रिय हैं तथा सब उन्हें प्रिय हैं। भक्ति का विकास लोक-तात्त्विक के समन्वय का परिणाम है। भक्ति धार्मिकता वस्तुतः लोक-वैयर्थ्य के समन्वय के लिए नहीं राधा हुआ या वरन लाव-लत्व को बौद्धिक मायता प्रदान कराने के लिए हुआ। यही धारण है कि भक्ति को पहले स्वीकार किया गया। बाद में उसके लिए प्रमाण ढूँढ़ गये या गये। यह भक्ति तब जब समुल्लेख के साथ-साथ उत्पन्न हुआ, तब हमने लौकिक नायकों को वरण किया। कृष्ण मूलतः लोक नायक हैं। साथ ही उनका भक्ति का स्वरूप लोक-न्यायो के माध्यम से पूर्णता को प्राप्त हुआ है।<sup>३</sup> कृष्ण का दृष्टिकोण ही जन जन का अपना है।

काव्यों की उदात्तता—विष्णु के अवतारों की श्रृंखला बहुत बड़ है। अवतारवाद के मूल में ही काव्यों की उदात्तता निहित है। भगवान् उक्त काव्यों के लिए ही जन धारण करता है। विष्णु के समस्त अवतारों और उनकी विभूतियों तथा उनके अदभुत रूपों और 'पाषाण' का अध्ययन करने पर यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि उनके समस्त रूप केवल रमणीय ही नहीं अपनी समस्त शक्ति शील और अदभुत काव्यों की क्षमता से पूर्ण होने के कारण उदात्त भा हैं।<sup>४</sup> प्राच्य तथा पाश्चात्य विद्वानों

१ डा० मुन्शीराम शर्मा—भारतीय साधना और गुरु साहित्य, पृ० ३३३  
२ मध्ययुगीन हिन्दी साहित्य का लोक सात्विक अध्ययन पृ० ३६५  
३ यही पृ० ३६७  
४ डा० कपिलदेव पाण्डेय—मध्यकालीन साहित्य में अवतारवाद पृ० ६००

न 'उदात्त' पर गम्भीरता से विचार किया है। विचारक के और काष्ठ 'सुन्दर' तथा 'उदात्त' में भेद मानते हैं। सौन्दर्य 'रूप' से सम्बन्धित है तथा उदात्त ॥ विद्रूपता अरूपता भी निहित है। पाश्चात्य विचारक लाजाइनस न 'उदात्त' के स्वरूप पर तीसरी सदी के लगभग सद्धातिक रूप से प्रकाश डाला है। उसके मत से उदात्त अभिव्यक्ति की सक्षमता तथा विशिष्ट उत्कृष्टता का नाम है जिससे थोड़ा भागना हो जाता है।<sup>१</sup> हिन्दी में 'उदात्त' का प्रयोग सीमित अर्थ में होता है। वने भारतीय नाट्यकारों ने 'नाटक' के साथ 'उदात्त' को अपनाया है। प्राचीन साहित्य में अभिजात्य वर्ग से ही नेता का चयन होता था। नेता में 'धीरता' का अनिवार्य गुण सभी ने स्वीकार किया है। कठिन से कठिन संघर्ष में भी डिगता नहीं है। इस प्रकार वारता, महनशीलता, प्रतिमत्त्ववान् महागम्भीर आदि गुणों को 'उदात्त' कहा गया है।<sup>२</sup> इस प्रकार 'उदात्त' का विराम भारतीय परम्पराभावी नायक की चारित्रिक विशेषताओं को लेकर हुआ। 'उदात्त' में अनेक प्रकार के अभिजात्य गुणों का समावेश है।

कृष्ण सौन्दर्य की दृष्टि से समस्त मध्ययुगीन चेतना पर छाया हुआ है। उनका रमणीयता सुकुमार सौम्यता तथा चाचल्यपरक लालित्य का लगातार कविया ने वर्णन किया। ब्रजवासीदास न कृष्ण की सक्रियता, महान् काय, संघर्षरत, अश्वयजीवन से युक्त पाप से जूझने में निभय, जाति के कल्याणार्थ अनन्तर सचेष्टता तथा महान् सामूहिक लक्ष्य उनमें चित्रित किया है। राक्षसों का वध तथा इन्द्र से जनता को मुक्त करने के उपाय इसके प्रमाण हैं। कस के पास निभयता से जाना उसे पराजित करना मत्त युद्ध में पछाड़ना सत्रको प्रेम या सत्प्रेम देना उनकी उदात्त प्रकृति का प्रमाण है। उनमें उच्चतम काटि की मनुष्योदात्त, वीरोदात्त आन्तोदात्त प्रेमादात्त तथा धीरोदात्त रूप मिलता है। वे केवल धीरोदात्त नायक नहीं लोक नायक हैं। सूर के कृष्ण या ब्रजवासीदास के कृष्ण का वाक्य शास्त्र (धीरललित अधिकांश में वे धीरललित स्वीकृति हैं) या धीरोदात्त की काटि में रहने का साहम नहीं कर सकता। वे इन कोटियों से बहुत आगे की काटि के लोक मानस में विहार करने वाले लोक नायक हैं।

१ डा० नगेन्द्र—काव्य में उदात्त सत्य, पृ० १२

२ (क) महामत्योति गम्भीर क्षमावान् विकल्पन ।

स्थिरो निगूढाहङ्कारो धीरोदात्तो ददृशत ॥ सा० ६०, पृ० १३६

(ख) श्रीदासहिनाम सर्वोत्कर्षोद्वृत्ति, तद्व्यविजिन्धीयुत्व एवोपपद्यते ॥



### कथा का मूल भाव रस का आधार

मध्ययुगीन कथा का क्या इच्छामय है? कृष्ण ही कथा के केन्द्र हैं। सभी पटा षट्पाद कार्य षट्पाद की ग गणान्वित हैं। वे भक्ति का लिए सीमा' करता है उसमें सीमा तावक का धराया हुआ प्रमाण है। अत्रिनिवास भक्ति सागर है कवि भवा धारण धारण यद्वा योग्यता करता है। भक्ति रस के धातुमय कृष्ण प्रणाली गयी निम्न है। भक्ति तावक का निर्माण कृष्ण का धातुमय धन के रूप में लेगा कथा को गर्द नि बद्ध भक्ति भावना का विस्तार भारतीय साहित्य में करा। निम्न ही भक्ति-भाव म भावना का जो विस्तार भारतीय साहित्य में मिलता है उगरी दान रूप भक्ति को रस न्यायकार करता बहुत स्थिति की उपेक्षा करता है। अत्रिनिवास म भक्ति रस धाराय धनकर धारा है तोप सभी धन रस इतने योग्य रह हैं।

भक्ति को रस माना जाना या भाव यह समय का सीमा गताली : धारण और जन्म हो गर्द। भरत ( ३२१ ई० पू० ) से लेकर सप्तमरी गताली म पण्डित राज गताय ता निती ने रस शास्त्र के धातुय भक्ति रस का मायता नहीं दी। अभिनवगुप्त ने उन्हें रस शास्त्र को स्वीकार करते हुए भी भक्ति रस' का निर्देश किया। स्वयं जगन्नाथ ने भक्ति रस के विभाव अनुभाव सचारी भाव तथा स्थायी भाव को चर्चा की। फिर नव रस रुद्रि का पालन करत हुए उसे शात रस म धातुय दे दिया।<sup>१</sup> सप्तमरी भक्ति के धातुयों ने पीता उपनिषद भागवत के रसमय ब्रह्म का धातुय लेकर साहित्य भक्ति सून नारद भक्ति-सून मधुसूदन सरस्वती के भक्ति रसायन रूपगोस्वामी कृत 'हरि भक्त रसात्मक' सिन्धु' में विस्तार के साथ भक्ति पर विचार दिया एक इसे भक्ति रस स्वीकार किया गया। सभी ध य रसों से उत्पद्यता के आधार पर भक्ति रस को पराकोटि तथा अपराकोटि का स्वीकार किया गया। उपर धतय महाप्रभु के प्रभाव से बगल के गौडीय भक्ति साम्प्रदाय ने भक्ति रस का विशद विस्तार हुआ। इधर भक्तिवात के कृष्ण भक्त तथा राम भक्तों ने इस रस को धरम शिखर पर पहुँचा दिया। आचार्य नन्दुलारे वाजपेयी के धर्मो म उत्तर यही है कि इसका प्रधान रस साहित्य शास्त्र की कोटि में नहीं आता-वह भलोकि' रस है। यद्यपि साहित्य शास्त्र सब रसों का धानद भलोकि' मानता है किंतु सूर के काव्य का आलम्बन भलोकि' से भी भलोकि' है। यह धान' किसी धन कारण से नहीं सूर की कृष्ण भावना के कारण भलोकि' है। तुलसी के राम सूर के कृष्ण भक्त कवियों के जो जो नायक हुए हैं

इसने काव्य जगत की प्रचलित विधियाँ का अतिशय सा कर दिया है। इन विधियों की यह अदभुत कला है कि वे अपने स्वतंत्र अधिकार से ऐसे नायक का प्रवर्तन करते हैं, जो चराचर नायक हैं। कृष्ण के चरित्र और राम के चरित्र में राम और कृष्ण सम्पूर्ण काव्य का नायक, उपनायक, सब पात्रों सब घटनाओं का एक पूरा संचालन करते हैं।<sup>१</sup> ब्रजविलास के कृष्ण ऐसे ही हैं जो सचराचर नायक हैं। समस्त कथा में उनकी व्याप्ति देख कर उन्हें ही मूल भाव या रस का आधार मानना चाहिए।

‘ब्रजविलास’ का प्रधान रस शृंगार भी कहा जाता रहा है। यहाँ भी शृंगार तथा वात्सल्य का सामञ्जस्य सूर की भाँति हुआ है।<sup>२</sup> यह कृति भागवत तथा सूर सागर का अनुकरण है इसलिए इन दोनों रसों पर कवि ने सम्पूर्ण भक्ति मन से अपने को योद्धावर किया है। सूरदास के लिए आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने स्पष्ट कहा है कि ‘वात्सल्य और शृंगार के दोत्रों का जितना अधिक उदघाटन सूर ने अपनी बंद आँखों से किया, उतना किसी और कवि ने नहीं। इन दोत्रों का कोना-कोना वे भाँक भाँके। उक्त दोनों रसों के प्रवक्तृ रतिभाव के भीतर की जितनी मानसिक वृत्तियाँ और दशाभावाँ अनुभव और प्रत्यक्षीकरण सूरदास कर सके, उतनी का और कोई नहीं। हिंदी साहित्य में शृंगार का रस राजतरु यदि किसी ने पूरा रूप से दिया था तो सूर न।’<sup>३</sup> सूर की वरणन शक्ति का ‘ब्रजवासीदास’ में प्रभाव है, उनकी धागवदाघ-पटुता व्यंग्यपरक उक्तियाँ तथा कथ्य की आकृष्टता भी इनमें नही है।

शृंगार के दोनों पक्ष सयोग तथा विप्रयोग का यहाँ वरणन मिलता है। राधा मिलन रास-लीला, गोपियों की छेड़छाड़, मुरलीवादन लीला, गोदोहन लीला आदि के स्थला पर सयोग शृंगार का रंग जमा है। ‘वाटमिलन की लीला’ का एक सयोग चित्र देखिए—

इतने प्यारी जमुनिहि जाई । उतते आवत धरहि कहाई ॥  
नीलजलज तन शोभित आछे । नटवर केशकायनी काछे ॥  
दूरहि ते दसत ही जायो । जीवन प्राण तुरत पहिचायो ॥  
रही मनोहर बदन निहानी । कोटि बदन जा पर बलिहारी ॥  
मन भानद हुलस्यो हियो, रोम गुलब दग बारि ।  
बोली गद गद वचन मुख, तन बिहवल समारि ॥<sup>४</sup>

१ महाकवि सूरदास, पृ० ८६

२ डॉ० इन्द्रपाल सिंह ‘इंद्र’—रीतिकाल के प्रमुख प्रबंध काव्य, पृ० ३७५

३ भ्रमरगोपनसार (भूमिका), पृ० २

४ ब्रजविलास, पृ० ३३३

राग, भिन्न ने माय गाय राधा विहार व भी मोर हृष्य यही पर है—

तामर व्रतम तामरो व्रतामा । गोभीत कु न कुटी छत्रिधामा ॥<sup>१</sup>

प्रथम राधा मित्रा का रित्र बहुत माहुर है—

भोत्र दष्टि परी त राधा । प्रेम रानि गुण रूपा वगाधा ॥  
 तया विगत मास दिन रोरी । नीन वमन तन की छत्रि गोरी ॥  
 यो पीठ वगा त भोरा । अति छत्रि पुज न्निन की भोरी ॥  
 सग सरणिो आवत दगो । पित रह मुख रोरे निमेषो ॥  
 रात्रि रू पाश्याम बहाई । अनुपम छत्रि नगि रह सुभाई ॥  
 तया वया मिलि परी ठगोरी । वृभत व्रताम वीन सु गोरी ॥  
 परी रहति बाकी है धटी । प्रसन्नो नहि बसई व्रज भेंटा ॥  
 तह व। हम व्रजता आव । सेतत रहे आपने गाव ॥

गुप्त रहत श्रवना सदा न डाटा व्रज माहि ।

घर घर में नित वारिष मासन दधि ल खाहि ॥

विहसि कह्यो वनप्रथाम तुम्हरो कहा चुराई है ।

आवहु विन व्रज धाम नितहि खेलिये सग मिलि ॥<sup>२</sup>

नियोग में पूवराग मान एवं प्रवास की यजना बहुत समर्थ है । राधा का दशदश बहाना पूष राग के अंतर्गत है । विरह तो 'व्रजविलास' में उत्तराद्ध में व्याप्त ही है । कृष्ण के मधुरा जाते ही उद्धव आगमन के साथ इसका वेग दशनीय है । मात पर गुर मानलीला<sup>३</sup> मध्यम मात लीला<sup>४</sup> की चर्चा ही अलग है । 'विरह' के चित्र दलिये—

ऐसे मनगुण सनि गोपाला । भई विरह वश सब व्रजवाला ॥

अनि हा कठिन भयो दुख मन म । व्यापी दसई अवस्था तन म ॥

ज्यो चकोर बिनु चंद दुपारी । जसे ही वारिज बिनु वारी ॥<sup>५</sup>

विरह की समस्त कामदशाएँ सूर की भोजि वर्णित हैं । वास्तव्य में वृण-छेदन लाला मासन चोरी लीला आदि में हृदय रमता है । युद्धादि में रोद्र वीभत्स आदि सभी रस इस काय में विद्यमान हैं लेकिन प्रधान रूप से भक्ति भाव की ही प्रधानता है । कृष्ण आलम्बन हैं तथा आनन्द विषयक रति ही स्थायी भाव है,

१ व्रजविलास, पृ० २६८

२ यही, पृ० १२३

३ यही, पृ० २६१

४ यही पृ० ४४२

५ यही, पृ० ५५६

लीलाएँ उद्दीपन हैं तथा राधा, गोपियाँ, भक्त सभी आश्रय हैं। इस काव्य का प्रधान रस भक्ति रस को मानना चाहिए क्योंकि कथा की धुरी कृष्ण पर ही आधारित है।

### अथ चरित्रो द्वारा महत्ता की स्वीकृति

कृष्ण का व्यक्तित्व इतना अपराजेय तथा प्रभावशाली है कि 'ब्रजविलास' के सभी पात्र उनके गुणों का गान करते हैं। वे मानव तथा ब्रह्म के अपूर्ण समन्वय होने के कारण स भी अपनी महत्ता रखते हैं। एक ओर माखन घुराते, मुरली बजाते, गोपियों के संग रास लीला रचाते नृत्य करते, भूमते हुलसते, राधा के साथ श्रीढा करते उसके चरणों पर सिर रख कर मनाते, चीर हरण करते हैं, दूसरी ओर राक्षसों का वध करते, बालियदमन करते तथा कस ऐसे प्रबल दुष्ट को बिना प्रयास सहाते हैं। उनमें मानवीयता तथा भलीकृतिता दोनों ही चरमसीमा पर हैं। उनकी सबजनप्रिय लीलाएँ ही उद्द जन मन वल्लभ बनाती हैं। राधा नट नागर रसिक-शिरामणि छलिया पर अपना सबस्व धार देती है। गोपियाँ उनकी मुरली पर अपने कुल की धान' छोड़ कर घर से भागती हैं तथा रासलीला करती हैं। यशोदा भिट्टी खान खाते कृष्ण के मुख में ब्रह्माण्ड देखती हैं। बास लीलाओं में उनकी हठ तथा उदण्डता भी उसे मुग्ध करती है। नन्द को वे इतने प्रिय हैं कि मधुरा स अकेले लौटते समय उनका हृदय फटन लगना है। गोवद्ध न उठाकर ब्रज की रक्षा करने के कारण जन-जन के मुह पर उनका गुणगान रहता है। मधुरा चले जाने पर समस्त ब्रज उनके विरह में शोकाकुल रहता है। गोपियाँ, मधुवन जमुना पपीहा चाँद आदि सभी को कोसती हैं, कुब्जा को धिक्कारती हैं। उसके नाम से आक्रोश व्यक्त करती हैं। उद्धव द्वारा निगुण की बकालत को वे मानती नहीं हैं तथा अपने प्रेम-नायक सगुण कृष्ण में अपनी घोर आराम निष्ठा का परिचय देती हैं। उद्धव स्वयं गोपियों के अपार प्रेम से प्रभावित होकर उनकी भाँति ही विभोर हो जात हैं—

‘उयो स माये पर लीनी । लखि गुभ प्रीति दण्डवत लीनी ॥

गयो याग की नाव बडाई । हूँ गयो आप गोप ब्रज आई ॥

उयो पग पद शीश नवायो । प्रभु सादर हूँ बण्ड लगाया ॥’

उद्धव कृष्ण से ब्रज की विरह-दशा का बखान करते हुए वहाँ के निवासियों की प्रेम-नया विस्तार से कहने धवते नहीं हैं तथा ‘बहणानिधि’ स शीघ्र जाने की विनय करते हैं—

निगम कहत वश भक्त के, पूरन सब सुख साज ।  
 वरि सुहाई ब्रज देखिए गहो विरह की साज ।  
 प्रतिहि दुखित तन क्षीन, ब्रजवासी तुम विरह वश ।  
 तुम तन धन मनलीन रटत चातकी लो सवो ॥  
 कहा कही गति प्रभु राधा की । जसी व्यथा विरह बाधा की ।  
 भूपन जिनु अति क्षीण शरीर । बसन मलीन सवत दग नीरा ॥<sup>१</sup>  
 समस्त ब्रजलोक म कृष्ण के प्रति प्रेम ही प्र म पाकर उदव कृष्ण की ऐसे  
 ब्रजलोक का छोड़ देने पर उलाहना देते हैं ।  
 शत्रु कृष्ण की शक्ति का लोहा मानते हैं । भसुर कृष्ण के नाम से कापते  
 हैं स्वयं कम भसुरो को लगातार कृष्ण द्वारा मरता हुआ देख कर भयभीत हो जाता  
 है । कृष्ण म गुणो का गान देवता करते हैं—

जय धुनि गगन सुर गण बखानी सुमन की वर्षा भई ॥  
 कहत सब हरि कस मारयो हार यह त्रिभुवन गई ॥  
 ब्रह्माणि सुरधुनि सिद्ध गध्रव मुदिन मन अस्तुति भनी ॥  
 भूमि सुर उपवार दिन अवतार धुनि त्रिभुवन धनी ॥  
 धय गज धनि मल्ल मारे धय कसासुर धनी ।  
 परनि तन अनुपम लही गति जात नहि महिमा गना ॥  
 धय भल्लग ब्रह्माण्ड नायर भक्त हित नरतन धरयो ।  
 धय ब्रजवासी सबस जिन प्रेम वरि तुम सब करयो ॥  
 ब्रजविास का ऐसा कोई पात्र नहीं है जिन पर कृष्ण के महान् व्यक्तित्व  
 का धाप न हा ।

नायक तथा प्रतिनायक—जस कृष्ण-कथा का सर्वाधिक प्रख्यात प्रतिनायक  
 है । यह मधुरा क महाराज उग्रसेन का क्षत्रज तथा लनवराज का वीर्य पुत्र था ।  
 मा का नाम श्रुत्वात बताया जाता है । कम के लिए प्रसिद्ध है कि बढ हो कर  
 उमन माधराज जरासभ का अस्ति तथा प्रातिनायक ने दो कथाओं का पालिग्रहण  
 किया था ।<sup>२</sup> उसन अपने पिता का राजच्युत करने राजनिहासन हथिया लिया था ।  
 पानी निरस रा पुत्र का विवाह वासुदेव से किया था । अपार भयानकारी कम  
 से सभी जन्म लन पालि प । त्रका क घाटके पुत्र द्वारा धन वध क आवागवाणी  
 सुनकर उमा त्ररी तथा वासुदेव को क कर लिया था । नाय ही आभरता क धय

<sup>१</sup> भजविलास पृ० ६११

<sup>२</sup> त० डा० घोरेत्र वर्मा—हिन्दी साहित्य कोश, पृ० १६ (भाग २)

उपाया में भी वह घुसा नहीं। 'ब्रजविलास' की सम्पूर्ण कथा के असुर उसी के द्वारा भेजे हुए हैं। उसने कृष्ण वध के लिए पूतना, श्रीधर, बाणसुर, सकटासुर, तणावत्त, बकामुर, ग्रधामुर, धेनुक, प्रलम्ब, शखूड, वयभामुर, केशी, रजक, व्यामासुर, बलूलया (हाथी) आदि अनेक विघ्नो को भेजा था। व सभी के सभी कृष्ण के समक्ष धोर असफल हुए। अपनी असफलताओं का लगातार देख कर गून्मति कस अपार दुखी था। सूरदास ने भी इन घटनाओं का वर्णन खूब किया है। 'अपनी अपार भयकरता तथा पापवृत्ति के साथ-साथ वह भी रावण की भाँति कृष्ण का भक्त था। सूर ने कृष्ण उपासना के कारण ही उस भी परम पद दिया।<sup>२</sup>

माधुय भाव के परिपाक न होने के कारण कस का चरित्र निम्बाक-सम्प्रदाय, चतय सम्प्रदाय, राधावल्लभ सम्प्रदाय और हरिदासी सम्प्रदायों में कृष्ण कथा के अनन्त कस धोर उपेक्षित पात्र हैं।<sup>३</sup> वल्लभ सम्प्रदाय के कवियों में सूर तथा ब्रजवासी दास ने ही कस का सविस्तार चरित्र चित्रण किया है। सम्पूर्ण कम कथा के मादभ में कस को खलनायक की सजा दी जाती है।

कस के द्वारा ही कृष्ण का ब्रह्मत्व समझ उठा है। कस के दुष्ट कर्मों ने ही उनकी शक्ति को खलवारने की भूमक चेष्टा की। लेकिन सीला विहारी कृष्ण ने उनका दमन किया। लीनवतारी कृष्ण के असीक्कि, अतिप्राकृत तथा दिव्य व्यक्तित्व की 'यजक' समग्र सामग्री प्रस्तुत करने में उनका स्थान महत्वपूर्ण है। लेकिन वह रावण की कोटि का पवन प्रतिनायक नहीं है। अपनी अपार शक्तियों में रावण कस में अत्यधिक बड़ा है। कस कौरा नम्भी, धूत तथा मूर्ख है। रावण विद्वान्, राजनीतिज्ञ तथा शिव का उपासक भक्त है। रावण जानबूझ कर कि अगर भगवान् हाथों तो उनके हाथ मरना श्रेयस्कार है। यदि मानव हैं तो उनसे डरना नहीं चाहिए। इस नीति से लड़ता रहता है। रावण मायावी, प्रचण्ड, योद्धा, धारोद्धत तथा अपने शीघ्र पराक्रम के लिए प्रख्यात है। कम केवल दुष्टताओं के लिए स्मरण किया जाता है। वह मान आसुगी प्रवृद्धि का पोषक प्रतात है। रात्रस के समक्ष उसका असुरत्व छाटा पड़ता है। मानस में राम रावण का युद्ध अपनी भयकरता में दूसरी मिसाल नहीं रखना। कस तथा कृष्ण का युद्ध व्रणन तथा युद्ध भी साधारण वन पड़ा है। कवि ने कम तथा कृष्ण के वर्णन का बहुत सशक्त चित्रण नहीं किया। वह केवल कृष्ण की न्ययता के समक्ष ही नतशिर रहा है। परिणाम स्वरूप कस का

१ सूरसागर, पृष्ठ ६६६, ६८०

२ वही, पृष्ठ २६९६, ३७०१

३ स० डा० धीरेन्द्र वर्मा—हिन्दी साहित्य कोश, पृष्ठ ५७

व्यक्तित्व खलनायक के रूप में बहुत चमक नहीं सका है। युद्ध-वर्णन में तेजी नहीं पा सकी—

क्षण बठत क्षण उठत अघीरा । मारे असुर सबल दोउ बीरा ॥  
 प्रति बलवन्त नन्द के बारे । तब सकोप नप ओर निहारे ॥  
 गय मचान मचनि चढ दोऊ । बाज भपट देखत सब बौऊ ॥  
 ह व गयो चरित नृपति भय मायो । हरि को मारि सकयो सो नाही ॥  
 रहि गयो लियो खा कर माही । गिरि गयो मुकुट शीश ते भारी ॥  
 तब ही श्याम लात एक मारी । गिरि गयो मुकुट शीश ते भारी ॥  
 दीन डबेल मच तैं भू पर । दूद परे हरि ताके ऊपर ॥  
 तहा चतुमुज रूप निलायो । सो सरूप द स्वग पढायो ॥  
 मारयो बस कहत सब बानी । जय मुनि सुर गन गगन बखानी ॥<sup>१</sup>

कृष्ण तथा बस युद्ध में प्रवल पचण्डता नहीं धारण पायी। इस दृष्टि से कृष्ण ऐत नायक के समक्ष बस पीना प्रतिनायक है।

नायक तथा नायिका

‘राधा’ व्रजविलास की नायिका है। इसका व्यक्तित्व कृष्ण के समक्ष बहुत उभर नहीं सका। नायक के प्रेम प्रसंगों में सूरदास की भांति ही उनकी चर्चा आती रही है। वह कृष्ण पर ही आधारित चरित्र है। वह राधा प्रमिता आराध्या तथा पूण समर्पिता अनेक रूपों में यही चित्रित है।

नायक कृष्ण व साथ राधा-कृष्ण प्रेम का आश्रय व्यापकता सावप्रियता तथा मनोहरता व साथ प्रख्यात है। बिना राधा कृष्ण की कल्पना ही अधूरी है। उनका सोच नायक सिद्ध ही नहीं हो पाता। राधा प्रकृति है कृष्ण पुरुष है। राधा पूण सनातन शक्ति का प्रतीक है। कृष्ण पूण सनातन ब्रह्म का प्रतीक है। फिर भी कृष्ण के साथ राधा का कल्पना परवर्ती युग की ही उपज है। आभीरा की प्रेम दबी का बन्ध कृष्ण से संयोग हुआ गया वह अलग शीघ्र का विषय है।<sup>२</sup> उन्होंने राधाबा का बीज भारतीय शक्तिवाद में स्वीकार किया है।

भागवत में राधा का नाम तक नहीं है। कृष्ण की भांति राधा व सम्बन्ध में प्राचीन उत्सर्ग प्राप्त नहीं होत परन्तु यह अनुमान होता है कि मालवियों या आभीर जाति में प्रचलित गानियों व साथ गीताय-कृष्ण का सीमाएँ गानों व रूप में उगी

१ ब्रजविलास पृ० ३३७

२ डा० शक्तिप्रकाश दास गुप्त—धी राधा का जन्म विजाप, पृ० ३४

समय से प्रचलित रहें जब से कि सात्वता की वामुदवोपासना के प्रमाण मिलते हैं। कृष्ण की प्रेयसी एवं प्रेमिका गोपियों में निश्चय ही एक विशेष गोपी का उल्लेख होना रहा है यही गोपी आने राधा के नाम से प्रसिद्ध हुई जान पड़ती है। राधा मन्वन्धी प्राचीन संकेता में तमिल के आलवार सन्तों की नापिन्नाई की 'राधा' ही माना गया है। कृष्ण की यह प्रियतमा तमिल में अत्यन्त सुन्दरी तथा सन्मी का अवतार है। कदाचित् दक्षिणात्य कृष्ण भक्ति की यह 'नापिन्नाई' गोपी उत्तर भारत की राधा है।<sup>१</sup> राधा की प्रथम उत्पत्ति सानवाहन द्वारा सप्रहीत गाढ़ा सत्तसई में मिलता है। विद्वान् इसे सातवीं शताब्दी की रचना मान कर राधा-कृष्ण क्या का इससे पूर्व अनुमान करते हैं। वष्णवों में तीनों श्वात पुराण हरिवंश, विष्णु और भागवत में राधा का नाम न पाकर गहरा विषाद विद्वानों में उठता रहा है कि राधा नाम आया कहा से? और फिर बालक कृष्ण के साथ राधा की आत्मेन जोड़ी मिला दी गई? माधव तथा भागवत सम्प्रदाय राधा को मानते ही नहीं। प्राचाय हजारीप्रसाद द्विवेदी ने बहुत खोजबीन के पश्चात् एक महत्वपूर्ण मत लिया है कि 'गाथा सप्तशती में पञ्चतन में और ध्वन्यालोक में राधा' नाम आया है पर कृष्ण की सर्वाधिक प्रिया गोपी के रूप में उनका नाम भागवतान्तर साहित्य में ही अधिक है। ब्रह्म वक्ता पुराण में राधा प्रमुख गोपी है। पर यह पुराण बहुत पुराना नहीं कहा जा सकता और जिस ग्रन्थ में राधा कृष्ण के नित्य विहार की कथा है वह तो निस्मृत्य परवर्ती है। नित्यानन्द प्रभु की छोटी पत्नी जानकी देवी जब वृन्दावन गयी, तो उन्हें यह देखकर बड़ा दुःख हुआ कि श्रीकृष्ण के साथ नाम की भूति की वही पूजा नहीं होती थी। घर लौट कर उन्होंने नयनभास्कर नामक कलाकार से राधा की मूर्तियाँ बनवायी और उन्हें वृन्दावन भिजवाया। जीव गास्वामी की आना से यह मूर्तियाँ श्रीकृष्ण के पास में रखी गयी और तब से श्रीकृष्ण के साथ राधा की भी पूजा होने लगी।<sup>२</sup> राधा के सम्बन्ध में डा० रामचारी सिंह दिनकर का कहना है 'इसलिए यह बहुत सम्भव दीयता है कि आर्यों के वष्णव धर्म में कृष्ण की बाल लीला और राधा से उनसे प्रेम की कल्पना किसी आर्योत्तर जाति से आयी हो।'<sup>३</sup> वे दक्षिण के आर्योत्तर समाज की कोई प्रेम देवी का ही राधा मानते हैं। कुछ भी हो, राधा तथा कृष्ण की प्रेम लीला का आधार गाढ़ा सत्तसई ही है। वही से वे 'रोमाण्टिक' रागों में सामन आती हैं। जयदेव ने राधा का निरुज लीला में मुग्ध माधुरी बिखेर दी। परवर्ती राधा के चित्र 'गीत गोविन्द' की ही उपज लगते हैं। राधा पर तांत्रिक तथा वामाग

१ स० डा० धीरेन्द्र वर्मा—हिन्दी साहित्य कोश, पृ० ४६२ ६३ (भाग २)

२ माध्यकालीन धर्म साधना प० १३६

३ संस्कृति के चार अध्याय, पृ० ८१



या भी प्रभाव पड़ा था तथा नग्न वल्लभ बन पड़े। हिन्दी कृष्ण-काव्य में भक्त कवियों ने विशेषकर सूरदास ने राधा को साक्षात् सौन्दर्य देवी, परमशक्ति माना है। राधा, कृष्ण से अभिन, मायारूपिणी, आत्मादिनी शक्ति के रूप में चित्रित है। सूर परवर्ती सभी कवियों ने राधा के चरित्र को क्या ही धरनाया। कुछेक ने राधा को कृष्ण से भी अधिक महत्व दे डाला। इस दृष्टि से 'ब्रजवासीदास' सूरदास के अनुवर्ती हैं। राधा का प्रथम मिलन सूर के कृष्ण की भाँति यहाँ भी मोहलता है।<sup>१</sup> राधा सम्बन्धी सभी कुछ जनना सूरदास की नकल है। अतः इनकी राधा में सौन्दर्य की देवी परम आराध्या तथा मानवी रूप तीनों का सूर की भाँति मिश्रण है। राधा-नापी प्रसंग में कृष्ण के प्रेम पक्ष का विस्तार हुआ तथा नायक के चरित्र को दिव्य प्रेम की दृष्टि से सामने लाने में नायिका का विशेष हाथ रहा है। दिव्य नायिका राधा ने भी कृष्ण को लोला की दृष्टि से दिव्यता की दन दी है।

### कृष्ण की नायक कोटि का निरूपण

ब्रजविनास के कृष्ण पूर्ण ब्रह्म अविनाशी पूर्णवतार, तीलावतार तथा ब्रह्माण्ड नायक हैं। सूर के कृष्ण तथा ब्रजवासीदास के कृष्ण एक ही हैं। सूर ने मुक्तक पदों में जो क्या कहा है वही यहाँ प्रबलत्व में लिखी गई है। 'ब्रजविलास' के अनेक स्थल सूरदास के पदा के मूल रूप में भरपूर हैं। दोला की भक्ति भावना भक्ति के शीघ्र शिखर पर पहुँचा हुई है। 'ब्रजविनास' के लिए यही कहना उचित है जो गाथाय तन्दुलारे बाजपेयी ने सूर के कृष्ण के लिए कही है कि 'उत्तर यही है कि इन का पद्यान रस साहित्यशास्त्र की कोटि में नहीं आता वह अलौकिक रस है। यद्यपि साहित्य शास्त्र सब रसों का आनन्द 'अलौकिक' मानता है, किन्तु सूर के कृष्ण का आनन्द अलौकिक से भी अलौकिक है। यह आनन्द किसी अन्य कारण से नहीं सूर की भक्ति भावना के कारण अलौकिक है। तुलसी के राम, सर के कृष्ण भक्त कवियों के जो नायक हुए हैं सब ने काव्य जगत की प्रचलित विधियों का अतिमूल्य गा कर दिया है। इन कवियों की यह अदभुत कला है कि वे अपने स्वतन्त्र अधिकार से ऐसे नायक का अवतरण करते हैं, जो चराचर नायक हैं।<sup>२</sup> इस चराचर नायक पर साहित्य शास्त्र के सभी मानदण्ड निरर्थक हो जाते हैं। कृष्ण भक्ति-काल तथा भौतिकाल में अधिकांश धीरे-धीरे चरित नायक मान गये हैं। भौतिकाल के धारक छोटे नायक (कृष्ण) अनुकूल दक्षिण, गठ तथा धूस नायक भी दिखायी देते हैं। दिव्य अदिव्य तथा दिव्यादिव्य की नायक नाटिका में भक्तिकालीन राण-काव्यों में अवरगीत सुदामाचरित्र आदि में दिव्यादिव्य नायक है। सूरदास के काव्य में कृष्ण

१ ब्रजविलास

२ महाकवि सूरदास, पृ० ८६

को नया विस्तार तथा नया जीवन मिला। साहित्यशास्त्र के प्राचीन बंधनों को तोड़ कर कविता की नवीन रचना धारणा करने प्रकट हुई। उसने साहित्यशास्त्र की झालें खोल दी एवं ससीम के स्थान पर असीम का प्रतिष्ठित किया। इस कृष्ण को साहित्यशास्त्र धीरोदात्त नायक की कोटि में भी रखने का साहस नहीं कर सकता है। 'ब्रजविलास' के कृष्ण को धीरोदात्त कहना असीम को ससीम करना है, उनका अपमान करना है। उनकी नायक कोटि के निर्धारण में साहित्यशास्त्र साथ नहीं दे पाता उसकी सभी निर्धारित कोटियाँ उनके सामने बहुत लुच्छ लगती हैं। वे नायका के नायक हैं। सभी रसों के आधार हैं। कृष्ण जन-जन को प्रिय लोक-नायक हैं। भक्ति के आलम्बन ब्रह्माण्ड नायक हैं, सचराचर नायक हैं।

निष्कप रूप में कह सकते हैं कि कृष्ण युग-युग की माधना से प्राप्त युग नेता हैं। जो प्रत्येक युग के अनुकूल बदलते रहने हैं। 'ब्रजविलास' के 'लीलावतारी कृष्ण पुराण पुरुष' है जिसे राम की भाँति सांस्कृतिक नायक मानना चाहिए। राम भगवान् के प्रतीक सांस्कृतिक नायक हैं और कृष्ण प्रेम-सौन्दर्य के भुक्ता भागी लीला प्रतीक सांस्कृतिक नायक हैं और कृष्ण प्रेम-सौन्दर्य के मुक्त भोगी लीला प्रतीक सांस्कृतिक नायक हैं।

## कृष्णचन्द्रिका

### कवि परिचय

कृष्ण काव्य परम्परा की इस अमूल्य रचना के रचयिता का जीवन अभी तक विवाद प्रस्त है। उनका कवि परिचय अनुमान पर ही आधारित है। कोई कवि का नाम गुमान त्रिपाठी<sup>१</sup>, कोई गुमान मिश्र<sup>२</sup> तथा कोई गुमान तिवारी<sup>३</sup> कहता है। डा० प्रताप नारायण टण्डन ने गुमान मिश्र तथा गुमान त्रिपाठी को एक ही कर दिया है तथा नवम चरित के अनुवादक तथा कृष्णचन्द्रिका के लेखक को एक ही स्वीकार किया है।<sup>४</sup> आचार्य रामचन्द्र शुक्ल<sup>५</sup> तथा रामनरेश त्रिपाठी<sup>६</sup> ने भी दोनों को अलग-अलग एक ही स्वीकार किया है जबकि दोनों में पर्याप्त भिन्नता है। एक

१ डा० विश्वरीत्ताल गुप्त—सरोज सर्वेक्षण, पृ० १३२

२ मिश्रचन्द्र विनोद, पृ० ७३३

३ भा० विश्वप्रकाश दीक्षित बटुक—हिंदी साहित्य का नूतन इतिहास।

४ हिंदी साहित्य का प्रवर्तित इतिहास, पृ० २८२, खण्ड १ (पद्य)

५ हिंदी साहित्य का इतिहास पृ० ३५६

६ कविता कौमुदी, पृ० ४९३ (प्रथम भाग)

ह। नाम वंश कवि ने मित्र गुमान न भंग्य चरित्र का अनुकरण किया। जो ११ भाग है तथा गंगा विनाश न कृष्णचंद्रिका का रचना का होना। कृष्णचंद्रिका साधुओं की गणना नहीं। या जनता में इनका प्रचार कम हुआ तथा कवि वंश विनाश का नाम की जाहरी का भा प्रचारित नहीं रहा।

कवि गुमान विनाश महाराज दरभंगा सु-रंग-व विनाश १। इनो विनाश का नाम 'गंगाविनाश विनाश' का। कृष्णचंद्रिका में विनाश है कि—

रंग महाराज कवि है विनाश विनाश।

विन म विनाश मनि प्रभु वंद म मानन ॥१॥

गोपाल मणि विनाश वंश मणि गुमान गुमान तथा अमान मानक धार पुन भ। गुमान ने कृष्णामय तथा गुमान न कृष्णचंद्रिका का रचना का। एक सप्त तथा दूसरा सप्त प्रबंध काय है। एक म मानक का भा ॥ तथा दूसरे ॥ 'रामचंद्रिका' का भाग का अनुकरण है। गुमान विनाश की एक कवि कृष्णचंद्रिका भा कवि जाना है, किन्तु कवि का नाम कृष्णचंद्रिका में ११ रखा है। जयसंकर भट्ट न इस कवि का सम्मान करता हुए १६३५ में इसका माहौल से प्रकाश भी कराया था। कृष्णचंद्रिका उनीगथा शास्त्री वंशारम्भ का रचना है जिसका रचना समय कवि न श्रेष्ठ गुना तथा श्री गुवार सं० १८३८ ख्रीस्त विना है।<sup>१</sup>

"कृष्णचंद्रिका कवि की रामचंद्रिका के अनुकरण पर लिखा हुई विविध छंदों से युक्त चमत्कारिक रचना है। धार छंद की मरिचक वाक्य में मधुर ताद शोभ्य की गृष्टि हुई है। केषव की भांति ही इसे कवि १ सत्सर्ग प्रकाश (सर्गों) में लिखा है। कवि वंश महरा की मातर गुमान ने विविध छंदों ॥ कृष्णचंद्रिका का निर्माण किया। कोई भी परवर्ती निर्माण यदि समय तथा विचारनाम है तो अनुपाय पूर्ववर्ती में जो स्पष्ट बुनिया सक्षिप्त होती है उतने वह निश्चय ही सब ताता है। कृष्णचंद्रिका' इसी प्रकार का प्रमाण निर्याद पड़ता है।<sup>२</sup> कृष्णचंद्रिका यहा प्रबंध काय है एक इसमें विस्तार पूर्वक कृष्णचरित्र का वर्णन है।<sup>३</sup> कृष्ण पर प्रबंध काय लिखने की परम्परा मध्यकाल में अत्यंत रहा है। कृष्ण मध्यकी जा भी प्रबंध काय लिखे गए उन सभी में 'कृष्णचंद्रिका' ही मूल्य स्थान का अधिकारी है। डा० शम्भूनाथ सिंह इस कृति की महाकाव्य न मान कर भी बहुत महत्वपूर्ण प्रबंध कृतियों में आन्तर का स्थान देने हुए लिखते हैं कि "कई

१ कृष्णचंद्रिका, पृ० १०

२ वही, पृ० ११

३ प्रा० विद्वनाथ प्रसाद मिश्र—हिंदी साहित्य का इतिहास, पृ० ८१८ (भाग २)

४ वही, पृ० ८१८

दृष्टियों से यह अत्यन्त महत्वपूर्ण काव्य है। यद्यपि 'कृष्णचंद्रिका' का उतना प्रचार नहीं हुआ है, पर यदि निष्पन्न भाव से विचार किया जाए तो पदमावत श्री राम चरित मानस के बाद प्रबोधत्व और रसात्मकता की दृष्टि से मध्यकालीन प्रबोध काव्यों में उसे सर्वश्रेष्ठ स्थान दिया जाना चाहिए। गुमान मिश्र ने 'कृष्णचंद्रिका' में रामचरित मानस तथा रामचंद्रिका की शली का सुंदर समन्वय किया है। यह सफल प्रबोध कृति उस युग की महान् उपलब्धि के रूप में अभी तक स्वीकार नहीं की गई है। विद्वानों ने उस पर कृपा ही नहीं की तथा यह थोड़ा रस सिद्ध कृति अभी तक उल्लेखित ही है। इसमें श्रीमद् भागवत को आधार बनाकर कृष्ण-जन्म से लेकर कंस-वध तथा राज्य प्राप्ति तक की कथा बहुत विस्तार से कही गई है। पौराणिक शली में लिखी गई इस रचना में पौराणिक महाकाव्य की सभी विशेषताएँ एक साथ मिलती हैं अतः यहाँ पर इस कृति के महाकाव्यत्व की चर्चा भी अनिवार्य प्रतीत होती है।

### महाकाव्यत्व

यह निश्चय रूप से कहा जा सकता है कि इस रचना के विषय में विद्वानों को जानकारी प्रायः न के बराबर रही है। भक्ति से प्रभावित यह रचना साधुओं की सिद्धिगोष्ठिका रहा है। विद्वानों ने प्रायः इसे मार्मिक या सफ़्त प्रबोधकाव्य कह कर भी अपनी उदासीनता व्यक्त की है। सत्ताइस प्रकाशों में विभक्त पौराणिक शली की इस विज्ञान कृति में इतिवत्त के पूर्ण निर्वाह प्रवाह के साथ अखण्ड रसात्मकता मिलती है। कृष्ण से सम्बंधित अनेक घटनाओं का शृङ्खला-सूत्र अटूट है तथा कथा लगातार जिज्ञासा का जल में देनी हुई गतिशील रहती है। इस प्रकार इसका बेजोड़ प्रबोधत्व देखकर इस कृति के प्रति आकर्षण का बढ़ जाना स्वाभाविक ही है। पुराण-पुरुष कृष्ण के भक्त अवतारी रूप की प्रशानना देकर इस पौराणिक महाकाव्य की रचना की गई है। 'कृष्णचंद्रिका' पृथ्वीराजरासो या धारहाखण्ड की भाँति का विकसनशील महाकाव्य नहीं है। विकसनशील महाकाव्यों की भाँति अतिप्राकृत तत्व, निरुधरा कथाओं पुरा कथाओं अदभुत लीलाओं आदि की भरमार होने पर भी यह कृति भगवान् पुराण शब्द इतिहास के अर्थ में मितती है। पीछे से कृष्ण धारा को यहाँ पर नया रूप दिया तथा पौराणिक शली में पुराण-कृष्ण की समस्त विशेषताओं को इस महाकाव्य में प्रस्तुत किया है। महाकाव्य के पूर्व निर्धारित लक्षणों की बसोटी पर यहाँ उसके महाकाव्यत्व पर दृष्टिपात करेंगे।

## कृष्णचंद्रिका का काव्य रूप

कृष्णचंद्रिका पर भी प्रथम प्रश्न 'मानस' की भांति ही यह उठता है कि यह महाकाव्य है अथवा पुराण काव्य ? भारतीय आचार्यों ने पुराणा को काव्य के अन्तर्गत स्थान नहीं दिया। पाश्चात्य विद्वान भी पुराणा को काव्य नहीं मानते हैं। 'पुराण' शब्द में न काव्य का बोध नहीं होता प्राचीन परम्परा से प्राप्त धार्मिक भावना का बोध होता है। पौराणिक शब्दों के महाकाव्य तथा पुराण-काव्य में पर्याप्त अन्तर है। पौराणिक शब्दों के महाकाव्य तो मानस पञ्चमचरित तथा महापुराण भी हैं पर वे मात्र पुराण नहीं हैं उनमें उच्च कोटि की साहित्यिकता भी मिलती है। प्राचीन साहित्य में कृष्ण का सीला गान है। कवि ने अत्यंत प्राचीन काल से प्राचीन हिंदू पुराण इतिहास के नाम के धार्मिक ग्रंथों को पुराण कहा है। विष्णुनृत्य ने पुराण का एक व्यापक लक्षण घोषित किया है कि इसमें किसी न किसी देवता को आधार बनाकर या अवतार का आश्रय लेकर सकीर्ण मतवात या किसी सम्प्रदाय विशेष का सकोपता के साथ प्रचार होता है।<sup>१</sup> डा० शम्भूनाथ सिंह ने महाकाव्य तथा पुराण काव्य में पर्याप्त अन्तर दिखाते हुए पुराणों के लिए लिखा है कि— पुराण साहित्य एक भिन्न प्रकार का ही साहित्य है जिसके ये पांच आवश्यक लक्षण माने गये हैं—(१) सग (२) प्रतिसग (३) ऋषियो तथा देवताओं का वंश वंश (४) मन्वन्तरो का वंश, (५) वंशानुचरित अर्थात् राजवंशों का वंश। इस तरह उनमें सृष्टि की उत्पत्ति तथा से लेकर अनेकानेक राजवंशों के राजाओं तक का इतिहास मिलता है।<sup>२</sup>

पुराण-काव्य की इन विशेषताओं के आधार पर 'कृष्णचंद्रिका' की देखने पर स्पष्ट है कि वह पुराण काव्य नहीं है। उसमें सग उपसग तथा मन्वन्तर का वंश नहीं है। उसमें पुराणों की भांति सृष्टि कथा, भूगोल, शकुन विद्या आमुर्वेद धनुर्वेद मंत्र-तंत्र तीर्थ पूजा तथा गल्प आदि भी नहीं हैं। उसमें नायक के वंश का भी वर्णन नहीं संकेत मात्र है। कृष्ण के साथ पुराणों की हजारों गाथाएँ जुड़ी हैं जिन को छोड़ दिया गया है। 'भागवतपुराण' को सूरदास तथा ब्रजवासीदास की भांति आधार बनाकर भी कवि ने कृति में काव्यात्मकता बलात्मकता तथा रसात्मकता की सृष्टि की है। इन पुराण काव्य के तत्व इसमें नगण्य हैं, काव्यरस की दृष्टि से इसका महत्व बहुत होना चाहिए।

१ एम० विष्णुनृत्य—ए हिस्ट्री ऑफ इण्डियन लिटरेचर प० ५२२

२ हिन्दी महाकाव्य का स्वरूप विकास, पृ० ४८८ (प्रथम भाग)

## व्यापक परिधिपुन सुगठित कथानक

'कृष्णचरित्र' का कथानक प्रपञ्चत्व की आगुष्ट शक्ति के कारण बहुत समय बन गया है। कथानक का आधार सूरमागर, परमादमागर, अन्विनाम की भाँति ही श्रीमद्भागवत के दशम स्कंध पर आधारित है। कवि ने आरम्भ में श्रीमद्भागवत की कथा गुनान का सवेन दिया है—

नव अमकप मुनिद कहि धन्दि नरिद बहारि ।

प्रेमाकुल गह वर गर, प्रसन्न करो वर जोरि ॥<sup>१</sup>

पुराण-अथा क अनुमार कवि ने राजा परीक्षित की सपदशन का शाप मित्रने तथा पाप से मुक्ति हेतु इस कृष्ण-कथा को श्री गुरुदेव द्वारा कहलवाया है। भागवत के दशम स्कंध की पूर्वादि कथा, जो उन-चात अध्यायो में वर्णित है, उमे सत्ताइस प्रकाश में वर्णित किया है। नकिन यह कथा भागवत का अनुवाद नहीं है। कवि ने भौतिकता से घटनाओं का जयन किया है। उरने कृष्ण-जन्म के कारण कृष्ण जन्म की कथा से लकर अक्षर द्वारा पाण्डवों की कथा पात करने तक इसका विस्तार किया है।

इसका कथानक 'रामचरित्र' की भाँति लोगों में विभक्त न शरर प्रकाशों में है तथा प्रत्येक प्रकाश में कथम घटना की सूचना कथारम्भ में ही मिलती है। प्रथम प्रकाश में कवि ने तुलसीदास की भाँति ब्रह्मा-वद्विनि की अपनाया है तथा गणेश सरम्बना, शिव, वार्तिकेय, प्रद्युम्न, दशावतार, अविन्द वामुदेव दुर्गा, सूर्य, त्र्यम्बक, राधाकृष्ण, कृष्ण द्वायन गुरुह हनुमान तथा मातृपि की स्तुति के भाष का-य रचना का दसो प्रेरणा का उदाहरण दिया है। द्वितीय प्रकाश में पद्माक्षित कथा मिलती है। तृतीय प्रकाश में पृथवा गोप्य कारण कर ब्रह्मलोक में जा कर अपनी व्याप सुनाती है। भगवान् धर्म स्थापना हेतु गीता तथा मानस की भाँति यहाँ अवतार जन का वचन देने हैं। यही पर कवि ने कस दव-ज्वेली की कथा भी कह दा है। चतुर्थ प्रकाश में कृष्ण का जन्म उनका अनुभज रूप वामुदेव का गोपुत्र पहुँचना यशोदा की लया साना, कर्म द्वारा रजव से कथा का शिला पर पटकवाना, कथा का मरने ही कम वध की आकाशवाणी होना आदि कथायें हैं। पंचम प्रकाश में कृष्ण जन्म-मक, पूतना, समटासुर तणावत आदि गणसों के वध की चर्चा है। छठे सग में कृष्ण मिटटी खाते हुए मुह फाड कर ब्रह्माण्ड दिग्गजर यशोदा को चौंकाने हैं। सप्तम प्रकाश में बाल-गीता गोधारण वत्सासुर बकासुर वध, मवम्प धारी अपासुर वध तथा गोपुत्र से कृदावन प्रस्थान का वखन है। अष्टम प्रकाश में

ब्रह्मा गायो का हरण करते हैं तथा कृष्ण उनका मोह भग्न करते हैं। नवम प्रकाश में धेनुसामुर यथा तथा वालीन्तु सीता हैं। दशम प्रकाश में बनराम द्वारा प्रलम्बासुर यथा तथा कृष्ण द्वारा दासानन पान का वणन है।

एकादश प्रकाश में कृष्ण का मधुर रूप उमड़ पड़ा है। वे यशो बजाते, गोप गोपियां वे साथ प्रीड़ा करते हैं। द्वादश प्रकाश में स्नान करता गोपिया का रमिया कृष्ण चीर-हरण करते हैं।

त्रयोदश प्रकाश में कृष्ण इन्द्रपूजा का विरोध करते हैं। कृष्ण द्वारा इन्द्र के कोप करने पर गोवर्धन न उठाने का वणन है तथा इन्द्र के महत्त्व को नष्ट करने हुए गोवर्धन पूजा चलाते हैं। चतुर्दश प्रकाश में गोप गायियां द्वारा अपनी धाराध्य के गुणों का विनाश जान है। पंचदश प्रकाश में कृष्ण की भुरची का प्रभाव तथा गोपिया की अनन्य कृष्ण भक्ति का श्रवण है। षोडशप्रकाश में रास सीता का मुक्त प्रसार है। सप्तदश प्रकाश में कृष्ण दम्भी गोपिया का मद चूर करते हुए उनकी प्रेम-परीक्षा लेते हैं। अष्टादश प्रकाश में यमुना कूल पर कृष्णमय गोपिया की कथा है। एकोन विंशति प्रकाश में गोपियों के साथ रास सीता का भरपूर वणन है। विंशति प्रकाश में नन्द की सप्तदश घटना है। एकाविंशति में कृष्ण कस कथा मिलती है तथा बलराम कपभासुर का वध करते हैं। द्वाविंश प्रकाश में द्रज से कृष्ण अक्रूर जी के साथ मधुरा आते हैं तथा गोप-गोपी विरह आरम्भ होता है। त्रयोविंश प्रकाश में कृष्ण राजवं का वध करते हैं कस का सेना को मारते हैं सुदामा माली का आतिथ्य तथा कुब्जा कथा है। चतुर्विंशप्रकाश में कुव सियापीड हाथी को युद्ध क्षेत्र में पछाड़ते हैं। यही कस वध करते हैं। बलराम कस के आठ भाइयों का हनन करते हैं। कृष्ण-बलराम की इस विजय पर देवतागण प्रफुल्लित होते हैं। पंचविंशति प्रकाश में कृष्ण उग्रसेन को गद्दी देकर माता से भेंट करते हैं। षड्विंश प्रकाश में उग्रव गोपी सवाद है। सप्तविंश प्रकाश में कृष्ण अक्रूर जी को पाण्डवों के पास भेजते हैं, अक्रूर समाचार लाते हैं। इस कथा के महारम्य को घोषित करते हुए कवि कथा की इति करता है—

कृष्णचन्द का चन्द्रिका जे नर करहि हैं गान ।

पाद परम पद प्रथम ही ब्रह्म सौरूप को जान ॥१॥

इस कथा के माहात्म्य को कवि ने तुलसीदास की रामकथा की भाँति स्थान स्थान पर स्मरण कराया है। कृष्ण भगवान या साक्षात् ब्रह्म होते हुए भी धर्म हेतु नर-सीता कर रहे हैं यह विस्मरण कवि नहीं होते देता है। इस विस्तृत कथा नक में कवि ने वणनों में सहजता स्वाभाविकता तथा गत्यात्मकता को स्थान दिया है। कथा की धुरी कृष्ण पर केन्द्रित है तथा समस्त कथावद्ध इन्हीं के काय व्यापारों

को लेकर गनिमीत रहता है। इसमें 'रामचन्द्रिका' का अनुकरण होत हुए भी केशव का घोर पाण्डित्य तथा कृत्रिम गद्य उही है। कथा में 'मानस' जसा भावनाय तथा रस-बोध सहज ही प्राप्त है। रीतिवाल के इस कवि ने रीतिवाल की प्रवृत्ति से बच कर कृष्ण के शृंगार का वर्णन करते हुए भी उन्हें लौकिकता में डुबाया नहीं है। भक्ता की तमय पद्धति पर यह कथा धारा मधुर-मधुर बहती रहती है। छन्द परिवर्तन ने कथा की एकरसता का दूर किया है तथा कथा में इतना भावपूर्ण है कि पाठक उसमें रम जाना है। इस कथा में परम्परा से आना हुआ कृष्ण का मधुर रूप प्रधान तथा वीर रूप सहायक बन कर आया है। कथा महाभारत के योगी राजनीतिज्ञ कृष्ण से पूरी तरह दूर है, लेकिन इससे कथा पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा है। भागवत पर आधारित काव्य का यह कथानक, व्यवस्थित संगठित तथा प्रभावशाली है।

### अतिप्राकृत-तत्त्व

'कृष्णचन्द्रिका' सीलानायक कृष्ण की कथा है। कृष्ण के साथ शत शत चमत्कारिक कथाएँ स्वयं ही जुड़ती चली आई हैं। शत इन चमत्कारिक कथाओं से कवि बच भी कैसे सकता था। यही कारण है कि कथानक दबी घटनाओं, निजधरी कथाओं तथा अतिमानवीय घटनाओं से पूरा हो गया है। कृष्ण के मुख में ब्रह्माण्ड-घन दावाग्नि-धान, रत्नक द्वारा कथा मारुत पर आकाश-वाणी, गोवद्ध न धारण, गुरु के मृत पुत्र को जीवित करना, शक्तिशाली असुरों का पछाड़ना, नाग नाथना<sup>१</sup> आदि अनेक विस्मयकारक घटनाओं का यह कथानक 'सूरसागर तथा ब्रज-विलास' की भांति ही कैद है।

प्रासंगिक कथाएँ — समस्त काव्य में कृष्ण के काय-अपारो का प्रसार है। मूल कथानक की सजीव आरपण युक्त सरस जीवन्त बनाने के लिए कवि ने वसुदेव देवकी का वत्सांत नारद का कथा में प्रवेश, नलकूबर मणि ग्रीव<sup>२</sup> का शाप देने की घटना आदि प्रासंगिक कथाओं की भी योजना की है। इन कथाओं से मूल कथा के विशिष्ट गण<sup>३</sup>ों का स्पष्टता मिलती है तथा कथा में अग्र पात्रों का प्रवेश भी साधक लगने लगा है। कवि ने आकाश-वाणी की चमत्कारिक योजना तथा नारद कथा से भी कथानक को नवीन चेतना प्रदान की है।<sup>३</sup>

१ कृष्णचन्द्रिका पृ० ५ ३२ ४५ ५४, ५६ ८६, ६०, ६१, ६६-१२०, १२१

१४५

२ वही प० ४० ४३, ७५ ७६, ७७, ११३, ११४ २०७, २०८

३ वही प० २१५



वस्तु वणन तथा प्रकृति वणन—इस कथानक में कवि ने अपार कवि शक्ति का परिचाय दिया है। जिन वणन में कवि रम जाता है उसे रसमिवन परता हुआ उसका छार निवाल देता है। कृष्ण के वात्स्य तथा जीवन के चित्र सौन्दर्य से जगमग तथा सौन्दर्य मिथ्या से अनुपम बनाय हैं।<sup>१</sup> 'रास-लीला' में गाविया का मधुर चित्र देगिए—

सेती गति जमक ठमक चौका की चितक चमक  
भूपन भवमवत ऋभक, फल भन,भन भग ।  
भरपत उछगात गात, गिरकत भध धर गिरात ।  
भ्रमत भाव अनु अलान, लजित छवि भनग ॥<sup>२</sup>

प्रकृति का अनुरागी कवि गुमान उसके बहुरंगी चित्र प्रकट करता है। कभी कभी प्रकृति की भयवर्ता के चित्र<sup>३</sup> नहीं तो सदब मोहक चित्र आँक हैं। कालिन्दी तट का चित्र देगिए—

मानिनी के रही है तट मुहरि छटा नीर कल्लोन ही की ।  
फूली फूली महा हैं, वह पुलिन लस मासती चरस नीकी ॥  
दोरे दोरे भ्रमे भी मधुष मधु रसीले गुज गुजार साज ।  
सीरी सीरी चल है पवन परसती साकरदे विराज ॥<sup>४</sup>

सयोग त्रिपाग के अनुपम कवि का प्रकृति-वणन बड़ा समृद्ध है।

कवि ने जीवन का 'नायक' चित्र भी युद्ध मन्त्रणा सध्या, प्रभात, नदी यज्ञ प्रेम भक्ति आदि के द्वारा प्रस्तुत किया है। इस प्रकार शास्त्रीय महाकाव्य के कथा नक की समस्त विशेषताएँ इस कथानक में सहज ही मिल जाती हैं।

### उदात्त नायक

इस काव्य के नायक दिव्यभावधर लीला सहचर कृष्ण हैं। वे नायक के नायक तथा सा शास्त्र ब्रह्म के धनकार हैं। अनन्य गुणों से युक्त पूव ब्रह्म के अवतार कृष्ण का धीरोदात्त नायक बहने में सकोच हाता है। साहित्य शास्त्र की किसी भी कसौटी से उनका नायकवद नहीं आका जा सकता क्योंकि शत शत धीरोदात्त नायकों की शक्ति उनसे ही प्रकट होती है। अपने शील शक्ति एवं सौन्दर्य तीनों में वे अनुप

१ कृष्णचंद्रिका ३८ ७६

२ वही पृ० १८२

३ वही पृ० १२१

४ वही, पृ० ६०

मेय है। गोवद्ध न उठाना, कालीदह लीला तथा राक्षसा को मारकर उनकी शक्ति नया लोक बसाना है। सौन्दर्य की सत्ता सृष्टि में उसी के सौन्दर्य से है राक्षस लीला मुरली लीला, बाल लीला, गोचारण लीला आदि में यह सौन्दर्य निखरा पड़ा है। राक्षसा के वध में पाप की छटा को फाड़ कर उनके सौन्दर्य का पुण्य का उदय होता है। उनके शील से ही सृष्टि कायम है तथा वे गो, ब्राह्मण तथा धर्म की रक्षा हेतु ही वे अवतार धारण करते हैं। साक्षात् विष्णु के अवतार कृष्ण के समक्ष दवताओं की विनय 'मानस' का 'जय जय सुरनायक, जन सुखदायक' की याद दिलाती है। कृष्ण वचन यह है कि—

हैं धरौ अवतार ल दुख दीन गोकुल पानि हौ ।

भूरि मारन भूमि को बल मारि सा सहारि हौ ॥<sup>२</sup>

सृष्टि नायक अवतारी रूप में लीला का विस्तार करता है, अनेक राक्षसों का वध करता है। उनके महत्त्व से अभिभूत जन, नारद, अक्रूर, इंद्र, उसकी बदनाम करत हैं।<sup>३</sup>

'कृष्णचंद्रिका' के कृष्ण नायक की दृष्टि से निष्कलुष मुंदर, बलिष्ठ, शत्रु जयी, धर्मन, लक्ष्मीवान, प्रतापवान, नीतिमान, वाग्मी, प्रजाहितपी, जीय लोक के रक्षक नर, नारायण, परम ब्रह्म तथा आदश वीर पुरुष हैं। उनका रक्षक तथा प्रेमी रूप अपनी कोई बराबरी नहीं रखता है। 'कृष्णचंद्रिका' नाम से ही ध्वनित है कि कवि ने कृष्ण का कीर्ति कथा को विस्तार से कहा है। इस कथा में कृष्ण का व्यक्तित्व इतना छा गया है कि प्रतिनायक कस का व्यक्तित्व उभर ही नहीं सका अथवा पात्र भी सूचना मात्र बन कर रह गये।

प्रतिनायक के साथ कवि ने 'याय नहीं किया। कस को अधिक बलशाली दिखाकर वध कराने में ही कृष्ण का महत्त्व है, कवि ने इस तथ्य को भुला दिया है। यद्यपि कस से पांडित पृथ्वी विष्णु के पास जाकर पुकारती है तथापि कवि ने उसकी प्रचण्डता भयकरता बबरता तथा हृदयहीनता का वर्णन नहीं किया है।

बलराम का चरित्र भी कृष्ण का सहायक मात्र है। यह शेषांग का अवतार कह कर भी उनका चरित्र की अथ विशेषताओं के प्रति उपेक्षा दिखाई देती है। यशोदा को वात्सल्य प्रीति दिखाकर भी सफल मातृत्व में उसे महान् आदर्श नहीं बना सका। राक्षसों के चरित्र भी सूचना मात्र हैं उनके पापों का वर्णन नहीं है। उद्धव-यशोदा अक्रूर नंद देवकी सभी पात्र मात्र कथा के अंग बनकर आये हैं। उनका भ्रमण

१ मानस—बालकाण्ड।

२ कृष्णचंद्रिका पृ० २५

३ वही पृ० ७५, ६५, १११, १५५, २३०, २४६, ३०२

व्यक्तित्व नहीं प्रकट हुआ है। प्रेमरस अनेक गोपियों की चर्चा करता हुआ राधा को ब्रवि भूल गया है। नायिका' के प्रति इस भूल से पाठक का ठेग लगता है। गोपिया को 'कृष्णमय' दिखाकर भी ब्रवि ने केवल कृष्ण-नायक परम्परा का ही पालन किया है। उसका उद्देश्य केवल नायक कृष्ण के महत्त्व का अपार भक्ति भाव व साथ स्थापित करना ही रहा है।

### रसात्मकता

'कृष्णचंद्रिका' हरिकथा या भागवत कथा है। उसमें भक्तिपरक ब्रह्मा हरिनिमुख निन्दा भक्ति-साधन नाम महिमा, आत्मज्ञान भगवान का मधुर तथा विराट रूप ने साथ ही भावात्मक पद्धति से कथा का विस्तार है। कथा ऐसी है जिसके सुनने मात्र से (मानस की राम-कथा की भाँति) पापों का नाश आत्मज्ञान का उदय तथा भक्ति का स्रोत फूट पड़ता है। कृष्ण कथा का लम्बा इतिवत्तात्मक ब्रह्मण भक्ति भाव की प्रतिष्ठा के लिए ही हुआ है। नायक कृष्ण के काय-व्यापारों को देखते हुए इस नायक का अगौरव श गार प्रतीत होता है, लेकिन कथा के प्रतिपाद्य की दृष्टि से इसका अगौरव भक्ति है। लौकिक अलौकिक दोनों स्तरों पर कथा भक्ति भाव में ही विनिमज्जित है। गोपिया बामुरी सुनकर वेद विधि शास्त्र अनुशासन, लोक मर्यादा किसी भी भाषा को स्वीकार नहीं करती हैं। सीलाग्रह, रसेश्वर, रस रूप रसिया अपने माधुर्य में आनन्द का प्रसार करता है। कृष्ण, सामान्य मानव नहीं, साक्षात् सगुण ब्रह्म हैं वे ब्रवि के काय नायक ही नहीं, परम उपास्य तथा लोक रक्षक, लोकनायक हैं। विपत्ति में इन्द्र को तलवार कर उसका गव चूर करते हैं गोवद्ध न पूजा कराते हैं। पापों से धरती को मुक्त करने के लिए अनेक राक्षसों का वध करते हैं, बस को मारकर प्रजा को नया जीवन देते हैं। धर्म तथा काम की प्रतिष्ठा के लिए कृष्ण सर्वोच्च आसन पर विद्यमान हैं। निष्कप यह है कि भाव धारा की दृष्टि से यह कथा लोकोत्तर सीला तथा अलौकिक वातावरण में पनपी है। भागवत की कथा को आध्यात्मिकता के प्रवाद रंग में रंग कर भक्ति भाव को प्रधानता दी गयी है, जिससे इसका अगौरव भक्ति रस बन गया है।

सूरदास ने 'सूरसागर' में भक्ति आन्दोलन तथा वल्लभ के प्रभाव से भक्ति रस को अमर कर दिया। भक्ति रस के क्षेत्र में बंगाल ने बड़ा काय किया, उन्होंने माधुर्य भाव का प्रसार भक्ति के अनुरूप किया। भक्ति रस की शास्त्रीय रूप रेखा पर 'कृष्णचंद्रिका' सफल उतरती है। कृष्ण भक्ति के स्थायी भाव हैं मान, प्रणय, राग विराग उसके महाभाव। आलम्बन कृष्णाणि, वशी, नारद आदि उद्घाटन हैं। अनेक सात्त्विक अनुभावों से गुष्ट हो भक्ति रस की निष्पत्ति होती है। कथानव का प्रेम

तथा माधुप पर स्थित होने के कारण अगीरस भक्ति ही ठहरता है। रीतिकालीन इस रचना में रीतिकालीन श गार की धारा नहीं है। कवि ने श गार के पक्ष को मर्यादित तथा शालीनता से वर्णित किया है। गोपियों के प्रेम में परवोयत्व के होने हुए भी आल्हादव लाव-मर्यादा है। मुरली की ध्वनि को सुनकर मूर्च्छित होने में, घर से निकल भागने में, रासलीला में बृज-जेलि में, यमुना स्नान में, प्राध्यात्मिकता<sup>१</sup> का पुट अवश्य विद्यमान रहा है। घोर लौकिक पद्धति पर इन वस्तुओं को कवि ने स्थान नहीं दिया है। संयोग श गार के वर्णन में हाव हेला, बटाझ, हास प्रनुभाव, सभी के चित्र प्रविष्ट करते हुए कवि ने गोपीप्रेम में पवित्रता की रक्षा की है।<sup>२</sup> गोपियों का कृष्ण के अतृप्त्यान हो जाने पर वियोग बहुत मार्मिक है—

अकुलाई उरन कुरग ननिन धन मुख कछु आवही ।  
सुल दन बिन नहि चन, छन छन मन अधम सतावही ॥  
बज्जल बलित दग ललित आसू डरत व्याकुल है यहा ।  
गह्वर गर पूछत फिर खग मग बिटप बेलिय तहा ॥<sup>३</sup>

इस विरह में गोपिया नन्ददास की गोपियों का भाति 'फाटि हिय रयो बल्यो'<sup>४</sup> कह कर कृष्णमयी हो जाती हैं। सूर की भांति ही गुमान ने भक्ति तथा श गार का धारा को मुक्त मन से प्रवाहित किया है।

इस काव्य में वारसत्य रस भी बहुत सफलता से व्यक्त है। कृष्ण की बाल-जीड़ाएँ तथा माँ का हृदय यहाँ खुल कर सामने आया है। कृष्ण पर दानवी सन्द की आशका से यशोदा बहुत व्यथित है। मधुरा चले जाने पर कृष्ण लौटने का नाम ही नहीं लते, यशोदा पुत्र वियोग में जीवन का समस्त आनन्द छाड़े पागल सी दिखाई देती है।<sup>५</sup>

कृष्ण ने राजसों का वध किया तथा भूमि का पापों से उद्धार किया। भीमदाय नानवों के हनन में भयंकर तथा रौद्र<sup>६</sup> रस के छोटे हैं। मुह खोलकर सफाई देन कृष्ण माँ को 'देते घर अरु अचर सिधु कानन सरि सरवर'<sup>७</sup> में ब्रह्माण्ड

१ कृष्णचंद्रिका, पृ० १३०

२ वही, पृ० २०१, २०३, २३३, १६३, १९६

३ वही, पृ० १८५

४ भवर गीत, पृ० १५

५ कृष्णचंद्रिका, पृ० ७०, ८२, ८३, १०२

६ वही, पृ० ५२, ६२, ९४, २२९ २७, ३४, ६१, १०८ १२१, २१२

७ वही पृ० ६६

दमर गुर तथा धरतमीदाग व कृष्ण की भाँति हा करता । यही धारण रग का रस मनुता है । इस प्रकार सभा या रग धरतारम व गाथा रस म हा तरगावित है । साध्याप धरतार व धनुतर हा इगम अथा तथा अमरमा वा मात्रना मितता है ।

### उद्देश्य की ज्योति

कृष्णचन्द्रिका का उद्देश्य जा जा का पापा स मुखा करता तथा सात्तात्मक ब्रह्म का धारण करना से लोहा बल्ल्याण है । मानव मा व भगवानाधार का विनाश तथा धारण-नाश व लिंग हा तदि व कृष्ण-नया व साध्यम व धार्याभिप्राय का है । कृष्ण-नया कृष्ण क्या तथा कृष्ण भविष्य का हाता मरुत नवल ध्यातिग निया गया है कि तात मगन हा सन । गारग धये म उक्ता धार्या ब्रह्म का धारण लीला म तात हाता हूमा जगत् स्मरण कर सव । भाग्य अर्थात् रामायण की भाँति हा क्या कति-भुग के पापा स मुखा हनु कहा गई है । कृष्ण इसी कारण अपनी शक्ति म प्रजय है —

मल्लन यज्य समान, प्रियन मनसिज परिपूरन ।

जोति मरुविगट दण्डधारी नय गुरन ॥

जोगि जाति स्वरप सिद्ध मुति ब्रह्म यसाति ।

निगम तत्तु दुष तद्दि प्रजा प्रभु प्रभु सनमानहि ॥<sup>१</sup>

कवि ने इस क्या की गगा की भाँति पवित्र तथा निमल कहा है—

मोरि भनिति दूषन सहित हरिजस भूपन सन ।

साधु सादर जानि इमि, मिलि पावन रज गग ॥<sup>२</sup>

भगवान राम की भाँति ही कृष्ण गो, ब्राह्मण धम तथा धरती के बल्ल्याणाय अवतार धारण करते हैं—

हैं धरो अवतार लदुज दीन गोबुल पालि हों ।

भूरि भरन भूमि को खल मारि सन सहारि हों ॥<sup>३</sup>

भक्ति का अथाह कल्याणकारी सागर होने के कारण ही 'कृष्णचन्द्रिका' साधुभा का गीता है । जनता को यह क्या गा गा कर सुनाई जाती है । इस कृति का प्रचार पड़े लिखे लोग म वम है । इस कृति को 'मानस तथा 'सूर सागर ने

१ कृष्णचन्द्रिका, पृ० २४४

२ वही, पृ० ६

३ वही, पृ० २४

अपनी छाया से घु घला बना दिया है, अथवा यह बहुत ही महत्त्व की रचना है। मध्ययुग में श्रेष्ठ रचनाओं की दृष्टि से मानस तथा सागर के बाद इसी का नाम आना चाहिए। यह रचना एकांतिक, व्यक्तिगत अथवा साम्प्रदायिक रचना नहीं है यह तो जन-जन के मन का रमान का सिद्धि-मणि है।

### अभिव्यजना शिल्प में शक्ति

कृष्णचन्द्रिका के कवि ने भक्ति का महनीय भूमिका में कृष्णमय सत्कार को जन्म दिया है। नायक कृष्ण लोक-जीवन में अद्वितीय रहते हैं। नायक के साथ पूजनार्थी-मोहरण करते हुए कवि न साहित्यिक ब्रजभाषा में अपने को अभिव्यक्त किया है। ऐतिहासिक बनावरण में जीते हुए भी कवि ने वाह्य आडम्बर प्रदर्शन तथा झूठे चमत्कारवाद को आदर नहीं दिया। अभिव्यजना के क्षेत्र में कवि के आस्था तुलसी मूर रह है वेशव अथवा पदमाकर नहीं। प्राकृत जना के मनोरजन का माग छोड़ कर उसने भगवान का आश्रय ग्रहण किया तथा सुबाध सरल सरल तथा सहज शला में कृष्णचन्द्रिका का रचना का। उसने अत्यन्त अलंकृत तथा चमत्कार की पद्धति से अपने को बचाकर अलंकृतकाल में ही प्रतिष्ठित किया है। सूर की तरह जटिन दृष्टिबूट की पद-शली भी इसमें नहीं है तथा सूत्र-नाल आदि बीर-काव्य का भाति शब्द का घनावन तथा दनादन भी नहीं है। वाच-वस्तु के अनुकूल ही कवि न शिल्प का चयन किया है। छंदा के प्रयोग में बहुरंगी कवि गुमान ब्रजगत कल्पनाओं झूठे आलंकारिक प्रशंसा, भाषा में पाण्डित्य का बोझ तथा जटिल वचन का बलना से मुक्त हैं। कवि ने कथ्य भाव, रस, प्रकृति वाच्य-गुण चतुर्वर्ग फल भाषा आदि की दृष्टि से कलात्मकता का परिचय दिया है।

भाषा मूर की भांति ही ब्रजभाषा है। भाषागत साहित्य को घनानन्द की भांति अपनाया गया है। यथा—

भकुटनि भकुटा मरोर, मुख तट पर चटक कोर,  
लटक मटक नचत मार मिलि मिलि अधरये।<sup>१</sup>

भाषा भाव का अनुसारिणी है तथा वचन की व्यक्त करने में कवि के पास शब्दों की गरीब नहीं है। माधुर्य तथा प्रासाद गुणों से युक्त भाषा में समृद्ध की तत्त्वम श-शब्दों भी मिलती है। कवि बुदेरखण्डी या अल भाषा में अलजान ही वणिग, दखिनी आदि के प्रयोग में बुदेरखण्डी प्रभाव आ गया है। कभी-कभी अरवा फारस के लोक प्रचलित शब्द-दद, गद, दिल आदि भी जीवन रूप में प्रयुक्त हुए हैं। भाषा में लोभोक्ति तथा मुहावरों का प्रयोग में अभिव्यक्तता बढ़ा है तथा



## ‘कृष्णचन्द्रिका’ में कृष्ण का नायकत्व

‘कृष्णचन्द्रिका’ के कृष्ण प्राचीन परम्परा के अनेक मूल्यों से निर्मित कृष्ण हैं। प्राचीन साहित्य में श्रीकृष्ण के व्यक्तित्व की अपार महिमा देखते हुए उह ऐतिहासिक व्यक्तित्व मानने में आज सन्देह नहीं रह गया है। प्राचीन साहित्य में प्राप्त अनेक कृष्ण, ब्रह्म साहित्य में लेकर भागवत तक एक कृष्ण में कैसे घुलमिल गये, यह प्रश्न आज भी जटिल बना हुआ है। ब्रह्म कृष्ण, उपनिषद् कृष्ण, महाभारत कृष्ण, द्वारिका कृष्ण तथा गोकुल कृष्ण का ऐक्य महान सांस्कृतिक समन्वय का ही परिणाम लगता है। पौराणिक कथाओं में वामुदक कृष्ण तथा गांधार कृष्ण का एकत्व भी साम्प्रदायिकता में भी उदारता का रूप है। प्रेम-देवता के रूप में उनका व्यक्तित्व इतना मधुर बनाया गया कि कृष्ण प्रेममय ब्रह्म की अनन्तबला के अवतार प्रतीक बन गये। महाभारत में कृष्ण राजनीति योग तथा मर्यादा के कारण एक ऐसा व्यक्तित्व पा गये, जो पाछे से रमेश्वर, रसिया कृष्ण में समाविष्ट नहीं हो सका। यही कारण है कि ‘महाभारत’ के कृष्ण का राज के सीलापुष्प कृष्ण से कोई सम्बन्ध नहीं मिलता है। ‘कृष्णचन्द्रिका’ में ‘महाभारत’ के कृष्ण का रूप बिल्कुल नहीं है भागवत में प्रतिष्ठित रमेश्वर कृष्ण का रूप यहाँ मूर की भाँति मिलता है।

‘कृष्णचन्द्रिका’ में अवतारवाद का प्राबल्य है। अवतारवाद की दृष्टि से मध्यकालीन कविता में प्रायः दो प्रकार के श्रीकृष्ण मिलते हैं, उनमें से प्रथम विष्णु के अवतार कृष्ण तथा द्वितीय ‘उपास्य ब्रह्म के प्रतीक’ श्रीकृष्ण।<sup>१</sup> कृष्ण धर्म की स्थापना-स्तु अवतार धारण करते हैं। डा० दीनदयाल भुषन कृष्ण के इन रूपों पर प्रकाश डालते हुए निम्न है कि ‘धर्म संस्थापन के लिए जो अवतार होता है, वह चतुर्व्यूहात्मक है। समाज की आनन्द देने के लिए जो अवतार होता है वह उसकी रसरूप है। कृष्णावतार में कृष्ण ने चतुर्व्यूहात्मक और रसात्मक दोनों रूपों से युक्त अवतार लिया था।’<sup>२</sup> मध्यकाल में कृष्ण इतने व्यापक हुए कि विष्णु कृष्ण का अवतार अमुरो तथा दुष्ट राजाओं के सहारक रूप में हुआ। भागवत, मूरसागर तथा कृष्ण चन्द्रिका तीनों में विष्णु का अवतार रूप एक ही है। तीनों में पृथ्वा गाय का रूप धारण कर भूमि भाग दोन में असमंभता प्रकट करती है तथा

१ डा० कपिलदेव पाण्डेय—मध्ययुगीन साहित्य में अवतारवाद पृ० ५३०

२ अष्टछाप और बल्लभ सम्प्रदाय पृ० ६०४ (भाग २)



नारायण या विष्णु धरतार की सूचना देते हैं।<sup>१</sup> यह धरतारी कृष्ण ही 'कृष्ण चन्द्रिका' के नायक हैं। उनके नायकत्व के स्वरूप का निर्धारण पूर्व निर्धारित मानदण्डों के आधार पर यहाँ करने का प्रयास करेंगे।

### कथा का सूत्रधार

'कृष्णचन्द्रिका' नाम से ही स्पष्ट है कि इस कृति में कृष्ण में यश का मान है। कृष्ण ही इस कथा के मूल केन्द्र-बिन्दु हैं तथा समस्त घटनाएँ उसी पर आधारित हैं। यह कृष्ण धनत शक्तिशाली हैं मूक पृथ्वी पर देवताओं के सहित नरभूमि में मानव-शरीर धारण कर जीना करते हैं। नाट्य के आरम्भ में ही कृष्ण आस्वाप्तन देते हैं कि—

निजरा धन होहु निभय कस त्यागहु जाइ न ।  
लोक लोकनि मरमो ग्रह भोग म सुख गाइ न ॥  
हैं धरौ धरतार लहु दीन मोकुल पाति ही ।  
भूरि भारा भूमि को लल भारि सैन सहारि ही ॥<sup>२</sup>

यह कृष्ण चतुर्भुज रूप में राम की भाँति ही जल में लेते हैं। वासुदेव कृष्ण को यशोनाथ का नाम पहुँचाते हैं। बालक कृष्ण पूतना, तणाकिन तथा शकटामुर का वध करते हैं।<sup>३</sup> मिट्टी खाते हुए कृष्ण यशोनाथ को मुह में ग्रहणाष्ट दिशान्त चक्रित करते हैं।<sup>४</sup> गाधारण तथा वत्सामुर यकामुर आदि राक्षसों का वध करते हैं तथा कृष्ण प्रह्लाद का मोह भग्न करते हैं। जन प्राण के लिए कालीदह में कुत्ते हैं, नाग नाथत हैं दाजानल पान करने हैं।

चमत्कारिक कृष्ण गोपियों के साथ रास लीला करते हैं। यह कथा कवि ने यही बहुत विस्तार में कही है। कृष्ण, इन्द्र पूजा का विरोध करते हुए गोवधन पूजा का आरम्भ करते हैं। कृष्ण द्वारा इन्द्र पूजा का विरोध देव सभता है कि ब्रह्मा प्रतापी इन्द्र यहाँ तक आत महत्त्वहीन हो गया था तथा कृष्ण ने उसके व्यक्तित्व का पूर्ण तरह से पराजित किया होगा।

कृष्ण दुष्ट बंस का वध करते हैं तथा द्रुपदेन का राजा बना देते हैं। यह कथा भी कवि ने साधारण पद्धति से आगे बढ़ा दी है। प्रबलित म भी कथा

१ (क) भागवत—१०, १, १६, २३

(ख) धनु रूप धरि बहुनि पुकारी धरि नरतन धरतारा ।

सुरसागर, पद ६२२

(ग) कृष्णचन्द्रिका ततोय प्रकाश ।

२ कृष्णचन्द्रिका पृ० २४

३ यही, पक्षम प्रकाश ।

कहने में कवि रमा है, ऐसे ही कवि यही भी क्या कहने में जम गया है। इसका प्रभाव बहुत अच्छा नहीं पड़ता है, पाठक कस को कमजोर पाकर बहुत प्रसन्न नहीं होता, कस ऐसे धाततापी को भयकर खलनायक दिखाना चाहिए था। तुलसी ने 'मानस' में रावण के चरित्र में खलनायक की सभी विशेषताओं को दिखाते हुए भी प्रदमृत बलशाली रूप दिया है। ऐसे रावण के वध में राम का महत्व बढ़ा है। लेकिन कृष्ण के समक्ष कस बड़ा होना पात्र है। कवि ने उसका उचित चित्रण नहीं किया। कृष्ण को कवि लीला पुरुष चित्रित करने में ही उन्मत्त रहा है।

### परब्रह्म हरि

गुमान कवि के कृष्ण परम ब्रह्म-हरि हैं। ये अन्तर्यामी निगुण-सगुण अन्न-अनुन्न, अविनाशी, पूर्ण पुरुष पुरुषोत्तम तथा प्रकट ब्रह्म हैं। यह ब्रह्म अपने गोलोचन में निवास करता है तथा उसकी लीलाएँ भाकुल, वन्दावन तथा मथुरा तक फैली हुई हैं। यही ब्रह्म असुर-संहारक, भूमि उगारक तथा चतुर्भुज विष्णु है, जो लीलात्मक अवतार के कारण मानव बन गया है।

### सासारिक-कृष्ण

मानव जीवन का अन्तरंग पक्ष कृष्ण में अधिक उपलब्ध होता है वद जिन्हें नति नेति कह कर गाते हैं शिव ब्रह्मा, सनकादि जिनका पार नहीं पात हैं, वही कहाइ ब्रज में गाप-गापिया के साथ धूल में खेलता है। 'भागवत' में अवतारी कृष्ण का जो रूप है, 'कृष्ण चंद्रिका' में वसा ही लक्षित होना है। यही रूप सूर, नन्ददास में भी मिलता है। कृष्ण बाल नाटा करते हुए मुह खोलेकर ब्रह्माण्ड-दर्शन से भा की समलुत्तर करते हैं। यशोदा दम्बती है कि अखिल ब्रह्माण्ड तथा विश्व उन्हीं में स्थित है। यहाँ ब्रह्म कृष्ण सामान्य बान्धवों की भाँति माखन चुराते मुरली बजाने, गोपियाँ का रिभाते हैं। गापियाँ श्रद्धात्मक तथा कृष्ण प्रणवात्मक हैं।

### प्रतीक कृष्ण

कृष्ण को गुमान कवि ने लीला प्रताक या आध्यात्मिक पुरुष का प्रतीक माना है। इस 'लीला विस्तार के मूल में ब्रह्म इच्छा' ही है। लीला अहंता ही है। इस लीला का प्रकट रूप ही अवलाला है। क्या के आनन्दवन रसिकश्वर कृष्ण प्रकट तथा अप्रकट लीला में भाषण घोषते हैं।

### अवतरण प्रतीक

कृष्ण असाधारण परिपाश में अवतारी, अगा अज्ञी तथा पूर्ण पुरुष पुरुषोत्तम माधव हैं। लीला सत्वर नित्य-लालाओं से आनन्द का प्रसार तथा पापों का नाश करता है। कायागार में जम लहर भी वे मुक्ति का सन्देश लाते हैं। गुमान में बाल वीमार पौरुष और वीर्यवान् चारों लीलात्मक रूपों का अप्रत्याप्य है।

पुरुष-पुराउन जय तप, समय से योगियो के लिए परे हान पर भी यशोदा के आगन में दौड़ रहा है। सप्टि का वर्त्ता, पालक, सहारक गायें चरा रहा है। गुणानीत ब्रह्म रासलीला करता है शिव जिसे समाधि आकार नहीं प्राप्त कर पाने, वह राधा के परा पर सोन रहा है। भवना के हेतु अवतारी कृष्ण लीलारत है। मत यह कृष्ण लीलाप्रताप आचार्य प्रतीक अवतार प्रतीक, नाम प्रतीक आदि अनेक रूपों में प्रवट है।

किस प्रकार रतेश्वर कृष्ण इस कथा के प्राणवान सूत्रधार हैं तथा उनकी मदभुत लालाओं का मान ही अनेक कृष्ण अतिधारा के कविओं की भाँति यहाँ मिलता है।

### महत्त्वपूर्ण व्यक्तित्व

महानाव्य का नामक शाश्वत महत्त्व का व्यक्ति है। इस बसोटी पर कृष्ण बहुत सफल उतरते हैं। सम्पूर्ण भारतीय जीवन में वह प्रेम की न्य एव आध्यात्मिक लीला के प्रतीक हैं। उनके व्यक्तित्व में अनेक जीवन मूल्यों का सामाजिक योग है। राम मर्यादा के महान प्रतीक हैं तथा कृष्ण लोक सौन्दर्य से मण्डित रास लीला में काम के प्रतीक हैं। वे दाना सांस्कृतिक व्यक्तित्व ही भारतीय सत्त्वृति के दो गायक स्तम्भ हैं जिनसे जन जन का जीवन का विश्वास मिलता है। मानव की मूल वृत्ति आनन्द हैं तथा जीवन स्वयं आनन्द के खोज की साधना है। कृष्ण जीवन का इन्हीं आनन्द शक्तियों के अक्षय कोश हैं। राम मर्यादाओं का आदश भूमि में डगने नहीं है कृष्ण का जीवन मर्यादा भंग में ही महत्त्वपूर्ण का पाया है। सीमित मर्यादाओं को ललकार कर कृष्ण ने लोक जीवन में उ मुक्त विनाश का संदेश दिया। शरद की ज्योत्स्ना रजित रजनी में मुक्त कीड़ा का एक उदाहरण देखिए—

स्थाया आ स्थाय रह्य निरत मिलि सगे ।

मगद निमा चारुचन्द कुमुदिनि मुदि उदित व द ।

भावत आनन्द मन्द पीन की उमग ।

मुकुटनि मकुटी मरीर, मुखतट पर चढ़व बार,

लटन मटक नचत जोर मिलि मिलि अघरमें ॥<sup>१</sup>

कृष्ण की मुरझा मोहन की माया है जिसे सुनते ही गोपिया घरों में उनकी ओर भागन लगता है।

सुनि धुनि वन वसी चौकती चित्त प्यारी,

अभव भभव होत लोल नवानवारी ॥

दसदिशि अवलोक राजती स्वर्ण भगी  
मग दिग विछर तहेरती ज्यो कुरगी ॥१॥

धीर ललित नायक का शाश्वत रूप यहाँ इन लीलाओं में प्रकट है। कृष्णमर्यादाओं के स्थान पर सहज मानवीय मूल्यों को प्रतिष्ठित करते हैं। जो मानवीय प्रतिमानवीय प्राकृतिक-पराप्राकृतिक विरोधी शक्तियाँ जीवन में बधी हैं, कृष्ण उन्हें ध्वस्त करने हैं। मर्यादा के आवरण को चीर कर कृष्ण मन की मूल इच्छाओं को प्रकाश में दते हैं। रासनाता, चीर हरण, स्वकीया-परकीया, का यही सत्य है। कृष्ण जीवन में भुवन भोग का सन्देश लाते हैं वे मानव को रसात्मक जीवन पद्धति में डालते हैं। मध्ययुगीन सम्पूर्ण कृष्ण वाक्य धारा में कृष्ण धर्म के साथ भोग का मन्त्र फूट रह हैं। कृष्ण के इस रूप को अपना कर 'कृष्णचन्द्रिका' ने उन्हें शाश्वत महत्त्व का स्थान बना दिया है।

### बृद्ध आत्म शक्ति

बाल लीलाओं से ही जो दुष्ट असुरों का सहार करता है बिना किसी चिन्ता के जो कालीन्ह में बूढ़ जाना है, जो इन्द्र का सलवार कर उन्हें पराजित करता है, जो दावानल पान कर सकता है, जो कस का पछाड़न में धबकाट का कोई सकत नहीं देता, जो दानवों के दगल में सर्वाधिक शक्तिशाली है, ऐसे कृष्ण को अपराजेय आत्म शक्ति स युक्त नायक नहीं कहेंगे, तो फिर किसे कहा जा सकेगा, पल भर के लिए भी सम्पूर्ण कृष्णचन्द्रिका में कृष्ण कहीं भी भयाकुल नहीं दिखाये गये हैं। परमब्रह्म की मानवीय लीलाएँ इतनी विविध हैं कि उनकी आध्यात्मिकता की आभा भक्तों का श्रद्धानवन कर देती है।

### प्रतिनिधि चरित्र

कृष्णजीवन के प्रवर्त्यात्मक रूप का प्रतिनिधित्व करते हैं। राम तथा कृष्ण ने अपनी कथाओं के द्वारा हजारों वर्षों से भारतीय जीवन को प्रभावित किया है। दोनों का चरित्र ही करोड़ों व्यक्तियों के बीच विस्तृत आस्थावस्तु में पूजनीय तथा अनुकरणीय रहा। धर्म साधना के ग्रन्थ तथा काव्य दोनों में ही वे जीवन के सत् प्रश्न का उत्थाटन करते हैं। भारतीय संस्कृति में जो भी भय विराट तथा मधुर था, राम तथा कृष्ण के लीलामय व्यक्तित्व में समाहित हो गया। राम तथा कृष्ण के जीवन मूल्यों में ऊँच-नीच धनी निधन सब के हृदय में अपना आसन जमाया है। गहम्प, दार्शनिक, योगी, विरक्त साधु जानों आदि सभी ने अपना साधना से इन चरित्रों को विकसित किया तथा प्रत्येक युग के आदर्श मूल्य इनमें समाविष्ट करते

गय। राम का चरित्र आदर्श का दृष्टि से जनता के हृदय पर अधिकार करने वाला विराट चरित्र है। राम के द्वारा स्थापित प्रतिमान सावभौमिक एवं सावकालिक हैं। लेकिन कृष्ण के द्वारा स्थापित प्रतिमान युगानुक्रम परिवर्तित होते रहें हैं।

‘कृष्णचरित्रा’ में महाभारत के योगी कृष्ण का रूप नहीं है। कवि - अंगर महाभारत कृष्ण तथा ब्रज-कृष्ण को मिला कर यदि इस महाकाव्य की रचना की होती तो यह भी ‘मानस की भाँति एक अमर महाकाव्य होता। कवि ने कृष्ण नकिन धारा में प्रचलित कृष्ण कथा के मधुर पत्र को अपनाया है। कृष्ण का यह रूप सूरदास परमानन्ददास नन्ददास ब्रजवासीदास आदि कवियों में लगातार मिलने के कारण ‘कृष्णचरित्रा’ के कृष्ण मात्र उनकी पुनरावृत्ति ही बनकर रह गये। ब्रजविलास के नायक कृष्ण तथा कृष्णचरित्रा के नायक कृष्ण में सामान्य रूप से कोई अंतर नहीं है।

कृष्ण न अपनी मधुर लीलाओं से मानवाय अंत करण की अभिभूत किया है तथा ब्रह्मत्व के द्वारा पापियों का बध किया है। वे वाणों से मुक्ति के साथ मानन्दवादी जीवन दर्शन को प्रस्तुत करते हैं अतः उन्हें इस कृति में जीवन का प्रतिनिधि चरित्र मानने में कोई बाधा नहीं है।

दिव्य शक्ति से अलंकृत

कृष्ण-चरित्रा के कृष्ण दिव्य शक्तियों से अलंकृत ही नहीं स्वयं पूर्ण नहीं हैं। सम्पूर्ण सत्ता उन्हीं की इच्छा का लीलात्मक प्रसार है। ब्रह्मा विष्णु महेश उन्हीं की आराधना करते हैं। कृष्ण अपना श्रियता में असीम अन्त तथा अपरिमय हैं। उनकी दिव्यता का अलग चर्चा करना यहाँ विषयांतर ही होगा। अतः उन्हें राम की काटि का निष्ठ व्यक्तित्व मान लेना चाहिए।

विचारों की व्यापकता तथा कार्यों की उदात्तता

गुमान मिश्र ने कृष्ण की साम्प्रदायिक रंग नहीं दिया है उनके व्यक्तित्व का निर्माण युग-युग से प्राप्त होने वाले रूपा से हुआ है। इनमें व्यक्ति, इतिहास का सत्यति, युग चेतना जातीय कायकलाप जनश्रुतियाँ परम्पराएँ तथा सांस्कृतिक स्थापना उपमना का अंतर्भाव मिलता है। कृष्ण की सामाजिक चेतना धार्मिक भावना से अन्नात है तथा वे प्रत्येक जन का कल्याण चाहते हैं। शत्रु मित्र पर अपनी करुणा प्रदर्शित करते हुए वे व्यापक हैं। वे सभी शत्रुताओं के प्रति भक्ति भाव रखते हैं नानियाँ तथा सभी का आदर करते हैं गुणमा का समान मानकर राजा बना दत्त हैं गुरु व मृग पुत्र को जायन देकर वंश भक्ति प्रकट करते हैं। उनका विचारों में गा ब्रह्मण तथा धर्म का रक्षा का लोकहितकारी भाव है।

कारागार में जम बेकर वे अपनी श्रद्धाभूत लीला का आरम्भ करते हैं। योपिया के माथे रास-लीला में रत रहते हुए भी वे उर्ध्व पतिव्रता बनने तथा कामोन्मत्त के आदर्श को दिखलाते रहते हैं। जन मगल के लिए ही वे शत्रुओं से टकराते हैं, कस का वध करत हैं पाप को हटा कर पुण्य की प्रतिष्ठा बढ़ाते हैं।

कृष्ण का प्रेम उन्मात्त है। यह प्रेम लौकिक नहीं, लोकोत्तर या अलौकिक चेतना का प्रकाश है। उनकी लीला आनन्द का पर्याय है वे जीवन में आनन्द के साधक हैं। गुमान में कृष्ण को रीतिवासीन वातावरण में बचाकर भक्ति तथा भगवान के सम्बन्ध में पवित्रता रखी है। उनके कार्यों में सामाजिक गौरव की रक्षा तथा जन नायक की महानता है। यथा—

जाको भज हंस जु ध्यावत हैं। जोगीन्द्र जिहे मन स्थावत हैं ॥

लीला प्रभु की पूं अपार महा। खेलें मिलि सग सखानि तहा ॥<sup>१</sup>

कृष्ण के कार्यों में उन्मात्तता तथा विचारा में व्यापकता क्या न हो जब निर्गुण निराकार ब्रह्म ही कृष्ण के रूप में अवतरित हुआ है। देवता उनकी विनय करते हुए उनकी महानता का संकेत देते हैं—

अगुन गुनामय भवय प्रभु, भज गोतीत बलनि ।

विनय करत सकादि सुर, कृपा करो भगवान ॥<sup>२</sup>

यह कृष्ण अपने रूपों में बहुत उदात्त है—

महलन वज्र समान त्रियन मनसिज परिपूरन ।

जोनित महा विराट दण्डधारी नप कूरन ॥

जोगिन जाति स्वरूप सिद्ध मुनि ब्रह्म बखानहि ।

निगम तन्तु गुगल दष्टि प्रजा प्रभु प्रभु सन मानहि ॥

बभूव देवकिहि पुन सम परम पियारे प्रान इमि ।

शुद्धबलहि बस अवतम से कसहि काल कराल त्रिमि ॥<sup>३</sup>

देवता तक उस दिव्य-पुरुष को नहीं पहिचान पाते तब सामान्य व्यक्ति के लिए तो उन्हें पहिचानना और भी कठिन है—

गुम माया मोहित ब्रह्मात्मिक हम किहि विधि पहिचाने ।

नारदादि सनकादिक सोमस सेस भइस भुलाने ॥<sup>४</sup>

कृष्ण के काय भा उनके व्यक्तित्व के अनुक्रम ही हैं—

१ कृष्णचरित्रा, प० ६०

२ वही, प० १५८

३ वही, प० २५४

४ वही पृ० ७

सगद इन्दु रात्रेण विनिम्ब वनन राग निवि साहे ।

कोटिब शोभ मनोज मनोहर निभुवन सति छवि मोहै ॥<sup>१</sup>

घात मोदय के सागर कृष्ण शीत एव शक्ति के भी पुज हैं। कृष्ण के नावों की उदात्ता के कारण ही 'कृष्णचन्द्रिका' महाकाव्य का मनी है।

**कया का मूल भाव या रस का आधार**

आपायों के मत से नायक को मूल भाव का आधार होता चाहिए, चूँकि महाकाव्य महाभारत के नावों का प्रतिफल होता है, अतः कया का मूल भाव नायक पर ही आधारित न हो, यह सम्भव भी नहीं है। अपवाद हो सक्त हैं, जब कामा यनी में नायक का नहीं नायिका के मूल भाव को आधार मिला है। कया ही नायिका प्रधान है। इस दृष्टि से कृष्णचन्द्रिका की कया नायक प्रधान है। नायिका राधा यही कृष्ण वियोग में ही दुखी दिखती देती है शेष काव्य में उसकी सत्ता ही नहीं है। इस कया का समस्त ढाँचा भक्तिपरक है। भाव पद्धति के मधुरतम रूप में यह मधुरा भक्ति का काव्य है। भक्ता के अनुराग से कशीभूत होकर ही भगवान् शरीर धारण करते हैं, नर लीला करते हुए अघम का नाश तथा धम की स्थापना करते हैं। इसी कारण इस काव्य का अमीरस भक्ति रस को मानना चाहिए। यह कया भी शुक्देव जी ने राजा परीक्षित को पापों की मुक्ति के लिए सुनाई है। इस कया के श्रवण या नायक के नाम श्रवण मात्र से पाप नष्ट होते हैं अतः भक्ति की अबाध बल्लोलिनी इस कति में प्रवाहित है। रसिकेश्वर कृष्ण ही भक्तों के आलम्बन तथा लीलाधर हैं। एक ओर वे बसति हैं दूसरा ओर भक्तों के परम आराध्य। कवि ने भगवान् के यश का गान भक्ति रस में डूब जाने के लिए ही किया है।

**अय पात्रों द्वारा नायक के महत्त्व की स्वीकृति**

श्रीकृष्ण के दिव्यतेज से शत्रु तथा मित्र सभी अभिभूत हैं। कृष्ण द्वारा इन्द्र पूजा का विरोध तथा गोवद्ध न पूजा का आदेश मिलने पर इन्द्र क्रोध धारण करता है तथा धनधोर ब्रष्टि करता है। कृष्ण गोवद्ध न उठाकर अज्ञ की रक्षा करते हैं। इन्द्र कृष्ण के तेज से अभिभूत हो उनसे क्षमा-याचना करता हुआ उनकी स्तुति करता है। वरुण के वृत्तों द्वारा नद के अपहरण पर कृष्ण को क्रोध आता है, वरुण उनके पर पकड़ लेते हैं। ब्रह्मा तथा शिव इस आनन्द देव की सेवा करते हैं।<sup>२</sup> गोपी गोप कृष्ण की कीर्ति का गान करते हैं। शत्रु पक्ष के सभी योद्धा कस सहित उनसे पराजित हैं। इस काव्य में ऐसा कोई पाप नहीं है, जिस पर कृष्ण का रग नहीं है।

<sup>१</sup> कृष्णचन्द्रिका, पृ० ७६

कृष्णचन्द्रिका, पञ्चविंश प्रकाश ।

अधिकांश पात्र कृष्णमय हैं। यश हैं, शेष असुरों को भी भक्त बनाकर मुक्ति दी गई है। सम्पूर्ण कथा के नर नारी पात्र कृष्ण-महात्म्य के कारण ही उनके यश का कीर्तन करते हैं।

### प्रतिनायक

प्रतिनायक जितना सामर्थ्यवान् एवं प्रचण्ड होगा, नायक की उस पर विजय उतना ही अधिक महत्त्वपूर्ण सिद्ध होगी। राम के तेज का निखार रावण जैसे प्रतिनायक को पछाड़ने से ही निबटना है। इस वाक्य का प्रतिनायक कस है, लेकिन कवि ने उस पर ध्यान ही नहीं दिया। कस रावण की भाँति ही बहुत समय प्रतिनायक के रूप में चिह्नित किया जा सकता था, अगर कवि ने कृष्ण-यश से थोड़ा इधर भी मोड़ लिया होता। अपार अत्याचारी कस से सभी पीड़ित थे। पृथ्वी उसी के अत्याचारों से थक कर भगवान् के समक्ष गाय का रूप धारण करती है। पृथ्वी कहती है कि—

बस दानव अस ते प्रगटे जु कस कराल से ।

धम रूपक जानिये सुर सन्त भन्तक काल से ॥

विघ्न कमनि मग्न धमनि पाप कीरति कौं सई ।

नवट बुद्धि अरिबट जे जग हौं कलिष्टित कौं भई ॥<sup>१</sup>

कस का कथ करने का कृष्ण आश्वासन देने हैं, ऐसा प्रबल प्रतिनायक कृष्ण के द्वारा बिना लड़े ही कायर की भाँति मर जाता है तब उसकी असुरी शक्तियों पर सदेह हाना स्वभाविक है।

कस यहाँ आदम भाई के रूप में अपनी भगिनी का विवाह तथा विना राजाओं की भाँति वध-दान के द्वारा करता है।<sup>२</sup> कस में कवि ने दयापूर्ण व्यवहार के चित्र भी लिखा है जस वसुदेव द्वारा नारी-वध की चर्चा करने पर बहु दया-वश उसे छोड़ दिया है।<sup>३</sup> नारद उमकी बुद्धि का नाश करते हैं। उसने चरित्र की क्रूरता पर कवि ने दबी परला डाल दिया है। यह दबी परला कथा की विसंगति है। एक ओर तो कवि उनके अत्याचारों की पृथ्वी से शिकायत कराता है, दूसरी ओर उसके कार्यों पर परम सत्ता की शक्तिवशता का आवरण डाल देता है। कवि ने कस को बिना युद्ध किए मरवा डाला है इसमें नायक के प्रभावशाली व्यक्तित्व के महत्त्व को ठेस लगी है।

१ कृष्णचरित्र ५० २५

२ वही, ५० २६

३ वही, ५० २३



जिस कस के लिए इतना बिराट् देवनामों न रखा रहा वह इतना ताली होगा, इस पर मन सहसा विश्वास नहीं करता है। कृष्ण जैसे नायक के लिए कम जमा प्रति नायक मिलकुल शोचित्य नहीं रखता है। लगता है कि कवि ने कम की प्रतिनायक मानने की परम्परा मात्र का पालन किया है। उसके चरित्र के साथ माय करने की कोशिश नहीं की है। सम्पूर्ण कृष्ण-नायक में कस ही प्रतिनायक बन कर धाया है, लेकिन उसका चरित्र किसी भी कवि ने उभारा नहीं है यह बहुत पटकने वाली बात है।

### नायक कौटिक का निर्धारण

कृष्ण के नायकत्व में असीम विस्तार है। उनका महान सांस्कृतिक व्यक्तित्व किसी सीमित दृष्टि से परखा नहीं जा सकता है। दक्षिण नायक धीरे ललित, धीरोदास नायकों के लक्षणों की पूरा भलक मिलने पर भी उन्हें ऐसा कोई नाम नहीं दिया जा सकता है। ये कृष्ण युगो-युगों की साधना के विकास रूप हैं। यह कृष्ण पुराण परम्परा के सबस्व हैं तथा समस्त कृष्ण काव्य धारा के साहित्य ही साहित्य में डूब चुके हैं। सूरदास के कृष्ण ब्रजवासीदास के कृष्ण तथा गुमान त्रिपाठी के कृष्ण भागवत के कृष्ण होने के कारण एक जैसे ही हैं। वे पूरा ग्रहण, अविनाशी लीलावतार तथा लोक उद्धारक हैं। लोक विधियों का वे अतिश्रमण करते हैं। अद्भुत चमत्कारों से युक्त कृष्ण साहित्य शास्त्र में निर्धारित किसी भी मानदण्ड से बड़े हैं। इस काव्य में उनकी दिव्यता की देखते हुए उन्हें जन-नायक कहना ही समीचीन लगता है।

### तुलनात्मक दृष्टि

सूरदास, नन्ददास, ब्रजवासीदास तथा गुमान त्रिपाठी इन सभी के काव्य का आधार भागवत पर टिका है। इन सभी ने भागवत की घटनाओं की इतना अधिक ग्रहण किया है कि ये कृतियाँ कभी-कभी भागवत का अनुवाद सा आभास देती हैं। मध्ययुगीन कृष्ण-नायकधारा भागवत से ही प्रभावित है। भागवत के माधुर्य नायक का ही वर्णन भक्त करते रहे हैं। अनेक सम्प्रदायों के चक्रव्यूह में फँस कर भी कृष्ण से ये भागवत प्रभाव नहीं हटा सके। इस प्रकार का एक कारण यह भी है कि भागवत में प्रेम स्थापनों के द्वारा कृष्ण को बहुत आकर्षक रूप दे दिया गया। उनकी लीलाओं में आनन्द-लीलाओं की भरमार तथा सौन्दर्य की अपूर्व छटा मिलती है। भागवत के कृष्ण का कवि ने महाभारत के कृष्ण से समन्वय करते हुए एक नवीन कृष्ण का विकास नहीं किया, जो बहुत बड़ा काय होता। कृष्ण में भक्ति कवियों ने माधुर्य भाव का अतिश्रम किया, परिणामस्वरूप रीतिवाज के कृष्ण रसिक

विहारी होकर छेड़छाड़ करने लगे। उनके सौन्दर्य में वासना की दृग्गन्ध आने लगी। फिर भी 'कृष्णचन्द्रिका' के कृष्ण इस पाप से मुक्त हैं तथा ऐतिहासिक कोई कलक उन पर नहीं है।

कृष्ण के व्यक्तित्व में अनेक भावनाएँ थीं, जिनका मध्यकाल में विकास नहीं हुआ। आधुनिक काल में हरिऔध जी ने 'प्रियप्रवास' में कृष्ण को लोक-सुधारण रूप में प्रस्तुत किया। द्वारिकाप्रसाद मिश्र ने 'कृष्णायन' में कृष्ण को युग का राज-नीति नेता बनाकर उनका प्राचीन स्वरूप ही बदल डाला है। आधुनिक काल में हुए कृष्ण स्वरूप के परिवर्तित प्राचीन जड़ता को चुनौती देने हैं। 'रश्मिरूपी' में भीता कृष्ण का विराट रूप खून कर व्यक्त हुआ है। 'अध्याय' में कृष्ण सच्चे प्रथो में लाक-नायक हैं तथा युग के दद को भेन रहे हैं।

कृष्ण का अनेकमुखी व्यक्तित्व कवियों को निरंतर प्रेरणा देता रहा, फिर भी भक्त कविता न उस लीलावतारी रूप में ही समेटा है। भक्ता के कृष्ण प्रेम और आनन्द के प्रतीक बन रहे जिन पर पुराण-परम्परा का गम्भीर प्रभाव पड़ा है। मध्य युग में कृष्ण की प्रधानता रही, लेकिन उनका विकास दो रूपा में ही हो सका है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने ठीक ही लिखा है कि 'श्रीकृष्णावतार के दो रूप मुख्य हैं। एक में वे यदुकुल के श्रेष्ठ रत्न हैं, वीर हैं, राजा हैं, वसति हैं दूसरे में वे गोपाल हैं गोपीजनवल्लभ हैं, राधाधर-सुधापानशालि-वनमाली हैं। प्रथम रूप का पता बहुत पुराने ग्रन्थों से चल जाता है, पर दूसरा रूप अपेक्षाकृत नवीन है। धीरे धीरे यह दूसरा रूप ही प्रधान हो गया और पहला रूप गौण।'<sup>१</sup> सूरदास, गुमां त्रिपाठी तथा ब्रजवासादास ने कृष्ण की वीरता के स्थान पर उनके विस्मयकारी भीम कीर्ति का ही प्रधानता दी, जिसमें अलौकिक ब्रह्म का आनन्द बला का प्रसार है। वास्तव में तथ्य यही है कि कृष्ण चरित जीवन के वास्तविक चित्रण अथवा आदर्श चित्रण के रूप में रचा ही नहीं गया, उनका चरित्र वास्तव में परम ब्रह्म का लीला मात्र है, जिसका प्रयोजन लीलानन्द के अनिरुद्ध अर्थ कुछ नहीं। उसका उद्देश्य अखण्ड आनन्द में जीवन की आध्यात्मिक परिपूर्णता की व्यञ्जना करना ही है।'<sup>२</sup> सूरदास के कृष्ण की मध्य-युग के प्रदग्ध-कवियों पर छाये रहे, तथा उनके चरित्र का विवास सूर से आने नहीं हो सका। 'ब्रजविलास' तथा कृष्णचन्द्रिका के कृष्ण में कुछ भी नया नहीं है, वे सूर के कृष्ण का पुनरावृत्ति मात्र हैं।

१ मध्ययुगीन धर्म-साधना पृ० १२६

२ हिन्दी साहित्य-कोश, भाग २, पृ० ९६

## निष्कर्ष

ऐतिहासिक दृष्टि से मूल्यांकन करने पर कृष्ण के चरित्र में मानवीय अन्तर्गतियों की उदात्त अभिव्यक्ति मिलती है। गुमान त्रिपाठी ने दिव्य, आध्यात्मिक, गूढ़, लीलानागर, रसेश्वर तथा भक्तवत्सल भगवान के रूप को ही प्रतिष्ठित किया। युग के महावीर नेता, यादवा अमुरसहारक, सांस्कृतिक महापुरुष कृष्ण मासल व्यक्तित्व तथा लीलात्मक सौन्दर्य के द्वारा श्रीदास्य की सृष्टि करते हैं। बुद्ध के व्यक्तित्व की उदासीनता विरक्ति, निष्क्रियता पर कृष्ण ने विजय प्राप्त की। कृष्ण अपनी सक्रियता, सचेष्टता प्रयत्न, महान सघप, महान दायित्व, महान् लक्ष्य और महान् सांस्कृतिक निर्माण में बहुत गौरवपूर्ण हैं। कृष्ण में वीरोदात्त प्रकृतियों के द्वारा सघपशील तथा मधुरोदात्त प्रवृत्तियों के द्वारा सौन्दर्ययुक्त उदात्त कार्यों का मिश्रण हो गया है।



## सहायक ग्रन्थ-सूची



# हिन्दी

- १ अथर्व श साहित्य—डा० हरिवंश कोखड़
- २ अकबरी दरबार के हिन्दी कवि—डा० सरयूप्रसाद अग्रवाल
- ३ अग्निपुराण का शास्त्राध्य भाग—श्री रामनाथ वर्मा
- ४ अथर्व के प्रमुख कवि—डा० ब्रजकिशोर मिश्र
- ५ अरस्तु का वाच्यशास्त्र—स० डा० नगेन्द्र
- ६ अलाउद्दीन मुहम्मद खिलजी—डा० विश्वेश्वर राय लाल
- ७ अष्टाध्याय और बल्लभ सम्प्रदाय—डा० दीनदयाल गुप्त
- ८ आचार्य केशवशर्म—डा० हीरालाल दीक्षित
- ९ आधुनिक साहित्य—आ० नन्ददुलारे वाजपेयी
- १० आधुनिक हिन्दी साहित्य—डा० लक्ष्मीसागर वाष्णोय
- ११ आधुनिक हिन्दी साहित्य का विकास—डा० श्रीकृष्णलाल
- १२ आधुनिक हिन्दी महाकाव्यों का शिल्प विधान—डा० श्यामनन्दन किशोर
- १३ आस्था के चरण—डा० नगेन्द्र
- १४ इस्लाम के सूफी साधक—निबलसन—अनु० श्री नमदेश्वर चतुर्वेदी
- १५ कवितावली—तुलसीदास
- १६ कविताकौमुदा (भाग १)—स० रामनरेश त्रिपाठी
- १७ कविवर जायसी और उनका पद्मावत—डा० सुधींद्र
- १८ कामायनी—जयशंकर 'प्रसाद'
- १९ कामायनी के अध्ययन की समस्याएँ—डा० नगेन्द्र
- २० काव्य के रूप—बाबू गुलाबराय
- २१ काव्यरूप—प० रामदहिन मिश्र
- २२ काव्य में उपात्त तत्त्व—डा० नगेन्द्र
- २३ काव्य रूपा के मूल स्त्रोत और उनका विकास—डा० शकुंतला दुर्गा
- २४ काव्यशास्त्र—डा० गीतरथ मिश्र
- २५ कुमारान्त—अना मुरार
- २६ कृष्णचरित—बल्लभचंद्र पट्टोपाध्याय (अनु० जगन्नाथ चतुर्वेदी)
- २७ कृष्णचरित्रा—गुमान त्रिपाठी—म० श्री उदयशंकर भट्ट
- २८ वेशव की वाच्यता—प० कृष्णशंकर 'गुर्वेल'
- २९ वेशव और उनका नाट्यत्व—म० त्रिपाठीसिंह

- ३० केशव-प्रचारती (भाग ३)---ग० विश्वनाथप्रसाद मिश्र  
 ३१ केशवनाथ---श्री चन्द्रबली पाण्डेय  
 ३२ केशवदास, जीवनी बना और कृतित्व---डा० विरगाचन्द शर्मा  
 ३३ गदो बोनी हिन्दी साहित्य का इतिहास---श्री प्रवरनरनाथ  
 ३४ ललितजीवालय भाग्य---स० म० धनदत्त शर्मा 'रिद्धी'  
 ३५ गीता रहस्य---सोवमाय बाल गणधर त्रिपाठी  
 ३६ गोरखनाथ और उनका युग---ग० रामन राधा  
 ३७ गोरखनाथ---भा० हजारीप्रसाद द्विवेदी  
 ३८ गोस्वामी तुलसीदास---भा० रामचन्द्र शुक्ल  
 ३९ चित्रावली---उत्तमान  
 ४० चित्रामणि (भाग १)---भा० रामचन्द्र शुक्ल  
 ४१ जामसी व परवर्ती सूफी कवि और काव्य---ग० मरना गुन  
 ४२ जामसी शायरी---भा० रामचन्द्र शुक्ल  
 ४३ जीवन के तत्व और काव्य के सिद्धान्त---श्री लक्ष्मीनारायण मिश्र सुधायु  
 ४४ ललितजीवालय भाग्य---श्री चन्द्रबली पाण्डेय  
 ४५ तुलसी शायरी---भा० रामचन्द्र शुक्ल  
 ४६ तुलसी दशरथ---भा० लक्ष्मणप्रसाद मिश्र  
 ४७ तुलसी दर्शन श्रीमामा---डा० उदयभानुसिंह  
 ४८ तुलसीदास---डा० माताप्रसाद गुप्त  
 ४९ देव और उनकी कविता---डा० नगद  
 ५० नाथ सिद्धों की बानियाँ---भा० हजारीप्रसाद द्विवेदी  
 ५१ पदमावत---स० डा० माताप्रसाद गुप्त  
 ५२ पदमावत का काव्य सौन्दर्य---डा० शिवसहाय पाठक  
 ५३ पदमावत का अनुशीलन---श्री इन्द्रपाल नारायण  
 ५४ पदमावत में लाल-तत्व---डा० रवीन्द्र 'भ्रमर'  
 ५५ पृथ्वीराज विजय---जयानन्द  
 ५६ प्रेमरस---शेख रहीम  
 ५७ ब्रजभाषा के कृष्ण भक्ति काव्य में

अभिव्यक्ति शिल्प---डा० सावित्रा सिन्हा

- ५८ ब्रजशिलास---ब्रजवासानाथ  
 ५९ बारकरी सम्प्रदाय का इतिहास---एस० डा० दाण्डेवर

- ६० वाल्मीकि रामायण एवं रामचरित मानस  
का तुलनात्मक अध्ययन—डा० विद्यामित्र
- ६१ बीसवीं शताब्दी के महाकाव्य—डा० प्रतिपाल सिंह
- ६२ वृद्धत हिंदी कोश—स० कालिकाप्रसाद
- ६३ भ्रमरगीतसार—आ० रामचंद्र गुप्त
- ६४ भारतीय प्रेमरयानक काव्य—डा० कमल कुलश्रेष्ठ
- ६५ भारतीय दशन—डा० बलदेव उपाध्याय
- ६६ भारतीय माधना और सूर साहित्य—डा० मुशीराम शमा
- ६७ भूपण प्रयावली—स० लाला भगवानदीन
- ६८ मध्ययुगीन बोध का स्वरूप—आ० हजारीप्रसाद द्विवेदी
- ६९ मध्ययुगीन धर्म माधना—आ० हजारीप्रसाद द्विवेदी
- ७० मध्ययुगीन प्रेम साधना—श्री परशुराम चतुर्वेदी
- ७१ मध्ययुगीन प्रेमाख्यान—डा० श्याम मनोहर पाण्डेय
- ७२ मध्ययुगीन साहित्य का साक तार्किक अध्ययन—डा० सत्येन्द्र
- ७३ मध्ययुगीन साहित्य में अवतारवाद—डा० कपिलदेव पाण्डेय
- ७४ मध्ययुगीन हिन्दी कृष्ण भक्तिधारा और चतुर्थ सम्प्रदाय—डा० मीरा श्रीवास्तव
- ७५ मधुमालती—स० डा० माताप्रसाद गुप्त
- ७६ मराठा हिंदी कृष्ण-काव्य का तुलनात्मक अध्ययन—डा० २० श० बेलकर
- ७७ महाकवि सूरदास—आ० नवलुलार बाजपेयी
- ७८ मानस—विप्लवी हरि
- ७९ मानस-दशन—डा० श्रीकृष्णनाथ
- ८० मानस में राम कथा—डा० बलदेव प्रसाद मिश्र
- ८१ मिश्रबन्धु विनोद (भाग १, २, ३)
- ८२ मुगलकालीन भारत—डा० आशीर्वादिलाल
- ८३ मधना बंध की भूमिका—रवीन्द्रनाथ ठाकुर
- ८४ ग्लावली नाटिका—भारतेन्दु बाबू हरिश्चंद्र
- ८५ रस सिद्धांत स्वरूप विश्लेषण—डा० आनंदप्रकाश दीक्षित
- ८६ राधावल्लभ सम्प्रदाय सिद्धान्त और साहित्य—डा० विजयेन्द्र स्मातन
- ८७ रामकथा उत्पत्ति और विकास—डा० नामित बुम्बे
- ८८ रामचंद्रिका—स० डा० श्यामगुंजरदास
- ८९ रामचंद्रिका—स० लाला भगवानदीन
- ९० रामचरित मानस—(गाथा प्रेम, गोरखपुर)
- ९१ रामचरितमानस का काव्यशास्त्रीय अनुशालन—डा० राजकुमार पाण्डेय



- ६२ रामचंद्रिका का विशिष्ट अध्ययन—डा० गार्गी गुप्त  
 ६३ रामभक्ति में रसिक सम्प्रदाय—डा० भगवतीप्रसाद सिंह  
 ६४ रीतिकाव्य की भूमिका—डा० नगेन्द्र  
 ६५ रीतिकाल के प्रमुख प्रबंध काव्य—डा० इन्द्रपालसिंह 'इन्द्र'  
 ६६ रीतिकालीन नवियों की प्रेम व्यंजना—डा० वच्चनसिंह  
 ६७ ललित लताम—मतिराम  
 ६८ लीलावती कथा—स० डा० आदित्यनाथ प्रेमनाथ  
 ६९ वाङ्मय विमर्श—प्रा० विश्वनाथप्रसाद मिश्र  
 १०० विद्यापति ठाकुर—डा० शिवप्रसादसिंह  
 १०१ विदेशों के महाकाव्य—अनु० श्री गोपीकृष्ण 'गोपेश'  
 १०२ विश्व साहित्य की रूपरेखा—डा० भगवतशरण उपाध्याय  
 १०३ विश्व साहित्य में रामचरित मानस—श्री राजबहादुर लंगोडा  
 १०४ वदिक कोष—श्री सूर्यनाथ  
 १०५ वष्णव घम—परशुराम चतुर्वेदी  
 १०६ श्रीराधा का नमिक विकास—डा० शशिभूषणदास गुप्त  
 १०७ सचार्णि—श्री शक्तिप्रिय द्विवेदी  
 १०८ संक्षिप्त पद्मवीराज रासो—स० प्रा० हजारीप्रसाद द्विवेदी डा० नामवरसिंह  
 १०९ समसामयिक जीवन और साहित्य—डा० रामरतन भटनागर  
 ११० समीक्षालाभ—भगीरथ दीक्षित  
 १११ सस्कृति के चार अध्याय—रामधारीसिंह 'दिनकर'  
 ११२ साकेत—मधिलीशरण गुप्त  
 ११३ साहित्यालोचन—डा० श्यामसुन्दरदास  
 ११४ सिद्धांत और अध्ययन—बालू गुलाबराय  
 ११५ सुबाघिनी—प्रा० बल्लभाचार्य  
 ११६ सूफी काव्य संग्रह—स० श्री परशुराम चतुर्वेदी  
 ११७ सूफी मत और हिन्दी साहित्य—डा० विमलकुमार जैन  
 ११८ सूफी मत साधना और साहित्य—डा० रामभूजन तिवारी  
 ११९ सूर और उनका साहित्य—डा० हरवशनाथ शर्मा  
 १२० सूरदास—डा० ब्राह्मर बर्मा  
 १२१ सूर साहित्य—प्रा० हजारीप्रसाद द्विवेदी  
 १२२ सूर साहित्य का मूल्यवर्णन—श्री० चंद्रमान शर्मा  
 १२३ सूर मोरच—श्री० मुख्तारशम शर्मा

- १२४ १६ वा शती के हिन्दी और बंगाली व्यंग्य कवि—डा० रत्नकुमारी
- १२५ हंस जवाहिर—नासिम शाह
- १२६ हरिवंश पुराण का सांस्कृतिक अध्ययन—डा० बीणा पाणि
- १२७ हिन्दी काव्य और उमका सोदय—डा० श्रोमप्रकाश
- १२८ हिन्दी काव्य में निगुण सम्प्रदाय—डा० पीताम्बरदत्त बड़थवाल
- १२९ हिन्दी काव्य में प्रतीकवाद का विराम—डा० बीरेन्द्रसिंह
- १३० हिन्दी काव्यशास्त्र का इतिहास—डा० भगीरथ मिश्र
- १३१ हिन्दी का प्राधुनिक महाकाव्य—डा० गाविन्दगम वर्मा
- १३२ हिन्दी भक्ति रसामृत सिन्धु—स० डा० नगेन्द्र
- १३३ हिन्दी भाषा और साहित्य का इतिहास—अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध'
- १३४ हिन्दी महाकाव्य का स्वल्प विकास—डा० शम्भूनाथसिंह
- १३५ हिन्दी रीति साहित्य—डा० भगीरथ मिश्र
- १३६ हिन्दी साहित्य—डा० श्यामसुन्दरदास
- १३७ हिन्दी साहित्य (भाग २) —स० डा० बीरेन्द्र वर्मा
- १३८ हिन्दी साहित्य उद्भव और विकास—आ० हजारीप्रसाद द्विवेदी
- १३९ हिन्दी साहित्य का प्रतीत (भाग २)—आ० विश्वनाथप्रसाद मिश्र
- १४० हिन्दी साहित्य बीसवीं सदी—आ० नन्दलाल नाजपेयी
- १४१ हिन्दी साहित्य का आन्विकाल—डा० हजारीप्रसाद द्विवेदी
- १४२ हिन्दी साहित्य का आलाचनात्मक इतिहास—डा० रामकुमार वर्मा
- १४३ हिन्दी साहित्य का इतिहास—आ० रामचन्द्र शुक्ल
- १४४ हिन्दी साहित्य का इतिहास और विकास—श्री रामबहोरी शुक्ल  
डा० भगीरथ मिश्र
- १४५ हिन्दी साहित्य का नूतन इतिहास—विश्वप्रसाद दीक्षित 'बटुक'
- १४६ हिन्दी साहित्य का प्रवर्तित इतिहास (भाग १)—डा० प्रतापनारायण टंडन
- १४७ हिन्दी साहित्य का बृहत् इतिहास (भाग १)—डा० राजबली पाण्डेय
- १४८ हिन्दी साहित्य का बृहत् इतिहास—स० डा० नगेन्द्र
- १४९ हिन्दी साहित्य की भूमिका—आ० हजारीप्रसाद द्विवेदी
- १५० हिन्दी साहित्य के विकास की रूपरेखा—डा० रामबल्लभ द्विवेदी
- १५१ हिन्दी साहित्यकोश (भाग १, २)—स० डा० बीरेन्द्र वर्मा
- १५२ हिन्दी साहित्य में कृष्ण—डा० सरोजिना कुन्धेष्ट
- १५३ हिन्दुई साहित्य का इतिहास—गासदि तासा (अनु० डा० लक्ष्मीसागरवाय्णैय)
- १५४ रस सिद्धांत—डा० नगेन्द्र
- १५५ मूर सागर—आ० नन्दलाल नाजपेयी

## अग्रेजी

- १ अलगाजाली दि मिस्टिक—मागरेट स्मिथ
- २ अली हिस्टरी आव वण्णव सवट—डा० आर० जी मजूमदार
- ३ अली हिस्टी आव दि वण्णव सवट—राय चौधरी
- ४ आउटलाइस आव इस्लामी कल्चर—ए०एम०ए० सुस्त्री
- ५ आक्विलाजीकल मर्वे रिपोर्ट भाग ७, १९१६ १७
- ६ आन दि सलाइम—लाजाइस
- ७ अरिस्टाटल्स पायट्री एण्ड फाइन आर्ट स—एस० एच० बुचर  
सम्पादक टी० ए० मक्सन
- ८ इडियन एटीक्विटी १९०४
- ९ इन्कान्नेशन इन्साइक्लोपीडिया आव रिलीजियन—एच०यानावी
- १० इग्निश एपिक एण्ड हीरोइक पोयट्री—डिक्मन
- ११ इन्ट्रोडक्शन आव सलाइम एण्ड ब्लूटीफुन—एडमण्ड बक
- १२ इन्साइक्लोपीडिया ब्रिटानिका—बाल्यम १८
- १३ इन्सपिशन आव बगाल—एन०सी० मजूमदार
- १४ एपासल जास वण्णव नायक—एम० एम० रामास्वामी अम्मर
- १५ ऐपिक एण्ड रोमांस—बी० पी० बर
- १६ ए स्टडा आव एपिक डबलपमण्ट—आई०टी० भमस
- १७ एशियन इण्डियन हिस्टारिकल ट्रेडीशन—एफ०ई० पार्जोटर
- १८ इन्साइक्लोपीडिया आव रिलीजियन एण्ड एथिकल—स०हृस्टिंग
- १९ इन्साइक्लोपीडिया आव इस्लाम—हासमा तथा रिमस राण्ड ४
- २० एस्थेटिकम—त्राव
- २१ ए हिस्ट्री आफ इडियन लिटरेचर—विष्टर निल
- २२ एस्थेटिक्स आव वण्णविका—जे० गार्
- २३ एस आन टामटिक पोयट्री—आईडन
- २४ कनकड वक्म—आ० अण्णरकर
- २५ कुण्डुन महजुब—तिक्लान (१९११)
- २६ कवादग आफ नि गुणा अम्मावर—अन्नार
- २७ गुडरात एण्ड डटम विटरेचर—ए०एम०मुशा
- २८ डिक्शनरी आव दुस्नाम—ग० हर्मु
- २९ नि गनोरा देव वात्र वन गुजर—आ०गुगडर
- ३० नि गनोरा राट इन इगिता निदवर—एमा क्रूसा
- ३१ दि आनर—रासदास

- ३२ दि नम्बर आफ रसाज—गो० वी० राघवन्  
 ३३ दि पशियन मिस्टिक्—भत्तार  
 ३४ दि रिलीजियस आफ इण्डिया—ए० पी० करमरकर  
 ३५ दि रिलीजियस आफ इण्डिया—भक्त वेवर  
 ३६ दि विजन आफ इण्डिया—शिधिर कुमार मित्र  
 ३७ दि हीरोइक एज आफ इण्डिया—एन० के० सिद्धान्त  
 ३८ दि एपिक्—लेसलेस एवरक्वाम्बी  
 ३९ फ्राम वर्थिल टु मिट्टन—सी० एम० बावरा  
 ४० फिलासफी आफ फाइन आर्ट स—खण्ड ४—हीगल  
 ४१ फिलासफी आफ दि कुरान—हफीज गुलाम मरकार  
 ४२ भक्ति कल्ट इन एण्डियन इण्डिया—बी० के० गोस्वामी  
 ४३ मिस्टिक् आफ इस्लाम—भार० ए० निक्लसन  
 ४४ रिप्रजेंटेटिव मेन—एमसन  
 ४५ विष्णु इन दि वेदाज—भार० एन० दाण्डेकर  
 ४६ वदिव इण्डियन—भक्तसमूलर  
 ४७ वप्पणविज्म एण्ड शविज्म—डा० भार० जी० भण्डारकर  
 ४८ सल्लुत लिटरेचर—मकडूनल  
 ४९ स्टडीज इन इस्लामिक मिस्टिज्म—भार० ए० निक्लसन  
 ५० हिंदुइज्म एण्ड बुद्धिज्म—इलियट  
 ५१ हिस्ट्री आफ त्रिटिसिज्म—जार्ज सेण्टसवरी  
 ५२ हीरोइज्म—भार० ट० ए० एमसन  
 ५३ हीरोइक पोयट्री—मा० एम० बावरा  
 ५४ हीरो एण्ड हीरोविज्म—बालाईल  
 ५५ कलचरल हैनीऐज आफ इण्डिया—हरिदास भट्टाचार्य

### संस्कृत

- १ अभिनान शाकुन्तलम्—बालिदास स० डा० कपिलदेव पाण्डेय 'भाचार्य'  
 २ आदि पुराण—(गान्धर्वपुर)  
 ३ ऋग्वेद—(वदिव साहित्य)  
 ४ एतरय ग्राहण—  
 ५ कामसूत्र—वात्स्यायन  
 ६ काव्यादश—दण्डी  
 ७ काव्यालकार—भामह  
 ८ काव्यालकार—छट्ट

- ६ काश्यानुग सन — साम्भट द्वितीय  
 १० काश्यानुगता — तैमष  
 ११ गीता (गोरखपुर)  
 १२ गान गानि — जयन्त  
 १३ तत्तिगीय संहिता (वन्दि साहित्य)  
 १४ तत्तिगीय ब्राह्मण (वन्दि गानि ४)  
 १५ दण्डनायक — धनजय  
 १६ न्या भागता (भाष्यता — तत्तिव आग)  
 १७ ध्वन्यालोचन — धानन्दधारा — साधन राजा — धा० विश्वेश्वर  
 १८ नाट्य तन्त्राण कोष — सागर तन्त्रा  
 १९ नाट्य दण्ड — रामचन्द्र गुणचन्द्र  
 २० नाट्यशास्त्र — भरतमुनि  
 २१ नारद भक्ति-सूत्र (गोरखपुर)  
 २२ ब्रह्म वर्त्ता पुराण (नक्तकत्ता)  
 २३ ब्रह्म-सूत्र — हिल्ली टीका (गोरखपुर)  
 २४ भागवत पुराण (गोरखपुर)  
 २५ महाभारत (गोरखपुर)  
 २६ योग उपनिषद — स० महादेव शास्त्रा  
 २७ रस रत्नाकर — प० राज जगन्नाथ  
 २८ रामायण — वाल्मीकि (प्रयाग)  
 २९ शतपथ ब्राह्मण — वदिव साहित्य  
 ३० शृंगार प्रवाण — भोजराज  
 ३१ सरस्वती कण्ठाभरण — भोजराज  
 ३२ साहित्य-दण्ड — विश्वनाथ  
 ३३ हरिवंश पुराण (गीता प्रेस)
- अभिनन्दन-ग्रन्थ  
 १ सेठ गाविन्ददास अभिनन्दन ग्रन्थ — स० डा० नगेन्द्र बाबू गुलाबराय (दिल्ली)  
 २ पोद्दार अभिनन्दन ग्रन्थ — स० बाबुदेवशास्त्र ग्रन्थाल (मथुरा)
- पत्र-पत्रिकाएँ  
 १ मालोचना जनवरी १९५४ नवम्बर १९५५  
 २ नागरी प्रचारिणी पत्रिका वष ५ अंक ७ वष १४ अंक १, वष ५६ अंक १६  
 ३ वीणा वष २५ अंक ६ ७ (१९५२)  
 ४ साहित्य अंक ७ १९५५

